2 - (H)2

हिन्दी साहित्य



BRAOU

(08) Hindi literature
III-year - paper-VI

हिन्दी गद्य

खण्ड 1 - 5

TWENTY YEARS OF DEDICATED SERVICE
DR. B.R. AMBEDKAR OPEN UNIVERSITY
EDUCATION AT YOUR DOORSTEP

डा.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद

2005

पाठ्यक्रम निर्माण मंडल

पाठ्यक्रम संशोधन परामर्श समिति

प्रो.वाइ. वेंकटरमण राव

प्रो. शशि मुदिराज

प्रो. टी. मोहन सिंह

सहायक संपादक

लेखक मंडल

डॉ. भीमसेन निर्मल

डॉ. ज्ञान आस्थाना

डॉ. शशि मुदिराज

डॉ. सरोज पॉडेय

संपादक मंडल

डॉ. प्र. विद्यासागर (मूल संपादक)

प्रो. शशि मुदिराज (संशोधन संपादक)

सहायक संपादक

डॉ. शकीला खानम

संशोधक एवं लेखकगण

डॉ. क्रॉती मुदिराज (1,8,17,18,19)

डॉ. शुभदा वॉजपे (2,14,16)

डॉ. रवि रंजन (6,9,12,22,23,24)

डॉ. सर्राजु(3,5,7,10,21)

डॉ. राम प्रकाश (4,13,15,20)

डॉ. शकीला खानम (11)

संयोजक एवं समन्वयकर्ता

डॉ. शकीला खानम

सहायक प्रोफेसर

हिंदी विभाग

डॉ.बी.आर. अंबेड्कर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय

हैदराबाद-33

मूल आवरण सज्जा

चंद्रा

संशोधित आवरण सज्जा

चंद्रा

प्रथम संस्करण - 1991

द्वितीय संस्करण - *2003* 2004

Lr. No.1096/ Dr. BRAOU / DMP / PTG / F.No. 80 / JO No.449/ 2005 / dated 12.1.05 / No. of Copies 500

Printed at : **M/s. Shiva Art Printers,** Musheerabad, Hyderabad-20. © : 9246530881

BRAOU

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के अध्येताओं के लिए गद्य साहित्य का परिचय आवश्यक है। कहा भी गया है कि गद्य लेखन की सच्ची कसौटी होता है। गद्य में किसी जाति के चिन्तन और सर्जन का प्रकटन होता है। इस दृष्टि से हिन्दी साहित्य का एक आयाम उसकी गद्य रचनाओं में प्रस्फुटित है। इस दृष्टि से इस पाठ्यक्रम में हिन्दी गद्य की लगभग सभी विधाओं को पाँच खण्डों में समेटने का प्रयत्न किया गया है। ये खंड हैं – निबंध, जीवनी साहित्य, कहानी, उपन्यास, एकांकी और नाटक। पहला खंड है 'निबंध'। अपने व्यक्तिगत विचारों को समुचित उद्धरणों और संदर्भों से पुष्ट करते हुए गहन अध्ययन के आधार पर स्पष्ट शैली में अभिव्यक्त करने की विधा को 'निबंध' कहा जाता है। निबंध मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं – विषय प्रधान और विषयी प्रधान। विषय प्रधान निबंधों में अपेक्षाकृत वस्तुनिष्ठ शैली में विचारों को व्यक्त किया जाता है। जबकि विषयी प्रधान निबंधों में लेखक की वैयक्तिकता प्रमुख विशेषता बनकर आती है। इस खंड में हिन्दी निबंध के क्रमश: विकास को ध्यान में रखते हुए छ: निबंधों का चयन किया गया है।

दूसरा खंड है 'जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण और रिपोर्ताज' का। हिन्दी साहित्य के आधुनिक रूप को आरंभ करने वाली विशेषताओं में एक है आत्मकथा लेखन। किसी व्यक्ति के द्वारा स्वयं अपनी जीवनकथा कहना आत्मकथा के अंतर्गत आता है जबकि ऐसी ही जीवन कथा जब दूसरे के द्वारा लिखी जाती है तो जीवनी होती है। इसीसे मिलते-जुलते संस्मरण और रिपोर्ताज हैं। इस प्रकार के साहित्य की विशेषता होती है आत्मपरक और प्रामाणिक। इस खंड में महत्वपूर्ण लेखकों और मनीषियों के द्वारा रचित साहित्य का चयन किया गया है।

खंड तीन है – 'कहानी'। कहानी साहित्य की प्राचीनतम विधा है। हिन्दी कहानी ने अपने विकास की एक शती पूरी करली है और वस्तु एवं शिल्प के आधार पर आज नई ऊँचाइयों को पहुँची है। इस पुस्तक में कुछ प्रतिनिधि कहानियों का चयन किया गया है जिससे हिन्दी कहानी के अलग-अलग स्तरों से छात्र परिचित हो सके।

खंड चौथा है – 'उपन्यास'। हिन्दी की प्रतिनिधि औपन्यासिक रचना के रूप में प्रेमचन्द की 'निर्मला' का चयन किया गया है। निर्मला उपन्यास प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ बोध, मनोवैज्ञानिक गहराई और चरित्र-चित्रण की मार्मिक संवेदनशीलता की दृष्टि से बेजोड़ है। यह सरल भी है और अत्यंत मर्म-स्पर्शी भी। चौथे खंड में निर्मला उपन्यास पर तीन आलोचनात्मक पाठ लिये गये हैं।

पाँचवाँ खंड 'एकांकी और नाटक' है। नाटक साहित्य की सबसे अधिक रमणीय, प्रभावशाली और शक्तिशाली विधा मानी गयी है। नाटक लिखा जाता है और रंगमंच पर भी प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए यह समाज में बार-बार प्रस्तुत होनेवाली रचनात्मक सृष्टि है। हिन्दी नाटक और एकांकी लगभग समानांतर चलते हैं। इस दृष्टि से इस खंड में दो एकांकी और एक नाटक का चयन किया गया है। ये दोनों एकांकी रोचक हैं और आज के समाज का चित्र भी प्रस्तुत करते हैं। नाटक है 'अजातशत्रु' जो हिन्दी में अपनी ऐतिहासिकता, प्रासंगिकता और नाट्यकला के कारण चर्चित है। इस खंड में 'अजातशत्रु' के तीन आलोचनात्मक पाठ दिये गये हैं।

इस पुस्तक के प्रस्तुतीकरण में दो बातों का ध्यान रखा गया है – एक, हिन्दी गद्य रचनाओं के माध्यम से विद्यार्थी को विचार और कलात्मकता का उत्कृष्ट संयोजन देना और दूसरा, उनमें पढ़ने की रुचि और दृष्टि का निर्माण करना। साहित्य जीवन से अलग नहीं है। बल्कि जीवन साहित्यिक रचनाओं के लिए अक्षय स्तोत है। इन सभी रचनाओं के चयन में दृष्टि यह रही है कि विद्यार्थी इनके माध्यम से जीवन को बेहतर समझदारी प्राप्त कर सके।

BRAOU

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में पाँच खंड और इनके अंतर्गत चौबीस इकाइयाँ दी गई हैं। प्रत्येक खंड के अंतर्गत उस खंड में प्रस्तुत विधा का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि यह पाठ्यक्रम पूर्व प्रकाशित पाठ्यक्रम के पुनः प्रस्तुतीकरण के रूप में आया है। इस पुनः प्रस्तुतीकरण में संशोधन, परिवर्तन और परिवर्धन की प्रक्रिया अपनायी गयी है। कुछ पाठ नये लिखे गये हैं और कुछ पाठों को संशोधित और परिवर्धित करके रखा गया है। अतएव पूर्व प्रस्तुत पाठ्यक्रम के लेखकों और संपादक के प्रति आभार व्यक्त करना हमारा दायित्व है। ये लेखक हैं डॉ. भीमसेन निर्मल, डॉ. ज्ञान आस्थाना, डॉ. शशि मुदिराज और डॉ. सरोज पाँडेय। संपादक हैं स्वर्गीय डॉ. प्र. विद्यासागर। जो पाठ संशोधन और परिवर्धन किये गये हैं वे पूर्व सामग्री की अपर्याप्तता के कारण नहीं बल्कि बदलते समय के साथ पदलती अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर किया गया है। इस कार्य में अपना मूल्यवान योगदान दिया है, वे हैं - डॉ क्रांति मुदिराज, डॉ. रवि रंजन, डॉ. शुभदा वाँजपे, डॉ. सर्राजु, डॉ. रामप्रकाश और डॉ. शकीला खानम।

अंत में आशा है कि विद्यार्थी इस सारस्वत प्रयास से लाभान्वित होंगे.

- संपादक

BRAOU

ऐच्छिक विषय – हिन्दी साहित्य

कोर्स – II : हिन्दी गद्य

विषयानुक्रमणिका

खण्ड - I : निबन्ध

			पृ – सं.
		विषय प्रवेश	2
इकाई – 1	:	बातचीत – पं. बालकृष्ण भट्ट	3 – 11
इकाई – 2	:	उत्साह – आ. रामचन्द्र शुक्ल	12 – 26
इकाई – 3	:	मजदूरी और प्रेम – अध्यापक पूर्णसिंह	27 – 42
इकाई – 4	:	एक कुत्ता और एक मैना –आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी	43 – 53
इकाई – 5	:	नेता नहीं नागरिक चाहिए – रामधारी सिंह दिनकर	54 – 64
इकाई – 6	:	भारतीय साहित्य में एकता – आ. नंददुलारे वाजपेयी	65 – 73

खण्ड - II : जीवनी-आत्मकथा-संस्मरण-रिपोर्ताज

		विषय प्रवेश	75 – 77
इकाई – 7	:	देशरत्न डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद – पुरुषोत्तम दास टंडन	78 – 86
इकाई – 8	:	तीन पौण्ड का कर – महात्मा गान्धी	87 – 93
इकाई – 9	:	घीसा – महादेवी वर्मा	94 – 106
इकाई – 10	:	शांतिनिकेतन में – राहुल सांस्कृत्यायन	107 – 115

खण्ड - III : कहानी

		विषय प्रवेश	118 – 119
इकाई – 11	:	पूस की रात – प्रेमचन्द	120 – 130
इकाई – 12	:	शरण दाता – अज्ञेय	131 – 144
इकाई – 13	:	ठेस – फणीश्वरनाथ रेणु	145 – 156
इकाई – 14	:	भोलाराम का जीव – हरिशंकर परिसाई	157–168
इकाई – 15	:	चीफ की दावत – भीष्म साहनी	169 – 183
इकाई – 16	:	वापसी – उषा प्रियंवदा	184 – 197

खण्ड - IV : उपन्यास

		विषय प्रवेश	199 – 200
इकाई – 17	:	निर्मला की कथावस्तु	201 – 214
इकाई – 18	:	निर्मला में चरित्र चित्रण	215 – 229
इकाई – 19	:	निर्मला का मूल्यांकन	230 – 238

खण्ड - V : एकांकी और नाटक

		विषय प्रवेश	240 – 241
इकाई – 20	:	अण्डे के छिलके – मोहन राकेश	243 – 265
इकाई – 21	:	इलेक्शन – रामकुमार वर्मा	266 – 279
इकाई – 22	:	अजातशत्रु की कथावस्तु	280 – 287
इकाई – 23	:	अजातशत्रु में चरित्र चित्रण	288 – 299
इकाई – 24	:	अजातशत्रु का मूल्यांकन	300 – 310

BRAOU

BRAOU

खण्ड - 1 : हिन्दी निबन्ध

BRAOU

विषय प्रवेश

अपने व्यक्तिगत विचारों को सुबोध, सरल, स्पष्ट शैली में क्रमवार रूप में अभिव्यक्त करने की विधा को 'निबन्ध' कहते हैं। किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने के लिए विचारों की स्पष्टता, क्रमबद्धता और रोचकता एक अनिवार्य तत्व होता है। निबन्ध संक्षिप्त भी हो सकता है और विस्तृत भी। लेकिन किसी भी प्रकार के निबन्ध के लिए उसमें विचारों की मौलिकता तथा 'गागर में सागर' भरने की क्षमता एक आवश्यक शर्त होती है। प्रसिद्ध निबन्धकार डा. गुलाब राय के शब्दों में, 'निबन्ध' उस गद्य रचना को कहते हैं, जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय विशेष का प्रतिपादन, स्वच्छता, सौष्ठव, सजीवता तथा जिसकी भाषा में प्रवाह होता है।

'निबन्ध' कई प्रकार से लिखे जा सकते हैं, लेकिन निबन्ध के मुख्यत: दो प्रकार होते हैं। पहला विषय प्रधान और दूसरा विषयी प्रधान। फिर विषय प्रधान निबन्धों को दो भागों में बांटा गया है – वर्णनात्मक और विवरणात्मक। विषयी प्रधान निबन्धों को तीन वर्गों में बांटा गया है – 1. विचारात्मक 2. भावात्मक और 3. आत्मपरक या वैयक्तिक। निबन्धों के सन्दर्भ में मुख्यत: यही पांच भेद माने गये हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को आधुनिक गद्य–साहित्य का जन्मदाता माना जाता है। उन्होंने गद्य को प्रभावशाली बनाने के लिए सार्थक प्रयास किये हैं। इसके बाद निबन्ध विधा का क्रमश: विकास होता रहा और आज हिन्दी साहित्य में निबन्ध विधा अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों में एक सशक्त माध्यम बन गयी है।

भारतेन्दु युग को राष्ट्रीय चेतना का जागरण काल माना जाता है। इस काल में निबन्धों का सीधा सम्बन्ध समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं से हुआ करता था, जिसमें अतीत की गौरव गाथा, तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था, समाज सुधार, धर्म आदि के लेखन का श्री गणेश हुआ। इस युग में भारतेन्दु, प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, लाला श्रीनिवास दास आदि लेखकों ने अपने निबन्धों से जनता को राष्ट्रीय चेतना से लैस करने का सार्थक प्रयास किया। इसके बाद आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त, सरदार पूर्ण सिंह, श्याम सुन्दर दास, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी आदि निबन्धकारों ने निबन्ध विधा को अधिक समृद्ध किया।

भारतेन्दु काल के बाद निबन्ध विधा का विकास विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। व्यंग्य विधा की स्थापना भी इसी काल में हुई। बालमुकुन्द गुप्त जैसे निबन्धकारों ने शिवशंभू नाम से 'चिट्ठे' के प्रकार का गद्य लिखकर तत्कालीन लार्ड कर्जन की भारत विरोधी कार्यों को व्यंग्यात्मक शैली में लिखकर जन–जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। इस काल में समाज की दुरावस्था, आर्थिक विषमता, धार्मिक पतन आदि की ओर निबन्धों के माध्यम से लोगों में राष्ट्रीय चेतना का विकास किया गया।

छायावादी युग में विषयी प्रधान निबन्धों की बहुलता रही। डॉ. गुलाब राय जैसे प्रतिष्ठित निबन्धकारों ने निबन्ध में पांडित्य प्रदर्शन की पद्धति छोड़कर पूरी तरह अनौपचारिक ढंग से अपने व्यक्तिगत जीवन और उसके अनुभवों को भावपूर्ण तरीके से निबन्धों में ढालना शुरू किया। गुलाब राय, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', माखन लाल चतुर्वेदी जैसे निबन्धकारों ने निबन्ध–विधा को जीवन के निकट लाया। इस युग के बाद निबन्ध–विधा में चहुमुखी विकास हुआ।

आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, रामधारी सिंह दिनकर, आचार्य नगेन्द्र, डॉ. धर्मवीर भारती, डॉ. जगदीश प्रसाद माथुर, बेढ़ब बनारसी, कुबेर नाथ राय, कृष्णनाथ, विवेकी राय जैसे निबन्धकारों ने निबन्ध विधा का न केवल चतुर्दिक विकास किया वरन् समृद्ध भी किया। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि निबन्ध–विधा ने द्विवेदी युग से छायवादोत्तर काल या आधुनिक काल तक अपने सफ़र में खुद को इतना समृद्ध कर लिया कि वैज्ञानिक चर्चाएं और राजनीतिक–सामाजिक बहस भी निबन्धों के माध्यम से ही होने लगीं। निबन्ध विधा में कथोपकथन शैली का भी समावेश किया गया। इस प्रकार हम पाते हैं कि निबन्ध–विधा राष्ट्र की सांस्कृतिक एकता को अक्षुण्ण रखने में सहायक सिद्ध हुई है।

BRAOU

इकाई-1: बातचीत - पं. बालकृष्ण भट्ट

1.0 उद्देश्य

1.1 पाठ एवं लेखक परिचय

1.2 मूल पाठ

1.3 सारांश

1.4 समीक्षा

1.5 शब्दार्थ

1.6 अभ्यास

1.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

1.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

1.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

1.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.0 उद्देश्य

इस निबंध में पं. बालकृष्ण भट्ट ने बातचीत के महत्व और उसके प्रकारों की चर्चा की है। इस पाठ के अध्ययन से आप

- बातचीत और स्पीच (वक्तृता) का अंतर समझ सकेंगे।
- जिन्दगी को खाने-पीने, चलने-फिरने से जितना मज़ेदार बनाया जा सकता है उतना ही बातचीत से जिन्दगी मज़ेदार बनाई जा सकती है-इसे समझ सकेंगे।
- बातचीत के अनेक प्रकारों पर विचार करेंगे।
- वाक् संयम कर क्रोधादिक बड़े-बड़े शत्रुओं पर विजय पाने का सरल उपाय भी जान सकेंगे।

1.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

इस संसार में सभी प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानव है और उसका कारण उसकी वाक् शक्ति है। भट्ट जी कहते हैं कि वाक् शक्ति के कारण हम अपने अनुभवों को एक दूसरे से बाँट सकते हैं। वाक् शक्ति के उपयोग के दो प्रकार हैं। एक तो वक्तृता या स्पीच और बातचीत है। वक्तृता में मनुष्य को प्रयत्न करके जान बूझ कर मसालेदार वाक्य बोलने पड़ते हैं जो उद्देश्य को स्पष्ट करने में सहायक होते हों। किन्तु बातचीत वह घरेलू प्रकार है जिसमें किसी भी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती है। इस निबंध में लेखक ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि यदि किसी को बात-चीत का मज़ा लग जाता है तो उस मज़े या आनंद के लिए वह व्यक्ति अपना बड़े से बड़ा हर्जा कर लेना पसंद करता है। पर बातचीत का मज़ा नहीं छोड़ना चाहता है। इस निबंध में भट्ट जी ने बतीचीत के

BRAOU

अनेक प्रकारों को विस्तृत रूप में हमारे सम्मुख रखा है। किन्तु अंत में उन्होंने इस बात पर अधिक बल दिया है कि हम किसी अन्य से बातचीत करने के बदले स्वयं से बातचीत करें तो कई प्रकार के झगड़ों से बचे रहेंगे और शान्ति प्राप्त करेंगे।

(आ) लेखक-परिचय

पं. बालकृष्ण भट्ट का जन्म इलाहाबाद में सन् 1844 में हुआ था । इनके पिता व्यापारी थे किन्तु माताजी संस्कृत विदुषी थीं। उन्होंने मन में पढ़ने के प्रति विशेष अभिरुचि पैदा की। उन्होंने प्रारंभ में संस्कृत का अच्छा अध्ययन किया और बाद में एन्ट्रेन्स परीक्षा पास कर अध्यापक बन गये। व्यापार में लग जाना भट्ट जी को पसंद नहीं आया और उन्होंने पिता से अलग होकर अपना सारा जीवन साहित्य की सेवा में लगा दिया । कई स्कूलों और कॉलेजों में वे संस्कृत का अध्यापन करते रहे पर अपने राजनैतिक विचारों के कारण नौकरी करना छोड़कर उन्होंने लेखन और पत्रकारिता को अपनी जीविका का साधन बना लिया। जीवन के अंतिम दिनों में बाबू श्याम सुन्दर दास ने हिन्दी 'शब्द कोश' के निर्माण के अवसर पर उन्हें सहायक के रूप में बुलाया पर स्वाभिमानी बालकृष्ण भट्ट वहाँ भी नहीं रह सके। सन् 1914 में इलाहाबाद में ही भट्ट जी का स्वर्गवास हो गया।

भारतेन्दु युग के लेखकों में बालकृष्ण भट्ट गणमान्य व्यक्ति थे। आधुनिक हिन्दी साहित्य के विकास में विशेष रूप से गद्य के क्षेत्र में भट्ट जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। निबंधकार और पत्रकार के रूप में उनका विशिष्ट स्थान है। वे हिन्दी में व्यावहारिक समालोचना के प्रारंभिक युग के सफल लेखक हैं। उन्होंने नाटक, उपन्यास और कहानियाँ भी लिखी हैं। अपने युग के कई लेखकों को उन्होंने प्रेरित एवं प्रभावित किया है।

भारतेन्दु युग के लेखक मूलतः पत्रकार और पत्रकारिता के माध्यम से समाज में नई चेतना, नया जागरण फैलाना चाहते थे। भट्ट जी ने 'हिन्दी प्रदीप' नामक पत्रिका को सांस्कृतिक चेतना को उद्‌बुद्ध करने के उद्देश्य से प्रकाशित किया था। भट्ट जी ने सरकारी दुर्नीतियों एवं अनेक बाधाओं का सामना करते हुए 'हिन्दी प्रदीप' को 33 वर्ष तक चलाया एवं समाज को नई दिशा प्रदान की। सामाजिक निबंधों में उन्होंने समाज में प्रचलित बुराइयों का खंडन करके मानव जीवन के शाश्वत आदर्शों को प्रचलित करने का सफल प्रयत्न किया है। पं. बालकृष्ण भट्ट का समय भारतीय समाज और भारतीय साहित्य के लिए पुनर्जागरण का था। सामन्तवादी शासन-पद्धति के कारण जनता में रूढ़िवादिता और अन्ध-विश्वासों का बोलबाला था। साहित्य में श्रृंगारिकता पराकाष्टा को पहुँच चुकी थी। अंग्रेजों के आगमन और अधिकार के स्थापित हो जाने के बाद हमारे प्रबुद्ध साहित्यकारों ने समाज सुधार की दृष्टि को अपना कर जनता में फैले हुए अन्ध-विश्वासों तथा रीति-रिवाजों का खंडन करते हुए उच्च विचारों के उपदेशात्मक निबंधों की रचना की थी। वही चाहते थे कि भारतीय जन पुनः अपने अतीत की गौरवशाली प्रतिभा को वर्तमान युग में भी प्रतिष्ठित कर सके। सरल जीवन और उच्च विचारों का प्रसार करने वालों में पं. बालकृष्ण भट्ट अग्रणी हैं। सम्पादक के नाते और निबंधकार के नाते नैतिक जीवन-यापन पर बल देते हुए भट्ट जी ने सैकड़ों निबंध लिखे हैं।

भट्ट जी की रचनाओं में भट्ट निबंधावली, नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान, शिक्षादान, पतित पंचम आदि उल्लेखनीय एवं पठनीय हैं।

1.2 मूल-पाठ

इसे तो सभी स्वीकार करेंगे कि अनेक प्रकार की शक्तियाँ जो वरदान की भाँति ईश्वर ने मनुष्यों को दी हैं, उनमें वाक्शक्ति भी एक है। यदि मनुष्य की और-और इंद्रियाँ अपनी-अपनी शक्तियों से अविकल रहतीं और वाक्शक्ति उनमें न होती तो हम नहीं जानते इस गूँगी सृष्टि का क्या हाल होता। सब लोग लुंज-पुंज से हो मानों एक कोने में बैठा दिये होते और जो कुछ सुख-दुःख का अनुभव हम अपनी दूसरी-दूसरी इंद्रियों के द्वारा करते उसे अवाक् होने के कारण आपस में एक दूसरों से कुछ न कह-सुन सकते।

बोध प्रश्न : 1. बालकृष्ण भट्ट जी ने ईश्वर द्वारा मनुष्य को दी गई शक्तियों में से किस शक्ति पर प्रकाश डाला है?

.....

.....

.....

अब इस वाक्शक्ति से अनेक फायदों में 'स्पीच' वक्तृता और बात-चीत दोनों हैं किंतु 'स्पीच' से बात-चीत का कुछ ढंग ही निराला है। बात-चीत में वक्ता को नाज़-नखरा ज़ाहिर करने का मौका नहीं दिया जाता कि वह एक बड़े अंदाज से गिन-गिनकर पाँव रखता हुआ पुलपिट पर जा खड़ा हो और पुण्याहवाचन या नांदीपीठ की भाँति घड़ियों तक साहबाने मजलिस, चेयरमैन, लेडीज एंड जेंटिलमेन की बहुत-सी स्तुति करे, कराये तब किसी तरह वक्तृता का आरंभ किया गया जहाँ कोई मर्म या नोंक की कोई नुकीली चुटीली बात बड़े वक्ता या महाशय के मुख से निकली कि करतल-ध्वनि से कमरा गूँज उठा। इसलिए वक्ता को खामखाह ढूँढ कर कोई ऐसा मौका अपनी वक्तृता में लाना ही पड़ता है जिसमें करतल-ध्वनि अवश्य हो। वह हमारी साधारण बात-चीत का कुछ ऐसा घरेलू ढंग है कि उसमें न करतल-ध्वनि को कोई मौका है, न लोगों को कहकहे उड़ाने की कोई बात उसमें रहती है। हम तुम दो आदमी प्रेम पूर्वक संलाप कर रहे हैं, कोई चुटीली बात आ गई हँस पड़े तो मुस्कुराहट से होठों का केवल फड़क उठना ही इस हँसी की अंतिम सीमा है। स्पीच का उद्देश्य अपने सुनने वालों के मन में जोश और उत्साह पैदा कर देना है। घरेलू बातचीत मन रमाने का एक ढंग है इसमें स्पीच की वह सब संजीदगी बेकदर हो धक्के खाती फिरती है।

बोध प्रश्न : 2. वक्तृता (स्पीच) और बात-चीत के अंतर को बताइए।

.....

.....

.....

जहाँ आदमी को अपनी जिंदगी मजेदार बनाने के लिए खाने-पीने चलने-फिरने आदि की जरूरत है वहाँ बात-चीत की भी हमको अत्यंत आवश्यकता है। जो कुछ मवाद या धुआँ जमा रहता है वह सब बात-चीत के जरिये भाप बन बाहर निकल पड़ता है। चित्त हल्का और स्वच्छ हो परम आनंद में मग्न हो जाता है। बात-चीत का भी एक खास तरह का मजा होता है। जिनको बात करने की लत पड़ जाती है वे इसके पीछे खाना-पीना तक छोड़ देते हैं। अपना बड़ा हर्ज कर देना उन्हें पसंद आता है पर बात-चीत का मजा नहीं खोना चाहते। राबिनसन क्रूसो का किस्सा बहुधा लोगों ने पढ़ा होगा जिसे सोलह वर्ष तक मनुष्य का मुख देखने को भी नहीं मिला। कुत्ता, बिल्ली आदि जानवरों के बीच रहा किया। सोलह वर्ष के उपरांत जब उसने फ्राइडे के मुख से एक बात सुनी, यद्यपि इसने अपनी जंगली बोली में कहा था; उस समय राबिनसन को ऐसा आनंद हुआ मानो इसने नये सिरे से फिर से आदमी का चोला पाया। इससे सिद्ध होता है कि मनुष्य की वाक्शक्ति में कहाँ तक लुभा लेने की ताकत है।

बोध प्रश्न : 3. रॉबिनसन् क्रूसो के आनंद का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

BRAOU

जिनसे केवल पत्र-व्यवहार है कभी एक बार भी साक्षात्कार नहीं हुआ उन्हें अपने प्रेमी से कितनी लालसा बात करने की रहती है। अपना आभ्यंतरिक भाव दूसरे को प्रकट करना और उसका आशय आप ग्रहण कर लेना केवल शब्दों ही के द्वारा हो सकता है। सच है –

''तामर्द सखुन गुफ्ता बाशद।

ऐबो हुनरश निहफ्ता बाशद''

''बावच्च शोभते मूर्खो यावत्किंचिन्न भाषते''

बेन जानसन का यह कहना कि – ''बोलने से ही मनुष्य के रूप का साक्षात्कार होता है'' बहुत ही उचित बोध होता है।

इस बात-चीत की सीमा दो से लेकर वहाँ तक रखी जा सकती है जितनों की जमात मीटिंग या सभा न समझ ली जाय। एडिसन का मत है असल बात-चीत सिर्फ दो में हो सकती है जिसका तात्पर्य यह हुआ कि जब दो आदमी होते हैं तभी अपना दिल दूसरे के सामने खोलते हैं जब तीन हुए तब वह दो की बात कोसों दूर गई। कहा है –

''षट्करणो भिद्यते मंत्र:''

दूसरे यह कि किसी तीसरे आदमी के आ जाते ही या तो दोनों हिजाब में आय अपनी बात-चीत से निरस्त हो बैठेंगे या उसे निपट मूर्ख और अज्ञानी समझ बनाने लगेंगे। इसी सें –

''द्वाभ्यां तृतीयो न मवामि राजन्''

लिखा है जैसा गरम दूध और ठंडे पानी के दो बर्तन पास-पास सांट के रखे जायें तो एक का असर दूसरे में पहुँचता है अर्थात् दूध ठंडा हो जाता है और पानी गरम। वैसा ही दो आदमी पास-पास बैठे हों तो एक का गुप्त असर दूसरे पर पहुँच जाता है। चाहे एक दूसरे को देखे भी नहीं तब बोलनें की कौन कहे पर एक का दूसरे पर असर होना शुरू हो जाता है एक के शरीर की विद्युत दूसरे में प्रवेश करने लगती है। अब पास बैठने का इतना असर होता है तब बात-चीत में कितना अधिक असर होगा इसे कौन न स्वीकार करेगा। अस्तु, अब इस बात को तीन आदमियों के संगम में देखना चाहिए मानों एक त्रिकोण सा बन जाता है तीनों का चित्त मानों तीन कोण है और तीनों की मनोवृत्ति के प्रसरण की धारा मानो उस त्रिकोण की तीन रेखायें हैं। गुपचुप असर तो उन तीनों में परस्पर होता ही है जो बात-चीत तीनों में की गई वह मानों अँगूठी में नग-सा जड़ जाती है। उपरांत जब चार आदमी हुए तब बेतकल्लुफी को बिलकुल स्थान नहीं रहता खुल के बातें न होंगी जो कुछ बात-चीत की जायेगी वह 'फार्मेलिटी', गौरव और संजीदगी के लच्छे में सनी हुई। चार से अधिक की बात-चीत तो केवल राम रमौवल कहलायेगी। उस हम संलाप नहीं कह सकते।

बोध प्रश्न : 4. दो के बीच बात-चीत सबसे अच्छी क्यों मानी गई है ?

.....

.....

.....

इसी बात-चीत के अनेक भेद हैं। दो बुड्ढों की बात-चीत प्राय: जमाने की शिकायत पर हुआ करती है, बाबा आदम के समय का ऐसा दास्तान शुरू करते हैं जिसमें चार सच तो दस झूठ। एक बार उनकी बात-चीत का घोड़ा छूट जाना चाहिये पहरों बीत जाने पर भी अंत न होगा। प्राय : अंग्रेजी राज्य पर देश और पुराने समय की बुरी से बुरी रीति नीति का अनुमोदन और इस समय के सब भाँति लायक नौजवान की निंदा उनकी बात-चीत का

मुख्य प्रकरण होगा। अब उसके विपरीत नौजवानों की बात-चीत का कुछ तर्ज ही निराला है। जोश-उत्साह, नई उमंग, नया हौसला आदि मुख्य प्रकरण उनकी बात-चीत का होगा। पढ़े लिखे हुए तो शेक्सपीयर, मिलटन, मिल और स्पेन्सर उनके जीभ के आगे नाचा करेंगे। अपनी लियाकत के नशे में चूरंचूर हमचुनी दीगरे नेस्त। अक्खड़ कुश्तीबाज हुए तो अपनी पहलवानी और अक्खड़पन की चर्चा छेड़ेंगे। आशिकतकन हुए तो अपने-अपने प्रेमपात्री की प्रशंसा तथा आशिकतन बनने की हिमाकत की डींग मारेंगे। दो ज्ञात-यौवन हम उमर सहेलियों की बात-चीत का कुछ जायका ही निराला है। रस का समुद्र मानो उमड़ा चला आ रहा है। इसका परा स्वाद उन्हीं से पूछना चाहिए जिन्हें ऐसों की रस-सनी बातें सुनने को कभी भाग्य खड़ा है।

''प्रजल्पन्मत्पदे लग्नः कांतः किं ? नहि नूपुरः।

बदंती जारवृत्तांतं पत्यौ धूर्ता सखी धिया॥

पंति बुद्ध्वा सखि ततः प्रबुद्धास्मीत्यपूरयत्।''

अर्द्धजरती बुढ़ियाओं की बात-चीत का मुख्य प्रकरण बहू-बेटा वाली हुई तो अपनी-अपनी बहुओं या बेटों का गिला-शिकवा होगा या बिरादराने का कोई ऐसा राम-रसरा छेड़ बैठेंगी कि बात करते-करते अंत में खोढे दाँत निकाल-निकाल लड़ने लगेंगी । लड़कों की बात-चीत में खिलाड़ी हुए तो अपनी आवरगी की तारीफ करने के बाद कोई ऐसी सलाह गाठेंगे जिसमें उनको अपनी शैतानी जाहिर करने का पूरा मौका मिले। स्कूल के लड़कों की बात-चीत का उद्देश्य अपनी उस्ताद की शिकायत या तारीफ या अपने सहपाठियों में किसी के गुनऐगुन का कथोपकथन होता है। पढ़ने में तेज हुआ तो कभी अपने मुकाबिले दूसरे को कैफियत न देगा सुस्त और बोदा हुआ तो दबी बिल्ली- सा स्कूल भर को अपना गुरु ही मानेगा। अलावे इसके बात-चीत की और बहुत सी किस्में हैं। राजकाल की बात, व्यापार संबंधी बात-चीत, दो मित्रों में प्रेमालाप इत्यादि। हमारे देश में नीच जाति के लोगों में बात कही होती है लड़की लड़के वाले की ओर से। एक-एक आदमी बिचवई होकर दोनों के विवाह संबंध की कुछ बात-चीत करते हैं उस दिन से बिरादरी वालों को ज़ाहिर कर दिया जाता है कि अमुक की लड़की से अमुक के लड़के के साथ विवाह पक्का हो गया है और यह रसम बड़े उत्साह के साथ की जाती है। एक चंडूखाने की बात-चीत होती है इत्यादि, इस बात करने के अनेक प्रकार और ढंग हैं।

यूरोप के लोगों में बात करने का एक हुनर है 'आर्ट आफ़ कनवरसेशन' यहाँ तक बढ़ा है कि स्पीच और लेख दोनों इसे नहीं पाते । इसकी पूर्ण शोभा काव्यकला प्रवीण विद्वन्मंडली में है। ऐसे-ऐसे चतुराई के प्रसंग छेड़े जाते हैं कि जिन्हें सुन कान को अद्भुत सुख मिलता है सहृदय गोष्ठी इसी का नाम है। सहृदय गोष्ठी के बात-चीत की यही तारीफ है कि बात करने वालों की लियाकत अथवा पांडित्य का अभियान या कपट कहीं एक बात में न प्रकट हो वरन् जितने क्रम रसाभाव पैदा करने वाले सबों की बरकाते हुए चतुर सयाने अपनी बात-चीत का उपक्रम रखते हैं जो हमारे आधुनिक शुष्क पंडितों की बात-चीत में जिसे शास्त्रार्थ कहते हैं कभी आवे ही गा नहीं। मुर्ग और बटेर की लड़ाइयों की झपटा-झपटी के समान जिनकी काँव-काँव में सरस संलाप का तो चर्चा ही चलाना व्यर्थ है वरन् कपट और एक दूसरे को अपने पांडित्य के प्रकाश से बाद में परास्त करने का संघर्ष आदि रसाभास की सामग्री वहाँ बहुतायत के साथ आपको मिलेगी। घंटेभर तक काँव-काँव करते रहेंगे तय कुछ न होगा। बड़ी-बड़ी कंपनी और कारखाने आदि बड़े से बड़े काम इसी तरह पहले दो चार दिली दोस्तों की बात-चीत ही से शुरू किये गये उपरांत बढ़ते-बढ़ते यहाँ तक बढ़े कि हजारों मनुष्यों की उससे जीविका और लाखों की साल में आमदनी उसमें है। पच्चीस वर्ष के ऊपर वालों की बात-चीत अवश्य ही कुछ न कुछ सार गर्भित होगी। अनुभव और दूरन्देशी से खाली न होगी और पच्चीस से नीचे वालों की बात-चीत में यद्यपि अनुभव दूरदर्शिता और गौरव नहीं पाया जाता पर इसमें एक प्रकार का ऐसा दिल बहलाव और ताजगी रहती है कि जिसकी मिठास उससे दसगुना अधिक बढ़ी-चढ़ी है।

BRAOU

बोध प्रश्न : 5. सहृदय गोष्ठी किसे कहते हैं ?

.....

.....

.....

यहाँ तक हमने बाहरी बात-चीत का हाल लिखा जिसमें दूसरे फरीक के होने की बहुत ही आवश्यकता है। बिना किसी दूसरे मनुष्य के हुए जो किसी तरह संभव नहीं है और जो दो ही तरह पर हो सकती है या तो कोई हमारे यहाँ कृपा करे या हमीं जाकर दूसरे को सर्फराज करें। पर यह सब तो दुनियादारी है जिसमें कभी-कभी रसाभास होते देर नहीं लगती क्योंकि जो महाशय अपने यहाँ पधारें उसकी पूरी दिलजोई न हो सकी तो शिष्टाचार में त्रुटि हुई। अगर हमीं उनके यहाँ गये तो पहले तो बिना बुलाये जाना ही अनादर का मूल है और जाने पर अपने मन माफ़िक बर्ताव न किया गया तो मानो एक दूसरे प्रकार का नया घाव हुआ इसलिए सबसे उत्तम प्रकार बात-चीत करने का हम यही समझते हैं कि हम यह शक्ति अपने में पैदा कर सकें कि अपने आप बात कर लिया करें। हमारी भीतरी मनोवृत्ति जो प्रतिक्षण नये-नये रंग दिखलाया करती है और जो बाह्य प्रपंचात्मक संसार का एक बड़ा भारी आईना है जिसमें जैसी चाहो वैसी सूरत देख लेना कुछ दुर्घट बात नहीं है और जो एक ऐसा चमनिस्तान है जिसमें हर किस्म के बेल-बूटे खिले हुए हैं इस चमनिस्तान की सैर क्या कम दिल-बहलाव है? मित्रों का प्रेमालाप कभी इसकी सोलहवीं कला तक भी पहुँच सकता है? इसी सैर का नाम ध्यान या मनोयोग या चित्त का एकाग्र करना है जिसका साधन एक दो दिन का काम नहीं वरन् साल दो साल के अभ्यास के उपरांत यदि हम थोड़ा भी अपनी मनोवृत्ति स्थिर कर अवाक् हो अपने मन के साथ बात-चीत कर सकें तो मानो अति भाग्य है। एक वाक्-शक्ति मात्र के दमन से न जानिये कितने प्रकार का दमन हो गया। हमारी जिह्वा जो कतरनी के समान सदा स्वच्छंद चला करती है उसे यदि हमने दबा कर अपने काबू में कर लिया तो क्रोधादिक बड़े-बड़े अजेय शत्रुओं को बिन प्रयास जीत अपने वश कर डाला। इसलिये अवाक् रह अपने आप बात-चीत करने का यह साधन यावत् साधन का मूल है, शांति का परम पूज्य मंदिर है, परमार्थ का एकमात्र सोपान है।

बोध प्रश्न : 6. जिह्वा को वश में करने से क्या लाभ होता है ?

.....

.....

.....

B.A.O.U.

1.3 सारांश

पं. बालकृष्ण भट्ट जी का कथन है कि यदि मनुष्य और इन्द्रियाँ अपनी-अपनी शक्तियों से अविकल रहतीं और वाक् शक्ति उनमें न रहती तो हम नहीं जानते इस गूँगी सृष्टि का क्या हाल होता । सब लोग लुंज-पुंज से हो मानों एक कोने में बैठा दिए गए होते और जो कुछ दुख-सुख का अनुभव हम अपनी दूसरी-दूसरी इन्द्रियों के द्वारा करते उस अवाक् होने के कारण आपस में एक-दूसरे से कुछ न कह सुन सकते। अत: वाक् शक्ति मनुष्य को ईश्वर प्रदत्त वरदान है। इस वाक् शक्ति के अनेक फायदों में वक्तृता या स्पीच और बात-चीत दोनों हैं। लेखक ने बात-चीत और वक्तृता के अंतर को स्पष्ट किया है। बात-चीत में वक्ता को नाज़-नख़रा जाहिर करने का मौका नहीं दिया जाता। वक्तृता में वक्ता बड़े अन्दाज़ से गिन-गिन कर पाँव रखता हुआ मंच पर जा खड़ा हो और साहबान, मजलिस चेयरमेन, लेडिज़ एण्ड जेंटिलमेन की बहुत-सी स्तुति करें तब किसी तरह वक्तृता का आरंभ करें और खामखाह ढूँढ-ढूँढ कर कुछ ऐसे मौके अपनी स्पीच में लाएँ जिससे कि करतल-ध्वनि हो। हमारी साधारण बात-चीत का कुछ ऐसा घरेलू ढंग है कि उसमें न तो करतल ध्वनि के लिए मौका है और न

लोगों को कहकहे लगाने की कोई बात होती है। यदि दो व्यक्ति प्रेम पूर्वक वार्तालाप कर रहे हों और कोई चुटीली बात आ गई हों तो हँस पड़े। लेकिन यह हँसी मुस्कुराहट से होटों का केवल फड़क उठना ही हँसी की अंतिम सीमा है।

बात-चीत का ऐसा नशा होता है कि मनुष्य इस नशे को जीवन के अन्य आनंदित होने के नशों में से एक गिनता है। इस बात-चीत के कारण मनुष्य के भीतर जो कुछ धुआँ जमा रहता है वह सब वार्तालाप के कारण भाप बनकर बाहर निकल जाता है और मन हल्का तथा स्वच्छ होकर परम आनंद में मग्न हो जाता है। भट्ट जी ने रॉबिन सन् क्रूसो का उदाहरण देकर समझाया है।

बात-चीत के रूप मनुष्यों की संख्या पर निर्भर होते हैं। दो में अधिक आत्मीयता होती है जबकि बात-चीत करनेवालों की संख्या चार होते ही वह औपचारिकता या फारमालिटी का स्थान ले लेगी।

दो व्यक्तियों की बात-चीत में भी आयु के अनुसार बात-चीत के विचारों पर प्रकाश डाला गया है। योरोप के 'आर्ट आफ कनवरज़ेशन' को व्याख्यायित करते हुए भट्ट जी ने उसके अद्‌भुत सुख और मिठास को बताया है।

अंत में पं. बालकृष्ण भट्ट जी इस बात पर जोर देते हैं कि मनुष्य को अपने से चतुर को छोड़ स्वयं से ही बात करनी चाहिए हम यदि भीतर ही भीतर बात-चीत करें, मनन चिंतन करें, तो कई व्यर्थ के विवादों से बच सकते हैं और परमार्थ के मात्र सोपान को पा सकते हैं तथा क्रोधादिक बड़े-बड़े अजेय शत्रुओं को बिना प्रयास के ही जीत सकते हैं।

1.4 समीक्षा

इस पाठ में वाक्‌शक्ति के महत्व और उसकी उपादेयता पर प्रकाश डाला गया है। बात-चीत का आनंद भी जिह्वा के षड्‌रसों की भाँति है। पं. बालकृष्ण भट्ट जी ने आत्मचिंतन मनन को सर्वश्रेष्ठ माना है जिसके कारण मनुष्य अनेक विवादों से बच जाता है और क्रोध जैसे बड़े-बड़े शत्रुओं को पराजित कर सकता है।

1.5 शब्दार्थ

वाक्‌शक्ति	–	बोलने की शक्ति
अविकल	–	बेचैन, व्याकुल
लुंज पुंज	–	बिना किसी शक्ति के
फायदा	–	लाभ
वक्तृता	–	भाषण
पुण्याहवाचन	–	आशीर्वचन
नान्दीपाठ	–	स्तुति, संस्कृत नाटक की परंपरा
खामखाह	–	व्यर्थ में, बेकार में, बिना कारण
कहकहे उड़ाना	–	ठहाके लगाना, खुलकर हँसना
बेकदर	–	बिना सम्मान के
आदमी का चोला	–	मनुष्य का जन्म
राम रसरा	–	राम कहानी
लत	–	मज़ा, चस्का

BRAOU

1.6 अभ्यास

1.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. बात-चीत पाठ के सारांश को अपने शब्दों में लिखिए।
2. बात-चीत के महत्व को समझाते हुए उसके प्रकारों पर प्रकाश डालिए।
3. वाक्शक्ति की महत्ता बताते हुए उसके प्रयोगों की चर्चा कीजिए ।
4. पं. बालकृष्ण भट्ट जी के अनुसार बात-चीत मनुष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है इसको उदाहरण देकर समझाइए ।

1.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. बात-चीत और वक्तृता के अंतर को बतलाइये ।
2. बात-चीत कितने प्रकार की होती हैं ?
3. राबिनसन क्रूसो क्यों इतना आनन्दित हुआ ?
3. बात-चीत का वह कौन-सा प्रकार है जिसके कारण शत्रुओं को परास्त किया जा सकता है ?

1.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

1.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'बात-चीत' पाठ के सारांश को अपने शब्दों में लिखिए ।

उत्तर : बात-चीत पाठ के लेखक हैं पं. बालकृष्ण भट्ट । इस संसार में सभी प्राणियों से सर्वश्रेष्ठ प्राणी है मानव और उसकी इस श्रेष्ठता का कारण उसकी वाक्शक्ति है। वाक्शक्ति के उपयोग के दो प्रकार हैं एक तो वक्तृता या स्पीच और दूसरा बात-चीत। वक्तृता में मनुष्य को प्रयत्न कर के जानबूझकर मसालेदार वाक्य बोलने पड़ते हैं जो उपदेय को स्पष्ट करने में सहायक होते हों। किंतु बात-चीत वह घरेलू प्रकार है जिसमें किसी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती है।

बात-चीत का ऐसा नशा होता है कि मनुष्य इस नशे को जीवन के अन्य आनंदित होने के नशों में से एक गिनता है। बात-चीत के कारण मनुष्य के भीतर जो कुछ धुआँ जमा रहता है वह सब वार्तालाप के कारण भाप बनकर बाहर निकल जाता है और मन हल्का तथा स्वच्छ होकर परमआनंद में मग्न हो जाता है।

बात-चीत के रूप मनुष्यों की संख्या पर निर्भर होते हैं। दो में अधिक आत्मीयता होती है जबकि बात-चीत करनेवालों की संख्या चार होते ही वह औपचारिकता या फारमालिटी का स्थान ले लेगी । दो व्यक्तियों की बात-चीत में भी आयु के अनुसार बात-चीत के विचारों पर प्रकाश डाला गया। योरोप के आर्ट आफ कनवरजेशन की व्याख्या करते हुए भट्ट जी ने उसके अद्भुत सुख और मिठास को बताया है। अंत में भट्ट जी ने आत्मसंयम और आत्ममनन एवं चिंतन को सर्वश्रेष्ठ बतलाया है जिसके कारण मनुष्य विवादों से मुक्ति और क्रोधादिक शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकता है।

1.7.2. मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : बात-चीत और वक्तृता के अंतर को बतलाइये ।

उत्तर : बात-चीत और वक्तृता में अंतर इस प्रकार है - बात-चीत में वक्ता को नाज़-नखरा जाहिर करने का मौका नहीं दिया जाता और स्तुति आदि करने का अवसर भी नहीं मिल पाता है जबकि वक्तृता में वक्ता को

B.A.O.U

खामखाह ढूँढ कर ऐसे मौके लाने पड़ते हैं जिससे करतल-ध्वनि अवश्य हो सारा हाल कहकहों से गूँज उठे। उसे स्तुति करने का पूरा अवसर मिल जाता है। वक्तृता से मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास होता है जबकि बात-चीत में यह संभव नहीं है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. बालकृष्ण भट्ट जी ने ईश्वर द्वारा मनुष्य को दी गई शक्तियों में से वाक् शक्ति पर प्रकाश डाला है।
2. वक्तृता में वक्ता को नाज़ नखरा और अनेक प्रकार से श्रोताओं की स्तुति करने का अवसर मिलता है जिससे करतल ध्वनि हो जबकि बात-चीत बिल्कुल घरेलू और आत्मीय होती है।
3. 16 वर्षों के पश्चात् रॉबिनसन क्रूसो ने पहली बार किसी व्यक्ति के शब्दों को सुना तो उसे इतना हर्ष हुआ, इतनी प्रसन्नता हुई जैसे उसे दूसरा चोला मिल गया हो।
4. दो व्यक्तियों के बीच बातचीत सबसे अच्छी इसलिए मानी गई है कि दो व्यक्ति एक दूसरे के सामने दिल खोलकर बात करते हैं। यह बात तीन व्यक्तियों के बीच संभव नहीं।
5. जब विद्वानों के बीच किसी पांडित्यपूर्ण विषय पर बात-चीत हो और हरेक व्यक्ति अपनी बात बिना किसी छल-कपट के, लेकिन चतुराई के साथ रखे, जिससे सुननेवालों को सुख मिले तो ऐसी बातचीत को सहृदय गोष्ठी कहा जाता है।
6. जिह्वा को वश में करने से हम कई विवादों से बच जाते हैं और परमार्थ के मात्र सोपान को पा सकते हैं और क्रोधादिक बड़े-बड़े शत्रुओं को बिना प्रयास के ही जीत सकते हैं।

1.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भट्ट निबंधावली – पं. बालकृष्ण भट्ट
2. नूतन ब्रह्मचारी – पं. बालकृष्ण भट्ट

BRAOU

इकाई-2: उत्साह - रामचन्द्र शुक्ल

2.0 उद्देश्य

2.1 पाठ एवं लेखक परिचय

2.2 मूल पाठ

2.3 सारांश

2.4 समीक्षा

2.5 शब्दार्थ

2.6 अभ्यास

2.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

2.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

2.7 नमूने के प्रश्नोतर

2.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

2.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में प्रसिद्ध हिन्दी आलोचक तथा निबंध लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंध 'उत्साह' पर प्रकाश डाला गया है। इस निबंध के अध्ययन से आप

- उत्साह नामक मनोभाव के महत्व को समझ सकेंगे।
- उत्साह के भेदों पर विचार कर सकेंगे।
- उत्साह के लक्षणों पर विचार कर सकेंगे।
- लेखक के विचारों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

BRAOU

2.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ परिचय

'उत्साह' नामक निबंध चिंतामणि (भाग एक) से लिया गया है। चिंतामणि में श्रद्धा, भक्ति, करुणा, ईर्ष्या, भय, क्रोध आदि मनोविकारों से संबंधित निबंधों में उत्साह को प्रथम स्थान दिया गया हैं। क्योंकि बिना उत्साह के जीवन में मानव किसी भी कार्य को सफलतापूर्वक नहीं कर सकता। इस निबंध में लेखक ने उत्साह की परिभाषा, उत्साह के लक्षण, उत्साही व्यक्ति के गुण आदि पर प्रकाश डाला है। उत्साह के लिए आनंदपूर्ण प्रयत्न, धैर्य व साहस आवश्यक होते हैं। इसलिये लेखक ने साहसपूर्ण आनंद की उमंग का नाम उत्साह माना है। उनके अनुसार किसी कर्म के लिए किए गए प्रयत्न तथा उसका संकल्प ही उत्साह के लक्षण हैं। वस्तुत: कर्म भावना ही व्यक्ति के हृदय में उत्साह का संचार करती है अत: लेखक के अनुसार कर्म सौंदर्य के उपासक ही

सच्चे उत्साही माने जाते हैं। लेखक ने इस निबंध में दानवीर, युद्धवीर, दयावीर, बुद्धिवीर आदि के लक्षण बताकर फलासक्ति की अपेक्षा कर्म के प्रति आसक्ति को महत्वपूर्ण माना है। संक्षेप में यदि हमारे मन में कोई कार्य करने का दृढ़ संकल्प हो तथा इस कार्य को पूर्ण करने के लिए साहस के साथ प्रयत्न किए जाए तब उन कार्यों को करने में एक उत्साह निर्माण होता है और अंततः उस कार्य में सफलता प्राप्त होती है।

(आ) लेखक परिचय

हिन्दी के महान साधक, गहन तत्व-चिन्तक एवं विचारक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य के लिए महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनका जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में सन् 1884 में हुआ था। बचपन में इन्होंने उर्दू और अंग्रेजी का अध्ययन किया किन्तु हिन्दी साहित्य के अध्ययन में उनकी विशेष रुचि रही। कुछ समय के लिए मिर्जापुर के कलेक्टर के कार्यालय में कल्के की नौकरी की किन्तु उसे छोड़कर मिर्जापुर के एक स्कूल में अध्यापन का कार्य किया। हिन्दी शब्द सागर और नागरी प्रचारिणी सभा के विभिन्न कार्य-कलापों में भाग लेते हुए साहित्य के क्षेत्र में शुक्लजी की प्रतिभा चमक उठी। फलस्वरूप हिन्दी साहित्य को 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', 'तुलसी ग्रंथावली', 'जायसी ग्रंथावली' 'भ्रमरगीत सार' 'चिन्तामणि', (भाग दो), 'रस मीमांसा' आदि अमूल्य कृतियाँ प्राप्त हुईं। तत्पश्चात् बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक और बाद में विभागाध्यक्ष बने। सन् 1940 में हृदय गति रुक जाने से उनका स्वर्गवास हुआ।

शुक्लजी का साहित्यिक व्यक्तित्व बहुमुखी था। वे निबंधकार, कवि, अनुवादक, समालोचक तथा साहित्येतिहासकार थे। 'चिन्तामणि' में उन्होंने भाव मनोविकार से संबंधित तथा समीक्षात्मक निबंध लिखे हैं। मलिक मुहम्मद जायसी की रचनाओं को नागरी लिपि में प्रकाशित कर उन्होंने हिन्दी सूफी साहित्य को सम्यक् रूप में प्रस्तुत किया है। सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर युग विभाजन करते हुए उन्होंने पहली बार हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास लिखा। यह युग विभाजन आज तक प्रामाणिक माना जाता है।

कवि और अनुवादक की अपेक्षा उन्हें एक निबंधकार, इतिहासकार तथा आलोचक के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई। उनका समग्र साहित्य इस प्रकार है।

इतिहास	–	हिन्दी साहित्य का इतिहास
निबंध	–	चिन्तामणि भाग दो, साहित्य, प्राचीन भारतीयों का पहनावा
आलोचना	–	रस मीमांसा, जायसी ग्रंथावली, तुलसी ग्रंथावली, भ्रमरगीत, काव्य में रहस्यवाद, त्रिवेणी
संपादन	–	हिन्दी शब्द सागर, काशी-नागरी प्रचारिणी पत्रिका 'हिन्दी'
कहानी	–	ग्यारह वर्ष का समय
अनुवाद	–	एडविन आरनोल्ड कृत लाइट ऑफ एशिया का ब्रजभाषा में 'बुद्ध चरित' नाम से काव्यानुवाद।

शुक्ल जी के निबंध उनके विचार-गांभीर्य, अनुभव, प्रौढ़ता तथा संवेदनशीलता के परिचायक हैं। हिन्दी साहित्य के समर्थ आलोचक होने के साथ ही वे भाषा के प्रकाण्ड पंडित तथा अत्यंत गंभीर एवं सुगठित शैली के प्रतिष्ठापक माने जाते हैं। उनकी परिमार्जित, संस्कृतनिष्ठ भाषा ने ही उनकी शैली को प्रौढ़ रूप दिया है। उनका प्रत्येक वाक्य सूत्रबद्ध होने के कारण पाठकों की विचारों की गति को तीव्र बनाता है। अपने विचारों को संक्षेप में तथा पूर्ण रूप में प्रस्तुत करने में वे सक्षम हैं। उनकी शैली समीक्षात्मक होते हुए भी उसमें सरलता, सरसता, मार्मिकता एवं गांभीर्य हैं।

BRAOU

2.2 मूलपाठ

दु:ख के वर्ग में जो स्थान भय का है, वही स्थान आनन्द-वर्ग में उत्साह का हैं। भय में हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के नियम से विशेष रूप में दुखी और कभी-कभी उस स्थिति से अपने को दूर रखने के लिए प्रयत्नवान भी होते हैं। उत्साह में हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चय द्वारा प्रस्तुत कर्म-सुख की उमंग से अवश्य प्रयत्नवान होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता के साथ-साथ कर्म में प्रवृत्त होने के आनन्द का योग रहता है। साहसपूर्ण आनन्द की उमंग का नाम उत्साह है। कर्म-सौन्दर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

जिन कर्मों में किसी प्रकार का कष्ट या हानि सहने का साहस अपेक्षित होता है उन सबके प्रति उत्कण्ठापूर्ण आनन्द उत्साह के अन्तर्गत लिया जाता है। कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के भी भेद होते हैं। साहित्य-मीमांसकों ने इसी दृष्टि से युद्ध-वीर, दान-वीर, दया-वीर इत्यादि भेद किए हैं। इनमें सबसे प्राचीन और प्रधान युद्ध वीरता है, जिसमें आघात, पीड़ा या मृत्यु तक की परवाह नहीं रहती। इस प्रकार की वीरता का प्रयोजन अत्यन्त प्राचीन काल से पड़ता चला आ रहा है, जिसमें साहस और प्रयत्न दोनों चरम उत्कर्ष पर पहुँचते हैं। पर केवल कष्ट या पीड़ा सहन करने के साहस में ही उत्साह का स्वरूप स्फुरित नहीं होता। उसके साथ आनन्दपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कण्ठा का योग चाहिए। बिना बेहोश हुए भारी फोड़ा चिराने को तैयार होना साहस कहा जाएगा, पर उत्साह नहीं। इसी प्रकार चुपचाप, बिना हाथ-पैर हिलाए, घोर प्रहार सहने के लिए तैयार रहना साहस और कठिन-से-कठिन प्रहार सहकर भी जगह से न हटना धीरता कही जाएगी। ऐसे साहस और धीरता को उत्साह के अन्तर्गत तभी ले सकते हैं जबकि साहसी या धीर उस काम को आनन्द के साथ करता चला जाएगा जिसके कारण उसे इतने प्रहार सहने पड़ते हैं। सारांश यह है कि आनन्दपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कण्ठा में ही उत्साह का दर्शन होता है, केवल कष्ट सहने के निश्चेष्ट साहस में नहीं। धृति और साहस दोनों का उत्साह के बीच संचरण होता है।

बोध प्रश्न : 1. उत्साह में किसका योग रहता है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 2. उत्साही किसे कहा जाता है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 3. उत्साह के कितने भेद हैं ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 4. युद्धवीरता में क्या आवश्यक है ?

.....

BRAOU

दान-वीर में अर्थ-त्याग का साहस अर्थात् उसके कारण होने वाले कष्ट या कठिनता को सहने की क्षमता अन्तर्निहित रहती है। दानवीरता तभी कही जाएगी जब दान के कारण दानी को अपने जीवन-निर्वाह में किसी प्रकार का कष्ट या कठिनता दिखाई देगी। इसी कष्ट या कठिनता की मात्रा या सम्भावना जितनी ही अधिक होगी, दानवीरता उतनी ही ऊँची समझी जाएगी। पर इस अर्थ-त्याग के साहस के साथ ही जब तक पूर्ण तत्परता और आनन्द के चिह्न न दिखाई पड़ेंगे तब तक उत्साह का स्वरूप न खड़ा होगा।

युद्ध के अतिरिक्त संसार में और भी ऐसे विकट काम होते हैं जिनमें घोर शारीरिक कष्ट सहना पड़ता है और प्राण-हानि तक की सम्भावना रहती है। अनुसंधान के लिए तुषार-मण्डित अभ्रभेदी अगम्य पर्वतों की चढ़ाई, ध्रुव देश या सहारा के रेगिस्तान का सफर, क्रूर, बर्बर जातियों के बीच अज्ञात घोर जंगलों में प्रवेश इत्यादि भी पूरी वीरता और पराक्रम के कर्म हैं। इनमें जिस आनन्दपूर्ण तत्परता के साथ लोग प्रवृत्त हुए हैं वह भी उत्साह ही है।

मनुष्य शारीरिक कष्ट से ही पीछे हटने वाला प्राणी नहीं है। मानसिक क्लेश की सम्भावना से भी बहुत-से कर्मों की ओर प्रवृत्त होने का साहस उसे नहीं होता। जिन बातों से समाज के बीच उपहास, निन्दा, अपमान इत्यादि का भय रहता है उन्हें अच्छी और कल्याणकारिणी समझते हुए भी बहुत से लोग उनसे दूर रहते हैं। प्रत्यक्ष हानि देखते हुए भी कुछ प्रथाओं का अनुसरण बड़े-बड़े समझदार तक इसलिए करते चलते हैं कि उनके त्याग से वे बुरे कहे जाएंगे, लोगों में उनका वैसा आदर-सम्मान न रह जाएगा। उसके लिए मानग्लानि का कष्ट सब शारीरिक क्लेशों से बढ़कर होता है। जो लोग मान-अपमान का कुछ भी ध्यान न करके निन्दा-स्तुति की कुछ भी परवाह न करके किसी प्रचलित प्रथा के विरुद्ध पूर्ण तत्परता और प्रसन्नता के साथ कार्य करते जाते हैं वे एक ओर तो उत्साही और वीर कहलाते हैं दूसरी ओर भारी बेहया।

किसी शुभ परिणाम पर दृष्टि रखकर निन्दा-स्तुति, मान-अपमान आदि की कुछ परवाह न करके प्रचलित प्रथाओं का उल्लंघन करने वाले वीर या उत्साही कहलाते हैं, यह देखकर बहुत-से लोग केवल इसके विरुद्ध लोभ में ही अपनी उछल-कूद दिखाया करते हैं। वे केवल उत्साही या साहसी कहे जाने के लिए ही चली आती हुई प्रथाओं को तोड़ने की धूम मचाया करते हैं। शुभ या अशुभ परिणाम से उनसे कोई मतलब नहीं, उनकी ओर उनका ध्यान लेशमात्र नहीं रहता। जिस पक्ष के बीच की सुख्याति का वे अधिक महत्व समझते हैं उनकी वाहवाही से उत्पन्न आनन्द की चाह में वे दूसरे पक्ष के बीच की निन्दा या अपमान की कुछ परवाह नहीं करते। ऐसे ओछे लोगों के साहस या उत्साह की अपेक्षा उन लोगों का उत्साह या साहस-भाव की दृष्टि से - कहीं अधिक मूल्यवान है जो किसी प्राचीन प्रथा की - चाहे वह वास्तव में हानिकारिणी ही हो - उपयोगिता का सच्चा विश्वास रखते हुए प्रथा तोड़ने वालों की निन्दा, उपहास, अपमान आदि सहा करते हैं।

बोध प्रश्न : 5. दानवीर का क्या लक्षण है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 6. प्रचलित प्रथा का विरोध करने के लिए क्या करना पड़ता है ?

.....

.....

.....

BRAOU

समाज-सुधार के वर्तमान आन्दोलनों के बीच जिस प्रकार सच्ची अनुभूति से प्रेरित उच्चाशय और गम्भीर पुरुष पाये जाते हैं उसी प्रकार तुच्छ मनोवृत्तियों द्वारा प्रेरित साहसी और दयावान् भी बहुत मिलते हैं। मैंने कई छिछोरों और लम्पटों को विधवाओं की दशा पर दया दिखाते हुए उनके पापाचार के लम्बे-चौड़े दास्तान हर दम सुनते-सुनाते पाया है। ऐसे लोग वास्तव में काम-कथा के रूप में ऐसे वृत्तांतों का तन्मयता के साथ कथन और श्रवण करते हैं। इस ढाँचे के लोगों से सुधार के कार्य में कुछ सहायता पहुँचाने के स्थान पर बाधा पहुँचाने की ही सम्भावना रहती है। सुधार के नाम पर साहित्य के क्षेत्र में भी ऐसे लोग गन्दगी फैलाते पाये जाते हैं।

उत्साह की गिनती अच्छे गुणों में होती है। किसी भाव के अच्छे या बुरे होने का निश्चय अधिकतर उसकी प्रवृत्ति के शुभ या अशुभ परिणाम के विचार से होता है। वही उत्साह जो कर्त्तव्य कर्मों के प्रति इतना सुन्दर दिखाई पड़ता है, अकर्तव्य कर्मों की ओर होने पर वैसा श्लाघ्य नहीं प्रतीत होता। आत्म-रक्षा, पर-रक्षा, देश-रक्षा आदि के निमित्त साहस की जो उमंग देखी जाती है उसके सौन्दर्य को पर-पीड़न, डकैती आदि कर्मों का साहस कभी नहीं पहुँच सकता। यह बात होते हुए भी विशुद्ध उत्साह या साहस की प्रशंसा संसार में थोड़ी-बहुत होती ही है। अत्याचारियों या डाकुओं के शौर्य और साहस की कथाएँ भी लोग तारीफ करते हुए सुनते हैं।

अब तक उत्साह का प्रधान रूप ही हमारे सामने रहा, जिसमें साहस का पूरा योग रहता है। पर कर्ममात्र के संपादन में जो तत्परतापूर्ण आनन्द देखा जाता है वह उत्साह ही कहा जाता है। सब कामों में साहस अपेक्षित नहीं होता, पर थोड़ा-बहुत आराम-विश्राम सुभीते आदि का त्याग सबको करना पड़ता है, और कुछ नहीं तो उठकर बैठना, खड़ा होना या दस-पाँच कदम चलना ही पड़ता है। जब तक आनन्द का लगाव किसी क्रिया व्यापार या उसकी भावना के साथ नहीं दिखाई पड़ता तब तक उसे 'उत्साह' की संज्ञा प्राप्त नहीं होती। यदि किसी प्रिय मित्र के आने का समाचार पाकर हम चुपचाप ज्यों-के-त्यों आनन्दित होकर बैठे रह जाएँ या थोड़ा हँस भी दें तो यह हमारा उत्साह नहीं कहा जाएगा। हमारा उत्साह तभी कहा जाएगा जब हम अपने मित्र का आगमन सुनते ही उठ खड़े होंगे। उससे मिलने के लिए दौड़ पड़ेंगे और उसके ठहरने आदि के प्रबन्ध में प्रसन्न-मुख इधर-उधर आते-जाते दिखाई देंगे। प्रयत्न और कर्म संकल्प उत्साह नामक आनन्द के नित्य लक्षण है।

बोध प्रश्न : 7. कोई भी भाव अच्छा या बुरा कैसे माना जाता है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 8. उत्साह के नित्य लक्षण क्या हैं ?

.....

.....

.....

प्रत्येक कर्म में थोड़ा या बहुत बुद्धि का योग भी रहता है। कुछ कर्मों में तो बुद्धि की तत्परता और शरीर की तत्परता दोनों बराबर साथ-साथ चलती हैं। उत्साह की उमंग जिस प्रकार हाथ-पैर चलवाती है, उसी प्रकार बुद्धि से भी काम कराती है । ऐसे उत्साह वाले वीर को कर्मवीर कहना चाहिए या बुद्धिवीर-यह प्रश्न मुद्रा राक्षस नाटक बहुत अच्छी तरह हमारे सामने लाता है। चाणक्य और राक्षस के बीच जो चोटें चली हैं वे नीति की हैं - शस्त्र की नहीं। अत: विचार करने की बात यह है कि उत्साह की अभिव्यक्ति बुद्धि-व्यापार के अवसर पर होती है अथवा बुद्धि द्वारा निश्चित उद्योग में तत्पर होने की दशा में । हमारे देखने में तो उद्योग की तत्परता में ही उत्साह की अभिव्यक्ति होती है अत: कर्मवीर ही कहना ठीक है।

BRAOU

बुद्धि-वीर दृष्टान्त कभी-कभी हमारे पुराने ढंग के शास्त्रार्थों में देखने को मिल जाते हैं। जिस समय किसी भारी शास्त्रार्थी पण्डित से भिड़ने के लिए कोई विद्यार्थी आनन्द के साथ सभा में आगे आता है, उस समय उसके बुद्धि-साहस की प्रशंसा अवश्य होती है। वह जीते या हारे, बुद्धि-वीर समझा ही जाता है। इस जमाने में वीरता का प्रसंग उठाकर वाग्वीर का उल्लेख यदि न हो तो बात अधूरी ही समझी जाएगी। ये वाग्वीर आजकल बड़ी-बड़ी सभाओं के मंचों पर से लेकर स्त्रियों के उठाये हुए पारिवारिक प्रपंचों तक में पाये जाते हैं और काफी तादाद में।

थोड़ा यह भी देखना चाहिए कि उत्साह में ध्यान किस पर रहता है। कर्म पर, उसके फल पर अथवा व्यक्ति या वस्तु पर। हमारे विचार में उत्साही वीर का ध्यान आदि से अन्त तक पूरी कर्म श्रृंखला पर से होता हुआ उसकी सफलता रूपी समाप्ति तक फैला रहता है। इसी ध्यान से जो आनन्द की तरंगे उठती हैं वे ही सारे प्रयत्न को आनन्दमय कर देती हैं। युद्ध-वीर में विजेतव्य को आलम्बन कहा गया है। उसका अभिप्राय यही है कि विजेतव्य कर्म-प्रेरक के रूप में वीर के ध्यान में स्थिर रहता है, वही कर्मस्वरूप का भी निर्धारण करता है। पर आनन्द और साहस के मिश्रित भाव का सीधा लगाव उसके साथ नहीं रहता। सच पूछिए तो वीर के उत्साह का विषय विजय-विधायक कर्म या युद्ध ही रहता है। दानवीर और धर्मवीर पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। दान दयावश, श्रद्धावश या कीर्ति-लोभवश दिया जाता है । यदि श्रद्धावश दान दिया जा रहा है तो दान-पात्र वास्तव में श्रद्धा का और यदि दया-वश दिया जा रहा है तो पीड़ित यथार्थ में दया का विषय या आलम्बन ठहरता है। अत: उस श्रद्धा या दया की प्रेरणा से जिस कठिन या दुस्साध्य कर्म की प्रवृत्ति होती है उसी की ओर उत्साही का साहसपूर्ण आनन्द उन्मुख कहा जा सकता है। अत: और रसों में आलम्बन का स्वरूप जैसा निर्दिष्ट रहता है वैसा वीररस में नहीं। बात यह है कि उत्साह एक यौगिक भाव है जिसमें साहस और आनन्द का मेल रहता है।

जिस व्यक्ति या वस्तु पर प्रभाव डालने के लिए वीरता दिखाई जाती है उसकी ओर उन्मुख उत्साह नामक भाव होता है। सारांश यह है कि किसी व्यक्ति या वस्तु के हाथ उत्साह का सीधा लगाव नहीं होता। समुद्र लाँघने के लिए जिस उत्साह के साथ हनुमान उठे हैं उसका कारण समुद्र नहीं - समुद्र लाँघने का विकट कर्म है। कर्म-भावना ही उत्साह उत्पन्न करती है, वस्तु या व्यक्ति की भावना नहीं।

BRAOU

बोध प्रश्न : 9. उत्साही वीर का ध्यान किस पर रहता है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 10. उत्साह उत्पन्न करने में क्या महत्वपूर्ण है ?

.....

.....

.....

किसी कर्म के सम्बन्ध में जहाँ आन्दपूर्ण तत्परता दिखाई पड़ी कि हम उसे उत्साह कह देते हैं। कर्म के अनुष्ठान में जो आनन्द होता है उसका विधान तीन रूपों में दिखाई पड़ता है।

1. कर्म-भावना से उत्पन्न,

2. फल-भावना से उत्पन्न और

3. आगन्तुक, अर्थात् विषयान्तर से प्राप्त।

इनमें कर्म-भावना-प्रसूत आनन्द को ही सच्चे वीरों का आनन्द समझना चाहिए, जिसमें साहस का योग प्राय: बहुत अधिक रहा करता है। सच्चा वीर जिस समय मैदान में उतरता है उसी समय उसमें उतना आनन्द भरा रहता है जितना औरों को विजय या सफलता प्राप्त करने पर होता है। उसके सामने कर्म और फल के बीच या तो कोई अन्तर होता ही नहीं या बहुत सिमटा हुआ होता है। इसी से कर्म की ओर यह उसी झोंक से लपकता है जिस झोंक से साधारण लोग फल की ओर लपका करते हैं। इसी कर्मप्रवर्त्तक आनन्द की मात्रा के हिसाब से शौर्य और साहस का स्फुरण होता है।

फल की भावना से उत्पन्न आनन्द भी साधक कर्मों की ओर हर्ष और तत्परता के साथ प्रवृत्त करता है। पर फल का लोभ जहाँ प्रधान रहता है वहाँ कर्म-विषयक आनन्द उसी फल की भावना की तीव्रता और मन्दता पर अवलम्बित रहता है। उद्योग के प्रभाव के बीच जब-जब फल की भावना मन्द पड़ती है - उसकी आशा कुछ धुंधली पड़ जाती है तब-तब आनन्द की उमंग गिर जाती है और उसी के साथ उद्योग में भी शिथिलता आ जाती है। पर कर्म-भावना-प्रधान उत्साह बराबर एकरस रहता है। फलासक्त उत्साही असफल होने पर खिन्न और दु:खी होता है, पर कर्मासक्त उत्साही केवल कर्मानुष्ठान के पूर्व की अवस्था में हो जाता है । अत: हम कह सकते हैं कि कर्म-भावना-प्रधान उत्साह ही सच्चा उत्साह है । फल-भावना-प्रधान उत्साह तो लोभ ही का एक प्रच्छन्न रूप है।

बोध प्रश्न : 11. कर्म के अनुष्ठान में प्राप्त आनंद के कितने रूप हैं ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 12. फल-भावना प्रधान उत्साह किसका रूप है ?

.....

.....

.....

उत्साह वास्तव में कर्म और फल की मिली-जुली अनुभूति है जिसकी प्रेरणा से तत्परता आती है। यदि फल दूर ही पर दिखाई पड़े, उसकी भावना के साथ ही उसका लेशमात्र भी कर्म या प्रयत्न के साथ लगाव न मालूम हो तो हमारे हाथ-पाँव कभी न उठें और उस फल के साथ हमारा संयोग ही न हो। इससे कर्म-श्रृंखला की पहली कड़ी पकड़ते ही फल के आनन्द की भी कुछ अनुभूति होने लगती है। यदि हमें यह निश्चय हो जाए कि अमुक स्थान पर जाने से हमें किसी प्रिय व्यक्ति का दर्शन होगा तो उस निश्चय के प्रभाव से हमारी यात्रा भी अत्यन्त प्रिय हो जाएगी। हम चल पड़ेंगे और हमारे अंगों की प्रत्येक गति में प्रफुल्लता दिखाई देगी। यही प्रफुल्लता कठिन-से-कठिन कर्मों के साधन में भी देखी जाती है। वे कर्म भी प्रिय हो जाते हैं और अच्छे लगने लगते हैं, जब तक फल तक पहुँचनेवाला कर्म-पथ अच्छा न लगेगा तब तक केवल फल का अच्छा लगना कुछ नहीं। फल की इच्छा मात्र हृदय में रखकर जो प्रयत्न किया जाएगा वह अभावमय और आनन्दशून्य होने के कारण निर्जीव-सा होगा।

कर्म-रुचि-शून्य प्रयत्न में कभी-कभी इतनी उतावली और आकुल होती है कि मनुष्य साधना के उत्तरोत्तर क्रम का निर्वाह न कर सकने के कारण बीच ही में चूक जाता है। मान लीजिए कि एक ऊँचे पर्वत के शिखर पर विचरते हुए किसी व्यक्ति को नीचे बहुत दूर तक गई हुई सीढ़ियाँ दिखाई दीं और यह मालूम हुआ कि

BRAOU

नीचे उतरने पर सोने का ढेर मिलेगा। यदि उसमें उतनी सजीवता है कि उक्त सूचना के साथ ही वह उस स्वर्ण-राशि के साथ एक प्रकार के मानसिक संयोग का अनुभव करने लगा तथा उसका चित्त प्रफुल्ल और अंग सचेष्ट हो गए, उसे एक-एक सीढ़ी स्वर्णमयी दिखाई देगी, एक-एक सीढ़ी उतरने में उसे आनन्द मिलता जाएगा, एक-एक क्षण उसे सुख से बीतता हुआ जान पड़ेगा और वह प्रसन्नता के साथ स्वर्णराशि तक पहुँचेगा। इस प्रकार उसके प्रयत्न-काल को भी फल-प्राप्ति काल के अन्तर्गत ही समझना चाहिए । इसके विरुद्ध यदि उसका हृदय दुर्बल होगा और उसमें इच्छामात्र ही उत्पन्न होकर रह जाएगी तो अभाव के बोध के कारण उसके चित्त में यही होगा कि कैसे झट से नीचे पहुँच जाए। उसे एक-एक सीढ़ी उतरना बुरा मालूम होगा और आश्चर्य नहीं कि वह या तो हारकर बैठ जाए या लड़खड़ाकर मुँह के बल गिर पड़े।

फल की विशेष आसक्ति से कर्म के लाघव की वासना उत्पन्न होती है। चित्त में यही आता है कि कर्म बहुत कम या बहुत सरल करना पड़े और फल बहुत-सा मिल जाए। श्रीकृष्ण ने कर्म-मार्ग से फलासक्ति की प्रबलता हटाने का बहुत ही स्पष्ट उपदेश दिया पर उनके समझाने पर भी भारतवासी इस वासना से ग्रस्त होकर कर्म से तो उदास हो बैठे और फल के इतने पीछे पड़े कि गर्मी में ब्राह्मण को एक पेठा देकर पुत्र की आशा करने लगे, चार आने रोज का अनुष्ठान कराके व्यापार से लाभ, शत्रु पर विजय, रोग से मुक्ति, धन-धान्य की वृद्धि तथा और भी न जाने क्या-क्या चाहने लगे। आसक्ति प्रस्तुत या उपस्थित वस्तु में ही ठीक कही जा सकती है । कर्म सामने उपस्थित रहता है। इससे आसक्ति उसी में चाहिए । फल दूर रहता है, इससे उसकी ओर कर्म का लक्ष्य काफी है। जिस आनन्द से कर्म की उत्तेजना होती है और जो आनंद कर्म करते समय तक बराबर चला चलता है उसी का नाम उत्साह है।

कर्म के मार्ग पर आनन्दपूर्वक चलता हुआ उत्साही मनुष्य यदि अन्तिम फल तक न भी पहुँचे तो भी उसकी दशा कर्म न करने वाले की अपेक्षा अधिकतर अवस्थाओं में अच्छी रहेगी क्योंकि एक तो कर्म-काल में उसका जो जीवन बीता वह सन्तोष या आनन्द में बीता, उसके उपरान्त फल की अप्राप्ति पर भी उसे यह पछतावा न रहा कि मैंने प्रयत्न नहीं किया। फल पहले से कोई बना-बनाया पदार्थ नहीं होता। अनुकूल प्रयत्न-कर्म के अनुसर, उसके एक-एक अंग की योजना होती है। बुद्धि द्वारा पूर्ण रूप से निश्चित की हुई व्यापार-परम्परा का नाम ही प्रयत्न है। किसी मनुष्य के घर का कोई प्राणी बीमार है। वह वैद्यों के यहाँ से जब तक औषधि ला-लाकर रोगी को देता जाता है और इधर-उधर दौड़-धूप करता जाता है तब तक उसके चित्त में जो सन्तोष रहता है - प्रत्येक नए उपचार के साथ जो आनन्द का उन्मेष होता रहता है - यह उसे कदापि न प्राप्त होता, यदि वह रोता हुआ बैठा रहता। प्रयत्न की अवस्था में उसके जीवन का जितना अंश सन्तोष, आशा और उत्साह में बीता, अप्रयत्न की दशा में उतना ही अंश केवल शोक और दु:ख में कटता। इसके अतिरिक्त रोगी के न अच्छे होने की दशा में भी वह आत्म-ग्लानि के उस कठोर दु:ख से बचा रहेगा जो उसे जीवन भर यह सोच-सोचकर होता कि मैंने पूरा प्रयत्न नहीं किया।

कर्म में आनन्द अनुभव करने वालों ही का नाम कर्मण्य है। धर्म और उदारता के उच्च कर्मों के विधान में ही एक ऐसा दिव्य आनन्द भरा रहता है कि कर्त्ता को वे कर्म ही फल-स्वरूप लगते हैं । अत्याचार का दमन और क्लेश का शमन करते हुए चित्त में जो उल्लास और तुष्टि होती है वही लोकोपकारी कर्म-वीर का सच्चा सुख है। उसके लिए सुख तब तक के लिए रुका नहीं रहता जब तक कि फल प्राप्त न हो जाए बल्कि उसी समय से थोड़ा-थोड़ा करके मिलने लगा है जब से वह कर्म की ओर हाथ बढ़ाता है।

बोध प्रश्न : 13. प्रयत्न किसे कहते हैं ?

.....

.....

.....

BRAOU

बोध प्रश्न : 14. कर्मण्य किसे कहा जाता है ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 15. लोकोपकारी कर्मवीर का सच्चा सुख किसमें है ?

.....

.....

.....

कभी-कभी आनन्द का मूल विषय तो कुछ और रहता है, पर उस आनन्द के कारण एक ऐसी स्फूर्ति उत्पन्न होती है जो बहुत से कामों की ओर हर्ष के साथ अग्रसर करती है । इसी प्रसन्नता और तत्परता को देख लोग कहते हैं कि वे काम बड़े उत्साह से किए जा रहे हैं। यदि किसी मनुष्य को बहुत-सा लाभ हो जाता है या उसकी कोई बड़ी भारी कामना पूर्ण हो जाती है तो जो काम उसके सामने-आते हैं उन सबको वह बड़े हर्ष और तत्परता के साथ करता है। उसके इस हर्ष और तत्परता को लोग उत्साह ही कहते हैं। इसी प्रकार किसी उत्तम फल या सुख-प्राप्ति की आशा या निश्चय से उत्पन्न आनन्द, फलोन्मुख प्रयत्नों के अतिरिक्त और दूसरे व्यापारों के साथ संलग्न होकर, उत्साह के रूप में दिखाई पड़ता है। यदि हम किसी ऐसे उद्योग में लगे हुए हैं जिससे आगे चलकर हमें बहुत लाभ या सुख की आशा है तो हम उस उद्योग को तो उत्साह के साथ करते ही हैं, अन्य कार्यों मेंभी प्राय: अपना उत्साह दिखा देते हैं।

यह बात उत्साह में नहीं, अन्य मनोविकारों में भी बराबर पाई जाती है। यदि हम किसी बात पर क्रुद्ध बैठे हैं और इसी बीच में कोई दूसरा आकर हमसे कोई बात सीधी तरह भी पूछता है तो भी हम उस पर झुँझला उठते हैं। इस झुँझलाहट का न तो कोई निर्दिष्ट कारण होता है न उद्देश्य। यह केवल क्रोध की स्थिति व्याघात को रोकने की क्रिया है, क्रोध की रक्षा का प्रयत्न है। इस झुंझलाहट द्वारा हम यह प्रकट करते हैं कि हम क्रोध में हैं और क्रोध ही में रहना चाहते हैं। क्रोध को बनाए रखने के लिए हम उन बातों से भी क्रोध ही संचित करते हैं जिनसे दूसरी अवस्था में हम विपरीत भाव प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार यदि हमारा चित्त किसी विषय में उत्साहित रहता है तो हम अन्य विषयों में भी अपना उत्साह दिखा देते हैं। यदि हमारा मन बढ़ा हुआ रहता है तो हम बहुत-से काम प्रसन्नतापूर्वक करने के लिए तैयार हो जाते हैं। इसी बात का विचार करके सलाम-साधक लोग हाकिमों से मुलाकात करने के पहले अर्दलियों से उनका मिज़ाज पूछ लिया करते हैं।

2.3 सारांश

पाठ के आरंभ में उत्साह की परिभाषा देते हुए शुक्लजी ने कहा है मानव हृदय में साहसयुक्त आनंद की जो उमंग होती है उसे उत्साह का नाम दिया जाता है। मन को दु:ख देनेवाले भावों में भय एक भाव है, जिसके कारण हम किसी कार्य से दूर रहने का प्रयास करते हैं। उसी प्रकार मन को आनंद देनेवाले भावों में उत्साह है जिससे हम कार्य करने के लिए तत्पर रहते हैं। उत्साह के कारण हम कष्ट या हानि को सहकर, कर्म करने में साहस के साथ तत्पर रहते हैं। इसी से कष्ट और हानि के अन्तर को ध्यान में रखकर ही बिद्वानों ने उत्साह को युद्धवीर, दानवीर तथा दयावीर नामक तीन श्रेणियों में विभाज़ित किया है। उनमें भी युद्धवीर को सबसे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। क्योंकि युद्ध वीरता में साहस और प्रयत्न की चरमसीमा होती है।

लेखक ने उत्साह के क्षेत्र को अत्यंत विस्तृत तथा व्यापक माना है। उनके मतानुसार शारीरिक कष्ट के अतिरिक्त मानसिक कष्ट को सहते हुए आनंद के साथ किसी कार्य में संलग्न रहना उत्साह माना जाता है। किन्तु

वह उत्साह प्रशंसनीय नहीं कहा जा सकता जो उसे निरर्थक कामों को करने की प्रेरणा दे या जिसमें स्वार्थ की भावना निहित हो। लोगों की आलोचनाओं को झेलते हुए सामाजिक प्रवृत्तियों को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील लोग सच्चे उत्साही होते हैं किन्तु यश प्राप्ति के लिए ऐसे कार्य करने वाले उत्साही नहीं कहलाते। संसार के अनेक कठिन कार्य करनेवाले व्यक्तियों में जो आनंदपूर्ण तत्परता है वही उत्साह है। दानवीरता में भी धन को त्याग देने के साथ पूर्ण तत्परता और आनंद हो तभी उसमें उत्साह माना जाएगा।

उत्साह की गिनती अच्छे गुणों में होती है। दुष्ट कर्म या अत्याचारों के प्रति जो तत्परता या प्रसन्नता दिखाई जाती है, उसे उत्साह नहीं कह सकते। शुभ कार्य के लिए किया गया साहस, तत्परता तथा उससे प्राप्त आनंद उत्साह के अंतर्गत माना जाता है।

शुक्लजी ने उत्साही व्यक्ति के बुद्धिवीर तथा कर्मवीर दो भेद बताए हैं। प्रत्येक कार्य करने में थोड़ा बहुत बुद्धि का भी योग रहता है। बुद्धि द्वारा ही कर्म प्रेरित होते हैं। बुद्धि की तत्परता के दर्शन उद्योग की तत्परता में ही होते हैं। अत: किसी को बुद्धिवीर न कहकर, कर्मवीर कहना ही संगत होगा। प्राचीन काल के शास्त्रार्थियों को बुद्धिवीर कहा जा सकता है।

उत्साह में ध्यान कर्म पर, उसके उल पर अथवा व्यक्ति या वस्तु पर रहता है , यह विचारणीय है। शुक्लजी के अनुसार उत्साह कर्म करने के प्रारंभ से लेकर उसकी सफलता के साथ निर्वाह तक बना रहता है। कार्य करने के साहस के साथ आनंद के योग का नाम ही उत्साह है। कर्म करने की भावना ही व्यक्ति के हृदय में उत्साह उत्पन्न करती है। सच्चे उत्साही व्यक्ति के मन में कर्म के प्रति तत्परता या उसमें आनंद की अनुभूति नहीं होती। ऐसी स्थिति में उत्साह निर्माण नहीं होता। अत: केवल फल की भावना जिसमें प्रधान होती है ऐसे उत्साह को शुक्लजी ने लोभ का दूसरा रूप माना है। फल की अधिक आसक्ति के कराण व्यक्ति के मन में कर्म करने, अधिक से अधिक फल प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। इससे व्यक्ति के मन में कर्म करने की तत्परता या आनंद न रहकर फल को प्राप्त करने का लाभ बढ़ जाता है। कर्म करते समय, फल की चिन्ता छोड़कर जिस आनंद की अनुभूति होती है, उसी को लेखक के अनुसार उत्साह कहना चाहिए। अत: शुक्ल जी ने कहा है कि कर्म में अनांद का अनुभव करनेवालों का ही नाम कर्मण्य है। उन लोगों को कर्म ही फलस्वरूप दिखाई देता है और कर्म को निरन्तर करने में सच्चे आनंद की अनुभूति होती है। जब व्यक्ति को किसी कर्म के आनंद की अनुभूति होती है तब वह दूसरे कार्यों को भी उत्साह से करता है। अत: यह सत्य है कि हमारे चित्त में यदि उत्साह है तथा मन में आनंद और उमंग है तो हम अनेक कार्यों को सफलतापूर्वक संपादित कर सकते हैं।

2.4 समीक्षा

उत्साह निबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल के जीवन के गंभीर अध्ययन एवं वैज्ञानिक विवेचन की सुंदर झाँकी प्राप्त होती हैं। इसमें उन्होंने सर्वप्रथम सूत्र लिखा है फिर उनका भाष्य किया है तथा यथास्थान उदाहरण प्रस्तुत करके प्रतिपाद्य विषय की समस्त गुत्थियाँ सुलझा दी हैं। एक दो स्थानों पर उन्होंने अनुच्छेद के अंत में जो निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं, वे इन निबंधों की जान हैं। उन्होंने जीवन के परिप्रेक्ष्य में उत्साह की विवेचना करते हुए एक अनुच्छेद के अन्त में लिखा है कि प्रयत्न और कर्मसंकल्प उत्साह नामक आनंद के नित्य लक्षण हैं। शुक्लजी ने मनुष्य के जीवन में कर्म को महत्वपूर्ण माना है। इस कर्म के लिए साहस के साथ किए गए आनंदपूर्ण प्रयत्न को उत्साह कहा गया है। शुक्लजी ने उत्साह में विभिन्न प्रकार से संलग्न व्यक्तियों के युद्धवीर, दानवीर तथा दयावीर आदि भेद प्रस्तुत कर कर्म में साहस, प्रयत्न तथा आनंद की चरमसीमा दर्शित की है। उनके अनुसार उत्साह एक शुभ भाव है अत: स्वार्थ तथा लोभवश किए कर्मों को उत्साहपूर्ण कर्म नहीं माना जाता। उत्साह की गिनती अच्छे गुणों में की गई है।

शुक्लजी के अनुसार उत्साह तो कर्म करने के आनंद में होता है, फल की प्राप्ति की इच्छा में नहीं होता। कर्म करते समय, फल की प्राप्ति की भावना उसमें निहित होती है लेकिन उसका स्थान गौण होता है। सच्चे

कर्मण्य व्यक्ति को कार्य करते रहने में ही आनंद प्राप्त होता है। फल की प्राप्ति न होने पर भी वह दुखी या निराश नहीं होता। केवल फल की भावना से कर्म करनेवाले को लोभी कह सकते हैं, उत्साही या कर्मण्य नहीं। उन्होंने इस निबंध में उत्साह की जो चर्चा की है वह कर्मण्यता से प्राप्त आनंद की भावना से उत्पन्न आनंद, फल भावना से उत्पन्न आनंद, तथा विषयान्तर से प्राप्त आनंद। इसमें कर्म भावना से उत्पन्न आनंद सच्चे वीरों का आनंद होता है क्योंकि उसके लिए कर्म और फल के बीच में कोई अंतर नहीं होता। फल पर ध्यान रखने से उत्साह एक रस नहीं रह पाता। जब फल की आशा मन्द पड़ जाती है, उत्साह तथा उद्योग में शिथिलता आ जाती है। इस पाठ में शुक्लजी ने भगवद्गीता के ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'' संदेश का महत्व प्रतिपादित किया है।

इसमें लेखक की तर्कपूर्ण विश्लेषण शक्ति के दर्शन होते हैं। उत्साह की परिभाषा, महत्व को समझाने के लिए उन्होंने भय, लोभ आदि भावों से उसका वैषम्य प्रस्तुत किया है। उन्होंने इसमें उत्साह के व्यावहारिक पक्ष तथा उसकी सामाजिक उपयोगिता को स्पष्ट किया है । आवश्यकता के अनुसार जन जीवन से उदाहरण देकर विषय को अधिक सरल रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार एक सच्चे साहित्यकार की तरह शुक्लजी पाठक की विचार गति को बढ़ाते हुए अपने साथ लेकर चलते हैं।

शुक्लजी की भाषाशैली परिनिष्ठित होते हुए भी सरल, सहज तथा प्रवाही है। उसमें एक सूत्रबद्धता है उदाहरण के लिए कर्म सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं। जीवन में उत्साह भाव की आवश्यकता तथा उसके महत्व पर प्रकाश डालना ही लेखक का उद्देश्य रहा है और उसके प्रतिपादन में वे पूर्णत : सफल हुए हैं।

2.5 शब्दार्थ

योग	–	मिलन, जोड़
कर्म – सौदर्य	–	काम करने का आनंद
उपासक	–	उपासना तथा पूजा करनेवाला
उत्कंठा	–	उत्सुकता
मीमांसक	–	समालोचक
चरम	–	अंतिम, सबसे अधिक
उत्कर्ष	–	उन्नति
स्फुरित	–	प्रकट
चिराना	–	कटवाना
अंतर्गत	–	भीतर
धुति	–	धैर्य
अंतर्हित	–	अंदर बैठी हुई
संभावना	–	हो सकने का भाव
तत्परता	–	लगन
अतिरिक्त	–	अलावा
विकट	–	जटिल

BRAOU

तुषार मण्डित	–	बर्फ से ढके हुए
अभ्रभेदी	–	आकाश का भेदन करनेवाले, बहुत ऊँचे
अगम्य	–	जहाँ पहुँचा नहीं जा सकता
ध्रुवदेश	–	उत्तरी ध्रुव या दक्षिणी ध्रव का प्रांत
बर्बर	–	क्रूर
उपहास	–	मज़ाक
कल्याणकारिणी	–	शुभप्रद
प्रथा	–	आचार
रीति	–	रिवाज
बेहया	–	लज्जाहीन
उल्लंघन	–	लाँघना, पार करना
लेशमात्र	–	थोड़ा भी
सुख्याति	–	अच्छी कीर्ति
उच्चाशय (उच्च+आशय)	–	ऊँचे लक्ष्यवाला
दास्तान	–	कथा
कथन	–	कहना
श्रवण	–	सुनना
श्लाघ्य	–	प्रशंसनीय
के निमित्त	–	के लिए
अत्याचारी	–	अत्याचार करनेवाला
तारीफ	–	प्रशंसा
सुभीता	–	सुविधा
संज्ञा	–	नाम
आगमन	–	आना
संकल्प	–	निश्चय
उद्योग	–	प्रयत्न
शास्त्रार्थी	–	शास्त्रों में वाद-विवाद करनेवाला
प्रपंच	–	संसार
तादाद	–	संख्या
श्रृंखला	–	कड़ी

BRAOU

विजेतव्य	–	जिसे जीतना है
उन्मुख	–	प्रति
विषयांतर	–	विषय बदलना
प्रसूत	–	उत्पन्न
शिथिलता	–	ढीलापन
फलासक्त	–	फल की इच्छा रखने वाला
प्रच्छन्न	–	छिपा हुआ
उत्तरोत्तर	–	क्रमश :
लाघव	–	लघुता, कम
कर्मण्य	–	कार्य करनेवाला
शमन	–	शान्त
तुष्टि	–	तृप्ति
मुहावरे :		
प्रस्तुत होना	–	लगना
धूम मचाना	–	शोर मचाना
मुँह के बल गिरना	–	नीचे गिरना, अपमानित होना
दौड़–धूप करना	–	बहुत प्रयत्न करना
दु:ख में कटना	–	मुसीबत में गुजरना
हाथ बढ़ाना,	–	मदद करना
झुँझला उठना	–	क्रोध करना

विशेष : मुद्राराक्षस – विशाखदत्त का संस्कृत में लिखा एक नाटक जिसमें चंद्रगुप्त, चाणक्य, राक्षस प्रमुख पात्र हैं। चाणक्य और राक्षस की प्रति–द्वन्द्विता इस नाटक का मुख्य विषय है।

2.6 अभ्यास

2.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. उत्साह किसे कहते हैं? उत्साह में अन्य किन किन भावों का योग होता है – सोदाहरण समझाइए।
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के विचारों में सच्चा उत्साही किसे कहना चाहिए ?
3. गीताकार ने क्या उपदेश दिया था? उसका तात्पर्य क्या है? उत्साह पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

2.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. उत्साह के कितने भेद हैं?
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रयत्न और कर्म के संकल्प को उत्साह नामक आनंद के नित्य लक्षण क्यों माना है ?

BRAOU

3. निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए ?

(अ) प्रयत्न और कर्म-संकल्प उत्साह नामक आनंद के नित्य लक्षण हैं।

(आ) हमारे देखने में तो उद्योग की तत्परता में ही उत्साह की अभिव्यक्ति होती है अत: कर्मवीर ही कहना ठीक है।

(इ) कर्म सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

2.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

2.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : गीताकार ने क्या उपदेश दिया था ? उसका तात्पर्य क्या है ?

उत्तर : कुरुक्षेत्र संग्राम के प्रथम दिवस पर भयंकर मृत्यु के ताण्डव की कल्पना मात्र के कारण अर्जुन के मन में युद्ध के प्रति विरक्ति तथा उदासीनता निर्माण हुई। उन्होंने सोचा कि इतने बंधुजनों का वध कर, राज्य सुख को प्राप्त करना पाप का मूल है। कार्य के आरंभ में ही अर्जुन के मन में फल की चिंता निर्माण हुई थी। उस समय अर्जुन को श्रीकृष्ण ने जो उपदेश दिए वे भगवद्गीता पुस्तक में संकलित हैं। उसका प्रधान उपदेश है ''कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन'' अर्थात् तुमको केवल कर्म करने का अधिकार है, फल के बारे में, परिणाम के बारे में कभी चिन्ता मत करो। अर्थात् भगवान ने हमारे लिए जिस कर्म-कार्य का निर्णय किया है, पूरे उत्साह के साथ, उस कार्य को करते जाना चाहिए। कर्म के द्वारा प्राप्त होनेवाले फल की चिन्ता से उस कार्य को भलीभाँति नहीं कर सकेंगे। इसलिए फल की चिंता छोड़कर कार्य किया जाये तो उसमें उत्साह के कारण आनंद की प्राप्ति होगी और कार्य भी भली-भाँति कर सकेंगे। उत्साह में इसी कर्मण्यता का तथा कर्म सौंदर्य का महत्व प्रतिपादित किया गया है।

2.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : निम्न गद्यांश की सप्रसंग याख्या कीजिए।

''फल-भावना प्रधान उत्साह तो लोभ ही का प्रच्छन्न रूप है।''

उत्तर : यह वाक्य 'उत्साह' नामक निबंध से लिया गया है। इस निबंध के लेखक सुप्रसिद्ध आलोचक, इतिहासकार एवं निबंधकर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं।

शुक्लजी ने इस निबंध में उत्साह नामक स्थायी भाव का विस्तार से विश्लेषण करके यह बताया है कि किसी कार्य को करने में जिस आनंद की प्राप्ति होती है, उसे उत्साह कहते हैं। उत्साह फल की प्राप्ति में न होकर कार्य की साधना में होना चाहिए।

शुक्लजी ने लिखा है कि केवल फल को लक्ष्य बनाकर जो कार्य किया जाता है, उसमें कार्य करने का आनंद न रहकर, लोभ की भावना अर्थात वस्तु को प्राप्त करने की ही भावना प्रधान हो जाती है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी कर्म करने को ही मानव जीवन का लक्ष्य बताया है और फल की चिन्ता को छोड़ देने का उपदेश दिया है।

उत्साही व्यक्ति को कार्यारंभ से ही आनंद का अनुभव होने लगता है और वह उस आनंद के कारण कार्य को भलीभाँति पूर्ण कर देता है। लोभी व्यक्ति को कार्य के आरंभ से ही फल की प्राप्ति की चिन्ता लगी रहती है और उस कारण से कार्य को ठीक तरह कर नहीं पाता। इसलिए फल की भावना को प्रधान मानकर किया जानेवाला कार्य लोभ प्रधान माना जाता है। उत्साह में फल भावना प्रधान नहीं होती। यह तत्व अत्यंत सरल रूप में लेखक ने प्रस्तुत किया है। यह निबंध लेखक के गंभीर व्यक्तित्व, तर्कपूर्ण विचार तथा विवेचनात्मक शैली का परिचायक है। भगवदगीता में प्रतिपादित सकाम कर्म तथा निष्काम कर्म के भेद को प्रस्तुत कर लेखक ने उत्साह

BRAOU

की दृष्टि से सकाम कर्म त्याज्य माना है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1) उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता के साथ कर्म में प्रवृत्ति होने के आनंद का योग रहता है।

2) कर्म-सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

3) उत्साह के युद्धवीर, दानवीर, दयावीर तीन भेद हैं।

4) युद्धवीरता में कष्ट या पीड़ा सहन करने के साहस के साथ आनंदपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कंठा का योग आवश्यक है।

5) दावनीर में अर्थ-त्याग का साहस अर्थात उसके कारण होनेवाले कष्ट या कठिनता को सहने की क्षमता अन्तर्निहित रहती है।

6) प्रचलित प्रथा के विरोध में किसी शुभ परिणाम पर दृष्टि रखकर निन्दा-स्तुति, मान-अपमान आदि की कुछ परवाह नहीं की जाती।

7) किसी भाव के अच्छे या बुरे होने का निश्चय अधिकतर उसकी प्रवृत्ति के शुभ या अशुभ परिणाम के विचार से होता है।

8) प्रयत्न और कर्म संकल्प उत्साह नामक आनंद के नित्य लक्षण हैं।

9) उत्साही वीर का ध्यान आदि से अन्त तक पूरी कर्म श्रृंखला पर से होता हुआ उसकी सफलता रूपी समाप्ति तक फैला रहता है।

10) कर्म-भावना ही उत्साह उत्पन्न करती है।

11) कर्म के अनुष्ठान में प्राप्त आनंद के कर्म भावना से उत्पन्न, फल भावना से उत्पन्न और आगन्तुक अर्थात विषयान्तर से प्राप्त तीन रूप हैं।

12) फल-भावना-प्रधान उत्साह लोभ ही का एक प्रच्छन्न रूप है।

13) बुद्धि द्वारा पूर्ण रूप से निश्चित की हुई व्यापार-परंपरा का नाम ही प्रयत्न है।

14) कर्म में आनंद अनुभव करनेवालों ही का नाम कर्मण्य हैं।

15) अत्याचार का दमन और क्लेश का शमन करते हुए चित्त में जो उल्लास और तुष्टि होती है वही लोकोपकारी कर्मवीर का सच्चा सुख है।

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. चिन्तामणि भाग 1 और भाग 2 – आचार्य रामचंद्र शुक्ल

BRAOU

इकाई-3: मज़दूरी और प्रेम : अध्यापक पूर्णसिंह

3.0 उद्देश्य

3.1 पाठ एवं लेखक परिचय

3.2 मूल पाठ

3.3 सारांश

3.4 समीक्षा

3.5 शब्दार्थ

3.6 अभ्यास

3.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

3.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

3.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

3.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

3.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

3.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

इस पाठ में 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबंध के माध्यम से अध्यापक पूर्णसिंह जी के श्रमिक और मजदूर वर्ग के प्रति सहानुभूति और मानव कल्याण से संबंधित विचारों पर प्रकाश डाला गया है। इस निबंध के अध्यय से आप

- कृषक जीवन और गड़रिए के जीवन के महत्व को पहचान सकेंगे।
- मजदूर और श्रम के महत्व को समझ सकेंगे।
- यंत्रो की तुलना में मनुष्य के श्रम के पीछे प्रेम-भरी सेवा भावना को देखेंगे।
- साधुता और बुद्धि के विकास में मजदूरी की क्या भूमिका होगी? इसे समझ सकेंगे।
- मजदूरी के प्रेमामृत से ही मनुष्य का कल्याण होगा - इस प्रकाश डाल सकेंगे।

3.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ परिचय

'मजदूरी और प्रेम' अध्यापक पूर्णसिंह का भावात्मक निबंध है। इस निबंध में उनकी विचारधारा स्पष्ट रूप से प्रकट हुई है। औद्योगिक क्रांति के बाद पूंजीवाद का विकास हुआ है। पूंजीवाद के इस उभरते युग में श्री पूर्णसिंह जी मजदूर और मजदूरी के महत्व को रेखांकित करते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में हर चीज को पैस से तौलते हैं। इस व्यवस्था में मनुष्य और मनुष्यत्व का कोई मूल्य नहीं होता। इसलिए अध्यापक पूर्णसिंह मजदूर और मजदूरी का सत्कार चाहते हैं। वे कोमल अंत:करण और जीवन की सभ्यता को प्रकट करनेवाली प्रेम

BRAOU

मजदूरी चाहते हैं। वे एक ऐसी व्यवस्था को चाहते हैं जहाँ मशीन का नहीं, धन और संपत्ति का नहीं मनुष्य का ही मूल्य हो। वे मानव कल्याण के लिए मजदूरी का प्रेमामृत बाँटने का उद्‌बोधन करते हैं।

(आ) लेखक परिचय

अध्यापक पूर्णसिंह जी का जन्म 17 फरवरी सन् 1881 को ऐबटाबाद (पश्चिम पंजाब) में हुआ था। 50 वर्ष की आयु में ही 31 मार्च सन् 1931 को उनकी मृत्यु हो गई । लेकिन इस कम समय में ही उन्होंने अपने साहित्य सृजन से हिन्दी, पंजाबी और अंग्रेजी साहित्य के क्षेत्रों को समान रूप से प्रभावित किया।

पूर्णसिंह जी का व्यक्तित्व एक अनूठा व्यक्तित्व था। वे मूलत: रसायनशास्त्र के विद्यार्थी थे। सन् 1900 में रसायनशास्त्र की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए वे जापान गये थे। वे वहाँ की जीवन पद्धति में घुल-मिल गये। सन् 1902 में तोक्यों में स्वामी रामतीर्थ से भेंट हुई। पूर्णसिंह जी रामतीर्थ से इतने प्रभावित हुए कि सन्यास धारण कर लिया। सन् 1904 में वे भारत वापस आये। स्वतंत्रता का आन्दोलन चल रहा था। उन्होंने कलकत्ता में देश की स्वतंत्रता का समर्धन करते हुए भाषण दिया था। फिर वे गिरफ्तार कर लिये गये। उसी वर्ष में मरणासन्न अपनी बहन की अंतिम इच्छा की पूर्ति के लिए सन्यास त्याग कर विवाह कर लिया। सन् 1992 में पंजाब के महान सहित्यकार भाई वीरसिंह से उनकी भेंट हुई। वीरसिंह के प्रभाव से वे फिर सिख धर्म में वापस आ गये।

पूर्णसिंह जी ने जीविकोपार्जन के लिए अनेक नौकरियाँ और धंधे किये। लेकिन अपने स्वाभिमान और स्वतंत्र प्रकृति के कारण वे कहीं टिक नहीं सके। कुछ समय तक वे विक्टोरिया डायमंड जुबिली टेक्‌नीकल इन्स्टीट्‌यूट के प्रिन्सिपाल रहे। सन् 1928 में पंजाब के शेखपुरा जिले में रोशा घास का एक फार्म लगाया था। घास पाँच फुट ऊँची हो गई। पूर्णसिंह अपने प्रयोग की सफलता पर प्रसन्न थे। इस बीच बाढ़ आयी। सारी फसल नष्ट हो गयी। बाढ़ से वे सिर्फ अपनी पुस्तकों की पाण्डुलिपियों की रक्षा कर सके। पूर्णसिंह जी ने ग्वालियर और जम्मू-कश्मीर के महाराजओं के पास भी नौकरी की। वे वहाँ भी ज्यादा समय तक अपनी स्वतंत्र प्रकृति के कारण नहीं रह सके।

अध्यापक पूर्णसिंह के अंतिम दिन काफी कष्टमय थे। आर्थिक संकट तो था ही ऊपर से उन्हें तपेदिक रोग भी हो गया। इसी रोग से उनका देहावासान 31 मार्च सन् 1939 को हुआ।

जापान में रहते समय भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवालों के साथ मिलकर अध्यापक पूर्णसिंह जी ने अंग्रेजी में 'थंडरिंग डान' नामक अखबार निकाला। पंजाबी में उनके काव्य संग्रह मिलते हैं। उन्होंने पंजाबी कविता को छंद के बंधनों से मुक्त किया और तत्कालीन भारतीय सामाजिक स्थिति का चित्रण करते हुए एक उपन्यास भी लिखा था। इसका प्रकाशन जापान से हुआ था। लेकिन इसकी कोई प्रति अब मिलती नहीं है। अंग्रेजी में 'सिस्टर्स आफ द स्पिनिंग व्हील', 'स्पिरिट आफ ओरियंटल पोयट्री', 'स्टोरी आफ स्वामी राम' आदि 9-10 पुस्तकें मिलती हैं। हिन्दी में पूर्णसिंह के छ: निबंध मात्र प्रकाशित हुए। लेकिन इन्हीं निबंधों ने उन्हें हिन्दी निबंध साहित्य में अमर स्थान का अधिकारी बना दिया है। मजदूरी और प्रेम, आचरण की सभ्यता, सच्ची वीरता, पवित्रता, कन्यादान और अमेरिका का मस्त जोगी वाल्टर व्हैटमैन-इन निबंधों में अधिकांश का प्रकाशन 1906 से 1912 के आसपास हुआ था।

पूर्णसिंह के निबंधों में उनके समय से बहुत आगे के विचार व्यक्त हुए। जब अभी हिन्दी निबंध साहित्य का कोई स्पष्ट स्वरूप बना नहीं था, पूर्णसिंह जी एक दम नई शैली और नये विचारों के साथ सामने आये। उनके निबंधों को पढ़कर आज भी हम आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

3.2 मूल पाठ

हल चलाने और भेड़ चरानेवाले प्राय: स्वभाव से ही साधु होते हैं। हल चलानेवाले अपने शरीर का हवन किया करते हैं। खेत उनकी हवनशाला है। उनके हवनकुण्ड की ज्वाला की किरणें चावल के लम्बे और सुफेद

दानों के रूप में निकलती हैं। गेहूँ के लाल-लाल दाने इस अग्नि की चिनगारियों की डालियाँ सी हैं। मैं जब कभी अनार के फूल और फल देखता हूँ तब मुझे बाग के माली का रुधिर याद आ जाता है। उसकी मेहनत के कण जमीन में गिरकर उगे हैं, और हवा तथा प्रकाश की सहायता से मीठे फलों के रूप में नजर आ रहे हैं। किसान मुझे अन्न में, फूल में, फल में आहुति हुआ सा दिखाई पडता है। कहते हैं, ब्रह्माहुति से जगत पैदा हुआ है। अन्न पैदा करने में किसान भी ब्रह्मा के समान है। खेती उसके ईश्वर प्रेम का केन्द्र है। उसका सारा जीवन पत्ते-पत्ते में, फूल-फूल में, फल-फल में बिखर रहा है। वृक्षों की तरह उसका भी जीवन एक प्रकार का मौन जीवन है। वायु, जल, पृथ्वी, तेज और आकाश की नीरोगता इसी के हिस्से में है। विद्या यह नहीं पढ़ा; जप और तप यह नहीं करता, संध्या-वन्दनादि इसे नहीं आते, ज्ञान-ध्यान का इसे पता नहीं; मन्दिर, मसजिद, गिरजे से इसे कोई सरोकार नही, केवल साग-पात खाकर ही यह अपनी भूख का निवारण कर लेता है। ठण्डे चश्मों और बहती हुई नदियों के शीतल जल से यह अपनी प्यास बुझा लेता है। प्रात:काल उठकर यह अपने हल-बैलों को नमस्कार करता है और हल जोतने चल देता है। दोपहर की धूप इसे भाती है। इसके बच्चे मिट्टी ही में खेल-खेलकर बड़े हो जाते हैं। इसको और इसके परिवार को बैल और गौवों से प्रेम है। उनकी यह सेवा करता है। पानी बरसानेवाले के दर्शनार्थ इसकी आँखे नीले आकाश की ओर उठती हैं। नयनों की भाषा में यह प्रार्थना करता है। सायं और प्रात: दिन और रात, विधाता इसके हृदय में अचिन्तनीय और अद्‌भुत आध्यात्मिक भावों की वृष्टि करता है। यदि कोई इसके घर आ जाता है, तो यह उसकी मृदु वचन, मीठे जल और अन्न से तृप्ति करता है। धोखा वह किसी को नहीं देता। यदि इसको कोई धोखा दे भी दे, तो उसका इसे ज्ञान नहीं होता क्योंकि इसकी खेती हरी-भरी है; गाय इसकी दूध देती है; स्त्री इसकी आज्ञाकारिणी है; मकान पुण्य और आनन्द का स्थान है। पशु को चराना, नहलाना, खिलाना, पिलाना, उसके बच्चों की अपने बच्चों की तरह सेवा करना, खुले आकाश के नीचे उनके साथ रातें गुजार देना क्या स्वाध्याय से कम है? दया, वीरता और प्रेम जैसा इन किसानों में देखा जाता है, अन्यत्र मिलने का नहीं। गुरु नानक ने ठीक कहा है - "भोले भाव मिलें रघुराई।" भोले-भाले किसानों को ईश्वर अपने खुले दीदार का दर्शन देता है। उनकी फूस की छतों में से सूर्य और चंद्रमा छन-छनकर उनके बिस्तरों पर पड़ते हैं। ये प्रकृति के जवान साधु हैं। जब कभी मैं इन बे-मुकुट के गोपालों के दर्शन करता हूँ, मेरा सिर स्वयं ही झुक जाता है। जब मुझे किसी फकीर के दर्शन होते हैं, तब मुझे मालूम होता है कि नंगे सिर, नंगे पाँव, एक टोपी सिर पर, एक लँगोटी कमर में, एक काली कमली कन्धे पर, एक लम्बी लाठी हाथ में लिये हुए गौवों का मित्र, बैलों का हमजोली, पक्षियों का महराज, महाराजाओं का अन्नदाता, बादशाहों को ताज पहनाने और सिंहासन पर बिठानेवाला, भूखों और नंगो का पालनेवाला, समाज़ पुष्पोद्यान का माली और खेतों का वाली जा रहा है।

बोध प्रश्न : 1. किसानों के बारे में गुरुनानक ने क्या कहा ?

.....

.....

.....

गड़रिए का जीवन

एक बार मैं ने एक बुड्ढे गड़रिए को देखा। घना जंगल है। हरे-हरे वृक्षों के नीचे उसकी सुफेद ऊनवाली भेड़े अपना मुँह नीचे किए हुए कोमल-कोमल पत्तियाँ खा रही हैं। गड़रिया बैठा आकाश की ओर देख रहा है। ऊन कातता जाता है। उसकी आँखों में प्रेम-लाली छाई हुई है। वह नीरोगता की पवित्र मदिरा से मस्त हो रहा है। बाल उसके सारे सुफेद हैं। और क्यों न सुफेद हो? सुफेद भेड़ों का मालिक जो ठहरा। परन्तु उसके कपोलों से लाली फूट रही है। बरफानी देशों में वह मानो विष्णु के समान क्षीरसागर में लेटा है। उसकी प्यारी स्त्री उसके पास रोटी पका रही है। उसकी दो जवान कन्याएँ उसके साथ जंगल-जंगल भेड़ चराती घूमती हैं । अपने माता-पिता

और भेडों को छोड़कर उन्होंने किसी और को नहीं देखा। मकान इनका बेमकान है; घर इनका बेघर है; ये लोग बेनाम और बेपता हैं।

किसी के घर कर में न घर कर बैठना इल दारे फानी में।

ठिकाना बेठिकाना और मकाँ बर ला-मकाँ रखना।

इस दिव्य परिवार को कुटी की जरूरत नहीं। जहाँ जाते हैं, एक घास की झोपड़ी बना लेते हैं। दिन को सूर्य और रात को तारागण इनके सखा है। गड़रिए की कन्या पर्वत के शिखर के ऊपर खड़ी सूर्य का अस्त होना देख रही है। उसकी सुनहली किरण इसके लावण्यमय मुख पर पड़ रही है। यह सूर्य को देख रही है और वह इसको देख रहा है।

हुए थे आँखों के कल इशारे इधर हमारे उधर तुम्हारे।

चले थे अश्कों के क्या फवारे इधर हमारे उधर तुम्हारे॥

बोलता कोई भी नहीं। सूर्य उसकी युवावस्था की पवित्रता पर मुग्ध है और वह आश्चर्य के अवतार सूर्य की महिमा के तूफान में पड़ी नाच रही है।

इनका जीवन बर्फ की पवित्रता से पूर्ण और वन की सुगन्धि से सुगन्धित है। इनके, मुख, शरीर और अन्तःकरण सुफेद, इनकी बर्फ, पर्वत और भेड़ें सुफेद। अपनी सुफेद भेड़ों मे यह परिवार ईश्वर के दर्शन करता है।

सो खुदा को देखना हो तो मै देखता हूँ तुमको।

मैं देखता हूँ तुमको जो खुदा को देखना हो।।

भेडों की सेवा ही इनकी पूजा है। जरा एक भेड़ बीमार हुई, सब परिवार पर विपत्ति आई। दिन-रात उसके पास बैठे काट देते हैं। अधिक पीड़ा हुई तो इन सबकी आँखें शून्य आकाश में किसी को देखने लग गईं। पता नहीं, ये किसे बुलाती हैं। हाथ जोड़ने तक की इन्हें फुरसत नहीं। पर हाँ, इन सबकी आँखें किसी के आगे शब्दरहित, संकल्परहित मौन प्रार्थना में खुली हैं। दो रातें इसी तरह गुजार गईं। इनकी भेड़ अब अच्छी है। इनके घर मंगल हो रहा है। सारा परिवार मिलकर गा रहा है। इतने में नीले आकाश पर बादल घिर आए और झम-झम बरसने लगे मानो प्रकृति के देवता भी इनके आनन्द से आनन्दित हुए। बूढ़ा गड़रिया आनन्द-मत्त होकर नाचने लगा। वह कहता कुछ नहीं; पर किसी दैवी दृश्य को उसने अवश्य देखा है। वह फूले अंग नहीं समाता, रग-रग उसकी नाच रही हैं। पिता को ऐसा सुखी देख दोनों कन्याओं ने एक-दूसरे का हाथ पकड़कर पहाड़ी राग अलापना आरम्भ कर दिया। साथ ही धम-धम थम-थम नाच की उन्होंने धूम मचा दी । मेरी आँखों के सामने ब्रह्मानन्द का समाँ बाँध दिया । मेरे पास मेरा भाई खड़ा था । मैंने उससे कहा - "भाई, अब मुझे भी भेड़े ले दो।" ऐसे ही मूक जीवन से मेरा भी कल्याण होगा। विद्या को भूल जाऊँ तो अच्छा है। मेरी पुस्तकें खो जावें तो उत्तम है। ऐसा होने से कदाचित् इस वनवासी परिवार की तरह मेरे दिल के नेत्र खुल जायें और मैं ईश्वरीय झलक देख सकूँ। चन्द्र और सूर्य्य की विस्तृत ज्योति में जो वेदगान हो रहा है, उसे इस गड़रिए की कन्याओं की तरह मैं सुन तो न सकूँ, परन्तु कदाचित् प्रत्यक्ष देख सकूँ। कहते हैं, ऋषियों ने भी, इनको देखा ही था, सुना न था। पण्डितों की ऊटपटाँग बातों से मेरा जी उकता गया है। प्रकृति की मन्द-मन्द हँसी में ये अनपढ़ लोग ईश्वर के हँसते हुए ओठ देख रहे हैं। पशुओं के आज्ञान में गम्भीर ज्ञान छिपा हुआ है। इन लोगों के जीवन में अद्भुत आत्मानुभव भरा हुआ है। गड़रिए के परिवार की प्रेम-मजदूरी का मूल्य कौन दे सकता है ?

बोध प्रश्न : 2. गडरिए के जीवन में क्या भरा हुआ है ?

.....

.....

.....

मजदूर की मजदूरी

आपने चार आने पैसें मजदूर के हाथ में रखकर कहा - ''यह लो दिन भर की अपनी मजदूरी।'' वाह, क्या दिल्लगी है। हाथ, पाँव, सिर, आँखें इत्यादि सबके सब अवयव उसने आपको अर्पण कर दिये। ये सब चीजें उसकी तो थी ही नहीं, ये तो ईश्वरीय पदार्थ थे। जो पैसे आपने उसको दिये, वे भी आपके न थे। वे तो पृथ्वी से निकली हुई धातु के टुकड़े थे, अतएव ईश्वर के निर्मित थे। मजदूरी का ऋण तो परस्पर की प्रेम-सेवा से चुकता होता है, अन्न-धन देने से नहीं। वे तो दोनों ही ईश्वर के हैं। अन्न-धन वही बनाता है और जल भी वही देता है। एक जिल्दसाज़ ने मेरी एक पुस्तक की जिल्द बाँध दी। मैं तो इस मजदूर को कुछ भी न दे सका। परन्तु उसने मेरी उम्र भर के लिए एक विचित्र वस्तु मुझे दे डाली। जब कभी मैंने उस पुस्तक को उठाया, मेरे हाथ जिल्दसाज के हाथ पर जा पड़े। पुस्तक देखते ही मुझे जिल्दसाज याद आ जाता है। वह मेरा आमरण मित्र हो गया है। पुस्तक हाथ में आते ही मेरे अन्त:करण में रोज भरतमिलाप का-सा समाँ बंध जाता है।

गाढ़े की एक कमीज को एक अनाथ विधवा सारी रात बैठकर सीती है, साथ ही साथ वह अपने दुख पर रोती भी है - दिन को खाना न मिला। रात को भी कुछ मयस्सर न हुआ। अब वह एक-एक टाँके पर आशा करती है कि कमीज कल तैयार हो जायगी, तब कुछ तो खाने को मिलेगा। जब वह थक जाती है, तब ठहर जाती है। सूई हाथ में लिये हुए है, कमीज घुटने पर बिछी हुई है, उसकी आँखों की दशा उस आकाश की जैसी है, जिसमें बादल बरसकर अभी अभी बिखर गए हैं। खुली आँखे ईश्वर के ध्यान में लीन हो रही है । कुछ काल के उपरान्त ''हे राम'' कहकर उसे फिर सीना शुरू कर दिया। इस माता और इस बहिन की सिली हुई कमीज मेरे लिए मेरे शरीर का नहीं - मेरी आत्मा का वस्त्र है। इसका पहनना मेरी तीर्थयात्रा है। इस कमीज में उस विधवा के सुख-दु:ख, प्रेम और पवित्रता के मिश्रण से मिली हुई ज़ीवन रूपिणी गंगा की बाढ़ चली जा रही है। ऐसी मजदूरी और ऐसा काम-प्रार्थना, सन्ध्या और नमाज से क्या कम है? शब्दों से तो प्रार्थना हुआ नहीं करती। ईश्वर तो कुछ ऐसी ही मूक प्रार्थनाएँ सुनता है और तत्काल सुनता है।

बोध प्रश्न : 3. जीवन रूपिणी गंगा की बाढ कहाँ चली जा रही है?

.....

.....

.....

प्रेम-मज़दूरी

मुझे तो मनुष्य के हाथ से बने हुए कामों में उनकी प्रेममय पवित्र आत्मा की सुगन्ध आती है। राफेल आदि के चित्रित चित्रों में उनकी कला-कुशलता को देख, इतनी सदियों के बाद भी उनके अन्त:करण के सारे भावों का अनुभव होने लगता है। केवल चित्र का ही दर्शन नहीं किन्तु साथ ही, उसमें छिपी चित्रकारी की आत्मा तक के दर्शन तक के दर्शन हो जाते हैं। परन्तु यन्त्रों की सहायता से बने हुए फोटो निर्जीव से प्रतीत होते हैं। उनमें और हाथ के चित्रों में उतना ही भेद है, जितना कि बस्ती और श्मशान में।

हाथ की मेहनत से चीज में जो रस भर जाता है, वह भला लोहे के द्वारा बनाई हुई चीज में कहाँ। जिस आलू को मैं स्वयं बोता हूँ, मैं स्वयं पानी देता हूँ जिसके इर्द-गिर्द की घास-पात खोदकर मैं साफ करता हूँ, उस आलू में जो रस मुझे आता है, वह टीन में बन्द किए हुए आचार मुरब्बे में नहीं आता। मेरा विश्वास है कि जिस चीज में मनुष्य के प्यारे हाथ लगते हैं , उसमें उसके हृदय का प्रेम और मन की पवित्रता सूक्ष्म रूप से मिल जाती है और

BRAOU

उसमें मुर्दे को जिन्दा करने की शक्ति आ जाती है। होटल में बने हुए भोजन यहाँ नीरस होते हैं, क्योंकि वहाँ मनुष्य मशीन बना दिया जाता है। परन्तु अपनी प्रियतमा के हाथ से बने हुए रूखे-सूखे भोजन में कितना रस होता है। जिस मिट्टी के घड़े को कन्धों पर उठाकर, मीलों दूर से उसमें मेरी प्रेममग्न प्रियतमा ठण्डा जल भर लाती है, उस लाल घड़े का जल जब मैं पीता हूँ, तब जल क्या पीता हूँ, अपनी प्रेयसी के प्रेमामृत का पान करता हूँ। जो ऐसा प्रेम-प्याला पीता हो, उसके लिए शराब क्या वस्तु है? प्रेम से जीवन सदा गद्‌गद रहता है। मैं अपनी प्रेयसी की ऐसी प्रेम-भरी, रस-भरी, दिल-भरी सेवा का बदला क्या कभी दे सकता हूँ ?

उधर प्रभात ने अपनी सुफेद किरणों से अँधेरी रात पर सुफेदी सी छिटकाई, इधर मेरी प्रेयसी, मैना अथवा कोयल की तरह अपने बिस्तर से उठी। उसने गाय का बछड़ा खोला; दूध की धारों से अपना कटोरा भर लिया। गाते-गाते अन्न को अपने हाथों से पीसकर सुफेद आटा बना लिया। इस सुफेद आटे से भरी हुई छोटी सी टोकरी सिर पर एक हाथ में दूध से भरा हुआ लाल मिट्टी का कटोरा, दूसरे हाथ में मक्खन की हाँड़ी जब मेरी प्रिया घर की छत के नीचे इस तरह खड़ी होती है, तब वह छत के ऊपर की श्वेत प्रभा से भी अधिक आनन्ददायक, बलदायक, बुद्धिदायक जान पड़ती है। उस समय वह उस प्रभा से अधिक रसीली, अधिक रँगीली, जीती-जागती, चैतन्य और आनन्दमयी प्रातः कालीन शोभा सी लगती है। मेरी प्रिया अपने हाथ से चुनी हुई लकड़ियों को अपने दिल से चुराई हुई एक चिनगारी से लाल अग्नि में बदल देती है। जब वह आटे को छलनी से छानती है, तब मुझे उसकी छलनी के नीचे एक अद्‌भुत ज्योति की लौ नजर आती है। जब वह उस अग्नि के ऊपर मेरे लिए रोटी बनाती है, तब उसके चूल्हे के भीतर मुझे तो पूर्व दिशा की नभोलालिमा से भी अधिक आनन्ददायिनी लालिमा दीख पड़ती है। यह रोटी नहीं, कोई अमूल्य पदार्थ है। मेरे गुरु ने इसी प्रेम से संयम करने का नाम योग रखा है। मेरा यही योग है।

बोध प्रश्न : 4. लेखक के गुरु ने किसको योग कहा?

.....

.....

.....

BRAOU

मज़दूरी और कला

आदमियों की तिजारत करना मूर्खों का काम है। सोने और लोहे के बदले मनुष्य को बेचना मना है। आजकल भाप की कलों का दाम तो हजारों रुपया है, परन्तु मनुष्य कौड़ी के सौ-सौ बिकते हैं। सोने और चाँदी की प्राप्ति से जीवन का आनन्द नहीं मिल सकता। सच्चा आनन्द तो मुझे मेरे काम से मिलता है। मुझे अपना काम मिल जाय, तो फिर स्वर्गप्राप्ति की इच्छा नहीं। मनुष्य-पूजा ही सच्ची ईश्वर पूजा है। मन्दिर और गिरजे में क्या रखा है? ईंट, पत्थर, चूना कुछ भी कहो-आज से हम अपने ईश्वर की तलाश मन्दिर, मसजिद, गिरजा और पोथी में न करेंगे। अब तो यही इरादा है कि मनुष्य की अनमोल आत्मा में ईश्वर के दर्शन करेंगे। यही आर्ट है - यही धर्म है। मनुष्य की मजदूरी का तिरस्कार करना नास्तिकता है। बिना काम, बिना मजदूरी, बिना हाथ के कलाकोशल के विचार और चिन्तन किस काम के! सभी देशों के इतिहासों से सिद्ध है कि निकम्मे पादरियों, मोलवियों, पंण्डितों और साधुओं का, दान के अन्न पर पला हुआ ईश्वर-चिन्तन, अन्त में पाप, आलस्य और भ्रष्टाचार में परिवर्तित हो जाता है। जिन देशों में हाथ और मुँह पर मजदूरी की धूल नहीं पड़ने पाती, वे धर्म और कलाकौशल में कभी उन्नति नहीं कर सकते। पद्‌मासन निकम्मे सिद्ध हो चुके हैं। वही आसन ईश्वर प्राप्ति करा सकते हैं, जिनसे जोतने, बोने, काटने और मजदूरी का काम लिया जाता है। लकड़ी, ईंट और पत्थर को मूर्तिमान् करनेवाले, लुहार, बढ़ई तथा किसान आदि वैसे ही पुरुष है, जैसे कि कवि, महात्मा और योगी आदि। उत्तम से उत्तम और नीच से नीच काम, सबके सब प्रेम-शरीर के अंग हैं।

निकम्मे रहकर मनुष्यों की चिन्तन-शक्ति थक गई है। बिस्तरों और आसनों पर सोते और बैठे-बैठे मन के घोड़े हार गए हैं। सारा जीवन निचुड़ चुका है। स्वप्न पुराने हो चुके हैं। आजकल की कविता में नयापन नहीं। उसमें पुराने जमाने की कविता की पुनरावृत्ति मात्र है। इस नकल में असल की पवित्रता और कुँवारेपन का अभाव है। अब तो एक नए प्रकार का कला-कौशल-पूर्ण संगीत साहित्य संसार में प्रचलित होनेवाला है। यदि वह न प्रचलित हुआ, तो मशीनों के पहियों के नीचे दबाकर हमें मरा समझिए। यह नया साहित्य मजदूरों के हृदय से निकलेगा। उन मजदूरों के कंठ से यह नई कविता निकलेगी, जो अपना जीवन आनन्द के साथ खेत की मेड़ी का, कपड़े के तागों का, जूते के टाँको का, लकड़ी की रगों का, पत्थर की नसों का भेदभाव दूर करेंगे। हाथ में कुल्हाड़ी, सिर पर टोकरी, नंगे सिर और नंगे पाँव, धूल से लिपटे और कीचड़ से रँगे हुए ये बेज़बान कवि जब जंगल में लकड़ी काटेंगे, तब लकड़ी काटने का शब्द इनके असभ्य स्वर से मिश्रित होकर वायुयान पर चढ़ दसों दिशाओं में ऐसा अद्‌भुत गान करेगा कि भविष्यत के कलावन्तों के लिए वही ध्रुवपद और मल्हार का काम देगा। चरखा कातनेवाली स्त्रियों के गीत संसार के सभी देशों के कौमी गीत होंगे। तभी नए कवि पैदा होंगे तभी नए औलियाओं का उद्‌भव होगा। परन्तु ये सबके सब मजदूरी के दूध से पलेंगे। धर्म, योग, शुद्धाचरण, सभ्यता और कविता आदि के फूल इन्हीं मजदूर-ऋषियों के उद्यान में प्रफुल्लित होंगे।

बोध प्रश्न : 5. मजदूर ऋषियों के उद्यान में क्या-क्या प्रफुल्लित होंगे?

.....

.....

.....

मज़दूरी और फ़कीरी

मजदूरी और फ़कीरी का महत्व थोड़ा नहीं। मजदूरी और फकीरी मनुष्य के विकास के लिए परमावश्यक हैं। बिना मज़दूरी किए फ़कीरी का उच्च भाव शिथिल हो जाता है; फकीरी भी अपने आसन से गिर जाती है बुद्धि बासी पड़ जाती है। बासी चीजें अच्छी नहीं होतीं। कितने ही, उम्र भर बासी बुद्धि और बासी फकीरी में मग्न रहते हैं; परन्तु इस तरह मग्न होना किस काम का? हवा चल रही है; जल बह रहा है; बादल बरस रहा है; पक्षी नहा रहे हैं; फूल खिल रहा है; घास नई, पेड़ नए, पत्ते नए - मनुष्य की बुद्धि और फकीरी ही बासी। ऐसा दृश्य तभी तक रहता है; जब तक बिस्तर पर पड़े-पड़े मनुष्य प्रभात का आलस्य सुख मनाता है। बिस्तर से उठकर जरा बाग की सैर करो, फूलों की सुगन्ध लो, ठण्डी वायु में भ्रमण करो, वृक्षों के कोमल पल्लवों का नृत्य देखो, तो पता लगे कि प्रभात-समय जागना बुद्धि और अन्तःकरण को तरोताजा करना है, और बिस्तर पर पड़े रहना उन्हें बासी कर देना है। निकम्मे बैठे हुए चिन्तन करते रहना अथवा बिना काम किए शुद्ध विचार का दावा करना, मानो सोते-सोते खर्राटे मारना है। जब तक जीवन के अरण्य में पादड़ी, मौलवी, पण्डित और साधु, संन्यासी हल, कुदाल और खुरपा लेकर मजदूरी न करेंगे, तब तक उनका आलस्य जाने का नहीं, तब तक उनका मन और उनकी बुद्धि, अनन्त काल बीत जाने तक, मलिन मानसिक जुआ खेलती रहेगी। उनका चिन्तन बासी, उनका ध्यान बासी, उनकी पुस्तकें बासी, उनके लेख बासी, उनका विश्वास बासी और उनका खुदा भी बासी हो गया है। इसमें सन्देह नहीं कि इस साल के गुलाब के फूल भी वैसे ही हैं, जैसे पिछले साल के थे। परन्तु इस साल वाले ताजे हैं। इनकी लाली नई है, इनकी सुगन्ध भी इन्हीं की अपनी है। जीवन के नियम नहीं पलटते; वे सदा एक ही से रहते हैं। परन्तु मज़दूरी करने से मनुष्य को एक नया और ताजा खुदा नज़र आने लगता है।

गेरुए वस्त्रों की पूजा क्यों करते हो? गिरजे की घण्टी, क्यों सुनते हो? रविवार क्यों मनाते हो? पाँच वक्त की नमाज क्यों पढ़ते हो? त्रिकाल संध्या क्यों करते हो? मजदूर के अनाथ नयन, अनाथ आत्मा और अनाश्रित जीवन की बोली सीखो। फिर देखोगे कि तुम्हारा यही साधारण जीवन ईश्वरीय भजन हो गया।

BRAOU

मजदूरी तो मनुष्य के समष्टि-रूप का व्यष्टि-रूप परिरणाम है, आत्मारूपी धातु के गढ़े हुए सिक्के का नकदी बयाना है, जो मनुष्यों की आत्माओं को खरीदने के वास्ते दिया जाता है। सच्ची मित्रता ही तो सेवा है। उससे मनुष्यों के हृदय पर सच्चा राज्य हो सकता है। जाति-पाँति, रूप-रंग और नाम-धाम तथा बाप-दादे का नाम पूछे बिना ही अपने आपको किसी के हवाले कर देना प्रेम-धर्म का तत्व है। जिस समाज में इस तरह के प्रेम-धर्म का राज्य होता है; उसको हर कोई हर किसी को बिना उसका नाम-धाम पूछे ही पहचानता है। क्योंकि पूछनेवाले का कुल और उसकी जात वहाँ वही होती है, जो उसकी, जिससे कि वह मिलता है। वहाँ सब लोग एक ही माता-पिता से पैदा हुए भाई बहिन हैं। अपने ही भाई-बहिनों के माता-पिता का नाम पूछना क्या पागलपन से कम समझा जा सकता है? यह सारा संसार एक कुटुम्बवत है। लँगड़े, लूले, अंधे और बहरे उसी मौरूसी घर की छत के नीचे रहते हैं, जिसकी छत के नीचे बलवान्, नीरोग और रूपवान् कुटुम्ब रहते हैं। मूढों और पशुओं का पालन-पोषण बुद्धिमान सबल और नीरोग ही तो करेंगे। आनन्द और प्रेम की राजधानी का सिंहासन सदा से प्रेम और मजदूरी के ही कन्धों पर रहता आया है। कामना सहित होकर भी मजदूरी निष्काम होती है क्योंकि मजदूरी का बदला ही नहीं। निष्काम कर्म करने के लिए जो उपदेश दिये जाते हैं, उनमें अभावशील वस्तु सुभावपूर्ण मान ली जाती है। पृथ्वी अपने ही अक्ष पर दिन-रात घूमती है। यह पृथ्वी का स्वार्थ कहा जा सकता है, परन्तु उसका यह घूमना सूर्य्य के इर्द-गिर्द घूमना तो है और सूर्य्य के इर्द-गिर्द घूमना सूर्य्य मंडल के साथ आकाश में एक सीधी लकीर पर चलना है । अन्त में, इसका गोल चक्कर खाना सदा ही सीधा चलना है। इसमें स्वार्थ का अभाव है। इसी तरह मनुष्य की विविध कामनाएँ उसके जीवन को मानो उसकी स्वार्थरूपी धुरी पर चक्कर देती हैं । परन्तु उसका जीवन अपना तो है ही नहीं वह तो किसी आध्यत्मिक सूर्य मण्डल के साथ की चाल है और अन्ततः यह चाल जीवन का परमार्थ रूप है। स्वार्थ का यहाँ भी अभाव है , जब स्वार्थ कोई वस्तु ही नहीं तब निष्काम और कामनापूर्ण कर्म करना दोनों ही एक बात हुई। इसलिए मजदूरी और फकीरी का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

मजदूरी करना जीवनयात्रा का आध्यात्मिक नियम है। जोन ऑफ आर्क (Joan of Arc) की फकीरी और भेड़ें चराना, टाल्सटाय का त्याग और जूते गाँठना, उमर खैयाम का प्रसन्नता पूर्वक तम्बू सीते फिरना, खलीफा उमर का अपने रंगमहलों में चटाई आदि बुनना, ब्रह्मज्ञानी कबीर और रैदास का शूद्र होना, गुरु नानाक और भगवान श्रीकृष्ण का मूक पशुओं को लाठी लेकर हाँकना – सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण है।

बोध प्रश्न : 6. सच्ची फ़कीरी का अनमोल भूषण क्या है?

.....

.....

.....

समाज का पालन करनेवाली दूध की धारा

एक दिन गुरु नानक यात्रा करते-करते भाई लालो नाम के एक बढ़ई के घर ठहरे। उस गाँव का भागो नामक रईस बड़ा मालदार था। उस दिन भागो के घर ब्रह्म भोज था। दूर-दूर से साधु आये हुए थे। गुरु नानक का आगमन सुनकर भागो ने उन्हें भी निमन्त्रण भेजा। गुरु ने भागो का अन्न खाने से इनकार कर दिया। इस बात पर भागो को बड़ा क्रोध आया। उसने गुरु नानक को बलपूर्वक पकड़ मँगाया और उनसे पूछा -आप मेरे यहाँ का अन्न क्यों नहीं ग्रहण करते? गुरुदेव ने उत्तर दिया – भागो, अपने घर का हलवा-पूरी ले आओ, तो हम इसका कारण बतला दें। वह हलवा-पूरी लाया, तो गुरु नानक ने लालो के घर से भी उसके मोटे अन्न की रोटी मँगवाई। भागो की हलवा-पूरी उन्होंने एक हाथ में और भाई लालो को मोटी रोटी दूसरे हाथ में लेकर दोनों को जो दबाया, तो एक से लहू टपका और दूसरी से दूध की धारा निकली। बाबा नानक का यही उपदेश हुआ। जो धारा भाई लालो की मोटी रोटी से निकली थी, वही समाज का पालन करनेवाली दूध की धारा है , यही धारा शिवजी की

BRAOU

जटा से और यही धारा मजदूरों की उंगलियों से निकलती है।

मजदूरी करने से हृदय पवित्र होता है; संकल्प दिव्य लोकान्तर में विचरते हैं। हाथ की मजदूरी ही से सच्चे ऐश्वर्य की उन्नति होती है। जापान में मैंने कन्याओं और स्त्रियों को ऐसी कलावती देखा है कि वे रेशम के छोटे-छोटे टुकड़ों को अपनी दस्तकारी की बदौलत हजारों के कीमत का बना देती है; नाना प्रकार के प्राकृतिक पदार्थों और दृश्यों को अपनी सुई से कपड़े के ऊपर अंकित कर देती है। जापान-निवासी कागज, लकड़ी और पत्थर की बड़ी अच्छी मूर्तियाँ बनाते हैं। करोड़ों रुपये के हाथ के बने हुए जापानी खिलौने विदेशों में बिकते हैं। हाथ की बनी हुई जापानी चीजें मशीन से बनी हुई चीजों को मात करती हैं। संसार के सब बाजारों में उसकी बड़ी माँग रहती है। पश्चिमी देशों के लोग हाथ की बनी हुई जापान की अद्‌भुत वस्तुओं पर जान देते हैं। एक जापानी तत्वज्ञानी का कथन है कि हमारी दस करोड़ उँगलियाँ सारे काम करती हैं। इन उंगलियों ही के बल से, सम्भव है, हम जगत को जीत लें। ("We shall beat the world with the tips of our fingers") जब तक धन और ऐश्वर्य की जन्मदात्री हाथ की कारीगरी की उन्नति नहीं होती, तब तक भारतवर्ष ही की क्या, किसी भी देश या जाति की दरिद्रता दूर नहीं हो सकती। यदि भारत की पचास करोड़ नर-नारियों की उँगलियाँ मिलकर कारीगरी के काम करने लगें, तो उनकी मजदूरी की बदौलत कुबेर का महल उनके चरणों में आप ही आप आ गिरे।

अन्न पैदा करना तथा हाथ की कारीगरी और मेहनत से जड़ पदार्थों को चैतन्य-चिह्न से सुसज्जित करना, क्षुद्र पदार्थों को अमूल्य पदार्थों में बदल देना इत्यादि कौशल ब्रह्मरूप होकर धन-ऐश्वर्य्य की सृष्टि करते हैं। कविता, फकीरी और साधुता के ये दिव्य कला-कौशल जीते-जागते और हिलते-डुलते प्रतिरूप हैं। इनकी कृपा से मनुष्य-जाति का कल्याण होता है। ये उस देश में कभी निवास नहीं करते, जहाँ शूद्र की पूजा नहीं होती। हाथ से काम करनेवालों से प्रेम रखने और उनकी आत्मा का सत्कार करने से साधारण मजदूरी, सुन्दरता का अनुभव कराने वाले कला-कोशल अर्थात् कारीगरी का रूप हो जाती है। इस देश में जब मजदूरी का आदर होता था, तब इसी आकाश के नीचे बैठे हुए मजदूरों के हाथों ने भगवान् बुद्ध के निर्वाण-सुख को पत्थर पर इस तरह जड़ा था कि इतना काल बीत जाने पर, पत्थर की मूर्ति के ही दर्शन से ऐसी शान्ति प्राप्त होती है, जैसी कि स्वयं भगवान् बुद्ध के दर्शन से होती है। मुँह, हाथ, पाँव इत्यादि का गढ़ देना साधारण मजदूरी है, परन्तु मन के गुप्त भावों और अन्त:करण की कोमलता तथा जीवन की सभ्यता को प्रत्यक्ष प्रकट कर देना प्रेम-मजदूरी है। शिवजी के ताण्डव-नृत्य को और पार्वतीजी के मुख की शोभा की पत्थरों की सहायता से वर्णन करना, जड़ को चैतन्य बना देना है। इस देश में कारीगरी का बहुत दिनों से अभाव है। महमूद ने जो सोमनाथ के मन्दिर में प्रतिष्ठित मूर्तियाँ तोड़ी थीं, उससे उसकी कुछ भी वीरता सिद्ध नहीं होती। उन मूर्तियों को तो हर कोई तोड़ सकता था। उसकी वीरता की प्रशंसा तब होती, जब वह यूनान की प्रेम-मजदूरी, अर्थात् वहाँ वालों के हाथ की अद्वितीय कारीगरी प्रकट करनेवाली मूर्तियाँ तोड़ने का साहस कर सकता। वहाँ की मूर्तियाँ तो बोल रही हैं - वे जीती-जागती हैं, मुर्दा नहीं । इस समय के देवस्थानों में स्थापित मूर्तियाँ देखकर अपने देश की आध्यात्मिक दुर्दशा पर लज्जा आती है। उनसे तो यदि अनगढ़ पत्थर रख दिए जाते, तो आधिक शोभा पाते। जब हमारे यहाँ के मजदूर, चित्रकार तथा लकड़ी और पत्थर पर काम करनेवाले भूखों मरते हैं, तब हमारे मन्दिरों की मूर्तियाँ कैसे सुन्दर हो सकती हैं ? ऐसे कारीगर तो यहाँ शूद्र के नाम से पुकारे जाते हैं। याद रखिए, बिना शूद्र-पूजा के मूर्ति-पूजा किंवा कृष्ण और शालीग्राम की पूजा होना असभव है। सच तो यह है कि हमारे सारे धर्म-कर्म बासी ब्राह्मणत्व के छिछोरेपन से दरिद्रता को प्राप्त हो रहे हैं। यही कारण है, जो आज हम जातीय दरिद्रता से पीड़ित है।

बोध प्रश्न : 7. मजदूरी करने से क्या होता है ?

.....

.....

.....

BRAOU

पश्चिमी सभ्यता का एक नया आदर्श

पश्चिमी सभ्यता मुख मोड़ रही है। वह एक नया आदर्श देख रही है। अब उसकी चाल बदलने लगी है। वह कलों की पूजा को छोड़कर मनुष्यों की पूजा को अपना आदर्श बना रही है। इस आदर्श के दर्शानेवाले देवता रस्किन और टाल्सटाय आदि हैं। पाश्चात्य देशों में नया प्रभात होनेवाला है। वहाँ के गम्भीर विचारवाले लोग इस प्रभात का स्वागत करने के लिए उठ खड़े हुए हैं। प्रभात होने के पूर्व ही उसका अनुभव कर लेने वाले पक्षियों की तरह इन महात्माओं को इस नए प्रभात का पूर्व ज्ञान हुआ है। और, हो क्यों न? परन्तु अमीरी भी मानसिक दुःखों से विमर्दित है। मशीनें बनाई तो गई थीं मनुष्यों का पेट भरने के लिए - मजदूरों को सुख देने के लिए - परन्तु वे काली-काली मशीनें ही काली बनकर उन्हीं मनुष्यों का भक्षण कर जाने के लिए मुख खोल रही है। प्रभात होने पर ये काली-काली बलाएँ दूर होंगी। मनुष्य के सौभाग्य का सूर्य्योदय होगा।

शोक का विषय है कि हमारे और अन्य पूर्वी देशों में लोगों को मजदूरी से तो लेशमात्र भी प्रेम नहीं, पर वे तैयारी कर रहे हैं पूर्वोक्त काली मशीनों का आलिंगन करने की। पश्चिमवालों के तो ये गले पड़ी हुई बहती नदी की काली कमली हो रही हैं। वे छोड़ना चाहते हैं, परन्तु काली कमली उन्हे नहीं छोड़ती। देखेंगे, पूर्ववाले इस कमली को छाती से लगाकर कितना आनन्द अनुभव करते हैं। यदि हममें से हर आदमी अपनी दस उंगलियों की सहायता से साहसपूर्वक अच्छी तरह काम करे, तो हम मशीनों की कृपा से बढ़े हुए परिश्रमवालों को वाणिज्य के जातीय संग्राम में सहज ही पछाड़ सकते हैं। सूर्य्य तो सदा पूर्व ही से पश्चिम की ओर जाता है। पर आओ, पश्चिम में आनेवाली सभ्यता के नए प्रभात को हम पूर्व से भेजें।

इंजनों की वह मजदूरी किस काम की, जो बच्चों, स्त्रियों और कारीगरों को ही भूखा-नंगा रखती है, और केवल सोने, चाँदी, लोहे आदि धातुओं का ही पालन करती है। पश्चिम को विदित हो चुका है कि इनसे मनुष्य का दुःख दिन पर दिन बढ़ता है। भारतवर्ष जैसे दरिद्र देश में मनुष्य के हाथों की मजदूरी के बदले कलों से काम लेना काल को बुलाना होगा। दरिद्र प्रजा और भी दरिद्र होकर मर जायगी। मनुष्य को तो मनुष्य ही सुख दे सकता है। परस्पर की निष्कपट सेवा ही से मनुष्य जाति का कल्याण हो सकता है। धन एकत्र करना तो मनुष्य जाति के आनन्द-मंगल का एक साधारण-सा और महा तुच्छ उपाय है। धन की पूजा करना नास्तिकता है, ईश्वर को भूल जाना है, अपने भाई-बहिनों तथा मानसिक सुख और कल्याण के देनेवालों को मारकर अपने सुख के लिए शारीरिक राज्य की इच्छा करना है; जिस डाल पर बैठे हैं, उसी डाल को स्वयं ही कुल्हाड़ी से काटना है। अपने प्रियजनों से रहित राज्य किस काम का। प्यारी मनुष्य-जाति का सुख ही जगत् के मंगल का मूल साधन है। बिना उसके सुख के अन्य सारे उपाय निष्फल हैं।

धन की पूजा से ऐश्वर्य्य, तेज, बल और पराक्रम नहीं प्राप्त होने का। चैतन्य आत्मा की पूजा से ही ये पदार्थ प्राप्त होते हैं। चैतन्य-पूजा ही से मनुष्य का कल्याण हो सकता है। समाज का पालन करनेवाली दूध की धारा जब मनुष्य के प्रेममय हृदय, निष्कपट मन और मित्रतापूर्ण नेत्रों से निकलकर बहती है, तब वही जगत् में सुख के खेतों को हरा-भरा और करती है और वही उनमें फल भी लगाती है। आओ, यदि हो सके तो टोकरी उठाकर हाथ में ले, मिट्टी खोदें और अपने हाथ से उसके प्याले बनावें। फिर एक-एक प्याला घर-घर में, कुटिया-कुटिया में रख आवें और सब लोग उसी में मजदूरी का प्रेमामृत पान करें।

है रीत आशिकों की तन-मन निसार करना।
रोना सितम उठाना और उनको प्यार करना।

बोध प्रश्न : 8. किस मनुष्य का कल्याण हो सकता है?

.....

.....

PRAOU

3.3 सारंश

किसान स्वभाव से साधु होता है। वह हल चलाते हुए खेती करते हुए शारीरिक श्रम करता है। चावल, गेहूँ आदि को मेहनत के कणों से पैदा करता है। किसान का लगाव खेती से ही होता है और खेती उसके ईश्वर प्रेम का केन्द्र है। किसान शिक्षित नहीं है, जप तप आदि नहीं करता, मंदिर, मसजिद, गिरिजा से इसका कोई सरोकार नहीं है। उसके मन में धार्मिक भेद भाव नहीं होता है। मेहनत के बल पर जो मिले उसे खाकर संतुष्ट हो जाता है। उसके बच्चे मिट्टी में खेलकर ही बड़े होते हैं। किसान गाय और बैलों से प्रेम करता है। उनकी सेवा करता है। किसान कटु नहीं, मृदु भाषी होता है। वह किसी को धोखा नहीं देता । दया, वीरता और प्रेम किसानों के स्वाभाविक गुण होते हैं । वह प्रकृति का जवान होता है। उसको देखने पर लगता है कि फकीर के ही दर्शन हुए।

गडरिए घने जंगल में भेड़ें चराते रहते हैं । उनका अपना कोई स्थिर मकान नहीं रहता। जहाँ जाते हैं वहाँ अपनी घास-फूस की एक झोंपड़ी बना लेते हैं। पत्नी और बच्चों के साथ वहीं रहते हैं। उनका जीवन पवित्रता से आपूर्ण रहता है। अपनी भेड़ों के चराने में ही गड़रिए के लोग परिवार के दर्शन करते हैं। भेड़ों की सेवा इनकी पूजा होती है। कोई भेड़ बीमार होती हो तो ये व्याकुल हो जाते हैं। भेड़ें अच्छी हैं तो खुश। इनके मूक जीवन में ब्रह्मानंद दिखाई देता है। शिक्षा प्राप्त विद्वनों में पंडितों की ऊटपटाँग बातों में इस प्रकार का जीवन आनंद नहीं होता। प्रकृति की मन्द-मन्द हँसी में ये अनपढ़ लोग ईश्वर को देख रहे हैं इनके पशुओं के आज्ञान में गंभीर ज्ञान छिपा हुआ है, इन लोगों के जीवन में अद्‌भुत आत्मानुभव भरा हुआ है। गड़रिए के परिवार की प्रेम-मजदूरी का मूल्य माप नहीं सकते।

दिन भर मजदूरी करने के बाद मजदूर को चार आने पैसे देते हैं। मजदूर, हाथ, पाँव सिर, आँखें सब अवयव समर्पित करके बड़ी लगन के साथ मजदूरी करता है। फिर भी बहुत कम ही मजदूरी देते हैं। आप के पास जो पैसे हैं वे आप के नहीं, ईश्वर के हैं। मजदूरी का ऋण परस्पर प्रेम और सेवा से ही चुकता होता है।

गाढ़े की एक कमीज को अनाथ विधवा सारी रात बैठ कर सीती है और आशा करती है कि कमीज सीने पर कुछ तो खाने को मिलेगा। वह काम करते-करते थक जाती है। फिर थोड़ी देर बाद फिर शुरू करती है। उसकी सिली हुई कमीज को पहनना तीर्थ यात्रा है। वह कमीज शरीर का नहीं, आत्मा का वस्त्र होगा। विधवा के सुख-दुख, प्रेम और पवित्रता और श्रम से सिली हुई कमीज में ऐसी मजदूरी है, ऐसा काम है, जो प्रार्थना, संध्या और नमाज़ से कम नहीं है। सिर्फ शब्दों से प्रार्थना नहीं हुआ क़रती। लगन के साथ श्रम करने से ही वह प्रार्थना होती है।

मनुष्य अपने हाथों से जब काम करता है तब उस काम में प्रेम भरा रहता है। चित्रकारों के चित्रों में इसीलिए सदियों के बाद भी उनके अंत:करण के भाव दिखाई देते हैं, यंत्रों से बने हुए फोटो उनके सामने निर्जीव ही लगते हैं।

हाथ की मेहनत से बनी चीजों में रस भरा रहता है। जिस चीज में मनुष्य के प्यारे हाथ लगते हैं उसमें हृदय का प्रेम और मन की पवित्रता सूक्ष्म रूप में मिल जाती है। प्रेम से जीवन सदा गद् गद् रहता है। प्रेयसी की प्रेम भरी सेवा का मूल्य माप नहीं सकते हैं। प्रेयसी के हाथों से बनी रोटी अमूल्य पदार्थ होती है। इसी प्रेम का नाम योग है।

आदमियों की सौदागरी करना मूर्खों का काम है, आजकल मनुष्य बहुत सस्ते में बिक रहे हैं। संपत्ति की प्राप्ति से जीवन का सच्चा आनंद नहीं मिलता। ईश्वर मनुष्य में ही है। मनुष्य और उसकी मजदूरी का तिरस्कार करना नास्तिकता है। श्रम के बिना चिंतन करना बेकार है। इतिहास यही बताता है कि दान के अन्न पर पला हुआ ईश्वर-चिन्ता, पाप आलस्य और भ्रष्टाचार में बदल जाता है। श्रम करनेवाले, लुहार, बढ़ई, मेमार, किसान आदि कवि, महात्मा और योगी से कम नहीं होते।

आलसता से मनुष्य की चिंतन शक्ति कम हो जाती है। इसीलिए आजकल कविता में भी नयापन नहीं है। आज का नया साहित्य मजूदरों के स्वप्नों से और हृदय से निकलेगा। मजदूरों के कंठ से नई कविता लकड़ी के

BRAOU

काटनेवाले मजदूरों के स्वर से अदभुतगान, चरखा कातनेवाली स्त्रियों के गीत और इस प्रकार की कलाएँ श्रम से ही विकसित होंगी। धर्म, योग, शुद्ध आचरण, सभ्यता और कविता मजदूर-ऋषियों से ही विकसित होंगी।

मजदूरी और फकीरी मनुष्य के विकास के लिए आवश्यक हैं। मजदूरी के बिना फकीरी का उच्च भाव शिथिल हो जाता है। बुद्धि बासी पड़ जाती है। जाति-भेद, रंग-भेद रहित समाज में प्रेम-धर्म का राज्य होता है। यह सारी दुनिया एक परिवार के समान है। मजदूरी कामना सहित होकर भी निष्काम होती है। मजदूरी करना जीवन यात्रा का आध्यात्मिक नियम है। टालस्टाय का त्याग और जूते गाँठना, ब्रह्म ज्ञानी कबीर, रैदास, गुरूनानक, कृष्ण आदि सच्ची फकीरी के अनमोल भूषण हैं।

मजदूरों का शोषण करके जो धनवान बनता है उसकी रोटी से लहूँ टपकता है और श्रम से बनी रोटी से दूध की धारा। गुरु नानक ने यही साबित किया था। मजदूरी से हृदय पवित्र होता है, हाथ की मजदूरी से ही सच्चे ऐश्वर्य की उन्नति होती है। जापान की कन्याओं और स्त्रियों के श्रम को देख कर एक जापानी ने कहा कि - हमारी दस करोड़ उंगलियाँ सारे काम करती हैं। इन उंगलियों के ही बल से संभव है, हम जगत को जीत लें। इसीलिए पूर्णसिंह कहते हैं कि ''जब तक धन और ऐश्वर्य की जन्म दात्री हाथ की कारीगरी की उन्नति नहीं होती, तब तक भारत वर्ष क्या किसी भी देश या जाति की दरिद्रता दूर नहीं हो सकती'' जहाँ मजदूर की मजदूरी का सत्कार नहीं होता, जहाँ शूद्र की पूजा नहीं होती वहाँ कविता, फकीरी और साधुता नहीं रह सकती। शरीर के अवयवों से साधारण श्रम करते हैं तो मन के गुप्त भावों से, कोमलता से जीवन की सभ्यता को प्रत्यक्ष प्रकट करना प्रेम-मजदूरी है।

टालस्टाय और रस्किन आदि के नेतृत्व में पश्चिमी सभ्यता यंत्रों की तुलना में मनुष्यों को अपना आदर्श बना रही है। दुनिया में एक तरफ गरीबी है तो दूसरी तरफ अमीरी। यंत्रों को मनुष्यों का पेट भरने के लिए बनाया गया है। मजदूरों को सुख देने के लिए बनाया गया है। लेकिन ये यंत्र मनुष्यों को खाने लगे हैं। इधर पूर्वी देशों में लोगों की मज़दूरी को सम्मान नहीं दे रहे हैं। मनुष्य के श्रम को सम्मान मिलता तो परिश्रमवालों को वाणिज्य के जातीय संग्राम में पछाड़ सकते हैं। मनुष्य ही मनुष्य को सुख दे सकता है। आपस में सेवा भाव रखने से मनुष्य जाति का कल्याण हो सकता है। पूंजी एकत्रित करना मानवता नहीं है। मनुष्यों की भलाई में मानवता है। प्रियजनों से रहित और मनुष्यता से रहित राज्य किसी के काम का नहीं होगा। धन की पूजा से मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता। चैतन्य की पूजा से ही, मजदूरी के प्रेमामृत से ही, मनुष्य के प्रेममय हृदय से ही मनुष्य का कल्याण हो सकता है।

BRAOU

3.4 समीक्षा

यूरोप में औद्योगिक क्रांति के बाद मशीनी सभ्यता का विकास ज़ोरों पर हुआ। मशीनों के कारण पूंजीवाद का विकास द्रुतगति से हुआ था। पूंजीवादी सभ्यता में मजदूर और मजदूरी का महत्व घट गया। पूंजी एकत्रित करना ही मनुष्य का लक्ष्य बन गया। हस्त-उद्योग, कारीगरी, मशीनी उत्पादन के सामने लड़खड़ाने लगी। पूंजीवादी व्यवस्था में हर वस्तु पैसे से ही तौली जाती है। पूंजीपति मनुष्यों के श्रम का शोषण करते हैं। संपत्ति एकत्रित करते हैं। अमीरी और गरीबी का भेद भाव समाज में पनपता हैं।

वास्तव में मशीनें, मनुष्यों का पेट भरने के लिए, मजदूरों को सुख देने के लिए बनाई गईं। लेकिन मनुष्य के ही स्वार्थ के कारण ये मशीनें मनुष्य और मनुष्यता को खाने लगीं। वास्तव में मनुष्य जब अपने हाथों से काम करता है तब उसमें प्रेम भरा रहता है। संपत्ति को एकत्रित करने में सच्चा आनंद नहीं है। इतिहास ने भी यह स्पष्ट किया है कि श्रम से दूर चिंतन ने आलस्य और भ्रष्टाचार को ही जन्म दिया है। आलसता से मनुष्य की चिंतन शक्ति भी कम हो जाती है। श्रम--जीवन के बल पर ही स्वस्थ चिंतन और कलाओं का विकास होगा। श्रम मनुष्य के समष्टि रूप का व्यष्टि रूप परिणाम होता है। मजदूरी करना जीवन यात्रा का नियम है। मजदूरी करने से हृदय पवित्र होता है। हाथ की मजदूरी से ही सच्ची उन्नति होती है। परस्पर सेवा भाव से श्रम करने से ही मनुष्य का कल्याण

होता है। अध्यापक पूर्णसिंह एक ऐसे आध्यात्मिक समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसमें मशीन का नहीं, मनुष्य का ही मूल्य हो।

इस निबंध में व्यक्त पूर्णसिंह के विचार अपने समय से बहुत आगे के विचार थे। आज भी उनके विचार प्रासंगिक हैं। भारत में प्राचीन काल से ही परान्नजीवी साधु सन्यासियों का वर्ग हमें दिखाई देता है। इस वर्ग को सारी भौतिक सुविधायें प्राप्त होती हैं, इनका सम्मान होता है लेकिन मजदूरी के बिना फकीरी के उच्च भाव शिथिल हो जाते हैं। श्रमहीन बुद्धि बासी हो जाती हैं। भारत में मेहनत करनेवाले लोगों को सम्मान की निम्न श्रेणी के अंतर्गत रखा गया। धार्मिक स्तर पर भी उनको शूद्र कहा गया। इसीलिए आज हम जातीय दरिद्रता से पीड़ित हैं।

पूर्णसिंह जी के समय हिन्दी निबंध साहित्य का अभी कोई स्पष्ट स्वरूप उभर कर सामने नहीं आया था, लेकिन पूर्णसिंह की निबंध शैली ने लोगों को चमत्कृत किया। निबंध में भाषा-प्रवाह, भाव-धारा, लाक्षणिक प्रयोग, पाठकों को एक ओर चमत्कृत करते हैं वहाँ दूसरी ओर पाठकों की चेतना और उनके विचारों को उत्तेजित भी करते हैं।

3.5 शब्दार्थ

हवन	:	मंत्र पढ़ कर किसी देवता के लिए अग्नि में आहुति देना।
चिनगारियाँ	:	जलते हुए कोयले आदि के बहुत छोटे टुकडे, अग्नि कण
उगना	:	उपजना, उदय होना
आहुति	:	हवन में हवन सामग्री को अग्नि में डालना
संध्या-वन्दना	:	संध्या के समय की जानेवाली गायत्री पूजा
सरोकार	:	वास्ता, लगाव
विधाता	:	ब्रह्म
वृष्टि	:	वर्षा
स्वाध्याय	:	आवृत्ति पूर्वक वेदाध्ययन, शास्त्राध्ययन
वाली	:	राजा, संरक्षक, मालिक, मित्र
गड़रिया	:	एक हिंदू जाति जो भेड़ें पालती हैं
सुफेद	:	सफेद
बरफानी	:	बर्फ से ढ़का हुआ
सूर्य्य	:	सूर्य
सुनहली	:	सोने के रंग का
लावण्य	:	सुंदर
अश्क	:	आँसू
ला-मकाँ	:	मकान से परें, ईश्वर
दारे फानी	:	मिटजानेवाला दुनिया रूपी मकान
फंवारे	:	पानी उछालने का एक यंत्र, फाउन्टेन
फूले अंग नहीं समाना	:	अत्यंत आनंदित होना
जिल्द साज	:	पुस्तक की रक्षा के लिए लगाया जिल्द बंद

BRAOU

हाँडी	:	मिट्टी का बरतन
तिजारत	:	व्यापार, सौदागरी
निकम्मे	:	जो किसी काम का न हो
आलस्य	:	काम करने में उत्साह नहीं दिखाना
मेमार	:	मकान बनाने वाला कारीगर
बासी	:	देर का पका हुआ, बहुत समय बीत जाने पर निरुपयोगी बन गई चीज
खर्राटा	:	निद्रा की अवस्था में नाक से निकलनेवाला शब्द
तम्बू	:	कपड़े आदि का बना हुआ खेमा, शामियाना
छिछोरापन	:	नीचता
कुल्हाड़ी	:	लकड़ी चीरने-फाड़ने का एक औजार
प्रफुल्लित	:	आनंदित
कुदाली	:	भूमि खोदने और खेत गाड़ने का लोहे का एक औजार
सितम	:	अत्याचार, जुल्म

3.6 अभ्यास

3.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. अध्यापक पूर्णसिंह जी की दृष्टि में आज हम जातीय दरिद्रता से क्यों पीड़ित हैं?
2. 'मजदूरी और प्रेम' निबंध में व्यक्त विचारों के आधार पर जीवन में मजदूरी और प्रेम के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

3.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. किसान के जीवन की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. मजदूरी और चिंतन के आपसी संबंध को स्पष्ट कीजिए।
3. हाथ की कारीगरी का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
4. मजदूरी और फकीरी मनुष्य के विकास के लिए क्यों आवश्यक हैं?
5. पश्चिमी सभ्यता का नया आदर्श क्या है?
6. निम्न लिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए:-

1. मनुष्य पूजा ही सच्ची ईश्वर पूजा है। ..... मजदूर और मजदूरी का तिरस्कार करना नास्तिकता है।
2. जब तक धन और ऐश्वर्य की जन्मदात्री हाथ की कारीगरी की उन्नति नहीं होती, तब तक भारत वर्ष की क्या, किसी भी देश या जाति की दरिद्रता दूर नहीं हो सकती।
3. सूर्य तो सदा पूर्व ही से पश्चिम की ओर जाता है पर आओ, पश्चिम में आनेवाली सभ्यता के नये प्रभात को हम पूर्व से भेजें।
4. अपने प्रिय जनों से रहित राज्य किस काम का? प्यारी मनुष्य जाति का सुख ही जगत के मंगल का मूल साधन है।

BRAOU

3.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

3.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'मजदूरी और प्रेम' निबंध में व्यक्त विचारों के आधार पर जीवन में मजदूरी और प्रेम के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : मानवों के अस्तित्व को बनाये रखने में आज समाज के विकास में मजदूरी या श्रम का विशेष महत्व होता है। मजदूरी के बल पर हम जीवन में सभी प्रकार की भौतिक सुख सुविधाओं को प्राप्त कर सकते हैं। किसान चावल, गेहूं आदि को अपनी मेहनत से पैदा करता है। गडरिया सफ़ेद ऊन वाली भेडों का पालन-पोषण करता है। एक अनाथ विधवा सारी रात बैठ कर सीती है। ये सब मेहनत के बल पर समाज की उत्पादान-प्रक्रिया में भाग लेते हैं। अपनी प्रेम पूर्ण मजदूरी से, हाथ की मेहनत से चीजों में रस भरते हैं।

श्रम से जुडकर ही स्वस्थ चिंतन का विकास होता है। विभिन्न देशों का इतिहास यह स्पष्ट करता है कि श्रम से कट कर जिस चिंतन का विकास हुआ वह पाप, आलस्य और भ्रष्टाचार को प्रोत्साहित करनेवाला चिंतन बन गया। श्रम करनेवाले, लकडी, ईंट, पत्थर को मूर्तिमान करनेवाले लुहार, बढई, मेमार और किसान आदि वैसे ही महान पुरुष होते हैं जैसे कवि, महात्मा और योगी। मजदूरी श्रम के बल पर ही नया साहित्य विकसित होगा। मजदूरी से ही कला रूपी धर्म की वृद्धि होगी। धर्म, योग, शुद्ध आचरण, सभ्यता और कविता आदि मजदूरी के बल पर ही पलेंगे।

मजदूरी और फकीरी मनुष्य के विकास के लिए परम आवश्यक होती हैं। बिना मजदूरी, फकीरी का उच्च भाव शिथिल हो जाता है। बुद्धि बासी पड जाती है। मजदूरी मनुष्य के समष्टि रूप का व्यष्टि-रूप परिणाम है। जाति-पाँति, रूप-रंग, नाम-धाम, बाप-दादे का नाम पूछे बिना ही प्रेम में व्यक्ति अपने आपको किसी के हवाले कर देता है। सब लोग एक ही प्रकार के माता-पिता से पैदा हुए भाई-बहन होते हैं। यह सारा संसार एक परिवार के समान है। आनंद और प्रेम मजदूरी के कंधों पर ही रहते आये हैं। मजदूरी करना जीवन यात्रा का नियम है। मजदूरी करने से हृदय पवित्र होता है। संकल्प दिव्य होते हैं। हाथ की मजदूरी से ही सच्चे ऐश्वर्य की उन्नति होती है।

शारीरिक श्रम को साधारण मजदूरी कहते हैं। लेकिन अंत:करण की कोमलता और जीवन की सभ्यता को प्रत्यक्ष प्रकट करना प्रेम मजदूरी है। इसलिए इन दोनों के बल पर अर्थात् मजदूरी प्रेम से ही देश का कल्याण हो सकता है।

3.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न (1) किसान के जीवन की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : किसान साधु स्वभाव वाले होते हैं। वे शारीरिक श्रम करते हैं। चावल, गेहूँ, अनाज आदि को अपनी मेहनत के बल पर पैदा करते हैं। खेती उसके ईश्वर-प्रेम का केन्द्र होता है। उनका जीवन एक प्रकार का मौन जीवन होता है। किसान प्राय: अशिक्षित होते हैं । मंदिर, मसजिद, गिरजे से इसे कोई सरोकार नहीं है। सुबह उठकर यह हल जोतेने चल देता है। यह और इसके परिवार वाले गाय और बैलों से प्रेम करते हैं। इनके वचन मधुर होते हैं। किसान किसी को धोका नहीं देता। इनकी स्त्री आज्ञाकारी होती है। दया, वीरता और प्रेम किसानों के खास गुण होते हैं। किसान हमारे लिए अन्नदाता होता है। वह खेतों का राजा होता है।

प्रश्न (2) संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

"सूर्य तो सदा पूर्व ही से पश्चिम की ओर जाता है। पर आओं, पश्चिम में आनेवाली सभ्यता के नये प्रभात को हम पूर्व से भेजें।"

DRAFT

उत्तर : यह गद्यांश अध्यापक पूर्णसिंह के द्वारा लिखित ''मजदूरी और प्रेम'' शीर्षक निबंध से दिया गया है। इस निबंध में अध्यापक पूर्णसिंह मजदूर वर्ग के प्रति सहानुभूति दिखाते हैं और श्रम के महत्व का प्रतिपादन करते हैं। पूर्णसिंह जी का विश्वास है कि मजदूरी के प्रेमामृत से ही मनुष्य का कल्याण होगा।

व्याख्या : पूर्णसिंह कहते हैं कि पश्चिमी सभ्यता में रस्किन, टालस्टाय आदि के पथ प्रदर्शन से एक नये आदर्श का विकास हो रहा है। पश्चिम में इसके पहले यंत्रों की ही पूजा होती थी। अब इस नये आदर्श के कारण यंत्रों के स्थान पर मनुष्यों की पूजा होने लगी। वहाँ के कई लोग इस नयी सभ्यता का स्वागत करने के लिए तैयार हैं। यंत्रों के पहियों के नीचे वहाँ मानव जाति पिस रही थी। मजदूर श्रम करते हैं लेकिन वे दरिद्रता को ही भोगते रहते हैं। दूसरी ओर अमीरी की भी वृद्धि दिखाई देती है। वास्तव में यंत्रों को मनुष्य का पेट भरने के लिए तैयार किया गया है। मजदूरों को सुख देने के लिए तैयार किया गया है। लेकिन ये यंत्र उल्टे मनुष्यों का भक्षण कर रहे हैं। सूर्योदय होने पर यह स्थिति दूर हो जायेगी। मनुष्य अपनी दस उंगलियों की सहायत से काम करें तो यंत्रो की सहायता से जो काम होता है उससे भी ज्यादा काम हो सकता हैं। उंगलियों की सहायता से हम पश्चिम वालों को वणिज्य में, जातीय संग्राम में, सहज ही आसानी से पछाड़ सकते हैं।

पश्चिम को यह स्पष्ट हो गया है कि मनुष्य के दुःख को बढानेवाली इंजनों की मजदूरी मजदूरों को, कारीगरों को, भूखा-नंगा रखती है। उससे सिर्फ अमीरी ही बढती है। मनुष्य को मनुष्य ही सुख दे सकता हैं। परस्पर निष्कपट भाव से सेवा करने से ही मनुष्य जाति का कल्याण होता है। भारत जैसे दरिद्र देशों में मनुष्य के हाथों की मजदूरी में ही निष्कपट परस्पर सेवा से ही मनुष्य का विकास होगा। इसलिये पूर्णसिंह जी कहते हैं कि सूर्य सदा ही पूर्व से पश्चिम की ओर जाता है। इसलिए पश्चिम में आनेवाली सभ्यता के लिए नये प्रभात रूपी जीवन दृष्टि हम पूर्व से भेजेंगे।

बोध प्रश्नो के उत्तर :

1) किसानों के बारे में गुरु नानक के कहा था कि - ''भोले भाष मिले रघुराई।'' भोले-भाले किसानों को ईश्वर अपने खुले दीदार का दर्शन देता है।

2) गडरिए के जीवन में अद्‌भुत आत्मानुभव भरा हुआ है।

3) गाढे की कमीज जिस को एक अनाथ विधवा सारी रात बैठ कर सीती है, उस में उस विधवा के सुख-दुःख, प्रेम और पवित्रता के मिश्रण में मिली हुई जीवन रूपिणी गंगा की बाढ चली आ रही है।

4) लेखक के गुरू ने प्रेम से संयम को ही योग कहा।

5) मजदूर-ऋषियों के उद्यान में धर्म, योग, दुराचरण और कविता आदि के फूल प्रफुल्लित होंगे।

6) जोन ऑफ़ आर्क का भेडें चराना, टालस्टाय का त्याग, उमर खैयाम का तम्बू सीते फिरना, खलीफा उमर का अपने रंगमहलों में चटाई बुनना, हम ज्ञानी कबीर और रैदास का होना, गुरु नानक और भगवान श्रीकृष्ण का मूक पशुओं को लाठी लेकर हाँकना - सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण है।

7) मजदूरी करने मे हृदय पवित्र होता है। संकल्प दिव्य लोकात्तर में विचरते हैं।

8) चैतन्य पूजा से मनुष्य का कल्याण हो सकता है।

3.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

BRAOU

इकाई-4: एक कुत्ता और एक मैना - आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

4.0 उद्देश्य

4.1 पाठ एवं लेखक परिचय

4.2 मूल पाठ

4.3 सारांश

4.4 समीक्षा

4.5 शब्दार्थ

4.6 अभ्यास

4.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

4.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

4.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

4.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

4.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.0 पाठ का उद्देश्य

इस पाठ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी द्वारा लिखे गये निबन्ध ''एक कुत्ता और एक मैना'' का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसे पढकर आप

- गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के कवि-हृदय के भावों को समझ सकेंगे।
- रवीन्द्रनाथ टैगोर की सहृदयता और करुणा को पहचान सकेंगे।
- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के विचारों और भावों को जान सकेंगे।
- द्विवेदी जी की टैगोर के प्रति आत्मीयता और श्रद्धा से परिचित हो सकेंगे।
- टैगोर में मानव और पशुओं के प्रति पाये जाने वाले प्रेम को समझ सकेंगे।

4.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ परिचय

''एक कुत्ता और एक मैना'' नामक निबन्ध के लेखक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी हैं। यह द्विवेदी जी के निबन्ध संग्रह 'अशोक के फूल' से लिया गया है। इस संग्रह में साहित्य, संस्कृति और आलोचना से संबंधित निबन्ध संकलित हैं। द्विवेदी जी ने अपने निबन्धों में भारतीय संस्कृति और मानव-जीवन के शाश्वत मूल्यों को साधारण विषयों के द्वारा प्रस्तुत किया है।

यह सब जानते हैं कि सच्चा साहित्यकार मानव और दूसरे प्राणियों से आत्मीयता रखता है। इसी कारण वह उनकी भावनाओं की गहराई में पहुँचता है और उसे अपनी कला तथा प्रतिभा द्वारा अपनी रचनाओं में व्यक्त

BRAOU

करता है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर संसार के सभी प्राणियों से प्रेम और सहानुभूति को ही अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते हैं। टैगोर के समान ही आदिकवि वाल्मीकि की रचनाओं का भी मूल आधार करुणा ही रहा है। इसी करुणा की खोज आचार्य द्विवेदी जी ने विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के व्यक्तित्व में की है। यह निबन्ध टैगोर जी के प्रति श्रद्धा को व्यक्त करते हुए लिखा गया है।

(आ) लेखक परिचय

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का जन्म सन् 1907 में हुआ। इनका जन्म स्थान उत्तर प्रदेश के 'बलिया' जिले का 'छाप्रा' गाँव है। वे बाल्यकाल से ही प्रतिभावान और कुशलबुद्धि के रहे। रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा स्थापित शांति निकेतन संस्था में द्विवेदी जी ने सन् 1930 से 1950 तक अध्यापन – कार्य किया। वे 10 वर्षों तक काशी के बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के संस्थापक अध्यक्ष भी रहे। उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम कुछ वर्ष बनारस में बिताये और वही सन् 1979 में उनका देहान्त हो गया।

आचार्य द्विवेदी जी हिन्दी साहित्य के बहुत बड़े विद्वान रहे। वे एक सफल अपन्यासकार और श्रेष्ठ आलोचक थे। उन्होंने साहित्य संबंधी निबन्धों के अलावा ललित निबन्ध भी लिखे हैं। उनके निबन्धों की यह प्रमुख विशेषता रही है कि उनमें साधारण विषयों के द्वारा भारतीय संस्कृति के वैभव का वर्णन मिलता है। समीक्षा के क्षेत्र में अपनी मौलिक स्थापनाओं के द्वारा उन्होंने अमूल्य योगदान दिया है। इसके अलावा द्विवेदी जी ने कई ग्रन्थों का अनुवाद भी किया है। उन्होने कई प्राचीन ग्रन्थों और साहित्यिक पत्रिकाओं का सफ़ल संपादन भी किया है। सन् 1957 में भारत सरकार ने द्विवेदी जी की सहित्यिक उपलब्धियों और हिन्दी सेवा के लिए सम्मानित करते हुए 'पद्मभूषण' की उपाधि प्रदान की। कई अवसरों पर केन्द्र सरकार, प्रादेशिक सरकार और कई साहित्यिक संस्थाओं ने द्विवेदी जी का सम्मान किया।

आचार्य द्विवेदी जी की प्रमुख रचनाओं में 'आशोक के फूल, 'कल्पलता', 'कुंज' आदि निबन्ध संग्रह 'कबीर', 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल', 'हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास' जैसी आलोचनात्मक पुस्तकें और 'बाणभट्ट की आत्मकथा' और 'अनामदास का पोथा' नामक उपन्यास उल्लेखनीय हैं।

4.2 मूलपाठ

आज से कई वर्ष पहले गुरुदेव के मन में आया कि शान्तिनिकेतन को छोड़कर कहीं अन्यत्र जायें। स्वास्थ्य बहुत अच्छा नहीं था । शायद इसलिए, या पता नहीं क्यों, तै पाया कि वे श्रीनिकेतन के पुराने तिमंजिले मकान में कुछ दिन रहें। शायद मौज में आकर ही उन्होंने यह निर्णय किया हो। वे सबसे ऊपर के तल्ले में रहने लगे। उन दिनों ऊपर तक पहुँचने के लिए लोहे की चक्करदार सीढ़ियाँ थीं, और वृद्ध और क्षीणवपु रवीन्द्रनाथ के लिए उस पर चढ़ सकना असम्भव था। फिर भी बड़ी कठिनाई से उन्हें वहाँ ले जाया जा सका।

उन दिनों छुट्टियाँ थीं। आश्रम के अधिकांश लोग बाहर चले गये थे। एक दिन हमने सपरिवार उनके 'दर्शन' की ठानी। 'दर्शन' को मैं जो यहाँ विशेष रूप से दर्शनीय बनाकर लिख रहा हूँ, उसका कारण यह है कि गुरुदेव के पास जब कभी मैं जाता था तो प्रायः वे यह कहकर मुस्करा देते थे कि दर्शनार्थी हैं क्या। शुरू-शुरू में मैं उनसे ऐसी बँगला में बात करता था, जो वस्तुतः हिन्दी-मुहावरों का अनुवाद हुआ करती थी। किसी बाहर के अतिथि को जब मैं उनके पास ले जाता था तो कहा करता था, 'एक भद्र लोक आपनार दर्शनेर जन्य ऐशे छेन।' यह बात हिन्दी में जितनी प्रचालत है, उतनी बंगला में नहीं। इसलिए गुरुदेव जरा मुस्कुरा देते थे। बाद में मुझे मालूम हुआ कि मेरी यह भाषा बहुत अधिक पुस्तकीय है और गुरुदेव ने उस 'दर्शन' शब्द को पकड़ लिया था। इसलिए जब कभी मैं असमय में पहुंच जाता था तो वे हँसकर पूछते थे – 'दर्शनार्थी लेकर आये हो क्या?' यहाँ यह दुख के साथ कह देना चाहता हूँ कि अपने देश के दर्शनार्थियों में कितने ही इतने प्रगल्भ होते थे कि समय-असमय, स्थान-अस्थान, अवस्था-अनवस्था की एकदम परवा नहीं करते थे और रोकते रहने पर भी आ ही जाते

थे। ऐसे 'दर्शनार्थियों' से गुरुदेव कुछ भीत-भीत से रहते थे। अस्तु, मैं मय बाल-बच्चों के एक दिन श्रीनिकेतन जा पहुँचा। कई दिनों से उन्हें देखा नहीं था।

बोध प्रश्न :1. लेखक की बंगला भाषा में क्या बात थी जिससे गुरुदेव जरा मुस्कुरा देते थे?

.....

.....

.....

गुरुदेव वहाँ बड़े आनन्द में थे। अकेले रहते थे। भीड़-भाड़ उतनी नहीं होती थी, जितनी शान्तिनिकेतन में। जब हम लोग ऊपर गये तो गुरुदेव बाहर एक कुर्सी पर चुपचाप बैठे अस्तगामी सूर्य की ओर ध्यान-स्तिमित नयनों से देख रहे थे। हम लोगों को देखकर मुस्कुराये, बच्चों से जरा छेड़-छोड़ की, कुशल-प्रश्न पूछे और फिर चुप हो रहे। ठीक उसी समय उनका कुत्ता धीरे-धीरे ऊपर आया और उनके पैरों के पास खड़ा होकर पूँछ हिलाने लगा। गुरुदेव ने उसकी पीठ पर हाथ फेरा। आँखें मूँदकर अपने रोम-रोम से उस स्नेह-रस का अनुभव करने लगा। गुरुदेव ने हम लोगों की ओर देखकर कहा, ''देखा तुमने, ये आ गये। कैसे इन्हें मालूम हुआ कि मैं यहाँ हूँ, आश्चर्य है, और देखे, कितनी परितृप्ति इनके चेहरे पर दिखायी दे रही है।''

हम लोग उस कुत्ते के आनन्द को देखने लगे। किसी ने उसे राह नहीं दिखायी थी, न उसे यह बताया था कि उसके स्नेह-दाता यहाँ से दो मील दूर हैं और फिर भी वह पहुँच गया । इसी कुत्ते को लक्ष्य करके उन्होंने 'आरोग्य' में इस भाव की एक कविता लिखी थी - ''प्रतिदिन प्रात:काल यह भक्त कुत्ता स्तब्ध होकर आसन के पास तब तक बैठा रहता है, जब तक अपने हाथों के स्पर्श से मैं इसका संग नहीं स्वीकार करता। इतनी-सी स्वीकृति पाकर ही उसके अंग-अंग में आनन्द का प्रवाह बह उठता है। इस वाक्यहीन प्राणिलोक में सिर्फ यही एक जीव अच्छा-बुरा सबको भेदकर सम्पूर्ण मनुष्य को देख सका है, उस आनन्द को देख सका है, जिसे प्राण दिया जा सकता है, जिसमें अहैतुक प्रेम ढाल दिया जा सकता है, जिसकी चेतना असीम चैतन्य लोक में राह दिखा सकती है। जब मैं इस मूक हृदय का प्राणपण आत्मनिवेदन देखता हूँ, जिसमें वह अपनी दीनता बताता रहता है, तब मैं यह सोच ही नहीं पाता कि उसने अपने सहज बोध से मानव स्वरूप में कौन-सा-मूल्य आविष्कार किया है, इसकी भाषाहीन दृष्टि की करुण व्याकुलता जो कुछ समझती है, उसे समझा नहीं पाती और मुझे इस सृष्टि में मनुष्य का सच्चा परिचय समझा देती है।'' इस प्रकार कवि की मर्मभेदी दृष्टि ने इस भाषाहीन प्राणी की करुण दृष्टि के भीतर उस विशाल मानव-सत्य को देखा है, जो मनुष्य-मनुष्य के अन्दर भी नहीं देख पाता।

बोध प्रश्न : 2. कवि की दृष्टि ने कुत्ते की करुण दृष्टि में क्या देखा?

.....

.....

.....

मैं जब यह कविता पढ़ता हूँ तब मेरे सामने श्रीनिकेतन के तितल्ले पर की वह घटना प्रत्यक्ष-सी हो जाती है। वह आँख मूँदकर अपरिसीम आनन्द, वह 'मूक हृदय का प्राणपण आत्मनिवेदन' मूर्तिमान हो जाता है। उस दिन मेरे लिए वह एक छोटी-सी घटना थी, आज वह विश्व की अनेक महिमाशाली घटनाओं की श्रेणी में बैठ गयी है। एक आश्चर्य की बात और इस प्रसंग में उल्लेख की जा सकती है। जब गुरुदेव का चिताभस्म कलकत्ते से आश्रम में लाया गया, उस समय भी न जाने किस सहज बोध के बल पर वह कुत्ता आश्रम के द्वार तक आया और चिताभस्म के साथ अन्यान्य आश्रमवासियों के साथ शान्त गम्भीर भाव से उत्तरायण तक गया। आचार्य

BRAOU

क्षितिमोहन सेन सबके आगे थे। उन्होंने मुझे बताया कि वह चिताभस्म के कलश के पास थोड़ी देर चुपचाप बैठा भी रहा।

कुछ और पहले की घटना याद आ रही है। उन दिनों मैं शान्तिनिकेतन में नया ही आया था। गुरुदेव से अभी उतना धृष्ठ नहीं हो पाया था। गुरुदेव उन दिनों सुबह अपने बगीचे में टहलने के लिए निकला करते थे। मैं एक दिन उनके साथ हो गया था। मेरे साथ एक और पुराने अध्यापक थे और सही बात तो यह है कि उन्होंने ही मुझे भी अपने साथ ले लिया था। गुरुदेव एक-एक फूल-पत्ते को ध्यान से देखते हुए अपने बगीचे में टहल रहे थे और उक्त अध्यापक महाशय से बातें करते जा रहे थे। मैं चुपचाप सुनता जा रहा था। गुरुदेव ने बातचीत के सिलसिले में एक बार कहा, ''अच्छा साहब, आश्रम के कौए क्या हो गये? उनकी आवाज सुनायी ही नहीं देती।'' न तो मेरे साथी उन अध्यापक महाशय को यह खबर थी और न मुझे ही। बाद में मैंने लक्ष्य किया कि सचमुच कई दिनों तक आश्रम में कौए नहीं दीख रहे हैं। मैंने तब तक कौओं को सर्वव्यापक पक्षी ही समझ रखा था। अचानक उस दिन मालूम हुआ कि ये भले आदमी भी कभी-कभी प्रवास को चले जाते हैं या चले जाने को बाध्य होते हैं। एक लेखक ने कौओं की आधुनिक साहित्यिकों से उपमा दी है, क्योंकि इनका मोटो है - मिसचीफ फार मिसचीफ्स सेक (शरारत के लिए ही शरारत)। तो क्या कौओं का प्रवास भी किसी शरारत के उद्देश्य से ही था? प्रायः एक सप्ताह के बाद बहुत कौए दिखायी दिये।

बोध प्रश्न : 3. लेखक कौओं को किस दृष्टि से देखता है?

.....

.....

.....

एक दूसरी बार मैं सवेरे गुरुदेव के पास उपस्थित था। उस समय एक लँगड़ी मैना फुदक रही थी। गुरुदेव ने कहा, ''देखते हो, यह यूथभ्रष्ट है। रोज़ फुदकती है, ठीक यहीं आकर। मुझे इसकी चाल में एक करुण भाव दिखायी देता है।'' गुरुदेव ने अगर कह न दिया होता तो मुझे उसका करुणभाव एकदम नहीं दीखता। मेरा अनुमान था कि मैना करुण भाव दिखानेवाला पक्षी है ही नहीं। वह दूसरों पर अनुकम्पा ही दिखाया करती है। तीन-चार वर्ष से मैं एक नये मकान में रहने लगा हूँ। मकान के निर्माताओं ने दीवारों में चारों ओर एक-एक सूराख छोड़ रखी है। यह कोई आधुनिक वैज्ञानिक खतरे का समाधान होगा। सो, एक मैना-दम्पति नियमित भाव से प्रतिवर्ष यही गृहस्थी जमाया करते हैं, तिनके और चीथड़ों का अम्बार लगा देते हैं। भलेमानस गोबर के टुकड़े तक ले आना नहीं भूलते। हैरान होकर हम सूराखों में ईंटें भर देते हैं, परन्तु वे खाली बची जगह का भी उपयोग कर लेते हैं। पति-पत्नी जब कोई एक तिनका लेकर सूराख में रखते हैं तो उनके भाव देखने लायक होते हैं। पत्नी देवी का तो क्या कहना। एक तिनका ले आयी तो फिर एक पैर पर खड़ी होकर जरा पंखों को फटकार दिया, चोंच को अपने ही परों से साफ कर लिया और नाना प्रकार की मधुर और विजयोद्घोषी वाणी में गान शुरू कर दिया। हम लोगों की तो उन्हें कोई परवा ही नहीं रहती। अचानक इसी समय अगर पति देवता भी कोई कागज का या गोबर का टुकड़ा लेकर उपस्थित हुए तब तो क्या कहना। दोनों के नाच-गान और आनन्द-नृत्य से सारा मकान मुखरित हो उठता है। इसके बाद ही पत्नी देवी जरा हम लोगों की ओर मुखातिब होकर लापरवाही-भरी अदा से कुछ बोल देती है। पति देवता भी मानो मुस्कुराकर हमारी ओर देखते, कुछ रिमार्क करते और मुँह फेर लेते हैं। पक्षियों की भाषा तो मैं नहीं जानता पर मेरा निश्चय विश्वास है कि उनमें कुछ इस तरह की बातें हो जाया करती हैं :

पत्नी - ये लोग यहाँ कैसे आ गये जी?

पति - उँह, बेचारे आ गये हैं, तो रह जाने दो । क्या कर लेंगे ?

पत्नी – लेकिन फिर भी इनको इतना तो ख्याल होना चाहिए कि यह हमारा प्राइवेट घर है।

पति – आदमी जो हैं, इतनी अकल कहाँ?

पत्नी – जाने भी दो।

पति – और क्या?

बोध प्रश्न : 4. लेखक का मैना के बारे में क्या विचार है?

.....

.....

.....

सो, इस प्रकार की मैना कभी करुण हो सकती है, यह मेरा विश्वास ही नहीं था। गुरुदेव की बात पर मैंने ध्यान से देखा तो मालूम हुआ कि सचमुच ही उसके मुख पर एक करुण भाव है। शायद यह विधुर पति था, जो पिछली स्वयंवर-सभा के युद्ध में आहत और परास्त हो गया था। या विधवा पत्नी है, जो पिछले बिड़ाल के आक्रमण के समय पति को खोकर, युद्ध में ईषत् चोट खाकर एकान्त विहार कर रही है। हाय, क्यों इसकी ऐसी दशा है! शायद इसी मैना को लक्ष्य करके गुरुदेव ने बाद में एक कविता लिखी थी, जिसके कुछ अंश का सार इस प्रकार है:

''उस मैना को क्या हो गया है, यही सोचता हूँ। क्यों वह दल से अलग होकर अकेली रहती है। पहले दिन देखा था सेमर के पेड़ के नीचे मेरे बगीचे में। जान पड़ा जैसे एक पैर से लँगड़ा रही हो। इसके बाद उसे रोज सवेरे देखता हूँ - संगी-हीन होकर कीड़ों का शिकार करती फिरती है। चढ़ जाती है बरामदे में। नाच-नाचकर चहलकदमी किया करती है, मुझसे जरा भी नहीं डरती। क्यों है ऐसी दशा इसकी। समाज के किस दण्ड पर उसे निर्वासन मिला है, दल के किस अविचार पर उसने मान किया है। उड़ती फिरती हैं शिरीषवृक्ष की शाखाओं पर। इस बेचारी को ऐसा कुछ भी शौक नहीं है। इसके जीवन में कहाँ गाँठ पड़ी है, यही सोच रहा हूँ। सवेरे की धूप में मानो सहज मन से आहार चुगती हुई झडे हुए पत्तों पर कूदती फिरती है सारा दिन। किसी के ऊपर इसका कुछ अभियोग है, वह बात बिल्कुल नहीं जान पड़ती । इसकी चाल में वैराग्य का गर्व भी तो नहीं है , दो आग-सी जलती आँखें भी तो नहीं दिखतीं'' इत्यादि।

जब मैं इस कविता को पढ़ता हूँ तो उस मैना की करुण मूर्ति अत्यन्त साफ होकर सामने आ जाती है। कैसे मैंने उसे देखकर भी नहीं देखा और किस प्रकार कवि की आँखें उस बिचारी के मर्मस्थल तक पहुँच गयीं, सोचता हूँ तो हैरान हो रहता हूँ। एक दिन वह मैना उड़ गयी। सायंकाल कवि ने उसे नहीं देखा। जब वह अकेले जाया करती है उस डाल के कोने में, जब झींगुर अन्धकार में झनकारता रहता है, जब हवा में बाँस के पत्ते झरझराते रहते हैं, पेड़ों की फाँक से पुकारा करता है नींद तोड़नेवाला संध्य तारा। कितना करुण है उसका गायब हो जाना!

बोध प्रश्न : 5. कवि ने मैना के बारे में क्या लिखा?

.....

.....

.....

4.3 सारांश

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी जिन दिनों शांति निकेतन में रहते थे उन दिनों एक बार गुरुदेव रवीन्द्रनाथ

BRAOU

टैगोर किसी कारण कुछ दिनों के लिए 'शांतिनिकेतन' छोड़कर 'श्रीनिकेतन' में रहने पहुँचे। इसके पीछे उनके स्वास्थ्य-सुधार या एकांत साधना का भाव रहा है, यह कहा नहीं जा सकता। एक दिन द्विवेदी जी अपने परिवार के साथ गुरुदेव टैगोर के दर्शन के लिए 'श्रीनिकेतन' पहुँचे। वहाँ शांतिनिकेतन की अपेक्षा भीड-भाड़ भी कम थी। गुरुदेव प्रसन्न भाव से द्विवेदी जी के परिवार की कुशलता पूछकर चुप हो गये। तभी उनका कुत्ता अपने मालिक के स्नेह में दो मील दूर बिना किसी के रास्ता दिखाये वहां पहुँच गया। वहाँ आकर गुरुदेव के पैरों के पास खड़ा हो गया। गुरुदेव ने स्नेहपुर्वक कुत्ते की पीठ पर हाथ फेरा। कुत्ता गुरुदेव के स्नेह का स्पर्श पाकर आनंदित हो उठा। टैगोर ने अपने कुत्ते के स्नेह को लक्ष्यकर 'आरोग्य' नामक पत्रिका में एक कविता लिखी है जिसमें उन्होंने कुत्ते की स्वामिभक्ति, निस्वार्थ प्रेम और मूक हृदय के आत्मनिवेदन को प्रस्तुत किया है। गुरुदेव को कुत्ते की भाषाहीन करुणा और व्याकुलताभरी दृष्टि में सच्चा प्रेम दिखाई दिया है। कुत्ते में गुरुदेव के प्रति असीम प्रेम रहा है जिसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि कुत्ता गुरुदेव के दिवंगत होने के बाद भी उनकी चिता-भस्म के कलश के पास आकर कुछ देर बैठा रहा।

आचार्य द्विवेदी जी के अनुसार गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर में प्राणियों के प्रति असीम प्रेम रहा जिसके कारण ही वे हमेशा प्राणियों और पशुपक्षियों की क्रियाओं का भी बारीकी से ध्यान रखा करते थे। आचार्य द्विवेदी इस संदर्भ में एक घटना बताते हैं जिसमें एक नये मकान की दीवारों में बने हुए सूराख में घोंसला बनाकर रहने वाले एक मैना दंपति के आपसी बातचीत की मनोरंजक चर्चा है। वह मैना दंपति तिनका - तिनका जोड़कर गृहस्थी बनाते हैं और वहाँ नाना प्रकार की मधुर ध्वनि करते हुए गाने लगते हैं। उनकी वाणी में विजय-उल्लास, आनंद और प्रेम का भाव रहा है। इस घटना को याद करने का कारण है एक लंगडी मैना का करुण दशा में रोज गुरुदेव के बगीचे में फुदकते दिखाई देना। शायद इसी मैना की दशा को देखकर टैगोर ने एक कविता लिखी जिसमें उन्होंने उस मैना की चिंता, उसके मुख पर छायी करुणा, उसके पीड़ित और परास्त हृदय के भावों को चित्रित किया है। उसकी रोज की क्रियाओं पर ध्यान देते हुए एक पैर से लंगड़ती साथी से बिछड़कर अकेली दु:खी मन से कीडों का शिकार करते फिरने की क्रिया का वर्णन किया है। उसकी क्रिया और भावों में टैगोर जी को करुणा और पीड़ा आदि दिखाई देते हैं और फिर अचानक एक दिन उस पक्षी के गायब होने पर गुरुदेव का हृदय करुणा से भर आता है।'

इस प्रकार इस निबन्ध में आचार्य द्विवेदी जी ने गुरुदेव का पशु पक्षियों से लगाव, आत्मीयता, प्रेम और उनकी पीड़ा का अनुभव करने की क्षमता को प्रस्तुत किया है। टैगोर द्वारा कुत्ता, मैना और आश्रम के कौए आदि पशु-पक्षियों का अपने परिवार की सदस्य की तरह ध्यान रखने के स्वभाव की बारीकियों का द्विवेदी जी ने रोचक वर्णन किया है।

4.4 समीक्षा

'एक कुत्ता और एक मैना' शीर्षक निबन्ध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का आत्मसंस्मरणात्मक ललित निबन्ध रहा है। इसमें द्विवेदी जी ने गुरुदेव टैगोर के साथ बिताये हुए पलों की अनुभूति को कल्पना के साथ प्रस्तुत किया है। इस निबन्ध में लेखक ने गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के कवि-हृदय के भावों की गहराई का वर्णन किया है जिसके लिए उन्होंने हल्की-फुल्की बातें अर्थात् साधारण-सी दिखाई देनेवाली बातचीत का संदर्भ दिया है। इस निबन्ध के लेखक और मूल विषय दोनों ही उच्च कोटि के विद्वान, आलोचक और महान कवि हैं। एक श्रेष्ठ कवि के बारे में दूसरे श्रेष्ठ विद्वान के विचारों के साथ-साथ, उनके प्रति श्रद्धा और आत्मीयता के भाव भी इस निबन्ध में प्रस्तुत हुए हैं। इस निबन्ध में आचार्य द्विवेदी जी ने विश्वकवि टैगोर की मानव जाति के प्रति आत्मीयता और प्रेम को तो व्यक्त किया ही है साथ ही उनके मन में पशु-पक्षियों के प्रति असीम स्नेह, लगाव और सहानुभूति को भी देखा है। इतना ही नहीं पशु-पक्षियों तक में टैगोर के प्रति प्रेम का भाव देखकर द्विवेदी जी असीम आनंद का अनुभव करते हैं। द्विबेदी जी ने देखा कि टैगोर में पशु-पक्षियों के हृदय के भाव, उनकी करुणा और आनंद उल्लास को समझने की असीम शक्ति है और ये भावनाएँ उनकी कविताओं में पूरी

तरह अभिव्यंजित हुई हैं। द्विवेदी जी ने अपने पांण्डित्य और विद्वत्तता के द्वारा टैगोर जैसे महान कवि में पायी जाने वाली रचना-क्षमता की शक्ति के श्रोत को पहचाना है तथा अपने ललित निबन्ध में साधारण-से समझे जाने वाले विषय के माध्यम से विश्व कवि के हृदय में पायी जाने वाली करुणा और सहानुभूति को चित्रित किया है। किन्तु उनकी कल्पना मात्र मन की उन्मुक्त भटकन नहीं है बल्कि वह उनकी असीम बौद्धिक शक्ति द्वारा संचालित है। इसी कारण उनके इस निबन्ध में बुद्धि पक्ष का प्रयोग होने पर भी कवि-हृदय का स्पर्श मिलता है। द्विवेदी जी ने अपने निबन्ध में काव्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। वास्तव में यह प्रसंग मात्र साधन है साध्य नहीं। साध्य तो गुरुदेव का हृदयोद्‌गार अथवा सूक्ष्म विचार शक्ति द्वारा विश्व कवि के हृदय के गुणों को, उनके हृदय में पायी जानेवाली करुणा और आत्मीयता को प्रस्तुत करना है अर्थात् कह सकते हैं कि द्विवेदी जी ने अपने ज्ञानात्मक संवेदन द्वारा टैगोर की भावाभिव्यंजना की है। इसके अलावा इस निबन्ध से आचार्य द्विवेदी की गुरुदेव के प्रति श्रद्धा और गुरुदेव का द्विवेदी के प्रति स्नेह भाव भी व्यक्त होता है। इस निबन्ध में द्विवेदी जी ने अपने पांडित्य एवं व्यापक शास्त्रज्ञान द्वारा लालित्य की सृष्टि की है। इस निबन्ध में ललित निबन्ध की सभी विशेषताएँ पायी गयी हैं यथा-संवेदनशीलता या भावप्रवणता, पांडित्य और व्यापक ज्ञान, कल्पनाशीलता, सूक्ष्म विचार शक्ति, ज्ञानात्मक संवेदन, व्यक्तित्वाभिव्यंजन आदि। इस पाठ से वास्तव में यह ज्ञान मिलता है कि सच्ची मानवता वास्तव में दूसरों के प्रति सहानुभूति, आत्मीयता और करुणा में ही समाहित है।

4.5 शब्दार्थ

अन्यत्र	–	दूसरी जगह
क्षीणवपु	–	कमजोर शरीर
ठानी	–	निश्चय किया
दर्शनीय	–	देखने योग्य
आपनार	–	आपके
दर्शनेय	–	देखने के लिए
अस्तगामी	–	अस्त होनेवाला
ध्यान स्तिमित नयन	–	ध्यान में मग्न आँखें
स्तब्ध	–	बन्दकर
अहेतुक	–	बिना कारण के
असीम	–	जिसकी कोई सीमा नहीं
मूक	–	गूँगा
मर्मभेदी	–	हृदय का स्पर्श करने वाला
तितल्ला	–	तीसरी मंजिल
अन्यान्य	–	दूसरे
पृष्ठ	–	पीठ
सर्व व्यापक	–	सब जगह फैला हुआ
प्रवास	–	अन्य स्थान पर वास करना या यात्रा करना

BRAOU

बाध्य	–	मजबूर
मोटो	–	आदर्श वाक्य
यूथभ्रष्ट	–	समूह से अलग
अनुकम्पा	–	तरस, दया
चीथड़े	–	फटे, पुराने कपड़े
भले मानव	–	इस प्रसंग में मैना – दंपति के प्रति संकेत
विजयोद्घोषी	–	जीत को बताने वाली
मुखरित हो जाना	–	आवाज गूँजना या ध्वनि से भरजाना
अदा	–	हाव – भाव
विधुर	–	जिसकी पत्नी मर गई हो
आहत	–	घायल
परास्त	–	हारा हुआ
बिड़ाल	–	बिल्ली
ईषत्	–	थोड़ा
एकांत	–	अकेला
सेमर का वृक्ष	–	एक पेड़ जिससे मुलायम रूई प्राप्त की जाती है
संगीहीन	–	जिसका साथी न हो
निर्वासन	–	देश से निकाल दिया जाना
अभियोग	–	शिकायत
मय बाल बच्चों के	–	बालबच्चों के साथ
राह दिखाना	–	मार्ग दिखाना
प्राणपण से	–	प्राणों की बाज़ी लगाकर
मुखातिब होकर	–	सामने आकर
मुँह फेरलेना	–	परवाह न करना
गांठ पड जाना	–	खटकना

4.6 अभ्यास

4.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. 'एक कुत्ता और एक मैना' निबन्ध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के विचारों को स्पष्ट कीजिए।
2. अचार्य द्विवेदी जी ने अपने निबन्ध में विश्व कवि टौगोर के स्वभाव को बारीकी से चित्रित किया है – इसे सोदाहरण समझाइए।

BRAOU

4.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यमश्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर की हृदय की करुणा को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

2. पशुपक्षियों के प्रति रवीन्द्रनाथ टैगोर की दृष्टि अनुरागमय थी – इसे उदाहरण द्वारा समझाइए।

3. द्विवेदी जी ने अपने निबन्ध में टैगोर के कवि हृदय के भावों का चित्रण किया है – समझाइए।

4. निम्न गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए।

(अ) कवि की मर्मभेदी दृष्टि ने इस भाषाहीन प्राणी की करुणा दृष्टि के भीतर उस विशाल मानव सत्य को देखा है जो मनुष्य-मनुष्य के अंदर भी नहीं देख पाता।

(आ) बाद में मुझे मालूम हुआ कि मेरी यह भाषा अधिक पुस्तकीय है और गुरुदेव ने इस दर्शन शब्दों को पकड़ लिया था।

(इ) मैंने तब तक कौओं को सर्वव्यापक पक्षी ही समझ रखा था । अचानक उस दिन मालूम हुआ कि ये भले आदमी भी कभी कभी प्रवास चले जाते हैं या चले जाने को बाध्य होते हैं।

4.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

4.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'आचार्य द्विवेदी जी ने अपने निबन्ध में विश्वकवि टैगोर के स्वभाव को बारीकी से चित्रित किया है'-इसे सोदाहरण समझाइए।

उत्तर : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी एक उच्च कोटि के विद्वान आलोचक रहे हैं। उनमें मानव स्वभाव की बारीकियों को पकड़ने और सूक्ष्म भावों की गहराई को उद्घाटित करने की असीम क्षमता रही है। उन्होंने अपने निबन्ध 'एक कुत्ता और एक मैना' में विश्वकवि टैगोर के कवि-हृदय की भावनाओं का चित्रण किया है जिसके लिए उन्होंने साधारण से दिखायी देने वाले प्रसंगों का प्रयोग किया है। यह सब जानते हैं कि सच्चा साहित्यकार मानव और प्राणियों से आत्मीयता रखता है। इसी कारण वह उनकी भावनाओं की गहराई में पहुँचता है और कला तथा प्रतिभा द्वारा उसे अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी रचनाओं में मानव और प्रणियों के प्रति प्रेम और करुणा को ही प्रस्तुत किया है। इसी स्नेह और करुणा की खोज आचार्य द्विवेदी जी ने उनके स्वभाव में की है जिसके लिए लेखक ने कुत्ता, मैना और कौओं के प्रसंगों को आधार बनाया है। द्विवेदी जी ने एक दिन श्रीनिकेतन में देखा कि उनका कुत्ता बिना किसी के रास्ता बताये दो मील दूर अपने स्वामी के पास स्नेहवश पहुँच गया। उसमें अपने स्वामी के प्रति अथाह प्रेम रहा और दूसरी ओर गुरुदेव में भी अपने कुत्ते के प्रति असीम स्नेह रहा। अपने मालिक के हाथ का स्नेह स्पर्श पाकर कुत्ता आंनद से गदगद हो उठा। टैगोर ने कुत्ते के स्नेह को लक्ष्यकर 'आरोग्य' नामक पत्रिका में एक कविता लिखी थी जिसमें उन्होंने कुत्ते की स्वामिभक्ति, निस्वार्थ प्रेम और मूक हृदय के आत्म निवेदन को प्रस्तुत किया। गुरुदेव ने कुत्ते की भाषा-हीन करुणा और व्याकुलता भरी दृष्टि में सच्चा प्रेम देखा है। इसके अलावा लेखक ने दर्शाया कि गुरुदेव के देहांत के पश्चात् उनके अस्थिकलश के पास आकर कुछ देर बैठे रहने से टैगोर के प्रति कुत्ते के श्रद्धा भाव को समझा जा सकता है।

लेखक ने एक और घटना द्वारा टैगोर के स्वभाव की बारीकी को उभारा है। एक बार टैगोर ने एक मैना को अपने साथी से बिछड़कर संगीहीन जीवन जीते देखा। उन्होंने पाया कि वह मैना लंगड़ते हुए बगीचे में उनके पास फुदक रही है। किन्तु उसके मुख पर पीड़ा-वेदना और उदासी छायी हुई है। उसकी उस दशा को देखकर कवि के हृदय में उसके प्रति वेदना और करुणा का भाव उभर आया और कुछ दिन बाद वे उस मैना को गायब देख दुखी हो गये। कवि ने उस मैना के प्रति अपने भावों को एक कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया।

BRAOU

इसके अलावा अपने आश्रम के बगीचे में पेड़ों पर रहने वाले कौओं को गायब देखकर आश्चर्यचकित होने से यह बात स्पष्ट होती है कि गुरुदेव अपने आश्रम के पशु-पक्षियों का अपने परिवार के सदस्यों की तरह ध्यान रखते थे। इससे उनका पशु-पक्षियों से लगाव, स्नेह के अलावा उनके सुख-दुख को समझने की असीम शक्ति और उनके प्रति करुणा का भी आभास होता है। इस प्रकार द्विवेदी जी ने गुरुदेव टैगोर के कवि-हृदय के भावों की गहराई को और उनके चरित्र में पायी जाने वाली सूक्ष्म विशेषताओं को अत्यंत सरल ढंग से उद्घाटित कर कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की महानता को व्यक्त किया है।

4.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

''मैंने तब तक कौओं को सर्वव्यापक पक्षी ही समझ रखा था। अचानक उस दिन मालूम हुआ कि ये भले आदमी भी कभी-कभी प्रवास चले जाते हैं या चले जाने को बाध्य होते हैं।'' इस गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

उत्तर : प्रस्तुत प्रसंग आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी द्वारा लिखित ''एक कुत्ता और एक मैना'' निबन्ध से लिया गया है। यह कथन आचार्य द्विवेदी जी द्वारा अपने आप से कहा हुआ है।

आचार्य द्विवेदी जी अपने एक साथी अध्यापक के साथ एक दिन गुरुदेव टैगोर के साथ बगीचे में टहल रहे थे। गुरुदेव एक-एक फूल-पत्ते को ध्यान से देखते हुए अपने बगीचे में टहल रहे थे और साथ ही द्विवेदी जी के साथी अध्यापक से बातें करते जा रहे थे। अचानक गुरुदेव ने उस अध्यापक से पूछा कि आश्रम के कौए क्या हो गये? उनकी आवाज सुनाई ही नहीं देती। यह सुनकर द्विवेदी जी को लगा कि सचमुच कई दिनों से उन्होंने आश्रम में कौए नहीं देखे जब कि वे कौओं को सर्वव्यापी पक्षी समझ रहे थे लेकिन उस दिन अचानक उन्हें यह मालूम हुआ कि ये भले आदमी अर्थात् कौए भी कभी-कभी प्रवास को चले जाते हैं या जाने को बाध्य होते हैं। द्विवेदी जी के अनुसार लेखक ने कौओं की आधुनिक साहित्यिकों से उपमा दी है क्योंकि इनका उद्देश्य शरारत के लिए ही शरारत होता है। अत : द्विवेदी जी सोच में पड़ जाते हैं कि क्या कौओं का प्रवास भी किसी शरारत के उद्देश्य से ही था। इसके एक सप्ताह के बाद बहुत से कौए आश्रम में दिखाई दिये।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लेखक की मातृभाषा हिन्दी थी, बंगला नहीं । इसके लिए जब वे बंगला भाषा बोलते थे तो वह नकली और किताबी भाषा लगती थी। इसलिए जब वे गुरुदेव से कहते थे कि एक सज्जन आपके दर्शन करने आए हैं तो गुरुदेव मुस्कुरा देते थे क्योंकि ऐसी अभिव्यक्ति हिन्दी में है, बंगला में नहीं।
2. कवि ने कुत्ते की करुण दृष्टि में उसकी भाषाहीन वेदना देखी। कुत्ते की प्रेम भरी व्याकुलता और समर्पण ने कवि को मनुष्य का सच्चा परिचय समझाया और उस विशाल मानव सत्य के दर्शन कराए जो मनुष्य मनुष्य के अन्दर भी नहीं देख पाता।
3. लेखक के अनुसार कौए सर्वव्यापक पक्षी हैं। वे शरारती और चतुर हैं।
4. लेखक ने मैना को कभी करुण दृष्टि से नहीं देखा। इसके विपरीत वे समझते थे कि मैना मनुष्य के मकान में रहना अपना अधिकार समझती है और वही मनुष्यों पर कृपा दिखाती है।
5. कवि ने मैना को एक अकेले, निर्वासित प्राणी के रूप में देखा। वे उसके मन की वेदना को समझने की कोशिश करते हैं कि वह सहज रूप से अकेले रहना पसंद करती है। उसमें वैराग्य का गर्व या अकेलेपन की वेदना नहीं दिखाई देती। वह कवि की उपस्थिति से भी भयभीत नहीं होती।

BRAOU

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अशोक के फूल – हजारी प्रसाद द्विवेदी
2. कल्पलता – हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. कबीर – हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. हिन्दी साहित्य की भूमिका – हजारी प्रसाद द्विवेदी
5. हिन्दी साहित्य का आदिकाल – हजारी प्रसाद द्विवेदी
6. हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास – हजारी प्रसाद द्विवेदी

समीक्षात्मक पुस्तकें

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी – सं विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी – डॉ. विजय बहादुर सिंह
3. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की आलोचना दृष्टि – चंद्रदेव यादव

BRAOU

इकाई-5: नेता नहीं नागरिक चाहिए : रामधारी सिंह दिनकर

5.0 उद्देश्य

5.1 पाठ एवं लेखक परिचय

5.2 मूल पाठ

5.3 सारांश

5.4 समीक्षा

5.5 शब्दार्थ

5.6 अभ्यास

5.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

5.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

5.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

5.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

5.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में दिनकर जी ने यह स्पष्ट किया है कि समाज की जिन कुरीतियों से हम नाराज़ होते हैं उन्हें हमें स्वयं छोड़ देना चाहिए। समाज में जिन मूल्यों को हम लाना चाहते हैं उनको अपने वैयक्तिक जीवन में सब से पहले अपनाना चाहिए । इसीलिए समाज को योग्य नागरिकों की जरूरत है। इस निबंध के अध्ययन से आप

- भारत की आजादी के दिनों में नेताओं के महत्व को समझेंगे।
- आजादी मिलने के बाद देश के लोगों में नेता बनने की तीव्र अभिलाषा से उत्पन्न संकट को जान सकेंगे।
- सामाजिक विकास में योग देनवाले बराबरी के सिद्धांत का सच्चा अर्थ समझ सकेंगे।
- नेता बनने के लिए आवश्यक गुणों की जानकारी और नेतृत्व की जिम्मेदारियों को समझ पायेंगे।
- अधिकार के विकेन्द्रीकरण से संगठनों को होनेवाले लाभ का परिचय प्राप्त करेंगे।
- समाज सुधार के लिए और समाज को सुन्दर बनाने के लिए लाखों व्यक्तियों के सुयोग्य बनने की आवश्यकता को समझेंगे।

5.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ परिचय

'नेता नहीं नागरिक चाहिए' पाठ में रामधारी सिंह दिनकर जी ने आजादी की लड़ाई के दिनों में विदेशी शासन को हटाने में अपने स्वार्थ को छोड़कर देश केलिए त्याग करनेवाले नेताओं के महत्व को स्पष्ट किया। लेकिन इधर आजादी के बाद जब देश में सारे काम नेताओं के हाथ में आ गये तो नेताओं में स्वार्थ रहित कर्म

करने की आदत कम हो गयी और नेता सिर्फ अकर्मण्य उपदेशक बन गये। इसका फल आज का भारत भोग रहा है। नेता का पद आराम की जगह नहीं है। मेहनती और ईमानदार ही सच्चे नेता बन सकते हैं। लेकिन आजकल सारा संसार नेतृत्व की अभिलाषा का शिकार हो रहा है। हर कोई नेता बनने के लिए आतुर है। व्यक्ति का आगे बढ़ना अस्वाभाविक और निन्दनीय नहीं है। लेकिन हर कोई नेता बन नहीं सकता। जिसमें मौलिक शक्ति है वही नेता बन सकता है। लेकिन नेता बनने की होड़ में लोग पतित बनते जा रहें हैं। जिम्मेदारी और ईमानदारी के बल पर नहीं। छलाँग मारकर यकायक लोग नेता बनना चाहते हैं। जो छलाँग मारकर नेता बन गये उसके नतीजे अच्छे नहीं हुए। ऐसे नेता इन्सानियत के लिए हानिकर ही साबित हुए ।इसलिए प्रस्तुत पाठ में यह स्पष्ट किया गया है कि अब समाज को ऐसे नागरिक की जरूरत है जो मानव मूल्यों और सामाजिक मूल्यों को अपने चरित्र और व्यक्तित्व में व्यावहारिक रूप दे सकते हैं।

(आ) लेखक परिचय

श्री रामधारी सिंह दिनकर का जन्म बिहार प्रदेश में पटना से 60 मील दूर स्थित सिमरिया नामक गाँव के कृषक परिवार में 23 सितंबर सन् 1908 को हुआ था। दिनकर जी के पिता बाबू रविसिंह एक साधारण ठेठ किसान थे। दिनकर का बचपन ग्रामीण वातावरण में बीता।

दिनकर जी बचपन में देह की दृष्टि से काफी तन्दुरुस्त थे। वे नियमित रूप से दंड बैठक करते थे और कुश्ती भी लडते थे। लेकिन बेजरूरत इधर उधर नहीं घूमते थे और पढ़ने लिखने में तल्लीन रहते थे।

दिनकर ने प्राथमिक शिक्षा गाँव की राष्ट्रीय पाठशाला से ही प्राप्त की। उसके बाद मोकामा घाट के रेल्वे हाइस्कूल में सन् 1928 में मैट्रिक पास करने के बाद पटना आए। फिर इतिहास में आनर्स लेकर बी.ए की परीक्षा उत्तीर्ण हुए।

घर की आर्थिक स्थिति को दृष्टि में रखकर उन्हें एक हाईस्कूल में हैडमास्टरी का पद स्वीकार कर लेना पडा। उसके बाद सन् 1934 से सन् 1947 तक सब-रजिस्ट्रार पद पर कार्यरत रहे। आजादी के बाद सरकार ने इन्हें प्रचार विभाग का हिन्दी डाइरेक्टर बना दिया। सन् 1950 में इनकी नियुक्ति मुजफ्फरपुर कालेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के रूप में हुई। सन् 1952 में ये राज्यसभा के सदस्य बने। सन् 1964 में भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति नियुक्त हुए। इन्होंने गृह मंत्रालय के हिन्दी सलाहकार के रूप में भी हिन्दी की सेवा की।

सन् 1928 से लेकर सन् 1974 तक दिनकर जी की 32 कृतियाँ प्रकाशित हुई। इनमें 'रेणुका', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्वशी', 'परशुराम की प्रतीक्षा' आदि उल्लेखनीय हैं। दिनकर जी की काव्य रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ 'उर्वशी' पर भारत का बड़ा साहित्य पुरस्कार भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार सन् 1973 में दिया गया।

काव्य कृतियों के 'अलावा मिट्टी की ओर', 'अर्द्धनारीश्वर', 'रेती के फूल', 'संस्कृति के चार अध्याय', 'शुद्ध कविता की खोज' आदि दिनकर जी की 25 गद्य रचनाये प्रकाशित हुईं। 'संस्कृति के चार अध्याय' साहित्य अकादमी द्वारा सन् 1989 में पुरस्कृत हुई। इसी वर्ष भारत सरकार ने इनको 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया।

दिनकर जी अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारे सामने संवेदनशील कवि, आलोचक, संस्कृति के व्याख्याकार, धर्म, दर्शन और इतिहास के विशेषज्ञ और आधुनिक भारतीय समाज के विचारक के रूप में आते हैं। 24 अप्रैल सन् 1974 को दिनकर जी का देहावसान हुआ।

5.2 मूलपाठ

सन् उन्नीस सौ बीस-इक्कीस के जमाने में एक विज्ञापन पढ़ा था, 'क्या आप स्वराज्य चाहते हैं। तो लेक्चर देना सीखिए।' इश्तहार छापनेवाला कोई पुस्तक-विक्रेता था जो इस विज्ञापन के जरिये अपनी किसी किताब की बिक्री बढ़ाना चाहता था और संभवत: किताब में नेताओं के भाषणों का ही संकलन भी था।

तब इस देश में व्याख्यानों की ऐसी झड़ी रही है, जैसी झड़ी अब मेघों की भी नहीं लगती। पिछले तीस वर्षों से अपने देश में व्याख्यान लगातार बरसते रहे हैं और उनकी वृद्धि करनेवाले नेताओं की तायदाद भी बेशुमार रही है। आजादी की लड़ाई के दिनों में देश के सामने ले-देकर एक सवाल था कि विदेशी शासन कैसे हटाया जाय? मगर यह सवाल जरा टेढ़ा पड़ता था क्योंकि हुकूमत से लडने का अर्थ अपनी जान और माल पर संकट को आमंत्रित करना था। इसलिए, जो लोग भी अपनी थोड़ी या बहुत कुरबानी देने के लिए आगे आये, उन्हें जनता ने नेता कहकर पुकार दिया। जनता के पास और था ही क्या जिसे लेकर वह कुरबानी की इज्जत करती?

बोध प्रश्न : 1. आजादी की लड़ाई के दिनों में देश के सामने मुख्य समस्या क्या थी?

.....

.....

.....

लेकिन, आजादी के बाद जब देश के सारे काम नेताओं के हाथ में आ गये, तब उन्हें पता चला कि अभी तक इस देश ने नेता ही पैदा किये हैं नागरिक नहीं। व्याख्यान सुनते-सुनते इस देश ने व्याख्यान देने की आदत डाल ली है। जहाँ तक व्याख्यान के मजमून पर अमल करने का सवाल है, वह परिपाटी स्वतंत्रता के आगमन के साथ ही समाप्त हो गयी। अब यहाँ के लोग कर्म को कम, वाणी को अधिक महत्व देते हैं। हर किसी की यही अभिलाषा है कि वह दूसरों को कुछ उपदेश दे, मगर खुद किसी भी उपदेश पर अमल करने को वह तैयार नहीं। यों देश के नव-निर्माण के ज्यादा काम ठप पड़े हुए हैं, क्योंकि जो सचमुच देश के नेता हैं, वे काम करना नहीं जानते और जो काम करना जानते हैं उन्हें हाथ-पाँव हिलाने की अपेक्षा जीभ की कैंची चलाने में ही अधिक आनंद आता है। नेता बनने की धुन का यह पहला असर है जिसे हिन्दुस्थान आज बुरी तरह भोग रहा है।

फिर भी यह सच है कि देश के नेता, देश के शिक्षा-विशेषज्ञ और बच्चों के माता-पिता सभी चाहते हैं कि स्कूलों, कालेजों में पढ़ने वाले हमारे सभी बच्चे और नौ जवान किसी न किसी क्षेत्र में नेता बनने की तैयारी करे। लेकिन, क्या किसी ने यह भी कभी सोचा है कि अगर सारा समाज नेता बनने की तैयारी में लग जाय तो नेताओं के पीछे चलने वाले लोग कौन रह जायेंगे? और क्या नेताओं से भरा हुआ देश कोई अच्छा देश होता है?

कल्पना कीजिए कि देश का एक-एक आदमी जवाहरलाल हो गया। तो फिर यहाँ का एक-एक आदमी सोचेगा, योजना बनायेगा और बहस करेगा। लेकिन, तब इन पैंतीस करोड़ जवाहरलालों को भोजन कौन देगा? उनके लिए कपड़े कौन बुनेगा? और मुश्किल तो यह है कि उनकी मोटरें कौन चलायेगा? जवाहरलाल बनने में और सब ठीक है; कठिनाई सिर्फ इतनी ही है कि जवाहरलाल कुदाल नहीं चला सकता, नहीं उठा सकता, और ज्यादातर वह अपनी मोटर भी आप नहीं हाँकता है।

'बड़ों की बात सुनो, उनकी नकल मत करो', यह कहावत किसी भारी अकलमन्द ने कही होगी। लेकिन, अब तो बड़ा और छोटा, यह भेद सुनते ही लोगों को गुस्सा आ जाता है। जिस जमाने का एक ही नारा है कि सब लोग समान है, उस जमाने में एक या दस को बडा और बाकी को छोटा बताना तंगनजरी नहीं तो और क्या है? हर आदमी सिर्फ बराबरी के सिद्धांत पर आगे बढ़ने को अधीर है। नतीजा यह है कि जो जहाँ है वह वहीं कुढ रहा है। यह वहीं जल रहा है। हर एक को शिकायत है कि उसकी वाजिब जगह उसको नहीं मिली है। उसे जिस पद पर होना चाहिए, उस पर कोई और बैठ गया है जो, निश्चय रूप से उससे छोटा और कमजोर है। अखबारों के सहायक संपादक अपने प्रधान संपादक से जल रहे हैं। मिल का छोटा मैनेजर बड़े मैनेजर के खिलाफ़ है और राजनीतिक दलों के भीतर जो द्वेष का धुआ छूट रहा है उसका भी कारण यही है आगे के नेता को पीछे ढकेलकर कोई दूसरा आदमी उसकी जगह लेना चाहता है।

BRAOU

बोध प्रश्न : 2. आजादी के बाद लोगों की शिकायत क्या है ?

.....

.....

.....

सब लोग आपस में बराबार हैं, इस बात का लोगों ने गलत अर्थ लिया है। इसका मामूली अर्थ यह है कि सबको विकास का समान अवसर मिलना चाहिए, यह नहीं कि अवसर की प्रतीक्षा किये बिना जो जहाँ चाहे वह इच्छा मात्र से पहुँच जाय। अवसर कोई ऐसी चीज नहीं है जो रोटी दाल की तरह सबके सामने परोसा जा सके। उसे पाने के लिए अपने गुणों का विकास करना होता है; तत्परता, मुस्तैदी और धीरता भी सीखनी होती है और उम्र तथा अनुभवों का भी इन्तजार करना पड़ता है। मगर, नेतागिरी का चस्का लग जाने के कारण लोगों की इन्तजारी की लियाकत घट गयी है और जिस जगह पर आदमी धीरे-धीरे और बड़ी कोशिशों के बाद पहुँचता है, उस जगह पर अब लोग छलाँग मारकर पहुँच जाना चाहते हैं।

बोध प्रश्न : 3. 'सब लोग आपस में बराबर हैं' यह कहने का अर्थ क्या है ?

.....

.....

.....

मगर, जो लोग छलाँग मारकर आगे बढ़ना चाहते हैं, उसका कारण क्या है ? कुछ तो यह है कि कभी-कभी दूसरों को उन्होंने छलाँग मारकर आगे बढ़ते देखा है और अधिकतर यह है कि वे काम करना नहीं, हुकुम करना चाहते हैं। वे मानते हैं कि जिन्दगी की असली मजा मेहनत करने में नहीं, अपने मातहतों को हिदायत भेजने में है। वे इस बात को भूल जाते हैं कि हिदायत भेजने की योग्यता काम करने से ही आती है और हिदायत भेजने का काम इतना आसान भी नहीं है कि उसे जो भी चाहे, पूरा कर दे। योजना बनाने और आदेश भेजने की सही जिम्मेदारी को वही निभा सकता है जो उन सभी कामों के अनुभव प्राप्त कर चुका है, जिनकी देखरेख का भार अब उसे सौंपा गया है। इसलिए जो आदमी अनुभव के दौर से होकर गुजरने से इन्कार करता है और मेहनत से भागकर आराम की जगह पर पहुँचने के लिए बेचैन है, उसकी यह बेचैनी ही इस बात का सबूत है कि वह अपने संगठन का अच्छा नेता नहीं बन सकता। जिसके चरित्र में धीरता नहीं, उससे बड़े दायित्व के योग्यतापूर्वक निर्वाह की आशा नहीं की जा सकती। चूँकि कुछ अधीर लोग भी संगठनों के नेता बन गये हैं, इससे अधीरता नेतृत्व का गुण नहीं बन जाती। उलटे, इन तथाकथित नेताओं के आचरण से यही शिक्षा मिलती है कि जो समय से पूर्व नेता बन जाने को बेचैन है, उसे नेता की जगह पर कभी भी मत आने दो।

नेता का पद आराम की जगह है, इससे बढ़कर दूसरा भ्रम भी नहीं हो सकता। अँगरेजी में एक कहावत है कि किरीट पहननेवाला मस्तक बराबर चक्कर में रहता है। तब से आदमी मेहनत और धीरज से भागता है, उससे यह कैसे उम्मीद की जाय कि वह आठ पहर के इस चक्कर को बर्दाश्त करेगा और जिनमें धीरज नहीं, सबसे अधिक वे ही इस चक्कर को अपने माथे पर लेने को क्यों बेकरार है ? दुनिया के सामने संगठनों से निकलती हुई तैयार चीजें ही आती हैं, नेताओं के हस्ताक्षरों से भूषित कागज के पुर्जे नहीं। और कागज के इन निर्जीव पुर्जों को लेकर दुनिया करेगी भी क्या ? हम अखबारों में लेख और संवाद पढ़ना चाहते हैं जिस चीज पर कलम उठाने को सहायक संपादक बेचैन हैं, उस संपादकीय को तो कोई पूछता भी नहीं।

जो अपने काम को प्यार करता है, वह कभी नाखुश नहीं होता और न उसे यही रोग सताता है कि घड़ी-घड़ी मेरा अपमान हो रहा है। जहाँ तक ताकत और अधिकार का सवाल है, नेता चाहे कोई भी हो, अधिकार बराबर उसकी मेज पर विराजता है जो मेहनती और ईमानदार है। सारी दुनिया मेहनती और ईमानदार व्यक्ति की

BRAOU

खोज में है, क्योंकि हर नेता चाहता है कि वह अपनी थोड़ी-बहुत जिम्मेदारी किसी ईमानदार आदमी पर डाल दे। अधिकार भोगने का जो असली सुख है, वह नेताओं के नहीं, मेहनती सहायकों के हाथ में है । जो भी परिश्रमी और ईमानदार है, दफ्तर के अधिकार उसकी कुर्सी के इर्द-गिर्द घूमा करते हैं। और जब अधिकार भोगने का यह सीधा रास्ता मौजूद हैं, तब लोग नेता बनने के फेरे में क्यों पड़ते हैं? यह भी है कि नेता कोई एक ही व्यक्ति हो सकता है, लेकिन ईमानदारी और मेहनत के जरिए बहुत-से लोग अधिकार का स्वाद ले सकते हैं। इस प्रकार अधिकार भी विकेन्द्रित होता है और संगठन की भी तत्परता बढ़ती है।

बोध प्रश्न : 4. अधिकार भोगने के अमली सुख किन के हाथों में है?

.....

.....

.....

एक तस्वीर यह है कि कारखाने के मैनेजर को अपदस्थ करके कई लोग उसकी कुर्सी पर अधिकार जमाना चाहते हैं। दूसरी तस्वीर यह है कि बहुत-से कार्यकर्ता घोर परिश्रम करके अधिक-से-अधिक अधिकारों को अपने कब्जे में रखना चाहते हैं। अब यह चुनाव करना आसान हो जाता है कि देश की जनता और विश्व की मानवता का कल्याण किस में है। उस तस्वीर में जिसमें छल छद्म और साजिश का बोलबाला है या उस तस्वीर में जिसमें हर आदमी सच्चाई और परिश्रम के बल पर आदर और अधिकार पाना चाहता है।

नेतागिरी का लोभ एक दूसरी दृष्टि से भी मनुष्य को पतित बनाता है। जीवन की विशाल कर्मभूमि की ओर जरा नजर दौडाइए। सारा संसार नेतृत्व की अभिलाषा का शिकार हो रहा है। जो व्यापार में हैं, वे मुनाफाखोरी और चोरबाजारी करके धन में सबसे आगे निकल जाना चाहते हैं। जो नौकरी में हैं, वे अपने ऊपरवाले अफसर को ढकेलकर आगे आने को बेचैन हैं। और जो सामाजिक या राजनीतिक क्षेत्र में काम कर रहे हैं वे भी ऊपर के नेताओं को हटाकर खुद उनकी जगह ले लेना चाहते हैं। भाषण, गर्जन, तिकड़म और छद्म, झूठे वायदों और धोखे की कसमों से सारा सार्वजनिक जीवन कोलाहलपूर्ण है। वे सब-के-सब नेतृत्व की अभिलाषा के दोष हैं। जब मनुष्य यह ठान लेता है कि अपने क्षेत्र में मुझे सबसे आगे बढ़ना है, तब साध्य का आकर्षण उसके भीतर प्रबल हो उठता है और साधन की महत्ता गौण हो जाती है। साधन की महिमा समझनेवाला आदमी गलत राह से चलकर आगे आना नहीं चाहेगा और नेतृत्व का लोभ साधन की महिमा को कम करता है, इसमें सन्देह नहीं।

BRAOU

बोध प्रश्न : 5. नेतृत्व की अभिलाषा के क्या-क्या दोष हैं?

.....

.....

.....

अपनी रेखा को बड़ी करने के बदले, दूसरे की रेखा को छोटी बनाने का कुत्सित भाव भी नेतृत्व की आकाँक्षा से जन्म लेता है और इस कोशिश में वे सभी लोग आसानी से लग जाते हैं, अपनी योग्यता के बारे में जिनकी भावना अतिरंजित होती है अथवा जो यह सोचकर जलते रहते हैं कि मैदान जिनके हाथ में है, असल में, उन्हीं लोगों के चलते हमारी बढ़ती नहीं हो रही है।

आये दिन विद्वानों, चिन्तकों और नेताओं से हम यह सनुते ही रहते हैं कि समाज बहुत ही कुरूप हो गया है और इसके सुधार में अब विलम्ब नहीं किया जाना चाहिए। मगर दुनिया क्यों कुरूप है और उसे सुन्दर बनाने का सही तरीका क्या है? प्रतिद्वंद्विता की भावना मनुष्य के स्वभाव में दाखिल है, क्योंकि यह हमारी जीवधारी-प्रवृत्ति से निकलती है। लेकिन, पशुओं के समान मनुष्य में केवल जीने की ही प्रवृत्ति नहीं होती। दिमाग का

मालिक होने के कारण वह सोच भी सकता है और हृदय तथा आत्मा रखने के कारण वह अपने विचार को निर्मल भी बना सकता है। क्या उसे इसका ज्ञान नहीं हो सकता कि केवल पशु-प्रवृत्ति को लेकर चलने से वह मानवता से दूर और पशुता के समीप पहुँच जायेगा। जो भी मनुष्य मानवीय आनन्द में वृद्धि करना चाहता है, उसे चाहिए कि वह, मनुष्य में जो गुण हैं, उनकी प्रशंसा में वृद्धि करे और जहाँ भी ईर्ष्या और द्वेष की लपटें उठ रही हैं, उन लपटों को नीचे लाये। व्यक्ति आगे बढ़ना चाहता है, यह न तो अस्वाभाविक है और न निन्दनीय है। सिर्फ उसे यह देखते चलना है कि खुद को आगे बढ़ाने की कोशिश में कहीं वह उन मूल्यों को तो नहीं कुचल रहा है, जो एक मनुष्य के वैयक्तिक विकास से कई गुना अधिक मूल्यवान है।

लोगों के भीतर दिन-रात नेतृत्व की आकांक्षा जगाते फिरना खतरनाक काम है और नेता बनने की कोशिश में लगे रहने से हर आदमी नेता बन भी नहीं सकता। बात कड़वी हो या मीठी, लेकिन, आदमी वहीं तक जाता है जहाँ तक जाने की उसमें मौलिक शक्ति होती है। ऐसा भी हुआ है कि इस नियम को तोड़कर लोग नेता के पद पर जा पहुँचे हैं। लेकिन, ऐसे अपवादों के नतीजे अच्छे नही हुए क्योंकि या तो वे जल्दी लुढ़क कर नीचे आ गये अथवा उनका नेता बना रहना इन्सानियत के लिए हानिकारक साबित हुआ है।

समाज का असली सुधार उसमें रहनेवाले व्यक्ति का सुधार है। व्यक्तियों के ही बुरे या भले होने से हम समाज को बुरा या भला कहते हैं। मुख्य बात यह नहीं है कि हम दूसरों को सुधरने का उपदेश दें, बल्कि, यह कि सुधार की जो भी बातें हमारे मन में उठती हों, पहले हम उन्हें अपने चरित्र और स्वभाव पर लागू करें। समाज की सुन्दरता दो-चार नेताओं पर नहीं, बल्कि, लाखों-लाख व्यक्तियों के सुधार पर निर्भर करती है।

बोध प्रश्न : 6. समाज के सुधार का अर्थ क्या है ?

.....

.....

.....

और नेता होता कौन है ? अक्सर वह मनुष्य जो उन मूल्यों को अपने चरित्र और व्यक्तित्व में व्यावहारिक रूप देता है जिन मूल्यों की समाज को जरूरत होती है। सभ्यता के मूल्य में परिवर्तन करनेवाले लोग पहले उन मूल्यों को स्वयं बरतते हैं। और जो ऐसा नहीं करते, उन्हें समाज का हार्दिक सम्मान भी प्राप्त नहीं होता है। इसलिए, उचित यही है कि समाज की जिन कुरीतियों से हमारी नाराजगी है, उन्हें सबसे पहले हम स्वयं छोड़ दें और जिन मूल्यों को हम समाज में लाना चाहते हैं, उन्हें भी अपने वैयक्तिक जीवन में सबसे पहले हमी बरतना शुरू करें; समाज को योग्य नागरिकों की जरूरत है, नेताओं की नहीं।

5.3 सारांश

आज़ादी की लड़ाई के दिनों में देश के सामने विदेशी शासन को हटाने की समस्या थी। आजादी केलिए लडने वालों को अपनी जान और माल को संकट में डालना पडता था। वे लोग जनता केलिए त्याग करने आगे आये थे। लोग उनके त्याग की इज्जत करते हुए उन्हें नेता कहकर पुकारते थे।

आजादी के बाद देश के सारे काम नेताओं के हाथ में आ गये। आजादी के बाद के नेता काम कम और भाषणों को अधिक महत्व देने लगे तो लोगों को पता चला कि इस देश ने नेताओं को कुछ ज्यादा ही पैदा किया है नागरिक नहीं। ये नेता दूसरों को उपदेश देने में ज्यादा रुचि दिखाने लगे। वे खुद किसी भी उपदेश को अमल में लाने के लिए तैयार नहीं है। इस से देश के नव निर्माण के काम ठप पडे हुए हैं। हर कोई नेता ही बनना चाहता है। नेता बनने की इस धुन का बहुत बुरा असर देश पर पडा।

BRAOU

देश के हर माता-पिता यही चाहते हैं कि अपने सभी बच्चे किसी न किसी क्षेत्र में नेता बनने की तैयारी करें। यदि सारा समाज नेता बनने की तैयारी में लग जाय तो नेताओं के पीछे चलने वाले कौन रहेंगे? इसलिए दिनकर जी पूछते हैं कि क्या नेताओं से भरा हुआ देश अच्छा देश होता है?

आज हर आदमी बराबरी के सिद्धांत पर आगे बढ़ने के लिए तत्पर है। इसका फल यह है कि आदमी कुढ रहा है। हर एक यही कहता है कि उसकी योग्यताओं के लिए लायक जगह उसको नहीं मिली। देश के संगठनों में बड़े मैनेजर के खिलाफ छोटा मैनेजर है। राजनैतिक दलों में भी यही स्थिति दिखाई देती है। इसका कारण यह है कि हर आदमी आगे के नेता को पीछे ढकेल कर उसका स्थान वह लेना चाहता है। बराबरी सिद्धांत को लोगों ने गलत अर्थ में लिया है। इसका अर्थ है कि सबको विकास का समान अवसर मिलना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं है कि सबको इच्छा मात्र से नेतागिरी मिल जाय। नेतृत्व पाने के लिए तत्परता, धीरता आदि अपने गुणों का विकास करना पड़ता है। उम्र और अनुभवों का इन्तजार करना पड़ता है। लेकिन लोग छलाँग लगाकर आगे बढ़ना चाहते हैं। योजना बनाने और आदेश देने की सही जिम्मेदारी अनुभवी व्यक्ति ही निभा सकता है। इसलिए जिसको अनुभव नहीं है उसे नेता के पद पर कभी नहीं आने देना चाहिए। नेता का पद भी आराम की जगह नहीं है। दुनिया में चीजें, संगठनों में काम करनेवालों के श्रम से ही आती हैं। नेताओं के हस्ताक्षरों और भाषणों से नहीं। काम करने वाले सदा खुशी का अनुभव करते हैं। नेता कोई भी क्योंन हो अधिकार तो मेहनती और ईमानदार व्यक्तियों के पास ही रहता है। दुनिया में मेहनती और ईमानदार व्यक्तियों का ही सम्मान होता है। नेता चाहता है वह अपनी जिम्मेदारी ईमानदार आदमी पर डाल दे। नेता कोई एक ही व्यक्ति हो सकता है, लेकिन ईमानदारी और मेहनत से कई लोग अधिकार का स्वाद ले सकते हैं। इस तरह से अधिकार का केन्द्रीकरण होता है तो संगठन की तत्परता भी बढ़ती है।

आसानी से मैनेजरी प्राप्त करनेवालों की अपेक्षा परिश्रम करके अधिकार प्राप्त करनेवालों से ही देश की जनता और विश्व की मानवता का कल्याण हो सकता है।

नेतागिरी का लोभ मनुष्य को पतित बनाता है। भाषण, गर्जन, छद्म, झूठे वायदें और धोखे की कसमें, नेतृत्व की लालसा के दोष हैं। सच्चा नेता सही मार्ग से आगे बढ़ते हुए नेतृत्व करता है। लेकिन किसी न किसी तरह अपने नेता बनने की लालसा में यह नहीं देखता है कि वह नेता बनने के लिए कौन सा रास्ता अपना रहा है? नेतृत्व का लोभ साधन के महत्व को कम करता है। कुत्सित भाव भी नेतृत्व की प्रबल आकांक्षा में जन्म लेता है, जलन भी होता है। ऐसे नेताओं से देश का विकास नहीं हो सकता।

देश के विद्वानों, चिन्तकों से सुनते रहते हैं कि समाज भ्रष्ट हो गया। हमें तुरन्त सुधारना चाहिए। यह सोचने की जरूरत है कि समाज भ्रष्ट क्यों हो गया है और इसे कैसे सुधार सकते हैं?

प्रतिद्वंद्विता की भावना मनुष्य के स्वभाव में है। यह हमारी जीवधारी प्रवृत्ति है। लेकिन मनुष्य बुद्धिजीवी है। वह सोच सकता है। अपने विचार को निर्मल बना सकता है। इसके लिए मनुष्य में अंतर्निहित अच्छे गुणों का विकास करें। ईर्ष्या, द्वेष को नीचे लाये।

व्यक्ति का आगे बढ़ना निन्दनीय नहीं है। लेकिन आगे बढ़ने की लालच में मानवीय मूल्यों को न कुचल दें। आदमी वहीं तक जाता है जहाँ तक जाने की उसमें मौलिक शक्ति होती है। इस नियम को तोड़कर भी कुछ लोग नेता पद पर पहुँचे हैं। इसके परिणाम अच्छे नहीं हुए। उनका नेता बना रहना इन्सानियत के लिए हानिकारक साबित हुआ है। समाज का असली सुधार उस समाज में रहनेवाले व्यक्ति का सुधार है। समाज की सुन्दरता दो-चार नेताओं पर नहीं बल्कि लाखों व्यक्तियों के सुधार पर निर्भर रहती है। नेता वहीं होता है जो समाज के लिए आवश्यक मूल्यों को अपने चरित्र और व्यक्तित्व में व्यावहारिक रूप देता है। समाज के मूल्य में परिवर्तन करनेवाले लोग पहले उन मूल्यों का स्वयं अनुगमन करते हैं। जो ऐसा नहीं करते, समाज उनका सम्मान नहीं करता है। जिन मूल्यों को हम समाज में लाना चाहते हैं उन्हें अपने वैयक्तिक जीवन में सबसे पहले बरतना शुरू

BRAOU

करें। समाज की जिन कुरीतियों को हम नहीं चाहते उन्हें सबसे पहले हम ही स्वयं छोड दें। इसलिए दिनकर जी कहते हैं कि समाज को योग्य नागरिकों की ज़रूरत है, नेताओं की नहीं।

5.4 समीक्षा

इस निबंध में रामधारीसिंह दिनकर जी ने आजकल की नेतागिरी पर करार व्यंग्य किया है। आजादी के बाद देश के नव निर्माण की समस्या हमारे सामने है। लेकिन हमारे नेता काम को कम और भाषणों को ज्यादा महत्व देने लगे हैं। लोगों में ईमानदारी और मेहनत के स्थान पर स्वार्थ और छलाँग मारकर बड़े नेता बनने की अभिलाषायें तीव्र हो गयी है। शक्तिहीन लोग छलाँग मारकर नेता के पद पर जा पहुँचे हैं। ये सभी परिणाम इन्सानियत के लिए हानिकारक साबित हुए हैं।

दिनकरजी के अनुसार समाज का सुधार उसमें रहनेवाले व्यक्तियों के सुधार से ही होता है। समाज की सुन्दरता नेताओं पर नहीं उसमें रहने वाले लाखों व्यक्तियों के सुधार पर निर्भर रहती है। इसलिए वे पाठकों को उद्‌बोधित करते हुए कहते हैं कि समाज को योग्य नागरिकों की जरूरत है नेताओं की नहीं।

दिनकर जी के इस निबंध में उनके विषय-विश्लेषण और मूल्यांकन की शक्ति का परिचय मिलता है। इन्होंने सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के लिए व्यक्ति के अन्तर्मन की सफाई का आह्वान किया है। यह निबंध विचारोत्तेजक और उद्‌बोधनपरक है। हास्य और व्यंग्य प्रधान शैली अपनाते हुए इस निबंध में दिनकरजी ने विषय का जो विश्लेषण और मूल्यांकन किया है वह बेजोड है। निबंध में अंग्रेजी, उर्दू के प्रचलित शब्दों का सहज प्रयोग किया गया है।

5.5 शब्दार्थ

इश्तहार	:	विज्ञापन, सूचना
झडी	:	1. अविराम धारधारा, लगातार चलनेवाली बातें, 2. हल्की किन्तु लगातार वर्षा
तादाद	:	व्यक्तियों की कुल संख्या
बेशुमार	:	ज्यादा, अधिक
आमंत्रण	:	बुलाना, पुकारना
कुरबानी	:	बलि, न्यौछावर
मज़मून	:	लेख, व्याख्यान आदि का विषय, व्याख्यान का भाव
कैंची चलाना	:	व्यंग्य, आक्षेपपूर्ण बातें करना
कुदाल	:	मिट्‌टी खोदने का एक औजार
अक्लमन्द	:	चतुर, बुद्‌धिमान
कुढ़ना	:	भीतर ही भीतर जलना
वाजिब जगह	:	उचित स्थान
चस्का लगना	:	किसी चीज का मजा मिलने से उसे फिर करने भोगने की इच्छा होना
लियाकत	:	योग्यता, सामर्थ्य

BRAOU

मातहत	:	आज्ञाधीन, अधीनस्थ कर्मचारी
हिदायत	:	आदेश
चक्कर	:	हैरानी
उम्मीद	:	आशा
बेकरार	:	बेचैन
नाखुश	:	अप्रसन्न, असंतोष
अपदस्थ	:	पद से हटाया हुआ
अभिलाषा	:	चाह
मुनाफाखोरी	:	अधिक लाभ लेने की प्रवृत्ति
प्रतिद्वंद्विता	:	बराबरवालों की लड़ाई, मुकाबला
लपटें	:	तपी हुई हवा, ज्वाला, गरमी
तिकड़म	:	छलमय चातुर्य या छलमय युक्ति
नतीजा	:	फल, परिणाम
लुढ़कना	:	चक्कर खाते हुए गिरना

5.6 अभ्यास

5.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

1. रामधारी सिंह दिनकर के विचार में समाज को योग्य नागरिकों की आवश्यकता क्यों है?
2. आजादी के बाद नेता बनने की धुन का क्या असर हिन्दुस्तान पर पड़ा?

5.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न

1. आजादी के बाद देश के नव निर्माण के काम क्यों ठप पड़े हुए हैं?
2. बराबरी के सिद्धांत का आशय क्या है?
3. अधिकार के विकेन्द्रीकरण से क्या लाभ होता है?
4. नेतृत्व की अभिलाषा के दोष क्या क्या होते हैं?
5. समाज की सुन्दरता किस बात पर निर्भर करती है?

5.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

5.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. आजादी के बाद नेता बनने की धुन का क्या असर हिन्दुस्तान पर पड़ा?

उत्तर : आजादी के बाद नेताओं में अपनी बात पर पक्के रहने की परंपरा समाप्त हो गयी। नेता कम काम और ज्यादा भाषण देने लगे। हर नेता यही चाहने लगा कि वह दूसरों को उपदेश दें। लेकिन वह अपने ही किसी उपदेश को अमल करने को तैयार नहीं होता। इससे देश के नव निर्माण के काम ठप पड़े हुए हैं। देश में ऐसे ऐसे

BRAOU

लोग नेता बनने लगे जो सचमुच काम करना नहीं जानते हैं। काम करना जो जानते हैं वे काम करने की अपेक्षा भाषण देना ही पसंद करने लगे।

देश के सभी माँ-बाप और शिक्षा विशेषज्ञ यह चाहने लगेकि बच्चे और नौजवान किसी न किसी क्षेत्र में नेता बनने की तैयारी में लग जाये। नेताओं के पीछे चलने वाले कम हो गये।

बड़े और छोटे का भेद सुनते ही लोग नाराज होने लगे। बराबरी सिद्धांत का गलत अर्थ लिया गया। हर एक आदमी शिकायत करने लगा कि अपने लिए उचित पद नहीं मिला है। जो विशेष पदों पर बैठे हैं उनके खिलाफ लोग काम करने लगे। राजनैतिक दलों में द्वेष की भावना फैल गयी है। लोग एकदम छलाँग मारकर नेता के पद पर पहुँचना चाहते हैं। लोग अनुभव के दौर से गुजरने से इन्कार करने लगे। लोग सोचने लगे कि नेता का पद आराम की जगह है। इसलिए लोग मेहनत से भागकर आराम की जगह पहुँचने के लिए बेचैन होने लगे। नेता अपनी जिम्मेदारियों को ईमानदार आदमियों पर छोड़ने लगे।

नेतागिरी मनुष्य को पतित बनाने लगी। मुनाफाखोरी, चोरबाजारी फैलने लगी। सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में काम करनेवाले ऊपर के नेताओं को हटाकर खुद उनकी जगह लेने के लिए बेचैन रहने लगे। भाषण, गर्जन, तिकड़म और छद्म, झूठे वायदों और धोखे की कसमों से सारा सार्वजनिक जीवन कोलाहल पूर्ण हो गया है। दिनकर जी के अनुसार ये सब नेतृत्व की अभिलाषा के दोष हैं। लोग किसी न किसी तरह से नेता बनने के लिए गलत राह अपनाने लगे। नेतृत्व का लोभ साधन की महिमा को कम करने लगा। दूसरों को कम कर के अपने आप को बड़ा दिखाने का कुत्सित भाव नेतृत्व की प्रबल आकांक्षा से जन्म लेने लगा। लोग अपने बारे में बढ़ा चढ़ा कर कहने लगे। लोगों के भीतर दिन रात नेतृत्व की आकांक्षा जगाते फिरना खतरनाक काम हो गया है। जो लोग किसी न किसी तरह नेता बन गये, जिनमें नेता बनने की मौलिक शक्ति नहीं थी वे जल्दी ही लुढ़क कर नीचे आ गये हैं। उनका नेता बना रहना भी इन्सानियत के लिए हानिकारक साबित हुआ है।

5.7.2. मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. बराबरी के सिद्धांत का आशय क्या है ?

उत्तर : बराबरी के सिद्धांत के अनुसार सब लोग समान होते हैं। सब लोगों की आपस में बराबरी का अर्थ है – सब को विकास का समान अवसर मिलना। इसका अर्थ यह नहीं है कि हर कोई अवसर की प्रतीक्षा किये बिना जहाँ चाहें, वहाँ इच्छा मात्र से पहुँच जाय। इसको पाने केलिए अपने गुणों का विकास करना पड़ता है। तत्परता और धीरता सीखनी होती है, और उम्र तथा अनुभवों का भी इन्तजार करना पड़ता है।

प्रश्न 2. निम्न लिखित गद्यांश की प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए।

"समाज की सुन्दरता दो-चार नेताओं पर नहीं, बल्कि लाखों-लाख व्यक्तियों के सुधार पर निर्भर करती है।"

व्याख्या: यह वाक्य रामधारी सिंह दिनकर जी के द्वारा लिखित 'नेता नहीं नागरिक चाहिए' नामक पाठ से लिया गया है। इस पाठ को उनके 'रेती के फूल' नामक निबंध संग्रह से स्वीकार किया गया है। दिनकर जी इस निबंध के माध्यम से अपने पाठकों, विशेषत: नवयुवक पाठकों के सामने देश की स्थिति से संबंधित अपने विचार रखना चाहते हैं। दिनकर जी की दृष्टि में आज के समाज के लिए योग्य नागरिकों की जरूरत है, सिर्फ भाषण देनेवाले नेताओं की नहीं।

दिनकर जी कहते हैं कि समाज का असली सुधार समाज में रहनेवाले व्यक्तियों के सुधार से ही होता है। किसी समाज में व्यक्तियों के बुरे या भले होने से ही हम समाज को बुरा या भला कहते हैं। सुधार का अर्थ दूसरों को उपदेश देना नहीं है। सुधार का अर्थ हमारे मन में उठने वाली अच्छी बातों को अपने ही चरित्र और स्वभाव पर लागू करना है। समाज में जिन मूल्यों को हम चाहते हैं उनको सबसे पहले वैयक्तिक जीवन में सब से पहले

BRAOU

व्यक्ति को ही स्वयं बरतना चाहिए। जब समाज के लाखों व्यक्ति वैयक्तिक रूप में सुधर जायेंगे तब समाज सुन्दर बनेगा।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. आजादी की लडाई के दिनों में देश के सामने मुख्य समस्या थी कि विदेशी शासन कैसे हटाया जाये?
2. आजादी के बाद लोगों की शिकायत यह है कि उनको अपने लिए उचित स्थान नहीं मिला है।
3. हम का अर्थ है कि सबको विकास का समान अवसर मिलना चाहिए।
4. अधिकार भोगने का असली सुख मेहनती सहायकों के हाथ में है।
5. भाषण, गर्जन, तिकड़म, छद्म और झूठे वायदें, धोखे की कसमें, ये सब नेतृत्व की अभिलाषा के दोष हैं।
6. समाज के सुधार का अर्थ है उसमें रहनेवाले व्यक्तियों का सुधार।

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. रेती के फूल – रामधारी सिंह दिनकर, उदयांचल प्रकाशन, राजेन्द्र नगर, पटना–16
2. संस्कृति के चार अध्याय: रामधारी सिंह दिनकर

BRAOU

इकाई – 6 : भारतीय साहित्य में एकता: आचार्य नंददुलारे वाजपेयी

6.0 उद्देश्य

6.1 पाठ एवं लेखक परिचय

6.2 मूल पाठ

6.3 सारांश

6.4 समीक्षा

6.5 शब्दार्थ

6.6 अभ्यास

6.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

6.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

6.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

6.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

6.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

6.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.0 उद्देश्य

इस पाठ में हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक आचार्य नंददुलारे वाजपेजी के निबन्ध 'भारतीय साहित्य में एकता' पर विचार किया गया है। इस पाठ के अध्ययन से आप:

- भारतीय साहित्य की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- विभिन्न भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य में निहित अन्त:सूत्र को पहचान सकेंगे।
- भारतीय साहित्य की परंपरा तथा इसके विकास के विभिन्न सोपानों से अवगत हो सकेंगे।
- विवेच्य निबन्ध के लेखक के विचारों का मूल्यांकन कर सकेंगे।

BRAOU

6.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ परिचय

'अनेकता में एकता' को भारतीय संस्कृति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता के रूप में रेखांकित किया गया है। यह बात भारत की विभिन्न भाषाओं में रचित साहित्य के अध्ययन क्रम में स्वत: स्पष्ट हो जाती है। कहना न होगा कि अनेकानेक प्रादेशिक भाषाओं तथा भिन्न-भिन्न लिपियों के बावजूद इनमें रचित साहित्य की आत्मा एक है। भारत के साथ-साथ पश्चिम के भी कई विचारकों ने भारतीय साहित्य में निहित इस भावात्मक एकता की ओर इंगित करते हुए एकत्व की भावना को पुष्ट करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत पाठ में इसी विषय पर प्रकाश डाला गया है।

(आ) लेखक परिचय

भारतीय साहित्य में एकता शीर्षक निबन्ध के लेखक आचार्य नंददुलारे वाजपेयी का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के मगरैल नामक गाँव में सन् 1909 में हुआ था। अपने पिता के कारण बचपन से ही वे साहित्य से जुड़े रहे। सन् 1929 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से उन्होंने एम.ए. (हिन्दी) की उपाधि प्राप्त की।

सन् 1932 में वाजपेयी जी उस समय के एक सुप्रसिद्ध दैनिक पत्र भारत के संपादक के रूप में इलाहाबाद चले आये। उनके संपादकत्व में इस पत्र में तत्युगीन अनेक साहित्यकारों की रचनाएँ छपी। किन्तु, आगे चलकर भारत के मालिकों से उनका मतभेद हो गया और वे बनारस आकर 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की एक योजना के तहत सूर सागर के संपादन-कार्य में लग गए। इसके बाद उन्होंने गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित की जाने वाली रामचरित मानस की प्रति का भी संपादन किया। सन्1941 में वाजपेयी जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हुए। इसके बाद वे मध्यप्रदेश के सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष और तदनंतर वहाँ के कुलपति नियुक्त किये गये।

हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में वाजपेयी जी मुख्यत: छायावादी काव्य के एक सशक्त आलोचक के रूप में प्रसिद्ध रहे हैं। किन्तु, हिन्दी की काव्यशास्त्रीय समीक्षा को उनकी देन भी रेखांकन के योग्य है। इसके अलावा उन्होंने तुलनात्मक अनुसंधान के क्षेत्र में भी गंभीर चिंतन किया है तथा इस क्रम में विभिन्न भारतीय भाषाओं की रचनाशीलता पर विचार करते हुए वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि तात्विक दृष्टि से भारतीय साहित्य एक है।

साहित्य विवेचन के दरम्यान नंददुलारे वाजपेयी रचना के अन्त: साक्ष्य को सबसे ज्यादा महत्व देते हैं। उनकी आलोचनात्मक शैली प्राय: संस्कृतनिष्ठ एवं गंभीर है। बावजूद इसके वाजपेयी जी का मंतव्य सुस्पष्ट और पारदर्शी है। अपनी स्थापनाओं को उपयुक्त उदाहरणों से पुष्ट करते हुए उन्हें पाठक को हृदयंगम करा देना नंद दुलारे वाजपेयी की सर्वोपरि विशेषता है। इसीलिए उनकी समीक्षा की मूल प्रकृति व्याख्यात्मक और विवेचनात्मक कही जा सकती है।

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी की कृतियों में 'हिन्दी साहित्य : बीसवी शताब्दी', 'आधुनिक साहित्य' 'जयशंकर प्रसाद' तथा 'नया साहित्य : नये प्रश्न' आदि उल्लेखनीय हैं।

6.2 मूल पाठ

जब हम भारतीय साहित्य की चर्चा करते हैं तब हमारा आशय भारतवर्ष की भिन्न-भिन्न भाषाओं की साहित्यिक समाश्रयता से होता है। यदि हम आज के हिन्दी, बंगला, मराठी, गुजराती अथवा दक्षिणी भाषाओं के साहित्य को देखें, तो उसमें थोड़ा बहुत अंतर भी दिखेगा, परन्तु सार रूप में प्रवृत्तियाँ एक सी ही पाई जाती हैं। विभिन्न प्रदेशों एवं जनपदों की सांस्कृतिक विशेषताओं की छाप इन साहित्यों में प्राप्त होती हैं, जो स्वाभाविक है। साहित्य के विविध रूपों में से किसी भाषा में किसी रूप की विशिष्टता भी मिलती है। उदाहरण केलिए आज के मराठी-साहित्य में नाटकों की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक अच्छी है, वैयक्तिक निबंध भी उनके यहाँ अधिक परिमाण में लिखे जा रहे हैं। यह उनकी प्रासंगिक विशेषता है। इसी प्रकार अन्य प्रान्तीय भाषाएँ भी अपनी-अपनी अनन्यपरता रखती है। परन्तु इस वैभिन्य के भीतर एक मूलभूत एकता है जिसे हम भारतीय साहित्य की एकता कह सकते हैं।

कभी-कभी यह भी देखा जाता है कि किसी प्रदेश-विशेष के साहित्य में जो विशेषताएँ आज प्रारंभ हुई हैं, किसी अन्य प्रदेश के साहित्य में वे ही विशेषताएँ दस, बीस या पच्चीस वर्ष पहले या पीछे आरंभ हुई थी या हुई हैं। उदाहरण के लिए बंगाल में रवीन्द्रनाथ का काव्य, बंकिमचन्द्र के उपन्यास अथवा द्विजेन्द्रराय के नाटक बीसवीं शताब्दी के आरंभ में ही प्रचलित हो चुके थे। हिन्दी में उन्ही भावनाओं और शैलियों की रचना कुछ काल पश्चात् आरम्भ हुई। इससे केवल इतना ही सिद्ध होता है कि भारतीय साहित्य में आदान-प्रदान की परंपरा चला

BRAOU

करती है और विभिन्न प्राँतों के साहित्य अपने सहयोगी प्रांतों की रचनाओं का आवश्यकतानुसार उपयोग करते हैं। वह तथ्य भी मूलतः भारतीय साहित्य की एकता का ही लक्ष्यक है।

कहा जा सकता है कि आज की स्थिति में भारतीय साहित्य की एकता की बात क्यों सोची जाय? क्या हम संसार के दूसरे देशों के साहित्य से संपर्क नहीं रखते? अथवा, क्या आवश्यकतानुसार उनका उपयोग नहीं करते? क्या विश्वभर के साहित्य की एक इकाई नहीं है? इन प्रश्नों का उत्तर दो दृष्टियों से देना होगा। एक तो यह कि भारतीय समाज की एक विशिष्ट सत्ता है। सामाजिक विकास-क्रम में वह एक निश्चित स्थिति पर पहुँचा हुआ है, तथा उसके दार्शनिक और सांस्कृतिक आदर्श वे ही नहीं हैं जो किसी अन्य देश के हैं। इन कारणों से भारतीय साहित्यकार, अन्य देशों की कृतियों का अनुशीलन करते हुए भी, उन्हें इस प्रकार नहीं ग्रहण कर सकते, जिस प्रकार वे अपने देश की विभिन्न साहित्यिक कृतियों को ग्रहण करते हैं।

यही एक प्रश्न हमारी साहित्यिक परंपरा का भी उठता है। कोई भी देश अपनी साहित्यिक परंपरा से नाता नहीं तोड़ सकता। अतीत का प्रभाव वर्तमान पर पड़ता ही है। इसके साथ ही उल्लेखनीय बात यह है कि भारतीय परंपरा बहुत पुरानी है। पुरानी ही नहीं, वह अतिशय समृद्ध भी है। ऐसी स्थिति से यह संभव नहीं है कि हम अपनी सारी विरासत को छोड़कर दूसरे देशों के साहित्य का छिछला अनुसरण करने लगे। कहा जा सकता है कि प्रगति की दौड़ में संसार के साथ रहने के लिए यह आवश्यक है कि हम विदेशों के नए से नए साहित्य का परिचय रखें और अपनाएँ। परन्तु यह बात अंशतः ही सत्य है। यह आवश्यक नहीं कि जो कुछ नया है वह सबका सब अभीष्ट भी हो। राष्ट्रीय संस्कृतियों के उत्थान और पतन के अवसर भिन्न-भिन्न हुआ करते हैं। हम आँख मूँदकर नवीनता के नाम पर क्षयीमान संस्कृतियोंवाले साहित्योंवाले, साहित्य को अपनाकर कोई भी लाभ नहीं उठा सकते।

बोध प्रश्न : 1. संस्कृति की अवधारण स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

.....

BRAOU

यह बात तो हुई प्रगति में पीछे न रहने की। पर हम चाहें भी तो पाश्चात्य देशों की प्रगति को पा नहीं सकते। प्रत्येक देश को अपना विकास अपनी परंपरा के अनुसार ही करना पड़ता है। ऐसा न होने पर जो आमूल परिवर्तन या क्रान्ति होगी, वह हमारे देश के लिए श्रेयस्कर नहीं कही जा सकती। प्रगति के दो ही मार्ग हैं, स्वाभाविक विकास का अथवा क्रान्ति का। इनमें से क्रान्ति का मार्ग सदैव खतरेवाला हुआ करता है, और क्रान्ति के परिणाम भी प्रायः अनिश्चित होते हैं।

भारतीय साहित्य की एकता पर जोर देने की आवश्यकता इसलिए भी है कि आज संसार के समक्ष भविष्य की स्थिति बहुत कुछ डाँवाडोल हो गई है। विघटन की शक्तियाँ इतनी बलवती हो गई हैं कि यह नहीं समझ पड़ता कि नया विकास और नया संगठन किस प्रकार होगा? नई सभ्यता के इस संक्रान्तिकाल में भारतवर्ष अपना सन्तुलन खो दे, यह उचित न होगा। इसके विपरीत यह अधिक आवश्यक है कि यह अपने साहित्य, अपनी कला और अपने जीवन दर्शन द्वारा संसार को एक नया आलोक अथवा एक नवीन दिशा-ज्ञान देने की चेष्टा करे। संसार के बड़े-बड़े विचारक भी आज प्रकाश के लिए इधर-उधर टोह लगा रहे हैं। उनमें से कुछ की यह धारणा है कि भारतीय साहित्य और भारतीय जीवन-दर्शन उन्हें नया मार्ग-निर्देश दे सकते हैं। ऐसी स्थिति में नई प्रगति को दौड़कर अपनाने की अपेक्षा अपने प्राचीन साहित्यक वैभव की ओर दृष्टिपात करना अधिक अच्छा होगा।

यदि हम देश के प्राचीन साहित्य को देखें, तो उसमें एक मूलभूत एकता दिखाई देगी। इसका एक बड़ा प्रमाण यह है कि हमारे कतिपय महान साहित्यकों के जन्मस्थान का पता न होने पर भी समस्त प्रान्तों में उनका प्रचलन है और उन्हें समान सम्मान प्राप्त है। वाल्मीकि के कार्य-क्षेत्र का निर्देश कर भी दिया जाय तो भी व्यास का व्यक्तित्व और उनकी इयत्ता तो अज्ञात ही रहेगी, फिर भी सारा देश उन्हें अपना समझता है। कालिदास की भी प्राय: ऐसी ही स्थिति है। विभिन्न प्रान्तों के पण्डित उन्हें अपनी-अपनी ओर खोजने का प्रयत्न करते हैं। परंतु कालिदास वास्तव में किसी प्रान्त के कवि नहीं थे, वे समस्त भारत के कवि हैं।

हमारे देश में विविधता में एकता लाने की चेष्टा चिरकाल से की गई है और इस कार्य में हमारे साहित्यकारों ने विशेष योग दिया है। वैदिक साहित्य के द्वारा सारे देश में एक-सी धार्मिक भावना, एक-सी यज्ञ-पद्धति और एक-सा दार्शनिक आधार प्रतिष्ठित हुआ था। आज भी भारतीय ग्रहों में वैदिक संस्कार के चरित्र की गरिमा और महत्ता है। केवल राजनीति के क्षेत्र में ही नहीं, मानव जीवन के सभी विशिष्ट क्षेत्रों में आज भी भारतीय नागरिक राम के चरित्र को आदर्श मानते हैं, और उससे प्रभावित होते हैं। दक्षिण में वाल्मीकि रामायण का प्रचार उत्तर भारत से कम नहीं है, जो इस बात का द्योतक है कि भारत की सांस्कृतिक एकता अत्यंत बलवती और परिपुष्ट है। राम इसलिए महान् नहीं है कि उनका जन्म अयोध्या में हुआ था। इन ऐतिहासिक और भौगोलिक तथ्यों का हमारी संस्कृति अतिक्रमण कर गई है और तब जिन मूल्यों पर वह प्रतिष्ठित हुई है वे बहुत अधिक स्थायी मूल्य हैं।

कालिदास और भवभूति भारतीय वैभव-युग के प्रतिनिधि कवि हैं। एक उस वैभव की प्रारंभिक स्थिति की संपूर्ण आशा-वादिता और उत्कर्ष से समन्वित है; तथा दूसरा उस वैभव के परिपाक की चरमावस्था का प्रतिनिधि है। दोनों की कृतियों में ये दोनों पहलू अत्यधिक स्पष्ट हैं। भवभूति की भाषा में संस्कृति की चरम प्रगल्भता सन्निहित है। कालिदास और भवभूति का संपूर्ण प्रदेय भारतीय वस्तु है, वह किसी प्रदेश का उत्तराधिकारी नहीं।

बोध प्रश्न : 2. कालिदास की रचनाओं को लेखक ने 'भारतीय वस्तु' क्यों कहा है?

.....

.....

.....

जिस प्रकार ग्रीक-रोमन सभ्यता के चरम उत्कर्ष के पश्चात्, वर्जिल का महाकाव्य एनिड (Aonied) लिखा गया, उसी प्रकार भारतीय सभ्यता के चरम बिन्दु पर पहुँचने के पश्चात् माघ और भारवि जैसे कवियों की कृतियाँ प्रकाश में आईं। शैली का सौन्दर्य इनमें चरम कोटि का मिलेगा, किन्तु भावोत्कर्ष बहुत क्षीण होने लगा है। भाषा का सर्वोत्तम परिष्कार इन कृतियों में परिलक्षित होता है। एक-एक श्लोक के पाँच-पाँच और सात-सात अर्थ जिस निपुणता से निकाले जाते हैं, वे भाषा की चरम सिद्धि के परिणाम हैं। भट्टिकाव्य को साहित्य का ग्रन्थ भी कहा जाता है और उसे व्याकरण का भी ग्रन्थ कहते हैं, कितने महान् अधिकारों को लेकर उसकी रचना की गयी थी।

महाकाव्यों के इस निर्माण-काल के पश्चात् नया प्रवर्तन जयदेव द्वारा किया गया जिन्होने मधुर प्रगीतों की शैली अपनाकर भारतीय साहित्य को अपूर्व माधुर्य से भर दिया। उन्हींके पश्चात् भारतीय लोक भाषाएँ अपने साहित्यों की समृद्धि करने में तत्पर हुईं और एक साथ ही बंगाल में चंडीदास, मिथिला में विद्यापति, उत्तर भारत में कबीर, तुलसी और सूर; महाराष्ट्र में ज्ञानदेव, गुजरात में नरसी मेहता और राजस्थान में मीराबाई के गेय पदों की गहन परंपरा चल निकली। दक्षिणी भाषाओं में भी आलवार संतो ने भक्ति-काव्य की रचनाएँ प्रस्तुत कीं। सारा देश इन भक्तों और संतो की सहज भावमयी वाणी से आल्पयित हो गया। तुलना के लिए कुछ लोग किसी कवि को किसी से न्यून, किसी से श्रेष्ठ ठहरा सकते हैं, किन्तु वे तुलनाएँ अधिकतर साहित्यिक ही होंगी। प्रतिभा

BRAOU

का उत्कर्ष नापना साहित्यिक का नाम है। जहाँ तक सांस्कृतिक प्रेरणा का प्रश्न है, ये कवि के ही प्रेरणा से परिचालित हुए हैं। उसे हम एक शब्द में धार्मिक प्रेरणा कह सकते हैं। लोक-साहित्य पूर्ववर्ती संस्कृत की तुलना में क्या और कैसा है? यह प्रश्न भी हमारे लिए महत्व का नहीं। जिन राष्ट्रीय और सामाजिक परिस्थितियों ने इस साहित्य को जन्म दिया और इसकी रूपरेखा निर्धारण की, उसकी विवेचना भी हमारे लिए यहाँ आवश्यक नहीं। हम तो केवल यह देखते हैं कि सौलहवीं से सत्रहवीं शताब्दी तक समस्त देश में एक ही साहित्यिक ध्वनि गूँज रही थी और यह भी एक लोकातिक्रान्त शक्ति में चरम विश्वास रखनेवाली सशक्त और बलवती ध्वनि।

उन्नति और विकास, अथवा प्रौढ़ता और परिपुष्टता के युगों में ही नहीं, ह्रास और अवरोह के युगों में भी भारतीय साहित्य अपनी एकता का साक्ष्य देता है जिसे हम हिन्दी साहित्य का रीतिकाल कहते हैं, जिसकी प्रेरणा मुसलमानी साम्राज्य और फारसी साहित्य की नई परिस्थितियों से उत्पन्न हुई थी, वह भी किसी एक प्रदेश तक सीमीत नहीं थी । दरबारी कवियों का काव्य भारत के विभिन्न प्रान्तों में तैयार हुआ । श्रृंगारी कविता और नायिका की रचनाएँ यत्र-तत्र सर्वत्र प्रस्तुत की गईं । यही नहीं, चित्रकला और संगीत के क्षेत्रों में भी बहुत-कुछ समान-सी प्रगति सारे देश में होती रहीं, आज जिसे हम उत्तर का संगीत कहकर दो खंड़ो में विभाजित करते हैं । शैलियाँ और कलायें बदली हैं। इतने बड़े देश में उनका बदलना स्वाभाविक और अवश्यम्भावी था। परन्तु मौलिक रूप में एक समानता समस्त देश भर विद्यमान रही है। हिन्दी का कवि भूषण दक्षिण के सम्राट शिवाजी की प्रशस्ति गाने में प्रसिद्ध हुआ। उसी प्रकार गुजरात, महाराष्ट्र और बंगाल के कवि ब्रजभाषा में कृष्ण लीलाओं का गान कर रहे थे। प्रादेशिक भिन्नता का भाव इस देश की प्रवृत्ति में नहीं रहा।

अँगरेजों के आने के पश्चात् हमारे देश पर जो नए प्रभाव पड़े और उनकी जो प्रतिक्रिया साहित्यिक निर्माण में देखी गई, वह भी विलक्षण रूप से समान थी। कुछ समय तक विदेशी सभ्यता की चकाचौंध, फिर एक नया परिवर्तन या पुनरुत्थान; फिर राष्ट्रीयता का प्रशस्तिगान और अन्ततः स्वच्छन्द काव्य की प्रवृतियाँ प्राय : सभी प्रान्तों में एक-सी पाई जाती हैं। यह बात दूसरी है कि किसी प्रान्त में वह प्रभाव कुछ पहले आया और किसी अन्य प्रान्त में कुछ बाद में। तीसरा अंतर प्रादेशिक या जनपदीय संस्कृति का है। किसी प्रान्त में किसी विशेष काव्य रूप की ओर अधिक प्रवृत्ति रही, किसी दूसरे प्रान्त में किसी अन्य काव्य रूप की ओर। विभिन्न प्रदेशों की जलवायु और तज्जन्य लोकरुचि के अनुसार भिन्नताएँ भी आती रही हैं। परन्तु वे अतिशय स्वाभाविक हैं और उनसे साहित्य की मूल विकासधारा और भावभूमि में कोई बड़ा अंतर नहीं आया। आज हमारे देश की विभिन्न भाषाओं से साहित्यकार और विद्वान इस बात से थोडे-बहुत शंकित हो रहे हैं कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने से उनकी प्रादेशिक भाषा या साहित्य को कोई क्षति पहुँचेगी; परन्तु भारतीय इतिहास इस शंका को निर्मूल सिद्ध करता है। भारतीय जनता अपने ऐतिहासिक जीवन में बराबर देखती आई है कि साहित्य देश को विभाजित करने का माध्यम नहीं रहा है। काव्य विविधता में अंतर्निहित एकता इस देश की संस्कृति की प्रमुख विशेषता करने का माध्यम नहीं रहा है। हमारा प्राचीन साहित्यिक विकास इसका विदर्शक है। भविष्य में भी यह एकता प्रतिष्ठित होगी और स्थिर होकर रहेगी, इसमें सन्देह करने के लिए अधिक स्थान नहीं है। इतिहास तो इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि जब-जब हमारे देश में भाषा और साहित्य की यह संयोजक शक्ति कम हुई है और पृथकता तथा विदेशी प्रभावों का प्राबल्य हुआ है तब-तब सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में संकट आया है और हमें राष्ट्रीय दुर्दिन देखने पड़े हैं। भारतीय साहित्य की एकता का आदर्श सदैव हमारी राष्ट्रीय एकता के लिए अक्षय प्रेरणा-स्त्रोत रहा है और रहना चाहिए।

6.3 सारांश

भारतीय साहित्य की एकता का अर्थ विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्य की प्रवृत्तिगत एकरूपता है। प्रादेशिक भाषाओं के साहित्यों में अपने-अपने प्रदेशों तथा क्षेत्रों की विशिष्टताओं की अभिव्यक्ति स्वाभाविक है जिसके चलते उनमें बाहरी तौर पर भिन्नताएँ दिखाई देती हैं। किन्तु, इन भिन्नताओं के बावजूद तमाम भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य में मूलभूत एकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इसीलिए हम सभी भारतीय

भाषाओं में रचित साहित्य को 'भारतीय साहित्य' के अंतर्गत शामिल करते हैं।

भारत में एक प्रदेश या एक भाषा के साहित्य में निहित प्रवृत्तियों का प्रभाव अन्य भाषाओं के साहित्य पर भी दिखाई पड़ता हैं। सच तो यह है कि भारतीय भाषाओं की रचनाशीलता में परस्पर आदान-प्रदान की यह परंपरा भारतीय साहित्य की एकता को पुष्ट करने वाली है।

भारतीय जनमानस के दार्शनिक और सांस्कृतिक तर्क अन्य देशों से भिन्न हैं। इसलिए आज भारतीय साहित्य में एकता के मुद्दे पर चर्चा जरूरी है।

जाहिर है कि भारतीय परंपरा बहुत पुरानी और समृद्ध है जिसके प्रभाव से हमारा वर्तमान अछूता नहीं रह सकता। वस्तुत : अन्य देशों के साहित्यों की नयी प्रवृत्तियों के आत्यन्तिक प्रभाव में आकर हम अपनी परंपरा को छोड़ नहीं सकते। सच तो यह है कि किसी भी क्षेत्र में प्रगति के लिए अपनी परंपरा को पूरी तरह नकारने के बजाय उसके प्रगतिशील तत्वों को आत्मसात करना श्रेयस्कर होता है। यह बात भारतीय साहित्य के संदर्भ में भी पूर्णत: लागू होती है।

हमारे समय में संसार का राजनीतिक नक्शा लगातार बदल रहा है। अनेक देशों में विघटनकारी ताकतें सक्रिय हैं। इस विषम स्थिति में हमें अपने देश की एकता और अखण्डता को लेकर अत्यन्त जागरूक रहना होगा। स्पष्ट ही इस संदर्भ में भारतीय साहित्य में एकता के मुद्दे पर चल रहे बौद्धिक विमर्श की ही एक महत्वपूर्ण कड़ी है। भारतीयता वस्तुत: एक मूल्य है और जब संसार में चारों तरफ हिंसा हो, तीसरे विश्व युद्ध का खतरा हो, तो, ऐसी हालत में भारतीय साहित्य में निहित जीवन मूल्यों के प्रचार प्रसार से विश्व मानवता को एक सही दिशा मिल सकती है।

भारत के प्राचीन साहित्य के अध्ययन से यह पता चलता है कि उसमें मूलभूत एकता है। प्राचीन साहित्यकारों को सारा देश अपना मानता है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास आदि समस्त भारत के हैं। वे किसी एक प्रांत के नहीं हैं।

हमारे देश में भिन्नता में अभिन्नता और अनेकता में एकता स्थापित करने का प्रयास चिरकाल से किया जा रहा है और स्पष्ट ही इसमें साहित्यकारों की महती भूमिका रही है। अनेकता में एकता की भावना के मूलाधारों में यदि एक ओर धर्म है तो दूसरी ओर धर्म निरपेक्षता भी है।

वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, भवभूति, माघ, भारवि आदि कवियों की कृतियों में भारतीय साहित्य का रचना-कौशल अपने उत्कर्ष पर है। कविता के साथ-साथ संस्कृत गद्य साहित्य भी बहुत समृद्ध है। सच तो यह है कि भारतीय काव्यशास्त्र के आचार्यों ने गद्य को कवियों की कसौटी के रूप में स्वीकार किया है जिस पर कसे जाने पर उनकी कला का जौहर चमक उठता है। इस दृष्टि से विचारने पर सुबन्धु, बाण भट्ट एवं दण्डी रचित गद्य रचनाएँ भारतीय साहित्य की अमूल्य निधि सिद्ध होती हैं। इसी प्रकार भास, कालिदास, भर्तृहरि, अमरूक एवं जयदेव के रचनात्मक अवदान से भारतीय साहित्य समृद्धि के शिखर पर पहुँच सका है।

इनके बाद आधुनिक भारतीय भाषाओं में रचनाशीलता शुरू हुई। यह 11-12 वीं शताब्दी का समय है। इस काल में भारत के विभिन्न प्रदेशों में अनेकानेक भारतीय भाषाओं में संत और भक्त कवियों ने अपनी रचनाओं द्वारा भारतीय साहित्य को समृद्ध किया। इन महाकवियों की परस्पर तुलना करके किसी को बड़ा या छोटा बताना अनुचित है। इस संदर्भ में इतना ही ध्यातव्य है कि मध्यकाल के आरंभ से लेकर अवसान तक समस्त भारतीय साहित्य में एक रूपता रही है। सच तो यह है कि साहित्य के विकास या ह्रास, प्रौढ़ता और परिपुष्टता में भी तमाम भारतीय भाषाओं के साहित्य के विकास में यह एकरूपता अंग्रेजों के भारत आगमन के बाद भी बनी रही जिसका सबसे बड़ा प्रमाण तमाम भारतीय भाषाओं में प्रचुर मात्रा में रचित उपनिवेशवाद-विरोधी साहित्य है और स्पष्ट ही इसकी प्रेरणा का मूल-स्रोत राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम रहा है।

BRAOU

6.4 समीक्षा

भारतीय संस्कृति एवं साहित्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। भारतीय जनमानस के सांस्कृतिक बोध को यहाँ के रचनाकार अपनी-अपनी भाषाओं के माध्यम से व्यक्त करते रहे हैं। क्षेत्रीय या प्रादेशिक भिन्नताओं तथा वैशिष्ट्य से समृद्ध भारतीय साहित्य अनेकता में एकता तथा भिन्नता में अभिन्नता का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करता है।

आज विज्ञान और सूचना तकनीक के इस विकसित युग में मानवीय मूल्यों को बचाने की सबसे ज्यादा जरूरत है और स्पष्ट ही इस संदर्भ में भारतीय साहित्य संसार के संस्कृति कर्मियों को सही दिशा में प्रेरित और प्रभावित कर सकता है। वैज्ञानिक विकास के साथ-साथ स्वस्थ सांस्कृतिक बोध मनुष्य की पूर्णता के लिए अत्यावश्यक है। संचार माध्यमों द्वारा प्रचारित-प्रसारित की जाने वाली लोकप्रिय संस्कृति वस्तुतः मनुष्य की मानसिकता को रुग्न बना रही है। इसलिए आज हमें भारतीय साहित्य का गंभीर अध्ययन करके अपनी संस्कृति के प्रभाविष्णु पक्ष से पूरी तरह परिचित होना चाहिए। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने अपने इस निबन्ध में भारत की सांस्कृतिक एकता के साधक तत्वों की ओर इंगित करते हुए भारतीय साहित्य के अध्ययन की प्रेरणा दी है।

6.5 शब्दार्थ

समाश्रयता	–	समान आश्रय का भाव
लक्ष्यक	–	लक्ष्य करने वाला
छिछला	–	उथला, कम गहरा
क्षयीमान	–	क्षय होने वाली
आमूल	–	जड़ से लेकर, समग्र
श्रेयस्कर	–	हितकर
डाँवाडोल	–	अस्थिर
दृष्टिपात करना	–	नजर डालना
इयत्ता	–	परिमिति
द्योतक	–	बतानेवाला
सन्निहित	–	युक्त
न्यून	–	कम
लोकातिक्रान्त	–	लोक को पार कर जाने वाला
ह्रास	–	पतन
प्रवर्तन	–	आरंभ
अवरोह	–	नीचे की ओर जाना
प्रशस्ति	–	प्रशंसा, तारीफ
तज्जन्य	–	उससे उत्पन्न
क्षति	–	हानि
विदर्शक	–	प्रमाण देनेवाला
पृथकता	–	अलगाव

BRAOU

6.6 अभ्यास

6.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. भारतीय साहित्य में एकता के प्रमुख तत्वों को रेखांकित कीजिए।
2. भारतीय साहित्य की विशिष्टताओं का उल्लेख कीजिए।
3. "भारतीय संस्कृति अनेक भाषाओं में अभिव्यक्त एक ही तत्व है।" इस कथन को समझाइए।

6.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. भारतीय साहित्यिक परंपरा के महत्व को समझाइए।
2. देश की विविधता में एकता लाने के लिए किये गये सांस्कृतिक प्रयत्नों पर प्रकाश डालिए।
3. निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए:

"काव्य विविधता में अन्तर्निहित एकता इस देश की संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है।"

6.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

6.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : भारतीय साहित्य की विशिष्टताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : भारतीय साहित्य विभिन्न भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य के समाहार का नाम है। भारत में अनेकानेक प्रादेशिक भाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख भाषाओं को संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल किया गया है। इनमें विपुल और समृद्ध साहित्य की परंपरा है। इन भाषाओं के साहित्य की अपनी-अपनी विशिष्टताएँ हैं और उनके अलग-अलग लक्षण हैं। इसके बावजूद हमें इनमें तात्विक दृष्टि से एकता के दर्शन होते हैं। दूसरे शब्दों में कहे तो तमाम भारतीय भाषाओं के साहित्य में बाहरी भिन्नताओं के बावजूद जिस एकता के दर्शन होते हैं वही भारतीय साहित्य की विशिष्टता है। प्रस्तुत पाठ में लेखक ने अनेकानेक उदाहरणों से इसे पुष्ट किया है।

हमारे देश की एकता के मूलाधारों में एक सशक्त आधार वैदिक धर्म और संस्कृत साहित्य है। जहाँ एक ओर प्राचीनधार्मिकता का प्रभाव संपूर्ण भारतीय जनजीवन पर रहा है वहीं दूसरी ओर संस्कृत साहित्य का गहरा प्रभाव तमाम भारतीय भाषाओं के साहित्य पर पड़ा है। मुख्य रूप से रामायण, महाभारत आदि काव्यों का प्रभाव कमोबेश सभी भाषाओं के साहित्य पर है। उदाहरण के लिए रामायण के राम के चरित्र का प्रभाव विभिन्न भारतीय भाषाओं में रचित साहित्य के माध्यम से जन-जीवन पर पड़ा है।

भारत की तेजी से बदलती समाजार्थिक परिस्थितियों ने स्पष्ट ही संस्कृति एवं साहित्य को भी प्रभावित किया है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने इस संदर्भ में एक सटीक उदाहरण प्रस्तुत किया है। भक्ति आन्दोलन के बाद सारे देश में श्रृंगार की बाढ-सी आ गयी। हिन्दी साहित्य में रीतिकाल की जो प्रवृत्तियाँ परिव्याप्त हुई थीं, लगभग उसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ समस्त भाषाई साहित्यों में परिलक्षित होती हैं। भारतीय संगीत भी मूलतः एक ही है। लेकिन इतने विशाल देश के हर प्रान्त में संगीत की एक ही प्रकार की शैली हो, यह संभव नहीं है। इसलिए संगीत की शैली में अन्तर पड़ गया। उत्तर भारत की शैली हिन्दुस्तानी कहलाती है तो दक्षिण भारतीय संगीत शैली कर्नाटक संगीत। इस प्रकार शैलीगत विभिन्नताएँ स्वाभाविक हैं और इस प्रकार का शैलीभेद अवश्यंभावी हैं। लेकिन भारत की विशिष्टता यह है कि इन विभिन्नताओं के बावजूद भारतीयता की आत्मा एक ही है।

BRAOU

6.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न 1: आचार्य नंददुलारे वाजपेयी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी की भाषा संस्कृतनिष्ठ, पूर्ण संयत तथा गंभीर है। उसमें सूक्ष्मताओं के ग्रहण की अद्‌भुत शक्ति है। उनके निबंधों में प्राय: हरेक वाक्य विचार गुंफ़ित हुआ करते हैं। वाजपेयी जी जरूरत के अनुसार अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग करते हैं, किन्तु उसके समानान्तर प्राय: उपयुक्त हिन्दी शब्द भी रख देते हैं। उनके निबंधों में भाषिक प्रयोगों की दृष्टि से उर्दू शब्दों का प्रयोग न के बराबर है। वाक्य-रचना की दृष्टि से विचारने पर हम पाते हैं कि जहाँ वाजपेयी जी को कोरे तथ्यों का उल्लेख करना होता है, वहाँ वाक्य बहुत छोटे-छोटे हो जाते हैं जहाँ भावों का प्रवाह रहता है, वहाँ वाक्य बड़े हो जाते हैं। शैली की दृष्टि से वाजपेयी जी का लेखन व्याख्यात्मक और विवेचनात्मक है। उनके विवेचन में गहराई, संयम एवं शालीनता हैं। किसी मुद्दे को व्याख्यायित करते हुए वे किसी एक तथ्य को सूत्र रूप में उपस्थित करके उसकी व्याख्या करने के बजाय बराबर एक के बाद दूसरे तथ्यों का उल्लेख करते जाते हैं। इस क्रम में अपनी व्याख्या को पूर्ण एवं प्रभावोत्पादक बनाने के लिए वे तुलना का आधार भी ग्रहण करते हैं।

प्रश्न 2 : नीचे लिखे गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

''अतीत का प्रभाव वर्तमान पर पड़ता हैं।''

उत्तर: यह वाक्य हिन्दी के सुप्रसिद्‌ध लेखक आचार्य नंददुलारे वाजपेयी द्‌वारा रचित 'भारतीय साहित्य में एकता' शीर्षक निबंध से लिया गया है। इस पाठ में लेखक ने तमाम भारतीय भाषाओं के साहित्यों की विभिन्न प्रवृत्तियों के आधार पर भारतीय साहित्य की एकता को रेखांकित किया है।

जाहिर है कि प्रत्येक देश की दार्शनिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक परंपराएँ होती हैं। एकदम किसी नयी बात को, जो उसकी परंपरा से भिन्न हो, कोई ग्रहण नहीं कर सकता। किसी देश, समाज या समुदाय की जो अपनी विशिष्ट परंपराएँ हुआ करती हैं उनका प्रभाव किसी न किसी रूप में वर्तमान जन जीवन पर अवश्य पड़ता है। हमारे देश की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परंपरा अत्यंत प्राचीन एवं समृद्‌ध हैं। इस महती परंपरा का प्रभाव भारत की सभी भाषाओं के साहित्य में परिलक्षित होता है। इसी गौरवशाली परंपरा से आधुनिक भारतीय साहित्य प्रभावित है। इसी प्रभाव के कारण हम कह सकते हैं कि भारतीय साहित्य में एकरूपता है। अतएव सांस्कृतिक रूप से भारतवर्ष का साहित्य एक है।

BRAOU

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 'संस्कृति' मानव हृदय के सूक्ष्म संस्कारों का समीकरण है। यह राष्ट्रीय जीवन को प्रेरणा देनेवाली जीवन शक्ति है। संस्कृति सौन्दर्यबोध के विकसित होने की मौलिक चेष्टा है।
2. कालिदास की रचनाओं को लेखक ने 'भारतीय वस्तु' कहा है क्योंकि उनकी विषयवस्तु किसी क्षेत्र-विशेष तक सीमित नहीं है। कवि को संपूर्ण भारत वर्ष की प्राकृतिक सुषमा तथा भारतीय जनजीवन की प्रामाणिक जानकारी थी। सच तो यह है कि कालिदास ने अपनी रचनाओं में भारत का काव्यमय भूगोल लिख दिया है।

6.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी – आ. नंददुलारे वाजपेयी
2. नया साहित्य : नये प्रश्न – आ. नंददुलारे वाजपेयी
3. आधुनिक साहित्य –आ. नंददुलारे वाजपेयी

खण्ड-2 : जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, रिपोर्ताज

BRAOU

विषय प्रवेश

'जीवनी' शब्द अंग्रेजी के 'बायोग्राफ़ी' या 'लाइफ़' शब्द का पर्याय है। जीवनी को हिन्दी में 'जीवन चरित' या 'जीवन-चरित्र' भी कहते हैं। किसी विभूति या शख़्सियत के चरित्र से प्रभावित होकर जब उसके अन्तर्बाह्य जीवन का सर्वांग वर्णन किया जाता है- वह जीवनी कहलाता है। जीवनी लेखन की परम्परा के अन्तर्गत व्यक्ति विशेष पर आलेख, भाषण, जीवनी ग्रंथ तथा अभिनन्दन ग्रंथ आदि स्वरूप आते हैं। जीवनी कल्पना प्रधान न होकर तथ्य प्रधान होती है। जीवनी लिखने वाले जीवनीकार के पास जीवन के सूक्ष्मावलोकन एवं मूल्यांकन की क्षमता होनी चाहिए। जीवनी के प्रमुख पात्र अधिकतर महान पुरुष होते हैं। इतिहास में अपने महान कार्यों से अमर हो जाने वाले सम्राट, शासक, योद्धा, नेता, समाज सुधारक, कवि, लेखक, धर्मगुरु आदि जीवनी साहित्य के प्रमुख विषय होते हैं।

हिन्दी की प्रारम्भिक और महत्वपूर्ण जीवनियों में ब्रजरत्न दास और शिवनन्दन सहाय लिखित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जीवनियां हैं। बीसवीं सदी में माधव प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'स्वामी विशुद्धानन्द' का जीवन चरित तथा बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'कविरत्न सत्यनारायण' की जीवनी लिखकर जीवनी-साहित्य को समृद्ध किया। सन् 1937 में पं सीताराम चतुर्वेदी ने 'महामना पंडित मदनमोहन मालवीय' नामक जीवनी लिखकर नेताओं के अनुकरणीय जीवनी को उभारा। बाद में राजनेताओं की जीवनियों ने समाज में एक प्रेरणाप्रद वातावरण का निर्माण किया। महात्मा गांधी पर अनेक जीवनियां लिखी गईं। इसमें घनश्याम दास बिड़ला द्वारा लिखित 'बापू' विशेष प्रसिद्ध हुई। राहुल सांकृत्यायन ने सर्वाधिक संख्या में जीवनी लेखन का कार्य किया है। हिन्दी के जीवनी-लेखकों में उनका महत्वपूर्ण स्थान है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि साहित्य में जीवनी-विधा और उसका लेखन हमारे सामाजिक जीवन में एक प्रकाश स्तम्भ का काम करते हैं। राहुल सांकृत्यायन ने 'कार्लमार्क्स', 'माओ-त्से-तुंग', 'महात्मा बुद्ध' आदि की जीव नियाँ इसी उद्देश्य के लिए लिखी है। बाद में चलकर शुद्ध सामाजिक और सांस्कृतिक उद्देश्यों को लेकर महापुरुषों की जीवनी-लेखन की एक परम्परा का विकास हुआ। बलराज मधोक की 'श्यामा प्रसाद मुखर्जी: एक जीवनी', पांडुरंग देशपाण्डे की 'लोकमान्य तिलक', विजय कुमार पुजारी द्वारा लिखित 'डॉ बाबा साहेब अम्बेडकर' नामक जीवनी इसी उद्देश्य की पूर्ति करते हैं।

'आत्मकथा' का हिन्दी-साहित्य में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। पहली आत्मकथा, अकबर के समकालीन जैन कवि बनारसी दास की, 'अर्द्धकथा' (1641ई) मानी जाती है। आधुनिक काल के प्रारम्भ में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी की आत्मकथा श्रेष्ठ मानी जाती है। 'आत्मकथा' साहित्य की एक अनिवार्य शर्त है कि इस विधा में आत्म प्रशंसा से बचना चाहिए। आत्मकथा लेखक को अपनी कमजोरियों को भी सलीके से उजागर करने पर 'आत्मकथा' की विश्वसनीयता और लोकप्रियता बढ़ती है।

'आत्मकथा' में व्यक्तिगत जीवन अथवा आत्मचरित के तथ्यों का रोचक एवं साहित्यिक रूपान्तर होता है। 'आत्मकथा' लेखक का कार्य इतिहासकार या उपन्यासकार से कठिन होता है। उसे कल्पना एवं अनुमान का त्याग कर व्यक्तिगत जीवन के तथ्यपरक कलेवर में प्रस्तुत करना होता है। आत्मकथा लेखकों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. राजनैतिक क्षेत्र के आत्मकथा लेखक
2. सामाजिक क्षेत्र के आत्मकथा लेखक
3. साहित्यिक क्षेत्र के आत्मकथा लेखक

BRAOU

पं. जवाहर लाल नेहरू, डॉ. राजन्द्र प्रसाद की 'आत्मकथा' राजनीतिक क्षेत्र की मानी जाती है। वियोगी हरि ने अपने सामाजिक जीवन को 'स्वतंत्रता की खोज' नामक आत्मकथा में उजागर किया है। साहित्यिक क्षेत्र की आत्मकथा में डा. हरिवंश राय बच्चन की 'क्या भूलूं, क्या याद करूं' पिछले दशक की सर्वाधिक चर्चित आत्मकथा थी।

हिन्दी साहित्य में 'जीवनी' और आत्मकथा की तरह ही 'संस्मरण' का भी महत्वपूर्ण स्थान है। 'संस्मरण' हिन्दी गद्य की आत्मनिष्ठ विद्या है। आत्मनिष्ठ इसलिए कि 'संस्मरण' को लिखने वाले लेखक, अपने स्मृति पटल पर अंकित घटनाओं का अपने निजी अनुभूतियों एवं संवेदनाओं के धरातल पर वर्णन करता है। 'संस्मरण' के अन्तर्गत बहुधा वैयक्तिक जीवन या व्यक्तिगत सम्पर्क में आए हुए अन्य व्यक्तियों को, किसी विशिष्ट क्षण, प्रहर अथवा कुछ अधिक समय की स्मृतियों कों अंकित किया जाता है। स्पष्ट है कि स्मृति के आधार पर किसी विषय या व्यक्ति के सम्बन्ध में लिखी गई साहित्यिक कृति 'संस्मरण' कहलाती है।

'संस्मरण' प्राय: निबन्ध के समान वर्णनात्मक होते हैं किन्तु उनमें कहानी की सजीवता होती है। वस्तुत: 'संस्मरण' को बीती हुई घटनाओं की कहानी ही कहते हैं। व्यक्ति विशेष के जीवन से सम्बन्धित होने के कारण 'संस्मरण' जीवन के भी समीप होते हैं। निजी जीवन से सम्बन्धित संस्मरण आत्मकथा के समान ही प्रतीत होते हैं। किन्तु संस्मरण, आत्मकथा और जीवनी में प्रमुख अन्तर यह है कि आत्मकथा या जीवनी में जीवन के लम्बी अवधि के चित्र होते हैं जबकि संस्मरण में जीवन के कुछ अंशों की झांकी मात्र होती है। फिर भी संस्मरण, जीवनी और आत्मकथा में सम्बन्ध यह है कि 'संस्मरण', जीवनी या आत्मकथा के आधार हैं। अत: स्पष्ट है कि, संस्मरण किसी स्मरण रखने योग्य स्मृति का शब्दांकन है।

'संस्मरण' हिन्दी साहित्य की आधुनिक विधा है। 'संस्मरण' के लिए अंग्रेजी में दो अलग-अलग शब्द प्रचलित हैं। जब कोई अपने से सम्बन्धित संस्मरण लिखता है, तब उसे 'रिमेनिसेसेज' कहा जाता है और जब दूसरे के विषय में लिखा जाता है तो उसे 'मेव्यायर्स' कहते हैं। हिन्दी में दोनों के लिए एक ही शब्द है - संस्मरण। 'संस्मरण' घटना प्रधान होते हैं। ये घटनायें प्राय: सत्य होती हैं तथा वर्णित वस्तु या व्यक्ति के चरित्र का परिचय देती है। हिन्दी गद्य में संस्मरणों का प्रारंभ पाश्चात्य प्रभाव से हुआ है।

हिन्दी के संस्मरण साहित्य में श्रीमती महादेवी वर्मा का महत्वपूर्ण स्थान है। महादेवी जी के 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति रेखायें', और 'पथ के साथी' संस्मरणात्मक शैली में लिखे गये हैं। 'पथ के साथी' में अपने समकालीन साहित्यकारों से सम्बन्धित संस्मरण हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी जी को भी संस्मरण-लेखन के सन्दर्भ में काफी सफलता और लोकप्रियता मिली है। श्री बेनीपुरी द्वारा लिखित 'माटी के मूरत', 'गेहूं और गुलाब' तथा 'मील के पत्थर' साधारण और महान व्यक्तियों से सम्बन्धित संस्मरण हैं। हिन्दी साहित्य संस्मरणों के मामले में आत्मकथा से अधिक धनी है। क्रान्तिकारियों, स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेने वाले व्यक्तित्वों के संस्मरणों से उनके बलिदान और अपने गुलामी के इतिहास की दर्दनाक सच से हमारा साक्षात्कार होता है। क्रान्तिकारी यशपाल, मनमोहन गुप्त, मन्मधनाथ गुप्त, रवीन्द्र नाथ सान्याल आदि के संस्मरण इसी कोटि में गिने जाते हैं। सरदार भगत सिंह की भतीजी वीरेन्द्र सन्धु द्वारा लिखित 'युगद्रष्टा भगत सिंह और उनके पुरखे' नामक संस्मरण से हमें अपने इतिहास, सभ्यता और संस्कृति की झलक मिलती है। डॉ. रामविलास शर्मा द्वारा लिखित महाकवि निराला के जीवन संस्मरण से हिन्दी का संस्मरण साहित्य समृद्ध हुआ है।

'रिपोर्ताज़' हिन्दी साहित्य या आधुनिक गद्य की नवीनतम विधा है। इस विधा का जन्म दूसरे महायुद्ध के समय यूरोप में हुआ था। 'रिपोर्ताज़' शब्द फ्रांसीसी भाषा का है जिसका अर्थ अंग्रेजी में 'रिपोर्ट' के समकक्ष ठहरता है। लेकिन 'रिपोर्ट' और 'रिपोर्ताज' एक ही आधार पर स्थित है। बावजूद इसके, 'रिपोर्ट' और 'रिपोर्ताज' में कुछ अन्तर है। 'रिपोर्ट' लिखने वाला कोई भी संवाददाता या रिपोर्टर अपनी 'रिपोर्ट' में कल्पना या अपनी साहित्यिक प्रतिभा का समावेश नहीं कर सकता। 'रिपोर्ट' में केवल घटना का तथ्यपरक वर्णन करना होता है। लेकिन 'रिपोर्ताज' में ठीक इसके उलट, हम अपनी कल्पना शीलता और साहित्यिक प्रतिभा के धनी

रिपोर्टर या लेखक, एक 'रिपोर्ट' को 'रिपोर्ताज' बनाकर प्रभावोत्पादक एवं भावप्रवण शैली में प्रयोग कर सकता है। ऐसी भावप्रवण अनुभूति की गंभीरता एवं सशक्त अभिव्यक्ति के कारण 'रिपोर्ताज' के दृश्य अपेक्षाकृत और अधिक सजीव एवं स्थाई बन जाते हैं।

रिपोर्ताज़ साहित्य की वह विधा है जिसका क्षेत्र कहानी एवं रिपोर्ट के बीच में स्थित है । रिपोर्ट से घटना का यथातथ्य स्वरूप और कहानी से प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति की शैली को लेकर, एक सुन्दर 'रिपोर्ताज़' लिखा जा सकता है। रिपोर्ताज़ को रिपोर्ट के शुष्क कलेवर में नहीं लिखा जा सकता । 'रिपोर्ताज़' कहानी की भांति पूर्णतः काल्पनिक भी नहीं हो सकता। रिपोर्ताज़ लेखक को, पत्रकार और कलाकार दोनों की भूमिका का निर्वाह करना पड़ता है। रिपोर्ताज़ लेखक को तथ्य और कल्पना में सुन्दर सामंजस्य बैठाना पड़ता है। सत्य एवं कल्पना, वस्तु एवं कला का योग जितना सघन होगा उतने ही सफल रिपोर्ताज़ का निर्माण होगा। सत्य और कल्पना में तादात्म्य बैठाना, एक दुरूह कार्य है। इसीलिए हिन्दी साहित्य में रिपोर्ताज़ लेखन कहानी-साहित्य जैसा विकसित या बहुलता प्राप्त नहीं कर सका।

'रिपोर्ताज़' लेखन को प्रोत्साहित करने का श्रेय, स्वाधीनता पूर्व प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'हंस' को जाता है। इसमें 'समाचार और विचार' शीर्षक से एक विशेष स्तम्भ निर्धारित हुआ और यहीं से रिपोर्ताज़ लेखन को गति मिली तथा इस विधा को साहित्यिक-विधा के रूप में मान्यता भी। बाद में चलकर 'हंस' का यह स्तम्भ, 1944 से 'अपना देश' नामक स्थाई स्तंभ में बदल गया। यह 'रिपोर्ताज़' लेखन की लोकप्रियता और सफलता का परिचायक है। रिपोर्ताज साहित्य के क्षेत्र में रांगेय राघव का नाम अग्रणी है लेकिन शिवदान सिंह चौहान द्वारा लिखित 'मौत के खिलाफ़ जिन्दगी की लडाई' नामक रिपोर्ताज़ सर्वाधिक चर्चित हुआ। नौ पृष्ठों के इस रिपोर्ताज़ में देश की स्वाधीनता पूर्व की दशा, स्वतंत्रता की पुकार, बंगाल की अकाल, गांधी की रिहाई आदि का वर्णन करते हुए, लेखक इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वस्तुतः समाज और जीवन का सजीव चित्रण 'रिपोर्ताज़' के माध्यम से ही हो सकता है। श्री अमृत लाल नागर, डायरी शैली में रिपोर्ताज लिखने में विख्यात हैं। फणीश्वर नाथ रेणु, आंचलिक उपन्यासों के साथ-साथ नवीन शैली के रिपोर्ताज़ लेखन क्षेत्र में भी ख्यात हैं। रेणु जी का 'एकलव्य के नोट्स' सर्वथा नवीन शैली का रिपोर्ताज़ है । इन दिनों मनोहर श्याम जोशी, कमलेश्वर आदी के नाम रिपोर्ताज़ लेखन में अग्रगण्य हैं।

BRAOU

BRAOU

इकाई - 7 : देशरत्न डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद - श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन

7.0 उद्देश्य

7.1 पाठ एवं लेखक परिचय

7.2 मूल पाठ

7.3 सारांश

7.4 समीक्षा

7.5 शब्दार्थ

7.6 अभ्यास

7.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

7.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

7.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

7.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

7.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन की लिखी हुई जीवनी 'देशरत्न डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद' पर प्रकाश डाला गया है । इस जीवनी के अध्ययन से हम :

- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जीवन और व्यक्तित्व को समझ सकेंगे।
- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जीवन के मूल्यांकन के अतिरिक्त उनके विचारों का परिचय भी प्राप्त कर सकेंगे ।
- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के समय की राजनैतिक गतिविधियों का परिचय प्राप्त करेंगे।

BRAOU

7.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

साहित्य में महा पुरुषों की जीवनियों का विशिष्ट स्थान होता है । विशिष्ट व्यक्तियों की जीवनियों के माध्यम से उन व्यक्तियों के जीवन की विशिष्टताओं के साथ उनके व्यक्तित्व के विकास का क्रमगत परिचय पाठकों को मिलता है। महान व्यक्तियों का जीवन समकालीन ही नहीं भविष्य की पीढियों को भी प्रभावित करता है और उनके लिए पथ-प्रदर्शन करता है। प्रस्तुत पाठ में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जीवन पर श्री. परुषोत्तम दास टण्डन ने प्रकाश डाला है। उन्होंने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के स्वभाव के भोलेपन से लेकर उनकी सरलता, सहजता, विद्वत्ता, उनके त्याग का गुण आदि का विशेष रूप में रेखांकन किया है। साथ ही टण्डन जी ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी के बारे में अन्य विद्वानों के द्वारा कही गयी बातों का उदाहरण भी दिया है।

(आ) लेखक परिचय

श्री. पुरुषोत्तम दास टण्डन जी का जन्म 11 अगस्त सन् 1882 में प्रयाग में हुआ था। इलाहाबाद में शिक्षा

ग्रहण करने के बाद एल.एल बी होकर वकालत करने लगे फिर सन् 1930 में आपने किसान संघ की स्थापना की। टण्डन जी ने लाला लजपतराय के द्वारा स्थापित लोक - सेवामण्डल के माध्यम से पंजाब में राजनैतिक गतिविधियों का प्रारंभ किया था और हिन्दी का प्रचार किया था। सन् 1923 से 1950 तक उत्तर प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष रहे। सन् 1950 - 51 में अखिल भारतीय काँग्रेस के प्रधान निर्वाचित हुए।

आपने भाषणों, लेखों और पत्रों के माध्यम से हिन्दी की सेवा की। आप जीवन भर राष्ट्रभाषा हिन्दी की निस्वार्थ सेवा करते रहे। वे भारतरत्न उपाधि से विभूषित हुए। सन् 1962 में आपका देहावसान हो गया था । आपकी सेवा और त्याग के कारण आपको जनता राजर्षि कहने लगी। हिन्दी प्रेमी समाज में टण्डन जी का विशिष्ट स्थान है। देश की स्वतंत्रता के बाद हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्थापित करने में आप की सेवा अविस्मरणीय है।

7.2 मूल पाठ

सन् 1935 का वर्ष था। इलाहाबाद क्रिश्चियन कालेज में अपना कृश शरीर साधारण वस्त्रों से आच्छादित किये एक व्यक्ति छात्रों को ईमानदारी और रचनात्मक कार्य का महत्व समझा रहा था। उसके कृषक जैसे मुख-मण्डल पर दो विशाल नेत्र चमक रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था मानों वे नेत्र हमारे हृदय के भीतर झांक रहे हो। उसकी गम्भीर भाषण शैली सभी के हृदय में यह विश्वास उत्पन्न कर रही थी कि वह जो कुछ कहता है उसे अपने जीवन में कार्यान्वित भी करता है। यह कोई साधारण व्यक्ति नहीं वरन् देशरत्न डॉ. राजेन्द्र प्रसाद थे । इस महान एकनिष्ठ गांधीवादी के लिये भारत के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे अपार श्रद्धा और सम्मान है। वे अत्यंत विनम्र है और कभी-कभी तो उनकी यह विनम्रता लोगों को उलझन मे डाल देती है। प्राय : लोग यह भी कहते देखे जाते हैं कि यह ढीले व्यक्ति है और सरलतापूर्वक दूसरों से प्रभावित हो जाते हैं। यह सत्य है कि झगड़ा करना उनके वश का नहीं और वे दूसरों पर अपनी सम्मति लादना भी नहीं चाहते, परन्तु यह कहना कि वे किसी बात को बिना सोचे समझे मान लेते हैं, असत्य है। हाल ही में उनके एक मित्र ने कहा कि राजेन्द्र बाबू शक्ति नहीं लगाते और जो कुछ कहते अथवा करते हैं उसको स्वीकार कर लेते हैं। सम्भवत: किसी सीमा तक यह कथन सत्य हो, किन्तु इसमें सभी अधिकांशत: एकमत होंगे कि यदि कभी किन्हीं बातों पर उनका मतभेद होते हुए भी उनको मान लेते हैं तो वे ऐसा अनुशासन सुदृढ रखने के उद्देश्य से करते हैं।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केवल एक राजनीतिज्ञ ही नहीं वरन् एक प्रकाण्ड विद्वान भी हैं। बाल्यावस्था से ही उनकी साहित्य तथा अन्य विषयों के प्रति प्रगाढ़ रुचि रही है और उन पर उनका पूर्ण अधिकार है। वे कई भाषाएँ जानते हैं और सरलता-पूर्वक उनमें लिख-बोल सकते हैं। हिन्दी में उनकी आत्मकथा पढ़ते समय उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की गुरुता की झलक मिलती है। उनकी भाषा सरल और सुस्पष्ट है तथा विचारों की अभिव्यक्ति में ईमानदारी है। सरदार पटेल ने इस पुस्तक के विषय में लिखा था कि उनकी आत्मकथा के प्रत्येक पृष्ठ पर राजेन्द्रबाबू की सरलता और विनम्रता की स्पष्ट छाप है। उनकी आत्मकथा भारतीय जन-आन्दोलन के गत 30 वर्षों का इतिहास है।

बोध प्रश्न : 1. सरदार पटेल ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आत्मकथा के बारे मे क्या लिखा था ?

.....

.....

.....

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद स्वभावत: झेपू हैं और उन्हे किसी पर क्रोध-नहीं आ सकता। उन्होंने अपनी आत्मकथा में स्वयं लिखा है कि मैं बचपन ही से दब्बू रहा हूँ और किसी बड़े मामले में मैं तुरंत कोई फ़ैसला नहीं कर पाता। जब गोखले ने राजेन्द्र प्रसाद को भारत सेवा मण्डल (सर्वेण्ट्स आफ़ इण्डिया सोसायटी) में सम्मिलित होने के लिये लिखा तो

BRAOU

वे इसके लिये तुरन्त उद्यत हो गये परन्तु बड़े भाई की सम्मति की उपेक्षा करने की न तो उनकी इच्छा थी और न तो साहस ही था, तथापि उन्होंने अपने भाई को एक अत्यन्त विनम्रतापूर्ण पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने ''भारत सेवक'' मण्डल में सम्मिलित होने की अनुमति देने की प्रार्थना की जिससे उन्हें देश-सेवा का पूरा अवसर मिल सके। इस पत्र से उनके महान व्यक्तित्व का पता चलता है। उन्होंने लिखा भाई साहब, भावुक होने के कारण आपके सामने बात करने की मेरी हिम्मत नहीं। आपको कठिनाई और परेशानी में डालकर जाना कृतघ्नता होगी। परन्तु 30 करोड़ जनता के लिये मैं कुछ त्याग करना चाहता हूँ। श्री गोखले की संस्था में सम्मिलित होकर रूप से मुझे कोई त्याग नहीं करना पड़ेगा। मुझको ऐसी शिक्षा मिली है कि मैं जिस भी परिस्थिति में रहूँ अपने को उसीके अनुकूल बना सकता हूँ। मेरा रहन-सहन भी सरल है और इसीलिये मुझे किसी विशेष सुविधा की आवश्यकता नहीं। जो कुछ भी मुझे संस्था से मिलेगा वही मेरे लिये पर्याप्त होगा। परन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि आपको त्याग नहीं करना पड़ेगा। आपको बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं और एक क्षण में उन पर पानी फिर जाएगा। परन्तु इस क्षणभंगुर संसार में धन, पद और सम्मान सभी नष्ट हो जाते हैं जितना ही धन बढ़ता है, उतनी ही आवश्यकता बढ़ती जाती है, यद्यपि लोग कह सकते हैं कि उनको धन से सन्तोष मिलता है तथापि जिन्हें थोड़ा बहुत भी ज्ञान है, वह जानते हैं कि संतोष हृदय की वस्तु है, बाहर से नहीं प्राप्त होती। वह करोड़पति की अपेक्षा एक गरीब आदमी अपने थोड़े पैसे से अधिक संतुष्ट रहता है। ऐसी स्थिति में हमें गरीबों से घृणा नहीं करनी चाहिए। विश्व के महान व्यक्ति सबसे गरीब रहे हैं। यद्यपि आरंभ में लोगों ने उन्हें यातनाएँ दीं और उनको घृणा की दृष्टि से देखा। परन्तु हंसी उड़ानेवाले और यातना देनेवाले धूल में मिल गये, उनका कोई अस्तित्व नहीं, उनकी कोई बात भी नहीं करता, परन्तु जिन लोगों ने यातनाएँ भोगीं और घृणा के पात्र बने, वे करोडों लोगों के मन और ध्यान में बसते हैं। यदि जीवन की मेरी कुछ भी आकांक्षा है तो यह है कि मैं देश की सेवा में लगूं। मुझ में मातृभूमि की सेवा के अतिरिक्त कोई भी महत्वाकाँक्षा नहीं हैं। कौन राजा अथवा साधारण व्यक्ति है जो गोखले- सा प्रभावशाली है अथवा उसको उनका-सा ऊँचा दर्जा और सम्मान मिला है। फिर भी क्या वे गरीब व्यक्ति नहीं है? यह पत्र इस बात का प्रमाण है कि बाल्यावस्था से ही डॉ. राजेन्द्र प्रसाद में अपनी मातृभूमि की सेवा करने की उत्कट अभिलाषा थी और उन्होंने इसे सत्य करके दिखा दिया है। आपके भाई इस प्रार्थना को स्वीकार करने में असमर्थ रहे और एक छोटे भाई की भांति आपने अपने बड़े भाई के आदेश को शिरोधार्य किया और उक्त संस्था में सम्मिलित होने के लिये पूना नहीं गये।

बोध प्रश्न : 2. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के बड़े भाई ने क्या डां राजेन्द्र प्रसाद के अनुरोध को स्वीकार किया था ?

.....

.....

.....

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का जन्म 3 दिसम्बर सन् 1995 में हुआ था। आपके पिता का नाम मुंशी महादेव प्रसाद था, वे एक जमींदार थे। राजेन्द्र बाबू अपने माता-पिता के पांचवे और सबसे छोटे लड़के थे। आप बहुत ऊँचे कायस्थ वंश में उत्पन्न हुए हैं। उन दिनों उनके गांव में यह प्रसिद्ध था कि जो मदिरापान करेगा वह कोढ़ी हो जाएगा। राजेन्द्र बाबू ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि उनके परिवार के किसी सदस्य ने कभी मद्यपान नहीं किया और अब तक इस परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है। आप सन् 1893 मे छपरा के स्कूल मे भर्ती किये गये और सन् 1902 में कलकत्ता विश्वविद्यालय की एन्ट्रेन्स परीक्षा में सर्व प्रथम रहे। आप सर्वप्रथम बिहारी छात्र थे जिसे यह विशिष्ट सफलता मिली। बिहार की तत्कालीन प्रमुख मासिक पत्रिका ''इण्डियन रिव्यू'' ने राजेन्द्र बाबू की प्रतिभा से प्रभावित होकर लिखा, ''तरुण राजेन्द्र हर प्रकार से एक प्रतिभाशाली छात्र है । आशा है वह विश्वविद्यलाय में अपनी पूर्ण सफलता के स्तर को स्थिर रख सकेगा । और एक दिन आवेगा जब वह प्रान्त के हाईकोर्ट में उचित पद प्राप्त करेगा।'' यह आशा अवश्य पूर्ण होती यदि राजेन्द्र बाबू गाँधीजी के प्रभाव में राजनीतिक आन्दोलन में न कूदते। वकालत से उनकी आय बहुत अच्छी थी और सारे वकीलों के हृदय में

उनके प्रति बहुत अधिक सम्मान था । उन्होंने अपने निर्मल चरित्र और ईमानदारी से सभी को प्रभावित कर रखा था । उन्होंने बहुत धन कमाया परन्तु अपनी आय की अधिकांश राशि वे गरीबों, दुखियों और लोकहित के कार्यों को आर्थिक सहायता देने में व्यय कर देते थे । जब वकालत छोड़कर वे असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हुए तब उनके पास बैंक में केवल 15 रुपये शेष रह गये थे । सन् 1906 में आपने बी.ए. पास करके एम.ए में अंग्रेजी ली और प्रत्येक परीक्षा में सर्वप्रथम रहे । वकालत आरंभ करने से पूर्व वे मुजफ्फरपुर में कुछ समय तक प्रोफेसर भी रहे ।

बोध प्रश्न: 3. राजेन्द्र प्रसाद के गाँव में मदिरा पान के बारे में क्या कहा जाता था ?

.....

.....

.....

राजेन्द्र बाबू जब पाचंवीं कक्षा में थे तभी 12 वर्ष की अल्प आयु में उनका विवाह कर दिया गया । उस समय उन्हें विवाह के वास्तविक महत्व का कुछ भी ज्ञान नहीं था, जिसका उल्लेख उन्होंने अपनी आत्मकथा में किया है ।

चम्पारन-आन्दोलन ने बिहार और राजेन्द्र बाबू का नाम अमर कर दिया है । ब्रिटिश अत्याचारों से त्रस्त नील की खेती करने वालों की ओर से गांधी जी के नेतृत्व में चम्पारन में आन्दोलन प्रारंभ हुआ । आन्दोलन सफल रहा और सरकार को घुटने टेकने पड़े । जनता को विजय मिली और गाँधीजी को इसका श्रेय मिला। राजेन्द्र प्रसाद जो आगे चलकर गाँधीजी के प्रमुख सहयोगी बने । स्वर्गीय श्री सत्यमूर्ति ने राजेन्द्र बाबू की प्रशंसा में लिखा था कि भारत में उनकी कोटि के बहुत कम व्यक्ति हैं और यदि भारत के राजनीतिक जीवन का दिव्य उत्तरधिकारी आवश्यक समझा जाए तो मेरा विचार है कि महात्मा गांधी का उत्तराधिकारी अगर कोई बन सकता है तो वह राजेन्द्र बाबू के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति नहीं हो सकता ।

राजेन्द्र बाबू कांग्रेस के अध्यक्ष रह चुके हैं और उसके जनरल सेक्रेटरी के पद पर भी काम कर चुके हैं। जब आप कलकत्ता में पढ़ते थे तब वे उस समय सन् 1906 ईसवी के 22 वे कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित हुए थे । राजेन्द्र बाबू ने स्वयंसेवक के रूप में भी उक्त अधिवेशन का कार्य किया। सन् 1934 में सर्व सम्मति से आप कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित किये गये । त्रिपुरा-कांग्रेस के पश्चात् सभी की आँखे आपकी ही ओर लगी हुई थी और एक लम्बे आवेशपूर्ण वाद-विवाद के अनन्तर आप कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। आप कांग्रेस महासमिति के सन् 1912 से और कार्यसमिति के सन् 1922 से निरन्तर सदस्य रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आप भारत सरकार के खाद्य-मंत्री बनाये गये । इस पद पर आपने सफलतापूर्वक कार्य किया और अपने समस्त सहयोगियों को प्रभावित किया । इस समय आप भारत के राष्ट्रपति हैं और आपको सभी का विश्वास और सम्मान प्राप्त हैं। राजेन्द्र बाबू को देखकर बहुत कम व्यक्तियों को यह विश्वास होगा कि वह विदेश-भ्रमण भी कर चुके हैं। वस्ताविकता यह है कि उन्होंने विदेशों का बहुत भ्रमण किया है। वह जर्मनी, इटली इत्यादि बहुत देशों की यात्र कर चुके हैं । विदेश यात्रा-काल में एक शान्तिवादी सम्मेलन में राजेन्द्र बाबू ने अहिंसात्मक प्रतिरोध के विषय में भातीय दृष्टिकोण रखना चाहा परन्तु फासिस्ट गुण्डों ने सम्मेलन की बैठक में मारपीट मचा दी, जिसमें राजेन्द्र बाबू को गरही चोटे आईं ।

बोध प्रश्न : 4. राजेन्द्र बाबू का कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में किस वर्ष निर्वाचन हुआ था ?

.....

.....

.....

राजेन्द्र बाबू महान संघटन कर्ता हैं । संघटन करने की उनकी शक्ति की परीक्षा बिहार-भूकम्प के समय हुई । कारागार में जब आप अत्यधिक अस्वस्थ हो गये तो उपचार करने के लिये मुक्त कर दिये गये । भूकम्प ने बिहार को विध्वंस कर डाला था । पीड़ितों के करुण क्रंदनों से आप विचलित हो उठे और अपने गिरे हुए स्वास्थ्य की ओर बिना ध्यान दिये हुए ही तन-मन-धन से सहायता-कार्य में जुट गये और भूकम्प-पीड़ितों की जो अनुपम सेवा की, उसकी सारे देश में प्रशंसा हुई । पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में राजेन्द्र बाबू के विषय में लिखा है, देखने में वे असली बिहारी किसान जान पड़ते हैं और जब तक उनकी सरलतापूर्ण आंखे और ईमानदारी से भरे हुए चेहरे पर ध्यान न दीजिए जब तक पहली मुलाकात में वे प्रभावित नहीं करते । कोई भी व्यक्ति उनकी आखों और चेहरे को नहीं भूल सकता उनमें होकर सत्य झाँकता है, इसमें संदेह का स्थान नहीं । आधुनिक दुनियादारी के हिसाब से वे एक देहाती, कुछ संकुचित दृष्टिकोण वाले प्रतीत होते हैं, परन्तु उनकी असाधारण प्रतिभा, उनकी निश्छल बात, उनकी कर्मठता और भारतीय स्वतंत्रता के प्रति उनकी लगन ऐसे गुण हैं, जिनके कारण केवल उनके प्रान्त में ही नहीं, बल्कि समस्त देश में लोग उनका सम्मान करते हैं । किसी भी राज्य में किसी को नेतृत्व का ऐसा भारी गौरव नहीं प्राप्त है जैसा कि बिहार मे राजेंद्र बाबू को मिला है। राजेंद्र बाबू के अतिरिक्त ऐसे बहुत ही कम व्यक्ति हैं जिनके बारे में यह कहा जा सकता है कि गांधी जी के संदेश को उन्होंने पूर्ण रूप से अपनाया है ।

बोध प्रश्न : 5. नेहरू की दृष्टि से डॉ. राजेंद्र बाबू कैसे लगते थे ?

.....

.....

.....

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद बहुत अच्छे साथी हैं । उनके साथ रहकर आप सदैव ईमानदारी से भरी सहायता और सहयोग प्राप्त कर सकते हैं । उनके मुख पर कुछ ऐसी आध्यात्मिक कान्ति है जो प्रेरणा और सहायता प्रदान करती है । वह कभी भी पदों के इच्छुक नहीं रहे, परन्तु ऊँचे पद उनके चरणो में गिरते हैं और वे कर्तव्य समझकर उनको संभालते हैं । वे अत्यंत उदार हृदय और क्षमाशील हैं और विश्वास की ज्योति सदैव उनके हृदय में जलती रहती है । उनके स्वभाव में ऊष्णता और तीक्षणता का नाम एवं निशान नहीं । उन्होंने अपने गुरु महात्मा का पूर्ण रूप से अनुसरण किया है और जब कभी उनसे मतभेद भी हुआ, तब भी राजेन्द्र बाबू ने उनकी बात को स्वीकार किया, क्योंकि आपको यह विश्वास था कि बापू को गलती न करने की आदत है । आपने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि मुझे विश्वास हो गया था कि बापू बहुत ही दूरदर्शी हैं । इसीलिये मैंने अपने दृष्टिकोण को उनके सामने रखना नियम बना लिया है और यदि उन्होंने उसको मान लिया तो ठीक है अन्यथा मैं ही उनकी सलाह को स्वीकार कर लेता हूँ ।

स्वर्गीया श्रीमती नायुडू ने डॉ. प्रसाद के विषय में लिखा था कि "बाबू राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व के बारे में स्वर्ण लेखनी को मधु में डुबो कर लिखना होगा । उनकी असाधारण प्रतिभा उनके स्वभाव का अनोखा माधुर्य, उनके चरित्र की विशालता और आत्मत्याग के उनके महान गुणों ने संभवत: उन्हें हमारे सभी नेताओं से अधिक व्यापक और व्यक्तिगत रूप से प्रिय बना दिया है । सच्ची श्रद्धांजलि के रूप में मैं इससे अधिक क्या कह सकती हूँ कि गांधी जी के निकटतम शिष्यों में उनका वही स्थान है जो ईसामसीह के निकट सेंट जान का था ।"

बोध प्रश्न : 6. श्रीमती नायुडू के अनुसार गांधी जी के पास राजेन्द्र बाबू का क्या स्थान है ?

.....

.....

.....

BRAOU

7.3 सारांश

डा. राजेन्द्र प्रसाद का जन्म 3 दिसंबर सन् 1885 में हुआ था। उनके पिता मुंशी सहादेव प्रसाद एक जमींदार थे। राजेन्द्र प्रसाद ने सन् 1893 में छपरा के स्कूल में अध्ययन प्रारंभ किया। सन् 1902 में कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रवेश-परीक्षा में सर्व प्रथम रहे। आप बिहार के प्रथम विशिष्ट छात्र थे जिनको यह सफलता मिली। सन् 1906 में आपने बी.ए. पास करके एम.ए. में अँग्रेजी ली। हर परीक्षा में वे सर्वप्रथम रहे। अध्ययन के उपरान्त वे वकील बने । उनकी आमदनी भी अच्छी थी। अन्य वकीलों के मन में उनके प्रति आदर और सम्मान का भाव था। अपनी आय के अधिकांश भाग को वे गरीबों, दुखियों और लोकहित के कार्यों में खर्च करते थे।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद गाँधी जी के प्रभाव में आकर वकालत छोड़कर असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हुए। चम्पारन-आन्दोलन के समय राजेन्द्र प्रसाद का नाम विख्यात हो गया था। गाँधी जी के नेतृत्व में संपन्न इस आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया था। इस आन्दोलन से अँग्रेजी सरकार को घुटने टेकने पड़े। जनता को विजय मिली।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद काँग्रेस के अध्यक्ष रह चुके हैं। सन् 1934 में वे सर्व सम्मति से काँग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित किये गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आपने भारत सरकार के खाद्य मंत्री के रूप में जनता की सेवा की । इसके बाद उनको भारत के राष्ट्रपति होने का गौरव प्राप्त हुआ था। उन्होंने कई देशों की यात्रा की। जर्मनी, इटली आदि देशों की उनकी यात्रा सफल रही। राजेन्द्र बाबू एक महान संघटन कर्ता के रूप में जाने जाते हैं। बिहार भूकम्प के समय उन्होंने अपनी पूरी शक्ति का परिचय लोगों को दिया था।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद धन और पद की अपेक्षा सरल, सीधा और तत्यागमय जीवन बिताना पसंद करते थे । राजेन्द्र बाबू बहुत अच्छे साथी हैं। उनके साथ रहकर कोई भी व्यक्ति सहायता प्राप्त कर सकता है। वे उदार और क्षमाशील गुणों से युक्त थे। वे बहुत ही सरल स्वभाव के हैं। अपने गुरु महात्माओं की बात सहज ही वे स्वीकार करते थे। उनमें कहीं भी ऊष्णता और तीक्षणता का नाम एवं निशान नहीं दिखते।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का व्यक्तित्व आसाधारण प्रतिभा से युक्त दिखाई देता है। उनके चरित्र की विशालता और आत्मत्याग के उनके महान गुण सभी नेताओं के लिए अनुकरणीय बन जाते हैं।

7.4 समीक्षा

प्रस्तुत पाठ में राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व और आचरण की विशेषताओं को प्रस्तुत किया है। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद एक प्रकाण्ड विद्वान और राजनीतिज्ञ के रूप में हमारे सामने आते हैं। महापुरुषों के व्यक्तित्व लोगों के लिए अनुकरणीय होते हैं।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जीवन में कदम-कदम पर सरलता और विनम्रता दिखाई देती है । उनके जीवन के अध्ययन से भारतीय जन-आन्दोलन के 30-40 वर्षों का इतिहास सामने आता है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद गाँधीवाद की उच्च परंपराओं को बनाये रखने का प्रयास जीवन भर करते रहे । अपने जीवन काल में उन्होंने अपने निर्मल चरित्र और ईमानदारी से सभी को प्रभावित कर रखा था।

एक संघटन कर्ता के रूप में और एक अच्छे साथी के रूप में बाबू राजेन्द्र प्रसाद का व्यक्तित्व अनुपम दिखाई देता है। आप सदैव ईमानदारी से भरी सहायता करते थे। उनका व्यक्तित्व अनुकरणीय ही नहीं युवकों के लिए प्रेरणादायक भी है। उन्होंने कई पदों को संभाला । वे पदों को अपना कर्तव्य समझकर संभालते थे। उनका चरित्र कई नेताओं को प्रेरणादायक रहा। इसीलिए स्वर्गीया श्रीमती सरोजिनी नायुडू ने उनके बारे में लिखा था कि "गाँधी जी के निकटतम शिष्यों में उनका वही स्थान हैं जो ईसा मसीह के निकट सेंट जान का था।" परिवार, समाज और संसार के माया-मोह में सक्रिय भाग लेकर भी उसमें निर्लिप्त रहने वाले डॉ. राजेन्द्र प्रसाद राजा जनक के समान एक महान संत थे।

BRAOU

7.5 शब्दार्थ

झांकना	–	आड से बाहर की वस्तु को देखना
कृश	–	दुबला
आच्छादित	–	ढका हुआ
कार्यान्वित	–	कार्य में लाना
एकनिष्ठ	–	एकाग्रता से किसी कार्य में लगा रहने वाला
प्रकाण्ड विद्वान	–	बड़ा विद्वान
गुरुता	–	बड़प्पन
झेंपु	–	शर्मीले
उद्यत	–	तैयार
यातना	–	कष्ट
शिरोधार्य करना	–	स्वीकार करना
दूरदर्शी	–	दूर-दूर तक अर्थात् भविष्य की बातें सोचने वाला

7.6 अभ्यास

7.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

2) "डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का जीवन भारतीय जन आंदोलन के इतिहास को हमारे सामने रखता है" – स्पष्ट कीजिए।

3) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का चरित्र क्यों अनुकरणीय है ? स्पष्ट कीजिए ।

7.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. स्वर्गीया श्रीमती नायुडू ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के बारे में क्या लिखा था ?
2. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के देश सेवा कार्यों का मूल्यांकन कीजिए।
3. स्पष्ट कीजिए कि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद महान विद्वान ही नहीं राजनीतिज्ञ भी थे ।

7.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

7.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : डॉ. राजेंद्र प्रसाद के सरल स्वभाव का विवेचन कीजिए।

उत्तर : भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का जन्म 3 दिसंबर सन 1885 में हुआ था। उनके पिता मुंशी महादेव प्रसाद एक जमींदार थे। बचपन से ही राजेन्द्र प्रसाद को ऐश्वर्य एंव सम्मान प्राप्त हुआ था। वे एक अच्छे प्रतिभाशाली छात्र थे । पढाई समाप्त करने के बाद वे कुछ समय तक प्रोफेसर रहे और फिर उसको छोडकर उन्होंने वकालत आंरभ किया था । वकालत करते समय सारे वकीलों के हृदय पर उन्होंने अपनी छाप छोड़ी। अन्य वकील उनका सम्मान करते थे । उन्होंने अपने निर्मल चरित्र और ईमानदारी से सब को प्रभावित किया था।

BPAOU

वे अपनी आय का अधिकांश भाग गरीबों, दुखियों और लोकहित के कार्यों को आर्थिक सहायता देने में खर्च करते थे।

जब गोखले ने राजेन्द्र प्रसाद को भारत सेवा मण्डल में सम्मिलित होने के लिए पत्र लिखा तब वे तैयार हो गये थे । लेकिन बड़े भाई की सम्मति पाकर ही वे इस मण्डल में सम्मिलित होना चाहते थे । इसलिए उन्होंने अपने बडे भाई को लिखा था कि मैं 30 करोड जनता के लिए कुछ त्याग करना चाहता हूँ। यह पत्र इस बात का प्रमाण है कि बचपन से भी डॉ. राजेद्र प्रसाद में मात्रु भूमि की सेवा करने की इच्छा है। लेकिन जब बड़े भाई ने अपनी सहमति नहीं दी तो एक छोटे भाई की भाँति अपने बड़े भाई के आदेश को शिरोधार्य किया था।

अपने जीवन काल में राजेन्द्र बाबू को कई उँचे से उँचे पद मिले। कई महान व्यक्तियों से उनका संबंध था। वे गाँधी जी के प्रमख सहयोगी रहे। काँग्रेस के अध्यक्ष बने। देश के राष्ट्रपति बने। फिर भी उनमें किसी प्रकार का अहंकार नहीं दिखाई देता। वे सब से मिल कर कार्य करते थे। उनकी सरलता की प्रशंसा करते हुए पं. जवहरलाल नेहरू ने लिखा था "देखने में वे असली बिहारी किसान जान पड़ते हैं और जब तक उनकी सरलता पूर्ण आँखे और ईमानदारी से भरे चेहरे पर ध्यान न दीजिए तब तक पहली मुलाकात में वे प्रभावित नहीं करते। कोई भी व्यक्ति उनकी आँखों और चेहरे को भूल नहीं सकता उनमें होकर सत्य झाँकता है। .....केवल उनके प्रांत में ही नहीं बल्कि समस्त देश में लोग उनका सम्मान करते हैं।"

7.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने अपने बड़े भाई के नाम पर क्यों पत्र लिखा?

उत्तर : श्री गोखले जी ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को भारत सेवा मण्डल में सम्मिलित होने के लिए लिखा था। राजेन्द्र प्रसाद को उस सेवा मण्डल में जाने की इच्छा थी। लेकिन परिवार की मर्यादाओं का उल्लंघन करकें वे सेवा मण्डल में सम्मिलित होने केलिए लिखा था। राजेन्द्र प्रसाद को जाने की इच्छा थी। फिर परिवार की मर्यादाओं का उल्लंघन करके वे सेवा मण्डल में सम्मिलित होना नहीं चाहते थे। इसलिए राजेन्द्र प्रसाद ने अपने बड़े भाई के नाम पर उनकी स्वीकृति माँगते हुए पत्र लिखा। इस पत्र में राजेन्द्र बाबू ने अपने भाई से कहा कि मैं भारत की जनता की सेवा करना चाहता हूँ और इसके लिए कुछ त्याग करना चाहता हूँ। मुझ में मात्रु भूमि की सेवा के अतिरिक्त कोई भी महत्वाकाँक्षा नहीं है। मेरा रहन-सहन भी सरल है। इसलिए मुझे किसी विशेष सुविधा की आवश्यकता नहीं है। अपने पत्र में राजेन्द्र बाबू ने यह कहा था कि जीवन में सुख और संतोष धन नहीं अपितु अपने उच्च आदर्शों से प्राप्त गौरव स्थायी होता है। राजेन्द्र बाबू के इस पत्र के माध्यम से उनके नाम मन की उत्कंट अभिलाषा स्पष्ट दिखाई देती है।

BRAOU

बोध प्रश्नों के उत्तर

1) सरदार पटेल ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आत्मकथा के बारे में लिखा था कि वह भारतीय जन आन्दोलन के पिछले 30 वर्षों का इतहिास है।

2) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के बडे भाई ने उनके अनुरोध को स्वीकार नहीं किया था।

3) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के गाँव में यह प्रसिद्ध था कि जो मदिरापान करेगा वह कोढ़ी हो जाएगा।

4) सन् 1934 में सर्व सम्मति से राजेन्द्र बाबू काँग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित किये गये।

5. श्रीमती नायुडू के अनुसार गाँधी जी के निकटम शिष्यों में राजेन्द्र प्रसाद का वही स्थान है जो ईसा मसीह के निकट सेंट जान का था।

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. आत्मकथा - डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

इकाई - 8 : तीन पौण्ड का कर - महात्मा गाँधी

8.0 उद्देश्य

8.1 पाठ एवं लेखक परिचय

8.2 मूल पाठ

8.3 सारांश

8.4 समीक्षा

8.5 शब्दार्थ

8.6 अभ्यास

8.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

8.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

8.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

8.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

8.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

8.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.0 उद्देश्य

महात्मा गाँधी भारत के राष्ट्रपिता हैं। भारत को अंग्रेजों से स्वतंत्रता दिलाने में गाँधीजी की प्रमुख भूमिका रही है। मानसिक रूप से शक्तिशाली गाँधीजी की शक्ति को जानने का प्रमुख साधन गाँधीजी की आत्मकथा या 'सत्य के प्रयोग' है। पाठकों को गाँधीजी की शक्ति से परिचित कराने का एक प्रयास 'तीन पौण्ड का कर' है जिसमें गाँधीजी ने अपने देश से बाहर मजदूरी करनेवाले अपने देशवासियों का उद्धार सत्य के बल पर किया है इसका दिग्दर्शन है। इस पाठ से आप जान सकेंगे कि -

- सन् 1860 में नेटाल में हिन्दुस्तानी मजदूरों की स्थिति कैसी थी?
- गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों पर 25 पौण्ड का वार्षिक कर लगाने का क्या कारण था?
- नेटाल सरकार द्वारा लगाये गये इस कर को हटाने का प्रयास गाँधीजी ने कैसे किया?

BRAOU

8.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

सन् 1860 में गोरों ने अपने हित के लिए हिन्दुस्तानी मजदूरों के सामने यह लालच रखा कि पाँच साल तक मज़दूरी करने के बाद उन्हें स्वतंत्र रीति से नेटाल में बसने की छूट रहेगी। उनको जमीन का मालिक बनने का पूरा अधिकार भी दिया गया। हिन्दुस्तानी मज़दूरों ने अनेक उत्तम तरकारियाँ पैदा कीं। हिन्दुस्तान से आम लाकर लगाए और वे व्यापारी बन गए। हिन्दुस्तानियों के व्यापारी बनते ही गोरे व्यापारियों को धक्का लगा। गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों से उनके मताधिकार छीनने के लिए कुछ सुझाव रखे गये। गाँधीजी के प्रयत्नों से गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों की समस्या को काँग्रेस में रखा गया और अंत में 25 पौण्ड से कर केवल 3 पौण्ड का रह गया। अंत में सत्य की विजय हुई। हिन्दुस्तानियों की तपस्या में सत्य मूर्तिमान हुआ।

(आ) लेखक-परिचय

महात्मा गाँधी का जन्म सन् 1925 की भादों सुदी बरस के दिन अर्थात् 2 अक्तूबर सन् 1869 को पोरबंदर में हुआ था। उनके पिता का नाम करमचंद और माता का नाम पुतली बाई था। महात्मा गाँधी का पूरा नाम मोहनदास करमचंद गाँधी था। महात्मा गाँधी ने विलायत जाकर बारिस्टर की उपाधि प्राप्त की। वहाँ से वे भारत लौटे। इसके बाद आफ्रिका गए और वहाँ पर गाँधीजी ने हिन्दुस्तानियों के हित के लिए जो कार्य किए उससे हिन्दुस्तान में उनके भारत लौटने से पहले ही उनकी कीर्ति फैल गई। भारत की राजनीति के रंगमंच पर सन् 1920 में गाँधी जी का पदार्पण हुआ। गाँधी जी ने सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह आदि रचनात्मक कार्यक्रमों से हिन्दुस्तान को स्वतंत्रता दिलवाई। हिन्दुस्तान की जनता ने उन्हें महात्मा और बापू (राष्ट्रपिता) उपाधि से सम्मानित किया।

8.2 मूल पाठ

बालासुंदरम् के किस्से ने गिरमिटिया हिंदुस्तानियों के साथ मेरा संबंध जोड़ दिया। परंतु उन पर कर लगाने का जो आंदोलन चला, उसके परिणाम-स्वरूप मुझे उनकी स्थिति का गहरा अध्ययन करना पड़ा।

सन् 1894 के साल में गिरमिटिया हिंदुस्तानियों पर हर साल 25 पौण्ड का अर्थात् 375 रुपयों का कर लगाने के कानून का मसविदा नेटाल की सरकार ने तैयार किया। उस मसविदे को पढ़कर मैं तो दिङ्मूढ ही हो गया। मैंने उसे स्थानीय काँग्रेस के सामने रखा। इस मामले में जो आंदोलन करना उचित था, वह करने का एक प्रस्ताव काँग्रेस ने पास किया।

लगभग सन् 1860 में जब नेटाल में बसे हुए गोरों ने देखा कि वहाँ ईख की फसल अच्छी हो सकती है, तो उन्होंने मजदूरों की खोज शुरू की। मजदूर न मिलें, तो न ईख पैदा हो सकती थी और न चीनी ही बन सकती थी। नेटाल के हब्शी यह मजदूर नहीं कर सकते थे। इसलिए नेटाल-निवासी गोरों ने भारत सरकार के साथ विचार-विमर्श करके हिंदुस्तानी मज़दूरों को नेटाल जाने देने की अनुमति प्राप्त की।

बोध प्रश्न : 1. नेटाल में किस चीज की फसल अच्छी हो सकती थी और कौन इसकी अच्छी मज़दूरी कर सकते थे ?

.....

.....

.....

BRAOU

उन्हें यह लालच दिया गया कि पाँच साल तक मज़दूरी करने का बंधन रहेगा और पाँच साल के बाद उन्हें स्वतंत्र रीति से नेटाल में बसने की छूट रहेगी। उनको जमीन का मालिक बनने का पूरा अधिकार भी दिया गया था। उस समय गोरे चाहते थे कि हिंदुस्तानी मज़दूर अपने पाँच साल पूरे होने के बाद जमीन जोतें और अपने उद्यम का लाभ नेटाल को दें।

हिंदुस्तानी मज़दूरों ने यह लाभ आशा से अधिक दिया। साग-सब्जी खूब बोयी। हिंदुस्तान की अनेक उत्तम तरकारियाँ पैदा कीं। जो साग-सब्जियाँ वहाँ पहले से पैद होती थीं उनके दाम सस्ते कर दिये। हिंदुस्तान से आम लाकर लगाये। पर इसके साथ ही उन्होंने व्यापर भी शुरू कर दिया। घर बनाने के लिए ज़मीनें खरीद लीं और बहुतेरे लोग मज़दूर न रहकर अच्छे जमींदार और मकान मालिक बन गये। इस तरह मज़दूरों में से मकान-मालिक बन जाने वालों के पीछे-पीछे वहाँ स्वतंत्र व्यापारी भी पहुँचे। स्व. सेठ अबूबकर आमद उनमें सबसे पहले पहुँचने वालों में थे। उन्होंने वहाँ अपना कारोबार खूब जमाया।

गोरे व्यापारी चौंके। जब पहले-पहल उन्होंने हिंदुस्तानी मज़दूरों का स्वागत किया था, तब उन्हें उनकी व्यापार करने की शक्ति का कोई अंदाज़ न था। वे किसान के नाते स्वतंत्र रहें, इस हद तक तो गोरों को कोई उस

समय कोई आपत्ति न थी, पर व्यापार में उनकी प्रतिद्वंद्विता उन्हें असह्य जान पड़ी।

हिंदुस्तानियों के साथ उनके विरोध के मूल में यह चीज़ थी।

उसमें दूसरी चीजें और मिल गयी। हमारी अलग रहन-सहन, हमारी सादगी, हमारा कम नफे से संतुष्ट रहना, आरोग्य के नियमों के बारे में हमारी लापरवाही, घर-आंगन को साफ रखने का आलस्य, उनकी मरम्मत में कंजूसी, हमारे अलग-अलग धर्म - ये सारी बातें विरोध को भड़काने वाली सिद्ध हुईं।

यह विरोध प्राप्त मताधिकार को छीन लेने के रूप में और गिरमिटियों पर कर लगाने के कानून के रूप में प्रकट हुआ। कानून के बाहर तो अनेक प्रकार से उन्हें परेशान करना शुरू हो ही चुका था।

पहला सुझाव तो यह था कि गिरमिट पूरा होने के कुछ दिन पहले ही हिंदुस्तानियों को जबरदस्ती वापस भेज दिया जाय, ताकि उनके इकरारनामे की मुद्दत हिंदुस्तान में पूरी हो। पर इस सुझाव को भारत सरकार मानने वाली नहीं थी। इसलिए यह सुझाव दिया गया कि :

- मज़दूरी का इकरार पूरा हो जाने पर गिरमिटिया वापस हिंदुस्तान चला जाये; अथवा
- हर दूसरे साल नया गिरमिट लिखवाये और उस हालत में हर बार उसके वेतन में कुछ बढ़ोतरी की जाये;
- अगर वह वापस न जाये और मज़दूरी का नया इकरारनामा भी न लिखे, तो हर साल 25 पौण्ड का कर दे।

बोध प्रश्न : 2. गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों पर 25 पौण्ड का कर लगाने का क्या कारण था ?

.....

.....

.....

इन सुझावों को स्वीकार कराने के लिए सर हेनरी वीन्स और मि. मेसन का डेप्युटेशन हिंदुस्तान भेजा गया। तब लॉर्ड एलविन वाइसरॉय थे। उन्होंने 25 पौण्ड का कर तो नामंजूर कर दिया; पर वैसे हर एक हिंदुस्तानी से 3 पौण्ड का कर लेने की स्वीकृति दे दी। मुझे उस समय ऐसा लगा था और अब तक लगता है कि वाइसरॉय की यह गंभीर भूल थी। इसमें उन्होंने हिंदुस्तान के हित का तनिक भी विचार नहीं किया। नेटाल के गोरों के लिए ऐसी सुविधा कर देना उनका कोई धर्म नहीं था। तीन-चार साल के बाद यह कर हर वैसे (गिरमिट-मुक्त) हिंदुस्तानी की स्त्री से और उसके हर 16 साल और उससे बड़ी उमर के लड़के और 13 साल या उससे बड़ी उमर की लड़की से भी लेने का निश्चय किया गया। इस प्रकार पति-पत्नी और दो बच्चों वाले कुटुंब से, जिसमें पति को अधिक से अधिक 14 शिलिंग प्रतिमास मिलते हों, 12 पौण्ड अर्थात् 180 रुपये का कर लेना भारी जुल्म माना जायेगा। दुनिया में कहीं भी इस स्थिति के गरीब लोगों से ऐसा भारी कर नहीं लिया जाता था।

इस कर के विरुद्ध जोरों की लड़ाई छिड़ी। यदि नेटाल इंडियन काँग्रेस की ओर से कोई आवाज़ ही न उठाई जाती, तो शायद वाइसरॉय 25 पौण्ड भी मंजूर कर लेते। 25 पौण्ड के बदले 3 पौण्ड होना भी काँग्रेस के आंदोलन का ही प्रताप हो, यह पूरी तरह संभव है।

बोध प्रश्न : 3. 25 पौण्ड के कर को 3 पौण्ड के कर में बदलने में मुख्य भूमिका किसकी थी?

.....

.....

.....

BRAOU

पर इस में मेरी भूल हो सकती है। संभव है कि भारत-सरकार ने 25 पौण्ड के प्रस्ताव को शुरू से ही अस्वीकार कर दिया हो, और हो सकता है कि काँग्रेस के विरोध न करने पर भी वह 3 पौण्ड का कर ही स्वीकार करती। तो भी उसमें हिंदुस्तान के हित की हानि तो थी ही। हिंदुस्तान के हित-रक्षक के नाते वाइसरॉय को ऐसा अमानुषी कर कभी स्वीकार नहीं करना चाहिये था।

25 से 3 पौण्ड (375 रुपये से 45 रुपये) होने में काँग्रस क्या यश लेती ? उसे तो यही अखरा कि वह गिरमिटियों के हित की पूरी रक्षा न कर सकी। और 3 पौण्ड का कर किसी-न-किसी दिन हटना ही चाहिये, इस निश्चय को काँग्रेस ने कभी भुलाया नहीं। पर इस निश्चय को पूरा करने में बीस वर्ष बीत गये। इस युद्ध में नेटाल के ही नहीं, समूची दक्षिण अफ्रीका के हिंदुस्तानियों को सम्मिलित होना पड़ा। उसमें गोखले को निमित्त बनना पड़ा। गिरमिटिया हिंदुस्तानियों को पूरी तरह हाथ बटाना पड़ा। उसके कारण कुछ लोगों को गोलियाँ खाकर मरना पड़ा। दस हजार से अधिर हिंदुस्तानियों को जेल भुगतनी पड़ी।

पर अंत में सत्य की जय हुई। हिंदुस्तानियों की तपस्या में सत्य मूर्तिमान हुआ। इसके लिए अटल श्रद्धा की, अकूट धैर्य की सतत कार्य करते रहने की आवश्यकता थी। यदि कौम हारकर बैठ जाती, काँग्रेस लड़ाई को भूल जाती और कर को अनिवार्य समझकर उसके आगे झुक जाती, तो वह कर आज तक गिरमिटिया हिंदुस्तानियों से वसूल होता रहता और इसका कलंक स्थानीय हिंदुस्तानियों को और समूचे हिंदुस्तान को लगता।

8.3 सारांश

सन् 1894 में नेटाल की सरकार ने हिन्दुस्तानियों पर 25 पौण्ड अर्थात् 375 रुपयों का कर लगाने का मसविदा तैयार किया तो उस मसविदे को पढ़कर उस समय नेटाल में रह रहे महात्मा गाँधी बहुत चिंतित हुए।

वास्तव में सन् 1860 में जब नेटाल के निवासी गोरों ने देखा कि वहाँ की जमीन ईख की फसल के लिए बहुत अच्छी है और यदि ईख की खेती की जाए तो चीनी बनाई जा सकती है और उससे बहुत लाभ हो सकता है। उस समय के नेटाल के गुलाम हब्शी यह कार्य नहीं कर सकते थे। इसलिए नेटाल निवासी गोरों ने भारत सरकार के साथ विचार विमर्श करके हिन्दुस्तानी मज़दूरों को नेटाल ले जाने देने की अनुमति प्राप्त की। हिन्दुस्तानी मज़दूरों को यह लालच दिया गया कि पाँच वर्ष के बाद उन्हें स्वतंत्र रूप से नेटाल में बसने की छूट रहेगी। उनको ज़मीन का मालिक बनने का पूरा अधिकार भी रहेगा। उस समय गोरे चाहते थे कि हिन्दुस्तानी मज़दूर पाँच साल पूरे होने के बाद ज़मीन जोतकर अपने उद्यम का लाभ नेटाल सरकार को दें।

हिन्दुस्तानी मज़दूरों ने यह लाभ आशा से अधिक दिया। उत्तम प्रकार की अनेक तरकारियाँ और हिन्दुस्तान से लाकर आम लगाए। इसके साथ ही मज़दूरों ने घर बनाने के लिए ज़मीन खरीद ली और स्वतंत्र व्यापारी बन बैठे।

अब गोरे व्यापरी चौके क्योंकि पहले-पहले उन्होंने जब हिन्दुस्तानी मज़दूरों का स्वागत किया था तब उन्हें उनकी व्यापार शक्ति का अंदाजा नहीं था । व्यापार में हिन्दुस्तानी मज़दूरों की प्रतिद्वंद्विता उन्हें असह्य जान पड़ी।

इस प्रतिद्वन्द्विता के विरोध में नेटाल सरकार का यह मसविदा सामने आया जिस में निम्न लिखित बातें थीं-:

- मज़दूरी का इकरार पूरा हो जाने पर गिरमिटिया वापस हिन्दुस्तान चले जाए अथवा
- हर दूसरे साल नया गिरमिट लिखावाये और उस हालात में हर बार उसके वेतन में कुछ बढोतरी की जाए।
- अगर वह वापस न जाए और मज़दूरी का नया इकरारनामा भी न लिखे तो हर साल 25 पौण्ड का कर दें।

इन सुझावों को स्वीकार करने के लिए सर हेनरी बीन्स और मि. मेसन का डेप्युटेशन हिन्दुस्तान भेजा गया। तब लॉर्ड एलविन वाइसरॉय थे । उन्होंने 25 पौण्ड का कर तो नामंजूर कर दिया पर वैसे हर एक हिन्दुस्तानी से तीन पौण्ड का कर लेने की स्वीकृति दे दी। महात्मा गाँधी को वाइसरॉय की यह गंभीर भूल लगी। नेटाल के गोरों के लिए यह सुविधा कर देना कोई धर्म नहीं था उन्होंने हिन्दुस्तान के हित का तनिक भी विचार नहीं किया। चार साल के

बाद यह कर हर गिरमिट मुक्त हिन्दुस्तानी की स्त्री से और उसके हर 16 साल या उससे बड़ी उम्र के लड़के और 13 साल या उससे बड़ी उम्र की लड़की से भी लेने का निश्चय किया। इस प्रकार पति पत्नी और दो बच्चों वाले कुटुंब से जिसमें पति को अधिक से अधिक 14 शिलिंग प्रति मास मिलते हों, 12 पौण्ड अर्थात् एक सौ अस्सी रुपए का कर लेना भारी जुल्म माना जाएगा। दुनिया में कहीं भी इस स्थिति के गरीब लोगों से ऐसा भारी कर नहीं लिया जाता था।

इस कर के विरुद्ध जोरों की लड़ाई छिड़ी। यदि नेटाल इंडियन काँग्रेस की ओर से कोई आवाज़ ही न उठाई जाती तो शायद वाइसरॉय 25 पौण्ड भी मंजूर कर लेते।

25 पौण्ड से तीन पौण्ड का कर बनाने में नेटाल इंडियन काँग्रेस को पूरे 20 वर्ष लगे। इसमें समूचे दक्षिण अफ्रिका के हिन्दुस्तानियों को सम्मिलित होना पड़ा। इस में गोखले (गोपाल कृष्ण गोखले) को निमित्त बनना पड़ा। दस हजार से अधिक हिन्दुस्तानियों को जेल भुगतनी पड़ी।

और अंत में सत्य की विजय हुई। यदि काँग्रेस, कौम के इस कर को अनिवार्य समझ कर आगे झुक जाते तो गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों से यह कर वसूला जाता और यह कलंक पूरे हिन्दुस्तानियों को लगता।

8.4 समीक्षा

इस पाठ में नेटाल में मज़दूरी करने वाले गिरमिटिया हिंदुस्तानियों के साथ अन्याय और उसके निराकरण का विवरण है। नेटाल की भूमि ईख की फ़सल के लिए उपयुक्त थी और इसके लिए हिंदुस्तानी मज़दूरों को उपयुक्त मान उस समय के गोरों ने कुछ नियम बनाकर हिंदुस्तान की सरकार से हिंदुस्तानी मज़दूर माँगे। जब हिंदुस्तानी मज़दूरों ने उन नियमों के अनुसार कार्य कर धनवान बन गोरों से प्रतिद्वंद्विता की तो गिरमिटिया हिंदुस्तानियों पर 25 पौण्ड का कर लगाया गया जिसे प्रयत्न कर नेटाल इंडियन काँग्रेस और गांधी जी ने 3 पौण्ड के कर में बदल दिया। इस पाठ में सत्य की विजय दिखाई गई है।

8.5 शब्दार्थ

गिरमिटिया	–	दक्षिण आफ्रिका में मज़दूरी करने वाला हिन्दुस्तानी
आन्दोलन	–	विद्रोह
किंकर्तव्यविमूढ़	–	अधिक चिंतित
ईख	–	गन्ना
हब्शी	–	नेटाल निवासी, गुलाम
उद्यम	–	खेती, फसल
प्रतिद्वन्द्विता	–	प्रतियोगिता
असह्य	–	सहन न कर सकना
नफा	–	लाभ
नुकसान	–	हानि
इकरारनामा	–	सहमति पत्र
मुद्दत	–	अवधि, निश्चित समय
वेतन	–	पगार, तनख्वाह

BRAOU

कलंक – कालिख, बट्टा, दोष

एक पौण्ड – पन्द्रह रुपये

8.6 अभ्यास

8.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. महात्मा गाँधी का जीवन 'सत्य के प्रयोग है' – इस कथन पर प्रकाश डालिए।

8.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. 'सदा सत्य की विजय होती है' – इस कथन की सत्यता पर 'तीन पौण्ड का कर' पाठ के आधार पर प्रकाश डालिए।
2. महात्मा गाँधी जी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन कीजिए।

8.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

8.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : महात्मा गाँधी का जीवन 'सत्य के प्रयोग है' – इस कथन पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : महात्मा गाँधी ने अपनी आत्मकथा लिखी है। जिसका शीर्षक उन्होंने 'सत्य के प्रयोग' दिया है। गाँधी जी के मुख्य सिद्धान्तों में सत्य प्रमुख है । सत्य के लिए गाँधी जी ने जीवन भर संघर्ष किया है । जिस संघर्ष में सत्य होता है उस में मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है और सत्य की विजय होती है।

सन् 1893 में गाँधी जी नेटाल में थे। उस समय वहाँ के गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों पर 25 पौण्ड का कर लगाया गया। गाँधी जी ने जब यह सुना तो वह बहुत चिंतित हो उठे। जब वे उसकी गहराई में गए तो उन्हें पता चला कि सन् 1860 में गोरों ने अपने हित के लिए गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों को यह लालच दिया था कि पाँच साल की मज़दूरी करने के बाद गिरमिटिया हिन्दुस्तानी नेटाल में बस सकते हैं। मकान बनाने के लिए ज़मीन खरीद सकते हैं और ज़मीन खरीदकर उसे जोत कर उसमें कई तरह की फसलें उगाकर उन्हें बेच सकते हैं। इस छूट के कारण कई गिरमिटिया हिन्दुस्तानी व्यापारी बन बैठे। गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों के व्यापारी बनने से नेटाल के गोरे व्यापारियों को धक्का लगा। उन्हें यह प्रतिद्वन्द्विता असह्य जान पड़ी। इन व्यापारियों से बदला लेने के लिए गोरे व्यापारियों ने गिरमिटिया हिन्दुस्तनियों पर 25 पौण्ड का कर लगाया।

गाँधी जी ने प्रयत्न कर इस समस्या को नेटाल इंडियन काँग्रेस के समक्ष रखा । इस 25 पौण्ड के कर के विरोध में दक्षिण आफ्रिका के समस्त हिन्दुस्तानियों को एक जुट होना पड़ा। कई हजार हिन्दुस्तानियों को जेल भुगतना पड़ा। कुछ को मरना पड़ा। अंत में 25 पौण्ड का कर 3 पौण्ड के कर में बदल गया। अर्थात् 375 रुपयों का कर 45 रुपयों में बदल गया। इस प्रकार अंत में सत्य की विजय हुई।

8.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : महात्मा गाँधी जी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर : भारत को स्वतंत्रता दिलाने का श्रेय महात्मा गाँधी को है। उन्हें राष्ट्र पिता का सम्मान दिया गया। गाँधी जी ने सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह आदि रचनात्मक कार्यक्रमों से अपने लक्ष्य को प्राप्त किया। गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा लिखी है जिसका शीर्षक उन्होंने 'सत्य के प्रयोग' दिया है। इसी आत्मकथा का एक अंश है 'तीन पौण्ड का कर'। सत्य के लिए संघर्ष कर आफ्रिका में गाँधी जी ने विजय प्राप्त की और हिन्दुस्तानियों को कठिन परिस्थितियों से उभारा।

BRAOU

सन् 1894 में नेटाल में गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों पर जब 25 पौण्ड का कर लगा तब गाँधी जी ने उस कर की गहराई में जाकर उसके कारणों की विवेचना की और नेटाल इंडियन काँग्रेस के सम्मुख इस समस्या को रख कर दक्षिण आफ्रिका के सारे हिन्दुस्तानियों को एक जुट किया, कड़ा संघर्ष हुआ और अंत में 25 पौण्ड का कर तीन पौण्ड के कर में बदल गया। अंत में सत्य की विजय हुई।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. नेटाल में ईख की फसल अच्छी हो सकती थी और इसकी मज़दूरी हिन्दुस्तानी ही अच्छी कर सकते थे।
2. गिरमिटिया हिन्दुस्तानियों पर 25 पौण्ड का कर लगाने का प्रमुख कारण यह था कि नेटाल के गोरे व्यापारियों से उनकी प्रतिद्वन्द्विता हटा ली जाय।
3. 25 पौण्ड के कर को 3 पौण्ड के कर में बदलने में मुख्य भूमिका गाँधीजी और नेटाल इंडियन काँग्रेस की थी।

8.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. सत्य के प्रयोग – महात्मा गाँधी

BRAOU

इकाई – 9 : घीसा – महादेवी वर्मा

9.0 उद्देश्य

9.1 पाठ एवं लेखक परिचय

9.2 मूल पाठ

9.3 सारांश

9.4 समीक्षा

9.5 शब्दार्थ

9.6 अभ्यास

9.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

9.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

9.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

9.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

9.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा रचित संस्मरण 'घीसा' पर विभिन्न कोणों से प्रकाश डाला गया है । इस पाठ के अध्ययन से आप

- संस्मरण – शैली से अवगत हो सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के लेखन के यथार्थवादी पक्ष को समझ सकेंगे ।
- पिछडे जनपदों की दीन-हीन जीवन-शैली को जान सकेंगे ।
- महादेवी की गद्य-भाषा के वैशिष्ट्य से परिचित हो सकेंगे ।

9.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ – परिचय

हिन्दी में अधिकतर प्रख्यात साहित्यकारों एवं महापुरुषों के जीवन और सक्रियताओं से संबंधित संस्मरण ही लिखे गये हैं , किन्तु बृहत्तर जनसमुदाय और उसमें भी खास तौर से सामाजिक वर्ग व्यवस्था में निचले पायदान पर स्थित जनममूह के सदस्यों को लेकर रचित संस्मरण भी कम नहीं हैं । इस दृष्टि से महादेवी वर्मा द्वारा रचित 'घीसा' उनके श्रेष्ठ संस्मरणों में एक है।

इस पाठ का केन्द्रबिन्दु है 'घीसा' जो प्रयाग के पास गंगा नदी के पार झूँसी के आस पास के एक गाँव के मलिन सहमा हुआ नन्हा-सा विद्यार्थी है जो महादेवी जी के दिल को छूजाता है । इसलिए काफ़ी समय के अन्तराल के बावजूद भी उस संस्मरण को अपने हृदय में छिपाकर रखा। अतः घीसा को केन्द्र में रखकर अपने समय के समाज के मूलभूत अंतर्विरोधों का जीवंत वर्णन-चित्रण करने के कारण महादेवी जी की इस रचना ने हिन्दी के

BRAOU

संस्मरण साहित्य में यथार्थवादी-रुझानों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(आ) लेखिका का परिचय

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित (1982) हिन्दी की छायावादी और रहस्यवादी काव्यधारा की प्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 में एक सम्भ्रांत और सुशिक्षित परिवार में हुआ था। महादेवी जी के पिता श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा भागलपुर में हाईस्कूल के प्रधानाचार्य थे; उनकी माता श्रीमती हेमरानी देवी परमभक्त, आस्थामयी और विदुषी थीं। कहा जाता है कि उन्होंने तलुसी, सूर और मीरा की अनेकानेक रचनाएँ बाल्यावस्था में ही अपनी माता के सहयोग से पढ़ ली थी । आगे चलकर महादेवी जी ने दर्शनशास्त्र और खास तौर से संस्कृत भाषा और साहित्य का गहरा अध्ययन किया। एक लंबे समय तक वे प्रयाग विद्यापीठ की प्राचार्या रही और कई वर्षों तक हिन्दी की एक प्रमुख पत्रिका 'चाँद' का सम्पादन भी किया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में लिखा है कि ''छायवादी कहे जाने वाले कवियों में महादेवी जी ही रहस्यवाद के भीतर रही हैं।'' कहना न होगा कि आगे चलकर महादेवी वर्मा के शब्द कर्म पर जो कुछ लिखा गया, वह शुक्ल जी के इसी कथन का भाष्य है। सच तो यह है कि वे और चाहे जो कुछ भी हों, कोरे रहस्यवाद की कवयित्री कदापि नहीं हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो कवयित्री महादेवी वर्मा अँधेरे से जूझती निष्कंप दीपशिखा हैं। उनकी रचनाओं में बारम्बार प्रयुक्त 'प्रिय' और 'प्रियतम' शब्द परमसत्ता के नहीं, बल्कि कवयित्री के व्यक्तित्व के अभिन्न अंग हैं। अब यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि महादेवी वर्मा को केवल रहस्यवादी कवयित्री कहने का मतलब स्त्री जाति के आत्मसंघर्ष को नजर अंदाज करना है। वस्तुतः उनकी कविता और उनके जीवन दोनों ही की मूल टेक है-'कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो।'

सुभद्रा कुमारी चौहान का स्मरण करते हुए महादेवी जी लिखती हैं - ''अजगर की कुंडली के समान स्त्री के व्यक्तित्व को कसकर चर-चर कर देनेवाले अनेक सामाजिक बन्धनों को तोड़ फेंकने में उनका जो प्रयास लगा होगा, उसका मूल्यांकन संभव नहीं है।'' इस लंबे वाक्य-विन्यास में आए प्रतीकों एवं ध्वनि-बिंबों को माध्यम द्वारा तत्युगीन स्त्री समुदाय की जिस विडंबनापूर्ण स्थिति को लेखिका ने उजागर किया है उसमें स्पष्ट ही उनका अपना आक्रोश भी अवश्य शामिल है। साफ़ शब्दों में कहें तो यह आक्रोश की भाषा है, भाषा का बनावटी आक्रोश नहीं। इसी प्रकार 'श्रृँखला की कड़ियाँ' में वे एक स्थान पर लिखती हैं-''यदि स्त्री की ओर देखा जाये तो निश्चिय देखने वाला काँप उठेगा। उसके हृदय में प्यास है किन्तु उसे भाग्य ने मृग मरीचिका में निर्वासित कर दिया है। उसे जीवन भर आदि से अंत तक सौन्दर्य की हाट लगानी पड़ी। अपने हृदय की समस्त कोमल भावनाओं को कुचलकर, आत्मसमर्पण की सारी इच्छाओं का गला घोंटकर रूप का क्रय-विक्रय करना पड़ा और परिणाम में उसके हाथ आया एकांकी अंत।'' कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अपने शब्द-कर्म द्वारा महादेवी जी स्त्री, जो बोउआ के शब्दों में पैदा नहीं होती, बल्कि बनायी जाती है, की लौह-श्रृँखला को झटककर तोड़ देने की दिशा में सक्रिया रही हैं। महादेवी-काव्य को यदि उनकी 'श्रृँखला की कड़ियाँ' और 'स्मृति की रेखाएँ' जैसी गद्य-रचनाओं के साथ मिलकर पढ़ा जाय तो उपर्युक्त मंतव्य और अधिक पुष्ट होता हुआ प्रतीत होगा।

महादेवी वर्मा की रचनाओं में नीहार; रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा (काव्य संग्रह), अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं, पथ के साथी (संस्मरण-रेखाचित्र) तथा श्रृँखला की कड़ियाँ (निबंध) आदि उल्लेखनीय हैं।

9.2 मूलपाठ

वर्तमान की कौन-सी अज्ञात प्रेरणा हमारे अतीत की किसी भूली हुई कथा को संपूर्ण मार्मिकता के साथ दोहरा जाती है, यह जान लेना सहज होता तो मैं भी आज गाँव के उस मलिन सहमे नन्हे-से विद्यार्थी की सहसा याद आ जाने का कारण बता सकती, जो एक छोटी नहर के समान ही मेरे जीवन-तट को अपनी सारी आर्द्रता से छूकर अनंत जलराशि में विलीन हो गया है।

गंगा पार झूँसी के खंडहर और उसके आस-पास के गांवों के प्रति मेरा जैसा अकारण आकर्षण रहा है, उसे देख कर ही संभवत: लोग जन्म-जन्मांतर के संबंध का व्यंग्य करने लगे हैं। है भी तो आश्चर्य की बात! जिस अवकाश के समय को लोग इष्ट-मित्रों से मिलने, उत्सवों में सम्मिलित होने तथा अन्य आमोद-प्रमोद के लिए सुरक्षित रखते हैं, उसी को मैं इस खंडहर और उसके क्षत-विक्षत चरणों पर पछाड़े खाती हुई भागीरथी के तट पर काट ही नहीं, सुख से काट देती हूँ।

दूर-पास बसे हुए गुड़ियों के बड़े-बड़े घरौदों के समान लगने वाले कुछ लिपे-पुते, कुछ जीर्ण-शीर्ण घरों से स्त्रियों का झुंड पीतल-तांबे के चमचमाते, मिट्टी के नये लाल और पुराने भदरंग घड़े लेकर गंगाजल भरने आता है, उसे भी मैं पहचान गयी हूँ। उनमें कोई बूटेदार लाल, कोई कुछ सफेद और कोई मैल और सूत में अद्वैत स्थापित करने वाली, कोई कुछ नयी और कोई छेदों से चलनी बनी हुई धोती पहने रहती है। किसी की मोम लगी पाटियों के बीच में एक अंगुल चौड़ी सिंदूर-रेखा अस्त होते हुए सूर्य की किरणों में चमकती रहती है और किसी के कड़वे तेल से भी अपरिचित रूखी जटा बनी हुई छोटी-छोटी लटें मुख को घेर कर उसकी उदासी को और अधिक केंद्रित कर देती हैं। किसी की सांवली गोल कलाई पर शहर की कच्ची नगदार चूड़ियों के नग रह-रहकर हीरे-से चमक जाते हैं और किसी के दुर्बल काले पहुंचे पर लाख की पीली मैली चूड़ियां काले पत्थर पर मटमैले चंदन की लकीरें जान पड़ती हैं। कोई अपने गिलट के कड़े-युक्त हाथ घड़े की ओट में छिपाने का प्रयत्न-सा करती रहती है और कोई चांदी के पछेली-ककना की झनकार के साथ ही बात करती है। किसी के कान में लाख की पैसे वाली तरकी धोती से कभी-कभी झांक भर लेती है और किसी की ढारें लंबी जंजीर से गला और गाल एक करती रहती हैं। किसी के गुदना गुदे गेहुंए पैरों में चांदी के कड़े सुडौलता की परिधि-सी लगते हैं और किसी की फैली उंगलियों और सफेद एड़ियों के साथ मिली हुई स्याही रांगे और कांसे के कड़ों को लोहे की सांफ की हुई बेड़ियाँ बना देती हैं।

वे सब पहले हाथ-मुंह धोती हैं, फिर पानी में कुछ घुसकर घड़ा भर लेती हैं - तब घड़ा किनारे रख, सिर पर इंडुरी ठीक करती हुई मेरी ओर देखकर कभी मलिन, कभी उजली, कभी दुख की व्यथा-भरी कभी सुख की कथा-भरी मुस्कान से मुस्करा देती हैं। अपने-मेरे बीच का अंतर उन्हें ज्ञात है, तभी कदाचित् वे मुस्कान के सेतु से उसका वार-पार जोड़ना नहीं भूलतीं।

ग्वालों के बालक अपनी चरती हुई गाय-भैंसों में से किसी को उस ओर बहकते देख कर ही लकुटी लेकर दौड़ पड़ते, गड़रियों के बच्चे अपने झुंड की एक भी बकरी या भेड़ को उस ओर बढ़ते देखते कान पकड़कर खींच ले जाते हैं और व्यर्थ दिन भर गिल्ली-डंडा खेलनेवाले निठल्ले लड़के भी बीच-बीच में नजर बचाकर मेरा रुख देखना नहीं भूलते।

बोध प्रश्न : 1. लेखिका ने स्त्रियों के पहनावे आदि का विस्तार से वर्णन क्यों किया है?

.....

.....

.....

उस पार शहर में दूध बेचने जाते या लौटते हुए ग्वाले, किले में काम करने जाते या घर आते हुए मजदूर नाव बांधते या खोलते हुए मल्लाह, कभी-कभी चुनरी त रंगाउब लाल मजीठी हो गाते-गाते मुझ पर दृष्टि पड़ते ही अकचका कर चुप हो जाते हैं। कुछ विशेष सभ्य होने का गर्व करनेवालों से मुझे एक सलज्ज नमस्कार भी प्राप्त हो जाता है।

कह नहीं सकती, कब और कैसे मुझे उन बालकों को कुछ सिखाने का ध्यान आया; पर जब बिना कार्यकारिणी के निवचन के, बिना पदाधिकारियों के चुनाव के, बिना भवन के, बिना चंदे की अपील के और

सारांश यह कि बिना किसी चिर-परिचित समारोह के, मेरे विद्यार्थी पीपल के पेड़ की घनी छाया में मेरे चारों ओर एकत्र हो गये, तब मैं बड़ी कठिनाई से गुरु के उपयुक्त गंभीरता का भार वहन कर सकी।

और वे जिज्ञासु कैसे थे सो कैसे बताऊँ! कुछ कानों में बालियां और हाथों में कड़े पहने, धुले कुरते और ऊंची धोती में नगर और ग्राम का सम्मिश्रण जान पड़ते थे, कुछ अपने बड़े भाई का पांव तक लंबा कुरता पहने खेत में डराने के लिए खड़े किये हुए नकली आदमी का स्मरण दिलाते थे, कुछ उभरी फसलियों, बड़े पेट और टेढ़ी दुर्बल, रूखे और मलिन मुखों की करुण सौम्यता और निष्प्रभ पीली आंखों में संसार भर की उपेक्षा बटोर बैठे थे; पर घीसा उनमें अकेला ही रहा और आज भी मेरी स्मृति में अकेला ही आता है।

वह गोधूली मुझे अब तक नहीं भूली। संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल पर रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी। मेरा नाव वाला कुछ चिंतित-सा लहरों की ओर देख रहा था; बूढ़ी भक्तिन मेरी किताबें, कागज-कलम आदि संभाल कर नाव पर रख कर बढ़ते अंधकार पर खिजलाकर बुदबुदा रही थी या मुझे कुछ सनकी बनाने वाले विधाता पर, यह समझना कठिन था। बेचारी मेरे साथ रहते-रहते दस लंबे वर्ष काट आयी है, नौकरानी से अपने-आपको एक प्रकार की अभिभाविका मानने लगी है; परंतु मेरी सनक का दुष्परिणाम सहने के अतिरिक्त उसे क्या मिला है ? सहसा ममता से मेरा मन भर आया; परंतु नाव की ओर बढ़ते हुए मेरे पैर, फैलते हुए अंधकार में से एक स्त्री-मूर्ति को अपनी ओर आते देख ठिटक रहे। सांवले, कुल लंबे-से मुखड़े में पतले स्याह ओठ कुछ अधिक स्पष्ट हो रहे थे। आंखें छोटी पर व्यथा से आर्द्र थी। मलिन, बिना किनारी की गाढ़े की धोती ने उसके सलूकारहित अंगों को भली भांति ढँक लिया था ; परंतु तब भी शरीर की सुडौलता का आभास मिल रहा था। कंधे पर हाथ रखकर वह जिस दुर्बल अर्धनग्न बालक को अपने पैरों से चिपकाये हुए थी उसे मैने संध्या के झुटपुटे में ठीक से नहीं देखा।

स्त्री ने रुक-रुककर कुछ शब्दों और कुछ संकेत में जो कहा, उससे मैं केवल यह समझ सकी कि उसके पति नहीं है , दूसरों के घर लीपने-पोतने का काम करने वह चली जाती है और उसका यह अकेला लड़का ऐसे ही घूमता रहता है। मैं इसे भी और बच्चों के साथ बैठने दिया करूँ तो यह कुछ तो सीख सके।

दूसरे इतवार को मैंने उसे सबसे पीछे, अकेले एक ओर दुबक कर बैठे हुए देखा। पक्का रंग, पर गठन में विशेष सुडौल, मलिन मुख जिसमें दो पीली, पर सचेत आंखें जड़ी-सी जान पड़ती थीं। कस कर बंद किये हुए पतले ओठों की दृढ़ता और सिरपर खड़े हुए छोटे-छोटे रूखे बालों की उग्रता उसके मुख की संकोचभरी कोमलता से विद्रोह कर रही थी। उभरी हड्डियों वाली गर्दन को संभालते हुए झुके कंधों से, रक्तहीन मटमैली हथेलियों और टेढ़े-मेढ़े कटे हुए नाखूनों-युक्त हाथों वाली पतली बांहें ऐसी भूलती थीं, जैसे ड्रामा में विष्णु बनाने वाले की दो नकली भुजायें। निरंतर दौड़ते रहने के कारण उस लचीले शरीर में दुबले पैर ही विशेष पुष्ट जान पड़ते थे। बस ऐसा ही था वह, न नाम में कवित्व की गुंजाइश, न शरीर में।

बोध प्रश्न : 2. लेखिका को वह गोधूली आज तक क्यों याद है ?

.....

.....

.....

पर उसकी सचेत आंखों में न जाने कौन-सी जिज्ञासा भरी थी। वे निरंतर घड़ी की तरह खुली मेरे मुख पर टिकी ही रहती थीं। मानों मेरी सारी विद्याबुद्धि को सीख लेना ही उसका ध्येय था।

लड़के उससे कुछ खिंचे-खिंचे से रहते थे । इसलिए नहीं कि वह कोरी था, वरन् इसलिए कि किसी की मां, किसी की नानी, किसी की बुआ आदि ने घीसा से दूर रहने की नितांत आवश्यकता उन्हें कान पकड़-

BRAOU

पकड़कर समझा दी थी। यह भी उन्होंने बताया और बताया घीसा के सबसे अधिक कुरूप नाम का रहस्य । बाप तो जन्म से पहले ही नहीं रहा । घर में कोई देखने-भालने वाला न होने के कारण मां उसे बंदरिया के बच्चे के समान चिपकाये फिरती थी। उसे एक ओर लिटाकर जब वह मजदूरी के काम में लग जाती थी, तब पेट के बल घसिट-घसिट कर बालक संसार के प्रथम अनुभव के साथ-साथ इस नाम की योग्यता भी प्राप्त करता जाता था।

फिर धीरे-धीरे अन्य स्त्रियां भी मुझे आते-जाते रोककर अनेक प्रकार की भाव-भंगिमा के साथ एक विचित्र सांकेतिक भाषा में घीसा की जन्मजात अयोग्यता का परिचय देने लगीं। क्रमशः मैंने उसके नाम के अतिरिक्त और कुछ भी जाना।

उसका बाप था तो कोरी, पर बड़ा ही अभिमानी और भला आदमी बनने का इच्छुक। डलिया आदि बुनने का काम छोड़ कर वह थोड़ी बढ़ईगीरी वधू लाकर उसने अपने गांव की सब सजातीय सुंदरी बालिकाओं को उपेक्षित और उनके योग्य माता-पिता को निराश कर डाला। मनुष्य इतना अनन्याय सह से जब गांव के चौखट-किबाड़ बनाकर और ठाकुरों के घरों में सफेदी करके उसने कुछ ठाट-बाट से रहना आरंभ किया, तब अचानक हैजे के बहाने वह वहां बुला लिया गया, जहां न जाने का बहाना न उसकी बुद्धि सोच सकी, न अभिमान । पर स्त्री भी कम गर्वीली न निकली। गांव के अनेक विधुर और अविवाहित कोरियों ने केवल उदारतावश ही उसकी नैया पार लगाने का उत्तर ही नहीं दिया, प्रत्युत उसे नमक-मिर्च लगाकर तीता भी कर दिया कहा - 'हम सिंध के मेहरारू होइके का सियारन के जाब'। फिर बिना स्वर-ताल के आंसू गिराकर, बाल खोलकर, चूड़ियां फोड़कर और बिना किनारे की धोती पहनकर जब उसने बड़े घर की विधवा का स्वांग भरना आरंभ किया, तब तो सारा समाज़ क्षोभ के समुद्र में डूबने-उतराने लगा। उस पर घीसा बाप के मरने के बाद हुआ है। हुआ तो वास्तव में छः महीने बाद, परंतु उस समय के संबंध में क्या कहा जाय, जिसका कभी एक क्षण वर्ष-सा बीतता है और कभी एक वर्ष क्षण हो जाता है । उसी से यदि छः मास का समय रबर की तरह खिंचकर एक साल की अवधि तक पहुंच गया, तो इसमें गांव वालों का क्या दोष ?

यह कथा एक क्षेपकोमय विस्तार के साथ सुनायी तो गयी थी मेरा मन फेरने के लिए और मन फिरा भी, परंतु किसी सनातन नियम से कथावाचक की ओर न फिरकर कथा के नायकों की ओर फिर गया और इस प्रकार घीसा मेरे और अधिक निकट आ गया। वह अपना जीवन-संबंधी अपवाद कदाचित् पूरा नहीं समझ पाया था, परंतु अधूरे का भी प्रभाव उस पर कम न था, क्योंकि वह सब को अपनी छाया से इस प्रकार बचाता रहता था, मानो उसे कोई छूत की बीमारी हो।

पढ़ने, उसे सबसे पहले समझने, उसे व्यवहार के समय स्मरण रखने, पुस्तक में एक भी धब्बा न लगाने, स्लेट को चमचमाती रखने और अपने छोटे-से-छोटे काम का उत्तरदायित्व बड़ी गंभीरता से निभाने में उसके समान कोई चतुर न था। इसी से कभी-कभी मन चाहता था कि उसकी मां से उसे मांग ले जाऊं और अपने पास रख कर उसके विकास की उचित व्यवस्था कर दूं - परंतु उस उपेक्षिता, पर मानिनी विधवा का वही एक सहारा था। वह अपने पति का स्थान छोड़ने पर प्रस्तुत न होगी, यह भी मेरा मन जानता था और उस बालक के बिना उसका जीवन कितना दुर्वह हो सकता है, यह भी मुझसे छिपा न था। फिर नौ साल के कर्तव्यपरायण घीसा की गुरु-भक्ति देखकर उसकी मातृ-भक्ति के संबंध में कुछ संदेह करने का स्थान ही नहीं रह जाता था और इस तरह घीसा वहीं और उन्हीं कठोर परिस्थितियों में रहा, जहां क्रूरतम नियति ने केवल अपने मनोविनोद के लिए ही उसे रख दिया था।

शनिश्चर के दिन ही वह अपने छोटे दुर्बल हाथों से पीपल की छाया को गोबर-मिट्टी से पीला चिकनापन दे आता था। फिर इतवार को मां के मजदूरी पर जाते ही एक मैले, फटे कपड़े में बंधी मोटी रोटी और कुछ नमक या थोड़ा चबेना और एक डली गुड़ बगल में दबाकर, पीपल की छाया को एक बार फिर झाड़ने-बुहारने के पश्चात् वह गंगा के तट पर आ बैठता और अपनी पीली सतेज आंखों पर क्षीण सांवले हाथ की छाया कर दूर-दूर तक दृष्टि को दौड़ाता रहता। जैसे ही उसे मेरी नीली सफ़ेद नाव की झलक दिखायी पड़ती, वैसे ही वह अपनी पतली टांगों पर तीर के समान उड़ता और बिना नाम लिये हुए ही साथियों को सुनाने के लिए गुरु साहब कहता हुआ फिर पेड़

BRAOU

के नीचे पहुंच जाता, यहां न जाने कितनी बार दुहराये-तिहराये हुए कार्यक्रम की एक अंतिम आवृत्ति आवश्यक हो उठती। पेड़ की नीची डाल पर रखी हुई मेरी शीतल-पाटी उतारकर बार-बार झाड़-पोंछकर बिछायी जाती, कभी काम न आने वाली सूखी स्याही से काली कच्चे कांच की दवात, टूटे निब और उखड़े रंगवाले भूरे, हरे कलम के साथ पेड़ के कोटर से निकालकर यथास्थान रख दी जाती और तब इस विचित्र पाठशाला का विचित्र मंत्री निराला विद्यार्थी कुछ आगे बढ़कर मेरे सप्रणाम स्वागत के लिए प्रस्तुत हो जाता।

महीने में चार दिन ही मैं वहाँ पहुंच सकती थी और कभी-कभी काम की अधिकता से एक-आध छुट्टी का दिन और भी निकल जाता था; पर उस थोड़े-से समय और इने-गिने दिनों में भी मुझे उस बालक के हृदय का जैसा परिचय मिला, वह चित्र के एल्बम के समान निरंतर नवीन-सा लगता है ।

मुझे आज भी वह दिन नहीं भूलता जब मैंने बिना कपड़ों का प्रबंध किये हुए ही उन बेचारों को सफाई का महत्व समझाते-समझाते थका डालने की मूर्खता की। दूसरे इतवार को सब जैसे-के-तैसे ही सामने थे - केवल कुछ गंगा जी में मुंह इस तरह धो आये थे कि मैल अनेक रेखाओं में विभक्त हो गया था, कुछ के हाथ-पांव ऐसे घिसे थे कि शेष मलिन शरीर के साथ ये अलग जोड़े हुए-से लगते थे और कुछ 'न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी' की कहावत चरितार्थ करने के लिए कीट से मैले फटे कुरते घर ही छोड़ कर ऐसे अस्थि-पंजरमय रूप में आ उपस्थित हुए थे, जिसमें उनके प्राण, 'रहने का आश्चर्य है, गये अचंभा कौन' की घोषणा करते जान पड़ते थे, पर घीसा गायब था। पूछने पर लड़के काना-फूसी करने का या एकसाथ सभी उसकी अनुपस्थिति का कारण सुनाने को आतुर होने लगे । एक-एक शब्द जोड़-तोड़कर समझना पड़ा कि घीसा मां से कपड़ा धोने के साबुन के लिए तभी से कह रहा था - मां को मजदूरी के पैसे मिले नहीं और दूकानदार ने नाज लेकर साबुन दिया नहीं। कल रात को मां को पैसे मिले और आज सवेरे वह सब काम छोड़कर पहले साबुन लेने गयी। अभी लौटी है, अत: घीसा कपड़े धो रहा है, क्योंकि गुरु साहब ने कहा था कि नहा-धोकर साफ कपड़े पहन कर आना। और अभागे के पास कपड़े ही क्या थे? किसी दयावती का दिया हुआ एक पुराना कुरता, जिसकी एक आस्तीन आधी थी, और एक अंगोछा जैसा फटा टुकड़ा। जब घीसा नहाकर गीला अंगोछा लपेटे और आधा भीगा कुरता पहने अपराधी के समान मेरे सामने आ खड़ा हुआ, तब आँखें ही नहीं मेरा रोम-रोम गीला हो गया। उस समय समझ में आया कि द्रोणाचार्य ने अपने भील शिष्य से अंगूठा कैसे कटवा लिया था?

एक दिन न जाने क्या सोच कर मैं उन विद्यार्थियों के लिए 4-6 सेर जलेबियां ले गयी; पर कुछ तोलने वाले की सफाई से, कुछ तुलवाने वाले की समझदारी से और कुछ वहां की छीना-झपटी के कारण प्रत्येक को पांच से अधिक न मिल सकीं। एक कहता था - मुझे एक कम मिली; दूसरे ने बताया - मेरी अमुक ने छीन ली। तीसरे को घर में सोते हुए छोटे भाई के लिए चाहिए; चौथे को किसी और की याद आ गयी । पर इस कोलाहल में अपने हिस्से की जलेबियां लेकर घीसा कहां खिसक गया, यह कोई न जान सका। एक नटखट अपने साथी से कह रहा था - 'सार एक ठो पिलवा पाले हैं, ओही का देय बरे गा होई', पर मेरी दृष्टि से संकुचित होकर चुप रह गया और तब तक घीसा लौटा ही, उसका सब हिसाब ठीक था - जलखई वाले छन्ने में दो जलेबियां लपेट कर वह माई के लिए छप्पर में खोंस आया है, एक उसने अपने पाले हुए, बिना मां के कुत्ते के पिल्ले को खिला दी और दो स्वयं खा लीं। 'और चाहिए' पूछने पर उसकी संकोच भरी आंखें झुक गयीं - ओंठ कुछ हिले । पता चला कि पिल्ले को उससे कम मिली है। दें तो गुरु साहब पिल्ले को ही एक और दे दें।

और होली के पहले की एक घटना तो मेरी स्मृति में ऐसे गहरे रंगों से अंकित है, जिसका धुल सकना सहज नहीं। उन दिनों हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य धीरे-धीरे बढ़ रहा था और किसी दिन उसके चरम सीमा तक पहुंच जाने की पूर्ण संभावना थी। घीसा दो सप्ताह से ज्वर में पड़ा था। दवा मैं भिजवा देती थी; परंतु देखभाल का कोई ठीक प्रबंध न हो पाता था। दो-चार दिन उसकी मां स्वयं बैठी रही। फिर एक अंधी बुढ़िया को बैठा कर काम पर जाने लगी।

BRAOU

इतवार की सांझ को मैं बच्चों को बिदा दे, घीसा को देखने चली; परंतु पीपल से पचास पग दूर पहुंचते-पहुंचते उसी को डगमगाते पैरों से गिरते-पड़ते अपनी ओर आते देख, मेरा मन उद्विग्न हो उठा। वह तो इधर पंद्रह दिन से उठा ही नहीं था ; अत: मुझे उसके सन्निपातग्रस्त होने का ही संदेह हुआ। उसके सूखे शरीर में तरल विद्युत-सी दौड़ रही थी; आंखें और भी सतेज और मुख ऐसा था, जैसे हल्की आँच में धीरे-धीरे लाल होने वाला लोहे का टुकड़ा।

पर उसके वातग्रस्त होने से भी अधिक चिंताजनक उसकी समझदारी की कहानी निकली। वह प्यास से जाग गया था ; पर पानी पास मिला नहीं और मनियां की अंधी आजी से मांगना ठीक न समझकर वह चुपचाप कष्ट सहने लगा। इतने में मुल्लू के कक्का ने पार से लौटकर दरवाजे से ही अंधी को बताया कि शहर में दंगा हो रहा है और तब उसे गुरु साहब का ध्यान आया। मुल्लू के कक्का के हटते ही वह ऐसे हौले-हौले उठा कि बुढ़िया को पता ही न चला और कभी दीवार, कभी पेड़ का सहारा लेता-लेता इस ओर भागा । अब वह गुरु साहब के गोड़ घर की यहीं पड़ा रहेगा ; पर पार किसी तरह भी न जाने देगा।

तब मेरी समस्या और भी जटिल हो गयी। पार तो मुझे पहुंचना था ही ; पर साथ ही बीमार घीसा को ऐसे समझा कर, जिससे उसकी स्थिति और गंभीर न हो जाय। पर सदा के संकोची, नम्र और आज्ञाकारी घीसा का इस दृढ़ और हठी बालक में पता ही न चलता था। उसने पारसाल ऐसे ही अवसर पर हताहत दो मल्लाह देखे थे और कदाचित् इस समय उसका रोग से विकृत मस्तिष्क उन चित्रों में गहरा रंग भर कर मेरी उलझन को और उलझा रहा था। पर उसे समझाने का प्रयत्न करते-करते अचानक ही मैंने एक ऐसा तार छू दिया, जिसका स्वर मेरे लिए भी गया था। यह सुनते ही कि मेरे पास रेल में बैठकर दूर-दूर से आये हुए बहुत से विद्यार्थी हैं जो अपनी मां के पास साल भर में एक बार ही पहुंच पाते हैं और जो मेरे न जाने से अकेले घबरा जायेंगे, घीसा का सारा हठ, सारा विरोध ऐसे बह गया जैसे वह कभी था ही नहीं; और तब घीसा के समान तर्क की क्षमता किसमें थी। जो सांझ को अपनी माई के पास नहीं जा सकते, उसके पास गुरु साहब को जाना ही चाहिए । घीसा रोकेगा, तो उसके भगवान् जी गुस्सा हो जायेंगे, क्योंकि वे ही तो घीसा को अकेला बेकार घूमता देख कर गुरु साहब को भेज देते हैं, आदि-आदि उस के तर्कों का स्मरण कर आज भी मन भर आता है। परंतु उस दिन मुझे आपत्ति से बचाने के लिए अपने बुखार से जलते हुए अशक्त शरीर को घसीट लाने वाले घीसा को जब उसकी टूटी खटिया पर लिटाकर मैं लोटी, तब मेरे मन में कौतूहल की मात्रा ही अधिक थी।

इसके उपरांत घीसा अच्छा हो गया और धूल और सूखी पत्तियों को बांधकर उन्मत्त के समान घूमने वाली गर्मी की हवा से उसका रोज संग्राम छिड़ने लगा - झाड़ते-झाड़ते ही वह पाठशाला धूल-धूसरित होकर भूरे, पीले और कुछ हरे पत्तों की चादर में छिप कर तथा कंकालशेषी शाखाओं में उलझते, सूखे पत्तों को पुकारते वायु की संतप्त सरसर से मुखरित होकर उस भ्रांत बालक को चिढ़ाने लगती। तब मैंने तीसरे पहर से संध्या समय तक वहां रहने का निश्चय किया ; परंतु पता चला घीसा किसकिसाती आंखों को मलता और पुस्तक से बार-बार धूल झाड़ता हुआ दिन भर वही पेड़ के नीचे बैठा रहता है, मानो वह किसी प्राचीन युग का तपोव्रती अनागरिक ब्रह्मचारी हो, जिसकी तपस्या-भंग के लिए ही लू के झोंके आते हैं।

इस प्रकार चलते-चलते समय ने जब दायी छूने के लिए दौड़े हुए बालक के समान झपट कर उस दिन पर उंगली धर दी, जब मुझे उन लोगों को छोड़ जाना था, तब तो मेरा मन बहुत ही अस्थिर हो उठा। कुछ बालक उदास थे और कुछ खेलने की छुट्टी से प्रसन्न। कुछ जानना चाहते थे कि छुट्टियों के दिन चूने की टिपकियां रखकर गिने जाय, या कोयले की लकीरें खींचकर। कुछ के सामने बरसात में चूते हुए घर में आठ पृष्ठ की पुस्तक बचा रखने का प्रश्न था और कुछ कागजों पर चूहों के आक्रमण की ही समस्या का समाधान चाहते थे। ऐसे महत्वपूर्ण कोलाहल में घीसा न जाने कैसे अपना रहना अनावश्यक समझ लेता था, अत: सदा के समान आज भी मैं उसे न खोज पायी। जब मैं कुछ चिंतित-सी वहां से चली, तब मन भारी-भारी हो रहा था, आंखों में कोहरा-सा घिर-घिर आता था। वास्तव में उन दिनों डाक्टरों को मेरे पेट में फोड़ा होने का संदेह हो रहा था - आपरेशन

की संभावना थी। कब लौटूंगी या नहीं लौटूंगी, यही सोचते-सोचते मैंने फिर कर चारों ओर जो आर्द्र दृष्टि डाली, वह कुछ समय तक उन परिचित स्थानों को भेंटकर वहीं उलझी रही।

पृथ्वी के उच्छ्वास के समान उठते हुए धुंधलेपन में वे कच्चे घर आकंठ मग्न हो गये थे – केवल फूस के मटमैले और रूपरैले के कत्थई और काले छप्पर, वर्षा में बढ़ी गंगा के मिट्टी जैसे जल में पुरानी नावों के समान जान पड़ते थे। कछार की बालू में दूर तक फैले तरबूज और खरबूजें के खेत अपने सिरकी और फूस के मुट्ठियों, टट्टियों और रखवाली के लिए बनी पर्णकुटियों के कारण जल में बसे किसी आदिम द्वीप का स्मरण दिलाते थे। उनमें एक-दो दिए जल चुके थे, तब मैंने दूर पर एक छोटा-सा काला धब्बा आगे बढ़ता देखा। वह घीसा ही होगा। यह मैंने दूर से ही जान लिया। आज गुरु साहब को उसे बिदा देना है, यह उसका नन्हा हृदय अपनी पूरी संवेदना-शक्ति से जान रहा था, इसमें संदेह नहीं था। परंतु उस उपेक्षित बालक के मन में मेरे लिए कितनी सरल ममता और मेरे बिछोह की कितनी गहरी व्यथा हो सकती है, यह जानना मेरे लिए शेष था।

निकट आने पर देखा कि उस धूमिल गोधूली में बादामी कागज पर काले चित्र के समान लगने वाला नंगे बदन घीसा एक बड़ा तरबूज दोनों हाथों में संभाले था, जिसमें बीच के कुछ कटे भाग में से भीतर की ईषत-लक्ष्य ललाई चारों ओर के गहरे हरेपन में कुछ बंद गुलाबी फूल-जैसी जान पड़ती थीं।

घीसा के पास न पैसा था न खेत – तब क्या वह इसे चुरा लाया है। मन का संदेह बाहर हीं और तब मैंने जाना कि जीवन का खरा सोना छिपाने के लिए उस मलिन शरीर को बनाने वाला ईश्वर उस बूढ़े आदमी से भिन्न नहीं, जो अपने सोने की मोहर को कच्ची मिट्टी की दीवार में रखकर निश्चित हो जाता है। घीसा गुरु साहब से झूठ बोलना भगवान जी से झूठ बोलना समझता है। वह तरबूज कई दिन पहले देख आया था। माई के लौटने में जाने क्यों देर हो गयी, तब उसे अकेले ही खेत पर जाना पड़ा। वहां खेत वाले का लड़का था, जिसकी उसके नये कुरते पर बहुत दिन से नजर थी। प्राय: सुना-सुना कर कहता था कि जिनकी भूख झूठी पत्तल से बुझ सकती है, उनके लिए परोसा लगाने वाले पागल होते हैं। उसने कहा – पैसा नहीं है, तो कुरता दे जाओ। और घीसा आज तरबूज न लेता, तो कल उसका क्या करता। इससे कुरता दे आया ; पर गुरु साहब को चिंता करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि गर्मी में वह कुरता पहनता ही नहीं और जाने-आने के लिए पुराना ठीक रहेगा । तरबूज सफेद न हो, इसलिए कटवाना पड़ा – मीठा है या नहीं यह देखने के लिए, उंगली से कुछ निकाल भी लेना पड़ा।

गुरु साहब न लें, तो घीसा रात भर रोयेगा – छुट्टी भर रोयेगा । ले जावें तो वह रोज नहा-धोकर पेड़ के नीचे पढ़ा हुआ पाठ दोहराता रहेगा और छुट्टी के बाद पूरी किताब पट्टी पर लिख कर दिखा सकेगा।

और तब अपने स्नेह में प्रगल्भ उस बालक के सिर पर हाथ रखकर मैं भावातिरेक से ही निश्चल हो रही। उस तट पर किसी गुरु को किसी शिष्य से कभी ऐसी दक्षिणा मिली होगी, ऐसा मुझे विश्वास नहीं; परंतु उस दक्षिणा के सामने संसार में अब तक सारे आदान-प्रदान फीके जान पड़े।

फिर घीसा के सुख का विशेष प्रबंध कर मैं बाहर चली गयी और लौटते-लौटते कई महीने लग गये। इस बीच में उसका कोई समाचार न मिलना ही संभव था। जब फिर उस ओर जाने का मुझे अवकाश मिल सका, तब घीसा को उसके भगवानजी ने सदा के लिए पढ़ने से अवकाश दे दिया था – आज वह कहानी दोहराने की मुझमें शक्ति नहीं है; पर संभव है आज के कल, कल के कुछ दिन दिनों के मास और मासा के वर्ष जाने पर मैं दार्शनिक के समान धीर-भाव से उस छोटे जीवन का उपेक्षित अंत बता सकूंगी। अभी मेरे लिए इतना ही पर्याप्त है कि मैं अन्य मलिन मुखों में उसकी छाया ढूंढती रहूं।

बोध प्रश्न : 3. प्रस्तुत पाठ एक सशक्त रेखाचित्र क्यों माना जाता है?

.....

.....

BRAOU

9.3 सारांश

'घीसा' महादेवी वर्मा रचित उल्लेखनीय संस्मरणों में से एक है। इसमें लेखिका ने प्रयाग के पास गंगा नदी के पार झूंसी के आस-पास के ग्रामवासियों के जीवन-जगत का अत्यंत गोचर चित्र उपस्थित किया है। इस क्रम में लेखिका ने हमारी समाज-व्यवस्था की विसंगतियों के चलते अमानवीय सामाजिक-आर्थिक उत्पीड़न या दूसरे शब्दों में व्यवस्था का नरक भोगने के लिए अभिशप्त देहाती क्षेत्रों के बच्चों का करुण-रेखांकन प्रस्तुत करते हुए अपनी उदार मानवतावादी दृष्टि का परिचय दिया है।

इस रचना का केन्द्र-बिन्दु 'घीसा' नामक बालक अपने-आप में विशिष्ट चरित्र होते हुए भी कुल मिलाकर एक टाइप्ड चरित्र है । सच तो यह है कि महादेवी जी की ऐसी रचनाओं में टाइप्ड चरित्र और विशिष्ट चरित्र के बीच द्वंद्वात्मक संबंध का सफल निर्वाह संभव हुआ है जो कि ऐसी रचनाओं की सफलता के लिए लगभग एक अनिवार्य शर्त है । दूसरे शब्दों में कहें तो इन रचनाओं में महादेवी का वर्णन-चित्रण कदापि इकहरा नहीं है।

विवेच्य रचना में घीसा यदि एक ओर भारतीय नगरों के आसपास के देहाती क्षेत्रों में विकास की मुख्यधारा से कटे जहालत की जिन्दगी जीने को विवश उत्पीड़ित वर्ग के बालकों का प्रतिनिधि-पात्र है तो दूसरी ओर मातृ-प्रेम, गुरु-भक्ति, स्वाभिमान एवं एकाग्रता आदि उसके अपने व्यक्तित्व की निजी विशेषताएँ हैं। जाहिर है कि विवेच्य रचना में यद्यपि लेखिका की संवेदना का मुख्य केन्द्र बिन्दु घीसा है, परन्तु उसके माध्यम से संपूर्ण ग्रामीण समाज का अन्तर्विरोध सामने आ जाता है। स्पष्ट ही 'घीसा' में एक सामान्य जिन्दगी जीने के लिए तमाम तरह की कठिनाइयों से लड़ते-भिड़ते अनेकानेक स्त्री-पुरुषों के चित्र मिलते हैं। घीसा की विधवा माँ अपने ही समाज की निष्ठुर अफ़वाहों के बीच दूसरों के घर लीप-पोतकर अपना और अपने बेटे का पेट पालती है। बावजूद इसके, वह अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए सदैव सजग रहती है।

9.4 समीक्षा

भारत में अर्द्धसामंती तथा अर्द्धपूँजीवादी आर्थिक-सामाजिक ढाँचे की वजह से समाज में स्त्री सर्वाधिक उत्पीड़ित रही है। यह बात हर समय के रचनाकारों को उद्वेलित करती रही है। और इसलिए स्त्री-उत्पीड़न और स्त्री मुक्ति के मुद्दे पर हिन्दी में लगातार लेखन होता रहा है। स्पष्ट ही खुद स्त्री होने की वजह से महादेवी वर्मा को इस उत्पीड़न का और ज्यादा गहराई के साथ संवेदनात्मक स्तर पर एहसास रहा होगा। इसीके चलते विवेच्य रचना में भावबोध के स्तर पर घीसा की विधवा माँ का चित्र बड़ा ही हृदयस्पर्शी है।

आज यह अलग से बताने की जरूरत नहीं है कि विवेच्य रचना में घीसा को केन्द्र में रखकर अपने समय के समाज के मूलभूत अंतर्विरोधों का जीवंत-चित्रण करने की वजह से महादेवी जी की इस रचना और ऐसे ही कई रेखाचित्रों और संस्मरणों ने हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन खूबियों के बावजूद बहुत हद तक वस्तुन्मुखी कही जा सकने वाली विवेच्य रचना में उत्पीड़ित जन समुदाय की दुर्दशा के मूल कारण को लेकर कहीं कोई संकेत नहीं मिलता। उदाहरण के लिए 'कपड़े ही क्या थे । किसी दयावती का दिया हुआ एक पुराना कुरता, जिसकी एक आस्तीन आधी थी, एक अंगोछा जैसा फटा टुकड़ा' तो सवाल यह उठता है कि उसकी इस दयनीय स्थिति के लिए जिम्मेवार कौन हैं ? स्पष्ट ही यह एक ऐसा यक्ष-प्रश्न है जिसका उत्तर देने के लिए 'अभिव्यक्ति के ख़तरे' उठाने पड़ते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो जब तक लेखक सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था की दुखती रग पर उँगली रखने से कतराता रहेगा, वह ऐसे प्रश्नों के उत्तर तो क्या इन्हें रचना-क्रम में उठाने तक की स्थिति में नहीं होगा।

BRAOU

9.5 शब्दार्थ

अज्ञात	–	जो मालूम न हो
मलिन	–	गंदा
आर्द्रता	–	तरलता, संवेदनशीलता
अवकाश	–	छुट्टी
भदरंग	–	जिसका रंग उड़ गया हो
अद्वैत	–	साम्य, एकता
पछेली, ककना	–	एक प्रकार का आभूषण, गहना
उपेक्षा	–	तिरस्कार
संध्या के झुटपुटे	–	गोधूलि की वेला
विधुर	–	जिसकी पत्नी का निधन हो गया हो।
मानिनी	–	स्वाभिमान से युक्त
आस्तीन	–	बाँह के ढाँपने का कपड़े का हिस्सा
वैमनस्य	–	द्वेष, दुश्मनी
उन्मत्त	–	मदान्ध, मतवाला, बेसुध, बावला
कोलाहल	–	शोरगुल
आपरेशन	–	शल्य चिकित्सा, सर्जरी
उच्छ्वास	–	ऊपर को खींची हुयी श्वास (सांस लेना)
प्रगल्भ	–	उद्धत, उत्साही, साहसी, पुष्ट
धीर	–	धैर्यचित्त, जो शीघ्र घबराता न हो, गंभीर
क्षत, विक्षत	–	टूटा-फूटा

9.6 अभ्यास

9.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. पठित पाठ के आधार पर घीसा का चरित्र चित्रण कीजिए।
2. पठित पाठ के आधार पर महादेवी वर्मा की गद्य रचना की प्रगतिशीलता पर विचार कीजिए।
3. 'महादेवी का गद्य उनके पद्य की अपेक्षा अधिक खुला हुआ और ताजा है' - इस कथन की समीक्षा कीजिए।

9.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. ''घीसा यथार्थवादी रुझान वाली रचना है'' प्रमाणित कीजिए।

BRAOU

2. "..... उस दक्षिणा के सामने संसार में अब तक सारे आदान-प्रदान फीके जान पड़े" – इस गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

3. 'संस्मरण' और 'रेखाचित्र' के बीच साम्य – वैषम्य बतलाइए।

4. निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए

"जिस अवकाश के समय को लोग इष्टमित्रों तथा अन्य आमोद-प्रमोद के लिए सुरक्षित रखते हैं, उसीको मैं इस खंडहर और उसके क्षत - विक्षत चरणों पर पछाड़े खाती हुई भागीरथी के तट पर काट ही नहीं, सुख से काट देती हूँ।"

9.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

9.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न :1 पठित पाठ के आधार पर महादेवी वर्मा की गद्य-रचना की प्रगतिशीलता पर विचार कीजिए ।

उत्तर : प्राय: यह माना जाता है कि महादेवी वर्मा के काव्य और उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में परस्पर विरोध की स्थिति रही है। कुछ विद्वानों की तो स्पष्ट धारणा है कि महादेवी की कविताएँ और उनका गद्य-लेखन वस्तुत: दो विपरीत ध्रुवांतों पर स्थित हैं। ऐसे लोगों का कहना है कि कवयित्री महादेवी जहाँ रहस्यवादी-आध्यात्मवादी हैं वहीं उनकी गद्य-रचनाएँ यथार्थवादी हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो 'कीर का प्रिय आज बंधन खोल दो।' यदि एक रहस्य-भावना से ओतप्रोत गीत है तो 'घीसा' जैसी रचनाएँ यथार्थवादी हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि महादेवी वर्मा की कविता और उनका गद्य दोनों ही उनके उदार मानवतावाद या भाववाद से प्रेरित और प्रभावित हैं। महादेवी ने जिस जमाने में 'घीसा' और ऐसे अन्य संस्मरणात्मक रेखाचित्रों की रचना की थीं, उस दौर की 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' वाली ज्यादातर रचनाएँ दर्शन के क्षेत्र में भाववाद तथा राजनीति के क्षेत्र में सुधारवाद की सीमाओं के ही तहत लिखी जा रही थीं।

गौरतलब है कि सन् 1930 के आस-पास भारतीय उपमहाद्वीप में आर्थिक, सामाजिक संकट जब अत्यंत गहरा गया तो इससे तत्युगीन राजनीति भी प्रभावित हुई और भारतीय स्वाधीनता संग्राम सुधारवादी रुख की बजाय परिवर्तनगामी रुख अख्तियार कर रहा था । इसके चलते साहित्यकारों की चेतना में भी बदलाव आया । उदाहरण के लिए प्रेमचन्द के साहित्य में उपनिवेशवादी, सामंतवादी तथा इसके साथ-साथ सूदखोर महाजनी सभ्यता की स्पष्ट पहचान है । यह सही है कि उस दौर के सभी लेखकों की नज़र तेज़ी से बदलते आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक समीकरणों पर थी और अपनी-अपनी शक्ति एवं सीमा में वे साहित्य-रचना के क्षेत्र में वस्तुन्मुखी दृष्टि का परिचय दे रहे थे ।

उपर्युक्त विवेचन के मद्देनजर महादेवी की गद्य रचनाओं पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि भले ही कविता में वे निराला की तरह सामाजिकता से उस हद तक जुड पायी हों पर घीसा जैसे कई संस्मरणात्मक रेखा चित्रों में उन्होंने अपनी छायावादी सौन्दर्य-दृष्टि की परिधि को तोड़ दिया है । कविता से नितांत भिन्न महादेवी अपने संस्मरणों में समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यापक जन समूह के उत्पीड़ित जीवन को विषय वस्तु बनाती हैं । स्पष्ट ही ऐसी तमाम रचनाओं में ग्रामीण-जीवन के अन्तर्विरोधों को उजागर किया गया है । कहना न होगा कि ये वे जनपद हैं जहाँ तीव्र अन्तर्विरोध आज भी मौजूद है ।

'घीसा' में भले ही लेखकीय संवेदना का केन्द्र बिन्दु बालक घीसा ही है पर वह एक टाइप्ड् चरित्र है । दूसरे शब्दों में कहें तो घीसा तत्युगीन भारतीय जनपदों में रहने वाले निम्नवर्गीय परिवारों के बालकों का प्रतिनिधि पात्र है । महादेवी जी ने जिस सूक्ष्मता एवं मार्मिकता के साथ गंगा पार झूँसी जनपद के इर्दगिर्द रहने वाले लोगों और खास तौर से बच्चों का करुण रेखांकन किया है उसके मद्देनजर एक हद तक महादेवी के प्रगतिशील रुझान को रेखांकित किया जा सकता है ।

9.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न 1: 'संस्मरण' और 'रेखाचित्र' के बीच साम्य - वैषम्य बताइए ।

उत्तर : गौरतलब है कि संस्मरण और रेखाचित्र के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना अपने-आप में एक मुश्किल काम है । कारण यह है कि हिन्दी में एक विधा के रूप में संस्मरण का उद्भव और विकास ले-देकर रेखाचित्र के साथ ही हुआ है । दूसरे शब्दों में कहें तो हिन्दी में उपर्युक्त दोनों ही विधाएँ मोटे तौर पर एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और इसीके चलते कुछ विद्वान 'संस्मरणात्मक रेखाचित्र' जैसे पदों का प्रयोग करते रहे हैं । फिर भी यह कहा जा सकता है कि रचनात्मक प्रकृति की दृष्टि से रेखाचित्र जहाँ वस्तुनिष्ठ होता है वहाँ संस्मरण आत्मनिष्ठ ।

वस्तुत: 'रेखाचित्र' में एक ही वस्तु, घटना या चरित्र की प्रधानता होती है और इनसे संबंधित प्रमुख विशेषताओं को वहाँ रचना-क्रम में इस प्रकार उभारने की कोशिश की जाती है कि रचनाकार द्वारा अनुभूत जीवन-सत्य भलीभांति अभिव्यक्त हो सके। इससे थोड़ा भिन्न 'संस्मरण' में किसी व्यक्ति अथवा स्थान-विशेष की विशिष्टताओं को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि वह अपने-आप में छोटी-सी इकाई के रूप में सामने आता है और स्पष्ट ही यह विवेच्य व्यक्ति अथवा स्थान-विशेष के साथ गहन जुड़ाव के बगैर संभव नहीं हो सकता ।

प्रश्न 2: निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए ।

''जिस अवकाश के समय को लोग इष्ट - मित्रों से मिलने, उत्सवों में सम्मिलित होने तथा अन्य आमोद - प्रमोद के लिए सुरक्षित रखते हैं, उसी को मैं इस खंडहर और उसके क्षत-विक्षत चरणों पर पछाड़े खाती हुई भागीरथी के तट पर काट ही नहीं, सुख से काट देती हूँ ।''

उत्तर : प्रस्तुत अवतरण श्रीमती महादेवी वर्मा द्वारा रचित सुप्रसिद्ध संस्मरणात्मक रचना 'घीसा' से उद्धृत है । वस्तुत: यह लेखिका के खुद के आत्म वक्तव्य का एक ऐसा हिस्सा है जिसमें शिक्षित मध्यवर्गीय लोगों की सुविधाभोगी तथा अवकाशभोगी मानसिकता और जीवन-शैली पर जाने-अनजाने प्रश्न चिह्न खड़ा किया है ।

जाहिर है कि महादेवी जी इलाहाबाद में निवास करती थीं । पर अवकाश के दिनों में गंगा नदी के पार एक अत्यन्त पिछड़े जनपद झूँसी के खंडहर और उसके आस-पास के गाँवों के प्रति आत्यन्तिक आकर्षण उन्हें वहाँ खींच ले जाता था । स्पष्ट ही एक पिछड़े जनपद और वहाँ के हतभाग्य निवासियों के प्रति लेखिका के जुड़ाव का तात्कालिक या लाभ-लोभ से परिचालित कोई कारण नहीं था । साथ ही उनकी ऐसी यात्राओं के पीछे वह पूर्वाग्रही मध्यवर्गीय रोमांटिक मानसिकता भी सक्रिय नहीं थी जिसके तहत तथाकथित सम्भ्रांत अभिजन-वर्ग के सदस्य पूरे तामझाम के साथ छुट्टी मनाने के इरादे से किसी पहाड़ी इलाके में जाया करते हैं । यदि ऐसे लोग महादेवी जी के ग्रामीण जनपदों तथा वहाँ के निवासियों से आत्मीय लगाव को सहज-स्वाभाविक न माने तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं ।

कहना न होगा कि शहरी मध्यवर्ग की तमाम सक्रियताओं के केन्द्र में उसका अपना लाभ-लोभ स्थित होता है । इस लाभ-लोभ के व्याकरण के तहत जीवन जीने का आदी मनुष्य यह सोच भी नहीं सकता कि एक सुशिक्षित एवं सुविधासंपन्न रचनाकार गंगा पार के एक पिछड़े जनपद में रहनेवाले अशिक्षित लोगों और खास तौर से नंग-धड़ंग बच्चों से संवेदनात्मक स्तर पर जुड़कर वहाँ बार-बार जाने-आने की असुविधा मोल लेगा ।

बोध प्रश्नोत्तर

1) लेखिका ने गंगा पार झूँसी के आस-पास के गाँवो की स्त्रियों के पहनावे आदि का विस्तार से वर्णन करते हुए उनकी खस्ता माली हालत का ब्योरा प्रस्तुत करना चाहा है ।

2) लेखिका को वह गोधूलि-विशेष आज तक याद है क्योंकि उसी शाम उन्होंने घीसा को पहली बार देखा था । घीसा की गरीब माँ का अनुरोध स्वीकार कर दूसरे रविवार से उन्होंने उस बालक को अपना शिष्य

बनाया था ।

3) जिस प्रकार कोई प्रतिभावान चित्रकार थोड़ी-सी रेखाओं के द्वारा जीवंत चित्र निर्मित कर देता है, वैसे ही प्रस्तुत पाठ में महादेवी जी ने थोड़े-से शब्दों में घीसा, झूँसी के आस - पास के परिवेश तथा वहाँ की ग्रामीण स्त्रियों का जीवंत चित्रण किया है । साहित्य-क्षेत्र में विधा की दृष्टि से यह रचना एक रेखाचित्र है ।

9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. श्रृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा
2. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा

BRAOU

बोध प्रश्न : 1. राहुल सांकृत्यायन शांतिनिकेतन क्यों गये थे ?

.....

.....

.....

गर्मियों के आने में बहुत देर नहीं थी । दिमाग में यही बात चक्कर काटती थी कि अब की साल किधर जाएँ । भगवान सिंह का निमंत्रण आने के लिए था । बंगाल के एक अंचल में होने के कारण कलिम्पोंग जाया जाये....." कलिम्पोंग बिना पाकिस्तान जाये भी जा सकते हैं ।.....वहाँ.....शायद नगरवासियों को भी समय देना पड़े, किन्तु लाभ होगा, घरबारी होने के पास से बच जाएँगे । धर्मोदय सभा का निमंत्रण है ।..... अनी में रहने पर मिट्टी के तेल, नौकर-चाकर तथा पुस्तकों की रक्षा की चिन्ता से भी मुक्त हो जाएँगे । तिब्बती संस्कृति ..... का भी कुछ काम होगा । अनी में जाकर एक जगह घर बनाकर बसने को मैंने घरबारी होना कहा था ; लेकिन असली अर्थ में यह बात कलिम्पोंग में ही हुई ।

उस समय मिट्टी का तेल एक समस्या थी, वह दुर्लभ था । शान्तिनिकेतन में उसकी आवश्यकता नहीं थी, यदि 12 बजे रात के बाद पढ़ने-लिखने का काम न हो । अब टहलने का नियम रोज सबेरे पूरा होने लगा । हम पाँच-छः मील चले जाया करते थे । 10 तारीख को श्री निकेतन से एक मील और आगे तक गए । सुमन जी साथ रहते थे, कभी-कभी दूसरे विद्यार्थी भी साथ हो जाते थे । 16 फरवरी को अजय नदी की ओर गए । एक शताब्दी पहले यह नदी बहुत गहरी थी और बड़ी-बड़ी नावें इसमें होकर आती थीं । समुद्र के पास बालू मिट्टी के भर जाने से नदी का मुँह बन्द हो गया और फिर सारी धार फट गई । नदी भी अन्तः सलिला हो गयी, जिसके कारण जहाँ यातायात का एक सस्ता साधन हाथ से जाता रहा, वहाँ मलेरिया का प्रकोप भी बढ़ गया । सोचा था कि दस घण्टे लिखने और छह घण्टे पुस्तकों को पढ़कर सामग्री एकत्रित करने का काम किया जाये । 10 तारीख को मालूम हुआ गाँधी जी के हत्यारे गोडसे को फाँसी की साज हुई और दूसरे कितनों को कड़ी सजाएँ हुई । गोडसे तो वस्तुतः दूसरों के हाथ का हथियार बना था । वह दूसरों को पेशवा बनाने की आकांक्षा का बलिदान बना । पेशवा जब डेढ़ सौ साल पहले भारत की समस्या को हल करने में सफल नहीं हुए और इसी के कारण धरातल गये, तो क्या अब पेशवा पद पुनः स्थापित किया जा सकता है । हिन्दी भाषी क्षेत्र में शहर के उच्च जाति के लोगों में बहुत जगह जो प्रचार हुआ है, उसका कारण पहले तो मुस्लिम लोगों के बढ़ते हुए प्रभाव के विरोध के कारण था और अब कांग्रेस के प्रति असन्तोष ही उसका सम्बल रह गया है ।

12 फ़रवरी की रात को भोजन प्रो. तान्युशान के यहाँ हुआ । वह वर्षों से विश्वभारती में चीनी पढ़ाते हैं, और चीन तथा भारत के प्राचीन सम्बन्ध को दृढ़ करने का व्रत लिए हैं । उनका परिवार इस समय चीन गया हुआ था, जिसे लाने के लिए वह जाने वाले थे । चीनी भवन में चीनी और चीन सम्बन्धी दूसरी भाषाओं की पुस्तकों का बहुत अच्छा संग्रह है । प्रो तान्यु के प्रयत्न से बहुत अधिक लोग चीनी साहित्य में प्रगति नहीं कर सके, इसका कारण चीनी अक्षरों का जानना अत्यावश्यक हो, उसमें कैसे आदमी की रुचि और प्रगति हो सकती है । मैंने स्वयं चार-पाँच सौ अक्षरों को सीखते-सीखते हिम्मत हार दी थी । संभव है, यदि चीन में रहता तो आगे बढ़ जाता । लेकिन चीन की इस वर्णमाला से एक बड़ा लाभ यह है कि यदि हम अक्षरों के अर्थ को संस्कृत में समझते हों तो बहुत कुछ उसी तरह पढ़ सकते हैं, जैसे अंकों के संकेतों से । श्री शान्ति भिक्षु ने तिब्बती और चीनी में काफ़ी प्रगति की है । यह खुशी की बात थी । मैं अपने नियम के अनुसार इतवार को छुट्टी मनाया करता था, जो शान्तिनिकेतन में बुधवार को होती थी, इसीलिए अब मुझे भी वहीं के नियम का पालन करना चाहिए था । गर्मी बढ़ गई और उसके साथ साथ मच्छरों की भरमार हो गयी । मसहरी के भीतर लिखना-पढ़ना आसान काम नहीं है, पर किसी तरह गुजारा करना पड़ता था । एक दिन अपने और द्विवेदी जी के लिये कुरते, चादर, तौलिया के कपड़े सिलाए । दर्जी से कपड़ों को चार दिन में सीकर देने के लिए कह दिया । महंगा होने पर भी हमारा देश दूसरे देशों से अब भी सस्ता है ।

BRAOU

14 फ़रवरी को डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के लखनऊ से डाक्टर की उपाधि पाने के उपलक्ष्य में सभा हुई। शान्तिनिकेतन की इस सभा से मैं बहुत प्रभावित हुआ । उसे न आधुनिक कहना चाहिए, और न प्राचीन । वह दोनों की कितनी ही बेकार रूढ़ियों से मुक्त थी । एक कलापूर्ण ढंग से सुन्दर चौक पूरा गया था, जिस पर आम्र मंजरी के साथ मिट्टी का सुन्दर कलश रखा गया था । उससे जरा-सा हटाकर एक पतला लम्बा-सा तख्त पड़ा था, जिसके ऊपर पुरोधा (सभापति) और दो एक व्यक्ति बैठे थे । सभा का आरंभ और समाप्ति शंखनाद से हुई । आचार्य क्षितिमोहन सेन पुरोधा थे । बीच-बीच में भाषण के साथ-साथ मधुर संगीत भी होता था । इस एक सभा से डॉ. रवीन्द्र की महत्ता साफ दिखाई पड़ती थी । सर्वतोमुखीन सांस्कृतिक प्रगति कैसे की जा सकती है, इसका उदाहरण उन्होंने विश्वभारती के रूप में रखा था, मुझे इस बात का अफसोस रहा कि निमन्त्रित होने पर भी महाकवि के जीवन में मैं यहाँ नहीं आ सका और न अवसर मिलने पर भी उनके दर्शन कर पाया ।

बोध प्रश्न : 2. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लखनऊ से डाक्टर की उपाधि पाने के संदर्भ में सभा का आयोजन शांतिनिकेतन में किस प्रकार हुआ ?

.....

.....

.....

शान्तनिकेतन की चाँदनी मुझे बहुत प्रखर और सुन्दर मालूम होती थी । शायद वहाँ के वातावरण से बहुत प्रभावित होने के कारण तथा महाकवि के सामने उपस्थित न होने के अपराध के ख्याल से यह बात थी। रात भार पक्षियों के मनोहारी कलख के बारे में क्या कहा जाए । कोयलों ने तो अखण्ड व्रत ले रखा था । यह सर्द मुल्क की चिड़ियाँ यहाँ गर्मी में मरने क्यों आती हैं । आमकानन दिखाई देती थी, जिसके पास जाने से उसकी मधुर गंध सचमुच ही मन को मस्त कर देती थी ।

मैं बौद्ध-संस्कृति के लिखने में तन्मय था । पुस्तकाध्यक्ष तथा बृहत्तर भारत के गंभीर विद्वान श्री प्रभात कुमार मुखोपाध्याय मेरी हर तरह की सहायता करने के लिए तैयार थे तो भी परिभाषा-निर्माण की ओर से मेरा ध्यान हटा नहीं था । बनारस यूनिविर्सिटी के प्रोफेसर रामचरण जी ने जब अपने पत्र में बतलाया कि काँच संबंधी (ग्लास टेक्नोलाजी के) पारिभाषिक शब्द जमा हो गए तो बड़ी खुशी हुई । प्रयाग और पटना में अभी जाड़ा खत्म नहीं हुआ था, लेकिन यहाँ तो आने के साथ ही वह बिदा हो चुका था । शान्तिनिकेतन के वातावरण में बौद्ध संस्कृति लिखने के समय मुझे ख्याल आया, अब हमारे दूसरे चार धाम बनने चाहिए, जिसमें उत्तर में तुंगहांग्र पूर्व में अंकोरवाट, दक्षिण में बोरोबुदुर और पश्चिम में बामियान हो । फिर तीर्थ भी बनाने होंगे, जो सभी भारतीय संस्कृति से प्रभावित देशों में बिखरे रहे । श्रद्धालु भारतीय इन तीर्थों और धर्मों के दरस-परस के लिए जाएँ ।

हम मलेरिया की भूमि के नजदीक थे, मच्छरों का प्रहार चल ही रहा था, इसीलिए 22 फ़रवरी को यदि बुखार झाँकने के लिए आया, तो अनहोनी बात नहीं थी । मैंने क्विनैन की दो टिकिया उसे थमा दी, सोचा देखे वह इतने से तृप्त हो जाता है, या कल फिर आता है । दर असल उसी वक्त बुखार था । आठ बजे सबेरे से लेकर 12 बजे तक, बीच के दो घण्टों को छोड़कर 16 घण्ठों जुटा हुआ था । मुझे सुगम की जोड़ी में यदि एक गरियार निकल जाये, तो काम नहीं बनता । लिखी हुई कापियों को शान्ति जी दोहराते, भाषा को दुबारा माँजने और हेडिंग आदि का सुझाव देते जाते थे ।

23 तारीख को काल-भवन के नये घर में बने भित्तिचित्रों को देखने गए । कवि गुरु का आश्रम कविता और कला के लिए विशेष तौर से महत्व रखता है । कला का प्रेम, मेरा शायद गंभीर नहीं था, इसीलिए इस पवित्र स्थान के देवता रुष्ट हो गए थे । एक चित्र को देखने के लिए मैं मेज पर गिर पड़ा । पर, देवता अपने रोष को केवल मजाक से ही पूरा करना चाहते थे । इसलिए वह स्थान इतना सकरा था, और नीचे जैसी चीजे थीं, उनमें अचानक गिरने पर मेरा सिर फूट सकता था, हड्डी भी टूट सकती थी । कवि गुरु के सम्पर्क में आकर यहाँ के देवता इतने

इकाई - 10 : शान्तिनिकेतन में - राहुल सांकृत्यायन

10.0 उद्देश्य

10.1 पाठ एवं लेखक परिचय

10.2 मूल पाठ

10.3 सारांश

10.4 समीक्षा

10.5 शब्दार्थ

10.6 अभ्यास

10.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

10.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

10.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

10.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

10.7.2 मध्यम् श्रेणी के प्रश्नोत्तर

10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में विद्वान लेखक राहुल सांकृत्यायन की रिपोर्ताज शैली में शान्तिनिकेतन में पर प्रकाश डाला गया है । इस पाठ के अध्ययन से आप

- शान्तिनिकेतन के सांस्कृतिक महत्व को समझ सकेंगे ।
- राहुल सांकृत्यायन के विचारों पर प्रकाश डाल सकेंगे ।
- साहित्य की रिपोर्ताज़ शैली से अवगत हो सकेंगे ।

BRAOU

10.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

रिपोर्ताज साहित्य हिन्दी को पश्चिमी साहित्य की देन है । रिपोर्ताज तथ्य प्रधान होते हैं । कहानी कल्पना प्रधान होती है, उसमें निहित घटनाएँ लेखक की विचारधारा के अनुसार रूप ग्रहण कर लेती हैं । रिपोर्ताज में लेखक घटनाओं को बदलता नहीं । उनका यथातथ्य वर्णन करता है । अत : रिपोर्ताज हमें घटनाओं या स्थानों का प्रामाणिक विवरण देते हैं । इस दृष्टि से रिपोर्ताज अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । पंडित राहुल सांकृत्यायन ने देश विदेश का भ्रमण किया है तथा वहाँ की उपयोगी बातों को अपनी यात्रावली में रिपोर्ताज शैली में अंकित किया है । प्रस्तुत रिपोर्ताज 'शान्तिनिकेतन में राहुल जी के शांतिनिकेतन में अल्प प्रवास का वर्णन है । इसमें लेखक ने शांतिनिकेतन का सुन्दर वर्णन किया है । इसके माध्यम से भारतीय संस्कृति को महाकवि रवीन्द्र के योगदान का महत्व स्पष्ट हो जाता है ।

(आ) लेखक परिचय

प्रकाण्ड विद्वान और स्वतंत्र विचारक राहुल सांकृत्यायन बीसवीं शताब्दी के हिन्दी के महान साहित्यकार हैं। आपका जन्म 9 अप्रैल 1883 ई को पन्दहा ग्राम में हुआ। राहुल जी के बचपन का नाम केदारनाथ पाण्डेय था। पिता का नाम गोवर्धन पाण्डेय और माता का नाम कुलवन्ती था। राहुल जी की माता कुलवन्ती माता-पिता की इकलौती संतान होने के कारण अपने पित्रु-गृह में रहती थीं। राहुल जी का जन्म वहीं हुआ था और राहुल जी का विकास नाना राम शरण पाठक के कड़े अनुशासन में हुआ था। राहुल जी को नियमित रूप से किसी शिक्षा संस्थान में पढ़ने का अवसर जीवन पर्यन्त नहीं मिला। कलकत्ता में इन्होंने घर पर ही अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। बनारस में सातवें दर्जे में अंग्रेजी ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रवेश लिया। लेकिन यह कम विच्छिन्न हो गया। राहुल जी में शिक्षा के प्रति लगन और रुचि आरंभ से लेकर जीवन के अंतिम क्षण तक रही। लेकिन स्कूली या विश्वविद्यालयी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर इन्हें कभी नहीं मिला। 1918 में वे मध्यमा परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए और उन्होंने शास्त्री परीक्षा भी दी। इन्हें संस्कृत और पाली का विशेष ज्ञान था। सन् 1928 में लंका विश्वविद्यालय ने इन्हें त्रिपटिकाचार्य की उपाधि से विभूषित किया और काशी के पंडितों ने उन्हें महापंडित विशेषण से सम्मानित किया।

लंका में रहते समय इनकी रुचि ऐतिहासिक शोध की ओर प्रवृत्त हुई। इसके साथ इन्होंने एशिया और स्लाव देशों की अनेक लुप्त भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। वे छत्तीस भाषाओं के ज्ञाता थे। भागलपुर विश्वविद्यालय ने आप को डी.लिट. की मानद उपाधि प्रदान की।

राहुल जी के मन में ज्ञान और पर्यटन की तीव्र भूख बचपन से ही थी। उन्होंने रंगून, लंका, जापान, रूस, कोरिया, ईरान आदि कई देशों की यात्रा की। राहुल जी ने कई अधिवेशनों की अध्यक्षता की। राहुल जी का साहित्यिक जीवन 1927 से प्रारंभ होता है। वे 1961 तक अर्थात 35 वर्षों तक लिखते रहे। इस अवधि में उनके लगभग 128 ग्रंथों का प्रकाशन हुआ।

उनके 8 मौलिक उपन्यास प्रकाशित हुए जिनमें सिंह सेनापति, दिवोदास, विस्मृत यात्री, मधुर स्वप्न आदि प्रसिद्ध हैं। उनके 9 अनूदित उपन्यास और चार कहानी संग्रह प्रकाशित हुए। विपुल मात्रा में उन्होंने यात्रा-साहित्य की रचना की। मेरी यूरोप यात्रा, रूस में पच्चीस मास, चीन में क्या देखा, घुमक्कड शास्त्र आदि रचनाएं उनकी यात्रा साहित्य की उल्लेखनीय रचनाएं हैं। मेरी जीवन यात्रा नाम से उनकी आत्मकथा का भी प्रकाशन हुआ था। साहित्य और साहित्येतिहास से संबंधित उनके लगभग 15 ग्रंथ प्रकाशित हुए। राजनीति, साम्यवाद, दर्शन, बौद्ध धर्म आदि विषयों से संबंधित उनकी कई पुस्तकें उल्लेखनीय हैं।

1963 में भारत सरकार ने इन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया था। 14 अप्रैल 1963 को उनका देहान्त हुआ था। राहुल जी का व्यक्तित्व अपनी विद्वत्ता और बहुलता के कारण अद्वितीय है।

10.2 मूल पाठ

स्टेशन से हम सीधे शान्तिनिकेतन पहुँचे और पहले काम की फिक्र में पड़े। शान्तिनिकेतन में बृहत्तर भारत के संबन्ध में जितनी पुस्तकें हैं, उतनी कलकत्ता यूनिवर्सिटी को छोड़कर भारत में और कहीं नहीं मिलेंगी, तो भी इन पुस्तकों को पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। अब हम 28 तारीख तक के लिए पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी के अतिथि थे, द्विवेदी जी के साथ इतनी घनिष्ठता के साथ रहने का यह पहला अवसर था, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी इससे पहले उनके साथ कम घनिष्ठता थी। मैं उनकी लेखनी और निर्णय शक्ति का भारी प्रशंसक हूँ। कहा करता था, हिन्दी के साहित्यकार जब ऐसी गंभीरता प्राप्त करेंगे, तब हिन्दी तेजी से आगे बढ़ेगी। द्विवेदी जी के परिवार के सभी लड़के-लड़कियाँ मेरे मनोरंजन और सहायता के लिए तैयार रहते थे।

BRAOU

क्रूर नहीं हो सकते थे । वर्षों से उनमें कवि ने मानवता का प्रचार किया था, फिर इसका फल क्यों न होता ? शान्तिनिकेतन में रहने जिस तरह मैं अपने कार्य में व्यस्त था, उसके कारण दिल खोलकर सभी चीजों को देखना मुश्किल था । पर मैंने उधर से अपनी आँखे मूँद नहीं रखी थी । प्रभात बाबू के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मैं ने कहा, यह पुस्तक आप को ही अर्पित करूँगा । प्रभात बाबू ने अपने अमुद्रित बहुत से लेख मुझें इस्तेमाल करने के लिए दिये, उन्होंने मध्य एशिया के बारे में बहुत-सी जानकारी प्रदान की ।

बोध प्रश्न : 3. कवि गुरु का आश्रम किसके लिए विशेष महल लगता है ?

.....

.....

.....

24 फ़रवरी की शाम को आद्यश्रेणी (12 वर्ष तक के बच्चों) की सभा देखी । इसमें भाषण, निबन्ध, कहानी, स्वरचित-पर रचित कविता का पाठ हुआ । काफ़ी बड़ी श्रोतृ मण्डली थी । बच्चों ने गीत भी गाए, नृत्य भी किए। हर्ष प्रकट करने के लिए ताली पीटने की जगह शान्तिनिकेतन में साधु साधु कहा जाता । प्राचीन काल में भी ऐसा ही किया जाता था, इसीसे साधुवाद शब्द हमारे यहाँ चला। धन्यवाद भी प्राचीनकाल में हर्ष और कृतज्ञता प्रकट करने के लिए धन्य धन्य के भावोद्रेक का ही परिचायक था, जिसके अर्थ को हम पूरी तरह न समझकर धन्य-धन्य कहने की जगह धन्यवाद कहते हैं। शान्तिनिकेतन में मानवता की शिक्षा देने का प्रयत्न हो रहा है। यहाँ प्राचीनता है, पर मूढ़ता नहीं, नवीनता है किन्तु छिछलापन नहीं, कला है किन्तु कामुकता नहीं, स्वतंत्रता है किन्तु उच्छृँखलता नहीं। इन्ही भावों को लेकर मैं 25 फ़रवरी को वहाँ से बिदा हुआ।

बोध प्रश्न : 4. हर्ष प्रकट करने के लिए ताली पीटने की जगह शान्तिनिकेतन में क्या कहा जाता था ?

.....

.....

.....

BRAOU

10.3 सारांश

लेखक शान्तिनिकेतन में पंडित हजारी द्विवेदी के अतिथि बन कर रहे । राहुल जी एक महन् विद्वान एवं सफल लेखक थे । गर्मी की छुट्टियों का सदुपयोग अधिक करने की दृष्टि से उपयुक्त स्थान की तलाश में थे ।

शान्तिनिकेतन में 12 बजे रात तक पढ़ने लिखने की पूरी सुविधा थी । राहुल जी प्रतिदिन प्रातः 3-4 मील टहलने जाया करते । शान्तिनिकेतन से कुछ दूर अजय नदी थी । कभी यह नदी अपने जल प्रवाह के माध्यम से आवागमन का साधन थी । किन्तु समुद्र के किनारे रेत जमते जाने के कारण वह अन्तः सलिला हो गई थी । उसमें संचित जल अब मच्छरों के कारण मलेरिया का कारण बनता । शान्तिनिकेतन में ही राहुल जी को गाँधी जी के हत्यारे गोड़से को फाँसी मिलने का समाचार मिला, राहुल जी की दृष्टि में गोड़से तो दूसरों की स्वार्थी नीतियों का खिलौना था ।

शान्तिनिकेतन में चीनी भाषा के प्रोफेसर तान्युशान थे । वे विश्व भारती में चीनी पढ़ाते । इस तरह वे भारत और चीन के संबंधों को दृढ़ करना चाहते थे । किन्तु चीनी भाषा इतनी दुरूह थी कि उसे सीखने के लिए 5-6 हजार शब्दों का ज्ञान आवश्यक था अतः अधिक लोग इसमें प्रगति नहीं कर सके ।

15 फ़रवरी को डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के लखनऊ विश्वविद्यालय से डाक्टरी की उपाधि पाने के उपलक्ष्य में सभा हुई । यह सभा भारतीय परम्परा एवं आधुनिक प्रणाली का सुन्दर संयोग थी । सभा में चौक पूर

कर उस पर आम्रजरी युक्त कलश रखा हुआ था । सभा का प्रारंभ और समापन शंख ध्वनि से हुआ । आचार्य क्षितिमोहन सेन सभापति थे। भाषण के साथ-साथ बीच-बीच में मधुर संगीत भी होता था । सर्वतोमुखी सांस्कृतिक प्रगति कैसे की जा सकती है उसका उदाहरण विश्व भारती के रूप में कविगुरु ने हमारे सामने रखा है।

शान्तिनिकेतन की चाँदनी रम्य थी । रात्रि में भी कोयल चल का मधुर स्वर मुखरित होता था । राहुल जी बौद्ध संस्कृति लिखने में तन्मय थे । मच्छरों के कारण मच्छरदानी में बैठकर कार्य करना पड़ता था । पुस्तकाध्यक्ष तथा बृहत्तर भारत के विद्वान श्री प्रभात मुखोपाध्याय के सहयोग से कार्य हो रहा था । सुमन जी भी सहयोग कर रहे थे। प्रतिदिन लगभग सोलह घण्टे कार्य करते थे । बौद्ध संस्कृति लिखते समय इन्हें विचार आया कि धार्मिक तीर्थस्थल चार-धाम की भांति बौद्धों के भी चार-धाम बनने चाहिए तथा अन्य अनेक मन्दिरों का निर्माण होना चाहिए।

लेखन के बीच ही मच्छरों के प्रकोप से इन्हें मलेरिया ने घेरा, पर क्विनैन की गोलियों से उसका शमन हुआ। 23 तारीख को कलाभवन के भित्तिचित्रों को देखने गए । वहाँ उँचाई से गिर पड़ने के कारण चोट लगी । चोट सह्य थी। 24 फ़रवरी की शाम को आद्य श्रेणी के विद्यार्थियों की सभा देखी। बच्चों ने भाषण, निबंध, कहानी के साथ ही साथ स्वरचित एवं पर रचित कविताओं का पाठ किया। नृत्य भी किये। शान्तिनिकेतन में ताली बजाने के स्थान पर साधु-साधु कहने की परम्परा थी । यहाँ की वस्तुओं से परिचित होने पर राहुलजी को कविगुरु रवीन्द्रनाथ के जीवन-काल में शान्तिनिकेतन न आने का दु:ख हुआ । अपना कार्य पूर्ण कर 25 फ़रवरी को इन्होंने शान्तिनिकेतन से प्रस्थान किया ।

10.4 समीक्षा

'शान्तिनिकेतन में' रिपोर्ताज़ शैली में लिखा गया यात्रा का वर्णन है । लेखक ने शान्तिनिकेतन में अपने आवास का वर्णन किया है। लेखक बीच-बीच में शान्तिनिकेतन के महत्व का वर्णन करते जाते हैं तथा शान्तिनिकेतन की महत्वपूर्ण वस्तुओं का वर्णन करते हैं इस वर्णन के साथ आर्थिक एवं राजनैतिक विचार भी बीच-बीच में प्रस्फुटित हो पड़ते हैं।

यह लेख रिपोर्ताज़ शैली के लेखों का एक अनूठा लेख है। इसमें निबंध की भाँति विचारों में एकरसता एवं प्रवाह नहीं है। कहानी की भाँति घटनाओं के वर्णन में तारतम्य भी नहीं है। घटना का वर्णन करते-करते लेखक अचानक किसी अन्य विचार को प्रस्तुत करने लगते हैं। जैसे कपड़े सिलवाना तथा गोड़से की फाँसी पर विचार प्रकट करना। रिपोर्ताज में बीच में अन्य प्रसंगों पर भी विचार प्रकट किया जा सकता है।

लेखक ने शान्तिनिकेतन का जो दृश्य खींचा है वह रमणीय है । शान्तिनिकेतन के महत्व को सुन्दर ढंग से उभारा गया है । शान्तिनिकेतन में प्राचीन एवं अर्वाचीन के सुसंयोग के वर्णन से महाकवि रवीन्द्र की भारतीय संस्कृति के सर्वांगीण विकास की कल्पना पर प्रकाश डाला गया है । इस तरह इस लेख में कई महत्वपूर्ण तथ्य छिपे हुए हैं । घटनाओं के वर्णन में सजीवता है । लेख की भाषा सरल एवं शुद्ध है । लेखक का बौद्ध संस्कृति से प्रेम स्पष्ट होता है।

10.5 शब्दार्थ

शान्तिनिकेतन	:	कलकत्ता से कुछ दूर सुन्दर प्राकृतिक स्थल है । यहाँ पर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने साहित्य, कला एवं संस्कृति का एक शिक्षणालय स्थापित किया है जिसे विश्वभारती के नाम से जाना जाता है । आज यह एक विश्वविद्यालय का रूप ले चुका है ।

BRAOU

बृहत्तर भारत	:	भारत के बाहर, बर्मा, जावा, सुमात्रा, बोर्नियों आदि पर भी भारतीय संस्कृति का प्रभाव है । अत : सांस्कृतिक रूप से इन देशों को मिलकर भारत को बृहत्तर भारत कहा जाता है ।
निर्णय शक्ति	:	निश्चय करने की क्षमता
घरबारी	:	गृहस्थ
श्रीनिकेतन	:	शान्तिनिकेतन से तीन किलो मीटर दूर एक स्थान। यहाँ पर कवि श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शिल्प उद्योग आदि का शिक्षण केन्द्र स्थापित किया था।
अन्तःसलिला	:	जिस नदी का पानी बाहर से सूख जाय, धरती के भीतर ही भीतर बहे ।
पेशवा	:	नेता, मुखिया
वर्णमाला	:	किसी भाषा के समस्त अक्षर
मसहरी	:	मच्छरदानी
सर्वतोमुखीन	:	पूर्ण रूप से
कलरव	:	पक्षियों की ध्वनि
चार धाम	:	हिन्दुओं के चार प्रमुख तीर्थों का समूह । ये देश में चार दिशाओं में हैं । हिन्दू धर्म में चार धाम हैं--उत्तर में बद्रिकाश्रम, दक्षिण में रामेश्वरम्, पूर्व में पुरी एवं पश्चिम में द्वारिका इस से देश में सम्पर्क एवं एकता की भावना का विकास होता है ।
दरस-परस	:	भेंट
जुटना	:	किसी काम में पूरी तरह लगे रहना
कंधे से कंधा मिलाना	:	पूरा सहयोग देना
श्रोतृ मण्डली	:	सुनने वालों का समूह
साधु-साधु	:	बहुत अच्छा, बहुत अच्छा
भावोद्रेक	:	भावावेश, जोश
मूढता	:	मूर्खता
छिछलापन	:	उथलापन
कामुकता	:	वासना
उच्छृंखल	:	निरंकुश

10.6 अभ्यास

10.6.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. राहुल सांस्कृत्यायन ने अपने शान्तिनिकेतन में बिताए दिनों को रिपोर्ताज शैली में अंकित किया है – इसे स्पष्ट कीजिए।

BRAOU

2. प्रो. तान्यशान का उद्देश्य क्या था? अपने उद्देश्य में वे अधिक सफल क्यों नहीं हो सके ?

10.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. राहुल सांस्कृत्यायन बौद्ध संस्कृति के लिए क्या करना चाहते थे ?
2. राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार शान्तिनिकेतन में किस को प्राप्त करने का प्रयत्न हो रहा है ?
3. निम्न गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए

''इस एक सभा से ही रवीन्द्र की महत्ता साफ दिखाई पड़ती थी । सर्वतोमुखीन सांस्कृतिक प्रगति कैसे की जा सकती हैं, इसका उदाहरण उन्होंने विश्वभारती के रूप में रखा था''

10.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

10.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न 1. प्रो. तान्यशान का उद्देश्य क्या था । अपने उद्देश्य में वे अधिक सफल क्यों नही हो सके ?

उत्तर : प्रो. तान्यशान शान्तिनिकेतन में चीनी भाषा के प्रोफ़ेसर थे । राहुल जी 12 फ़रवरी को उनके यहाँ भोजन पर आमंत्रित थे । राहुल जी को ज्ञान हुआ कि प्रो. तान्यशान कई वर्षों से विश्व-भारती में चीनी भाषा एवं साहित्य पढ़ाते थे । भारतीयों को चीनी पढ़ाकर वे भारत और चीन के संबंधों को दृढ़ बनाना चाहते थे। विश्व-भारती में चीनी भवन में चीनी पुस्तकों तथा चीन से संबंधित अन्य भाषाओं की पुस्तकों का बहुत बड़ा संग्रह है। प्रो. तान्यशान के अथक प्रयास के बाद भी अधिक लोग चीनी भाषा सीखने में प्रगति न कर सके । इसका कारण यह था कि चीनी भाषा अत्यन्त कठिन है। भाषा सीखने के लिए चीनी के पाँच-छ: हजार अक्षरों को याद करना पड़ता है। इतने सारे शब्दों को स्मरण कर लेना एक तरह से असंभव-सा लगता है । यदि कोई चीन में हो जहाँ चारों तरफ वही भाषा बोली जाती है तब तो शायद चीनी अक्षरों को याद करना संभव हो सके । किन्तु भारत में रहकर जहाँ चीनी भाषा का कोई अस्तित्व ही नहीं है , इतने अधिक अक्षर याद रखना संभव नहीं था । अत: लोग चीनी सीखना प्रारंभ तो अवश्य करते पर बीच में ही हिम्मत हार जाते। राहुल जी ने भी चीनी सीखना शुरू किया किन्तु चार-पाँच सौ अक्षर ही सीख पाए। उससे आगे बढ़ना संभव न हो सका। चीन की वर्णमाला से एक बड़ा लाभ यह है कि यदि हम अक्षरों के अर्थ को समझते हैं तो बहुत कुछ उसी तरह पढ़ सकते हैं। अंकों के संकेतो में श्री शान्ति भिक्षु ने तिब्बती और चीनी में काफी प्रगति की है। किन्तु यह आम जनता की सामर्थ्य के बात नहीं है। इसीलिए प्रो. तान्युशान अपने उद्देश्य में अधिक सफलता न पा सके।

10.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

2. राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार शांतिनिकेतन में किस को प्राप्त करने का प्रयत्न हो रहा है ?

उत्तर : महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगौर ने भारत की सर्वतोमुखीन सांस्कृतिक प्रगति को प्राप्त करने की दृष्टि से शिक्षा देने के लिए शांतिनिकेतन में विश्व भारती नामक विश्व विद्यालय की स्थापना की। शांतिनिकेतन में बृहत्तर भारत से संबंधित कई पुस्तकें हैं। यहाँ मानवता की शिक्षा देने का प्रयत्न हो रहा है। शांतिनिकेतन में प्राचीनता को आदर के साथ स्वीकार करते हैं। लेकिन यहाँ मूढ़ता नहीं है। यहाँ नवीनता दिखाई देती है किंतु क्षुद्रता को इस में स्थान नहीं है। यहाँ कला को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है लेकिन कामुकता को नहीं। यहाँ स्वतंत्रता दी जाती है लेकिन कहीं भी उच्छृंखलता नहीं है। कवि गुरु का यह आश्रम कविता और कला के लिए विशेष महत्व रखता है।

3. निम्न गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए :-

''इस एक सभा से ही स्वीन्द्र की महत्ता साफ दिखाई पड़ती थी । सर्वतोमुखीन सांस्कृतिक प्रगति कैसे की जा सकती है, इसका उदाहरण उन्होंने विश्व भारती के रूप में रखा था''

BAOU

उत्तर : प्रस्तुत अवतरण में श्रीमान् पंडित राहुल सांकृत्यायन ने शान्तिनिकेतन में आयोजित एक सभा का वर्णन किया है । शान्तिनिकेतन में कवि कुल गुरु श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विश्वभारती की स्थापना की । विश्वभारती में आयोजित एक संभा से ही श्री रवीन्द्र की समग्र जीवन-दृष्टि का ज्ञान हो जाता है सभा में प्राचीन भारतीय संस्कृति की अच्छी बातों को स्वीकार किया गया था तथा अनावश्यक रूढ़िग्रस्त नियमों को छोड़ दिया गया था । उसमें आधुनिक एवं प्राचीन का सुन्दर संयोग दिखाई पड़ता है । इस एक सभा से ही राहुल सांकृत्यायन जैसे महान् विद्वान अत्यन्त प्रभावित हो गए । उन्होंने अनुभव किया था कि श्री रवीन्द्रनाथ में भारतीय संस्कृति को पूर्ण रूप से विकसित करने और आगे बढ़ाने की अद्‌भुत कल्पना शक्ति एवं क्षमता थी । रवीन्द्र ने हमारी सर्वतोमुखी सांस्कृतिक प्रगति को दृष्टि में रखकर विश्व भारती को साकार किया था । शांतिनिकेतन में मानवता की शिक्षा दी जाती है ।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1) राहुल सांकृत्यायन, पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के अतिथि बन कर, शांतिनिकेतन में मिलनेवाली बृहत्तर भारत से संबंधित पुस्तकों की सहायता से बौद्ध संस्कृति पर पुस्तक लिखने शांतिनिकेतन गये थे ।

2) सभा का जो आयोजन किया गया था वह आधुनिक और प्राचीन संप्रदायों का सुरुचिपूर्ण मिश्रण था । कलापूर्ण ढंग से सुन्दर चौक पूरा गया था और उससे कुछ ही दूर पर एक पतला लम्बा तख्त पड़ा था । उस पर सभापति बैठते थे । सभा का आरंभ और समाप्ति शंखनाद से हुई थी ।

3) कवि गुरु का आश्रम कविता और कला के लिए विशेष महत्व रखता है।

4) हर्ष प्रकट करने के लिए साधु साधु कहा जाता था ।

10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. राहुल सांकृत्यायन का सर्जनात्मक साहित्य-डॉ सुरेश धाम, निर्माण प्रकाशन 19 पा, राम नगर, लोनी रोड, शाहदरा, दिल्ली-32

2. राहुल जी का जीवनी-यात्रा-साहित्य, जनक दुलारी सहगल, चिल्ड्रन बुक सोसाइटी, महरौली, नई दिल्ली-110030

BRAOU

BRAOU

खण्ड - 3 : हिन्दी कहानी

BRAOU

विषय प्रवेश

'कहानी' वस्तुत : मानव जीवन के साथ ही जन्मी और विकसित हुई। कहानी की कहानी उतनी ही पुरानी है जितनी मानव की जिज्ञासा वृत्ति । यदि साहित्य का सम्बन्ध जीवन से है तो कहानी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से साहित्य की हर विधा में विद्यमान है।

अंग्रेजों के आगमन के साथ उनकी भाषा, साहित्य और सभ्यता से हमारा परिचय हुआ और बाद में एक नई सामाजिक और राजनीतिक चेतना की लहर सम्पूर्ण राष्ट्र में व्याप्त हो गई। आधुनिक शिक्षा के कारण तार्किक और विश्लेषणात्मक, दृष्टिकोण विकसित हुआ और इसी पृष्ठभूमि में आधुनिक हिन्दी कहानी का जन्म हुआ। कालान्तर से सामाजिक और राष्ट्रीय आन्दोलन को दिशा बोध देने का गुरुतर भार भी कहानी ने उठाया और आजतक कहानी वर्तमान समस्याओं से जुड़ी रहकर मानव जीवन के अनकहे और अनछुए जीवन को उभार रही है। 'कहानी' ने नि:संन्देह शिल्प के सन्दर्भ में पश्चिम से प्रभाव ग्रहण किया किन्तु जमीन भारतीय है। आधुनिक हिन्दी कहानी के विकास में अंग्रेजी साहित्य की प्रेरणा और प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता।

हिन्दी की प्रारंम्भक कहानियों में किशोरी लाल गोस्वामी की 'प्रणायिनी परिणय' (1887), 'इन्दुमती' (1900) तथा रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1907) आदि उल्लेखनीय हैं। प्रारम्भिक काल की कहानियों में, स्थितियां, घटनाएं और चरित्र प्राय: सामन्ती होते थे। इस काल की हिन्दी कहानियों में तत्कालीन समाज के आदर्शों, रूढ़ीवादी परम्पराओं, प्रेम, मित्रता आदि की तो झलक मिलती थी लेकिन उन कहानियों में निखार नहीं था। खड़ी बोली का परिमार्जित स्वरूप भी नहीं था। फिर भी इस काल की कहानियों का अपना ऐतिहासिक महत्व है।

परम्परागत आदर्शों और महाजनी सभ्यता का चित्रण प्रेमचन्द की कहानियों में बहुलता से मिलता है। प्रेमचन्द कालीन कहानियों में विदेशी सत्ता के प्रति रोष और घृणा का आभास मिलता है जिससे अंग्रेजों के विरुद्ध आन्दोलन को बल मिलता था । हिन्दी साहित्य में पहली बार प्रेमचन्द युग में ही शोषित किसान और मजदूरों की दयनीय स्थिति को उजागर करते हुए उनमें अधिकार चेतना विकसित की गई थी । प्रेमचन्द युगीन कहानियों में समाजसुधार राष्ट्रीय सन्दर्भों में चारित्रिक गुण तथा नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा पर अधिक बल दिया गया था । स्वयं प्रेमचन्द अपनी कहानियों में पात्रों की आर्थिक सम्पन्नता की अपेक्षा मानवीयता और सात्विकता पर अधिक जोर देते रहे हैं । इस कोटि में 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' 'मन्त्र' 'पंच परमेश्वर' 'नमक का दारोगा' आदि कहानियां देखी जा सकती हैं।

महाजनी सभ्यता के शोषण तंत्र को उखाड़ फेंकने वाली कहानियाँ, प्रेमचन्द युग के अन्तिम दौर में अपना स्वर बदलने लगी थीं। इस काल में जयशंकर प्रसाद की कहानी 'आकाश दीप' 'पुरस्कार', चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' जैसी कहानियां, आदमी के रागात्मक सम्बन्धों की भावुक कोमलता को उभारने वाली हैं। इस काल की कहानियों में एक बदलाव और आया कि वे समाधान न बताकर वास्तविक चित्रण करते हुए स्थितियों की झांकी भर देने लगीं। 'कफन' में घीसू और माधो के पतन का कारण सामाजिक व्यवस्था को बताया गया था।

प्रेमचन्दोत्तर युग की कहानियों में धीरे-धीरे वामपंथी स्वर उभरने लगे थे । लेखक शोषण के खिलाफ होकर वर्ग-संघर्ष की बात करते हुए मार्क्सवाद की ओर झुकने लगे थे । ऐसी कोटि के लेखकों में यशपाल का नाम उल्लेखनीय है। मार्क्सवादी विचारों से बोझिल यशपाल की कहानियों में प्रेम की भावुकता अथवा त्याग का कोई अर्थ नहीं। मार्क्सादी विचारधारा से प्रेरित वामपंथी स्वरों वाली कहानियों की सारी चेतना बुद्धि से परिचालित होती है और अर्थ पर टिकी रहती है।

BRAOU

आधुनिक साहित्य में मनोवैज्ञानिक कहानियों का भी एक दौर चला । इसका श्रीगणेश जैनेन्द्र कुमार ने किया। पश्चिमी मनोविज्ञानी गेस्टल्ट और फ्रायड के सिद्धान्तों पर आधारित अपनी कहानियों में जैनेन्द्र कुमार दार्शनिकता का आवरण, डाल देते हैं। जैनेन्द्र की कहानियों में 'पाजेब', 'पत्नी' 'जाह्नवी', 'वह क्षण' आदि प्रसिद्ध हैं। मनोवैज्ञानिक कहानियों के दूसरे प्रसिद्ध लेखक हैं इलाचन्द्र जोशी । इसी धारा में अज्ञेय की अपनी पहचान है। अज्ञेय की कहानियों में प्रेम की रूमानी भावुकता के साथ जीवन की एकरसता भी मिलती है। कुछ कहानियों में सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं का चित्रण किया गया है। 'शरणदता' 'जयदोल', 'कोठरी की बात' आदि अज्ञेय की चर्चित कहानियाँ हैं। इनके अलावा विष्णु प्रभाकर, भगवती चरण वर्मा, यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की कहानियों में सामाजिक यथार्थ के साथ मानव-मनोविज्ञान का सूक्ष्म चित्रण हुआ है।

सन् 1950 के बाद कहानी ने नए रूप बदले और कुछ नए कहानीकार सामने आए। इनमें कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, ज्ञानरंजन, भीष्म साहनी, अमरकान्त आदि मुख्य हैं। फणीश्वरनाथ रेणु ने कहानियों के क्षेत्र में भी आंचलिकता की प्रवृत्ति अपनाई। हिन्दी कहानी के विकास में मन्नू भण्डारी, उषा प्रियम्वदा, कृष्णा सोबती, सूर्यबाला, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान आदि महिला कहानीकारों ने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण, यथार्थ बोध और संवेदना के बल पर विशेष योगदान दिया है।

BRAOU

क्षेत्र में वे कहानियों में स्थान दिया है। सामाजिक क्षेत्र में वे रूढियों और गलत संस्कारों से दबी असहाय जनता को निर्भीक और प्रबुद्ध बनाना चाहते थे। युगों से मौन प्रताड़ित नारी को वे पुरूष की दासता और अत्याचार से मुक्त करना चाहते थे। भारत के किसान, मजदूर, नारी सभी प्रेमचन्द के ऋणी हैं और रहेंगे।

प्रेमचन्द सच्चे अर्थ में मानवतावादी कलाकार थे। मानवता ही उनके धर्म की कसौटी है। उनके इस मानवतावादी धर्म में लोक सेवा, सहिष्णुता, त्याग, मन की पवित्रता, सतबुद्धि आदि गुण थे। अज्ञेय के शब्दों में ''प्रेमचन्द का मानवतावाद पूरे जीवन को देखना चाहता था, देखकर उसे सहिष्णुता देता था और सहानुभूति के माध्यम से सिद्धांतों को पकड़ता था।''

प्रेमचन्द समाज के यथार्थ को कथा साहित्य का प्राण समझते थे किन्तु नग्न यथार्थ के विरोधी थे। उनके शब्दों में ''यदि यथार्थवाद हमारी आँख खोल देता है तो आदर्शवाद हमें उठाकर किसी मनोरम स्थान पर पहुँचा देता है।'' उन्होंने यथार्थ के माध्यम से अन्धकार का बोध कराया और आदर्श के द्वारा अन्धकार से मुक्त होने की दिशा दी।

प्रेमचन्द की आरंभिक कहानियाँ लंबी और वर्णनात्मक हैं। मुख्य कथा के साथ सहायक कथाएँ भी हैं। इन कहानियों में सूत्र भी ढूँढे जा सकते हैं। इनमें घटनाओं का बाहुल्य है।

प्रेमचन्द अभ्यास और अनुभव, परिश्रम और प्रयत्न, चिन्तन और कला दोनों को मांजते रहे। आगे चलकर उनकी कहानियों में विवरण कम और गहनता अधिक होने लगी। कथानक में स्थूल से सूक्ष्म, चरित्र-चित्रण में वैज्ञानिक कौशल और मन:स्थितियों का अन्तर्द्वंद्व उभरने लगा। कहानी के पात्र वर्ग के सशक्त प्रतिनिधि के रूप में कथ को प्रभावशाली बनाने लगे । जीवनानुभूतियों की पकड़ और अभिव्यक्ति मार्मिक और सूक्ष्म होने लगी।

11.2 मूल पाठ

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा - ''सहना आया है लाओ जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।'' मुन्नी झाड़ूलगा रही थी। पीछे फिरकर बोली - ''तीन ही तो रुपये हैं, दे दोगे तो कम्बल कहाँ से आवेगा। माघ- पूस की रात हार में कैसे कटेगी । उससे कह दो, फसल पर रुपये दे देंगे। अभी नहीं।''

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूस सिर पर आ गया, बिना कम्बल के रात को वह किसी तरह नहीं सो सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमाएगा। गालियाँ देगा। बला से, जाड़ो मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ वह अपनी भारी-भरकम डोल लिए हुए (जो उसके नाम को झूठा सिद्ध करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला - ''ला, दे दे, गला तो छूटे। कम्बल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूंगा।''

मुन्नी उसके पास से दूर हट गयी और आँखें तरेरते हुए बोली - ''कर चुके दूसरा उपाय। जरा सुनूँ, कौन उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कम्बल। न जाने कितनी बाकी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते। मर-मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो । ऐसी खेती से बाज आये। मैं रुपये न दूँगी, न दूंगी।''

हल्कू उदास होकर बोला - ''तो क्या गाली खाऊँ ?''

मुन्नी ने तड़पकर कहा - ''गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है ?''

यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौंहे ढीली पड़ गई । हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, मानो एक भीषण जन्तु की भांति उसे घूर रहा था।

संभाले हुए हों। अन्धकार अनन्त सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली और दोनो पांव फैला दिये, मानों ठंड को ललकार रहा हो, "तेरे जी मे जो आये सो कर।" ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व हृदय में छिपा न सकता था।

उसने जबरा से कहा – "क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है ?"

जब्बर ने कूं-कूं करके मानो कहा – अब क्या ठंड लगती ही रहेगी।

"पहले से उपाय न सूझा, नहीं तो इतनी ठंड क्यों खाते।"

जब्बर ने पूंछ हिलायी।

"अच्छा आओ इस अलाव को कूदकर पार करें । देखें, कौन निकल आता है। अगर जल गये बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा।"

जब्बर ने उस अग्निराशि को कातर नेत्रों से देखा।

"मुन्नी से कल कह न देना, नही लड़ाई करेगी।"

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया। पैरो में जरा लपट लगी, पर वह कोई बात न थी। जबरा आग के गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ।

हल्कू ने कहा – " चलो चलो, इसकी सही नहीं। ऊपर से कूदकर आओ ।" वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

पत्तियाँ जल चुकी थीं । बगीचे में फिर अंधेरा छाया था । राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर ज़रा जाग उठती थी, पर एक क्षण में फिर आंखे बंद कर लेती थी ।

हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा । उसके बदन में गर्मी आ गई थी, पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाये लेता था ।

बोध प्रश्न 3) हल्कू ने ठंड भगाने के लिए क्या उपाय किया?

.....

.....

.....

जबरा जोर से भूंककर खेत की ओर भागा । हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का झुण्ड उसके खेत में आया है। शायद नील गायों का झुण्ड था। उनके कूदने-दौड़ने की आवाजे साफ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि वह खेत में चल रही है। उनके चबाने की आवाज चर-चर सुनायी देने लगी।

उसने दिल में कहा – नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नही आ सकता। नोच ही डाले। मुझे भ्रम हो रहा है। कहाँ? अब तो कुछ नहीं सुनायी देता। मुझे भी कैसा धोखा हुआ?

उसने ज़ोर से आवाज लगायी – जबरा, जबरा।

जबरा भूंकता रहा। उसके पास न आया।

फिर खेत चरे जाने की आहट मिली। अब वह अपने को धोखा न दे सका। उस अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था। कैसा बंधाया आ बैठा था। इस जाड़े-पाले में खेत में जाना, जानवरो के पीछे दौड़ना असूझ जान पड़ा। वह जगह से न हिला।

उसने जोर से आवाज लगायी – लिहो। लिहो, लिहो

जबरा फिर भूंक उठा जानवर खेत चर रहे थे । फसल तैयार है । कैसी अच्छी खेती थी, पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किये डालते हैं ।

हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो–तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा, चुभनेवाला, बिच्छू के डंक–सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेद कर अपनी ठंडी देह को गर्माने लगा ।

बोध प्रश्न : 4. हल्कू जानवरों को भगाने के लिए क्यों नहीं जा सका ?

.....

.....

.....

जबरा अपना गला फाड़े डालता था, नील गायें खेत का सफाया किये डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शान्त बैठा हुआ था । अकर्मण्यता ने रस्सियों की भांति उसे चारों तरफ से पकड़ रखा था । उसी राख के पास गर्म जमीन पर वह चादर ओढ़कर सो गया । सबेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गयी । और मुन्नी कह रही थी – "क्या आज सोते ही रहोगे ? तुम यहाँ आकर रम गये और उधर सारा खेत चौपट हो गया ।"

हल्कू ने उठकर कहा – "क्या तू खेत से होकर आ रही है ?"

मुन्नी बोली – "हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया । भला, ऐसा भी कोई सोता है ? तुम्हारे यहा मंडैया डालने से क्या हुआ ?"

हल्कू ने बहाना किया – "मै मरते–मरते बचा, तुझे अपनी खेत की पड़ी है । पेट में ऐसा दरद हुआ, ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूं ।"

दोनों फिर खेत की दशा देख रहे थे । मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी पर हल्कू प्रसन्न था ।

मुन्नी से चिन्तित होकर कहा – "अब मजूरी करके मालगुजारी अदा करनी पड़ेगी ।"

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा – "शीत की ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा ॥"

बोध प्रश्न 5) मुन्नी उदास थी, पर हल्कू प्रसन्न था, क्यों ?

.....

.....

.....

11.3 सारांश

'पूस की रात' कहानी का नायक हल्कू एक गरीब किसान है । इतना गरीब कि सर्दी से बचने के लिए तीन रुपयों का कम्बल भी वह नहीं खरीद सकता । गरीबी के साथ साथ उसे महाजनों का कर्जा भी चुकाना है ।

हल्कू की पत्नी मुन्नी ने बड़ी कठिनाई से एक–एक पैसा जोड़कर कंबल खरीदने के लिए तीन रुपये जमा किये थे लेकिन दुर्भाग्य से वे भी कर्जा चुकाने में खत्म हो जाते हैं ।

हल्कू यह समझता है कि सहना की गालियाँ सुनने से तो बेहतर यही है कि पेट काटकर जोड़े गये तीन

BRAOU

उसने जाकर आले पर से रूपये निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिये । फिर बोली – ''तुम छोड़ दो अब ये खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है। मजूरी करके लाओ वह भी उसी में झोंक दो, उस पर से ये धौंस।''

हल्कू ने रुपये लिये और इस तरह बाहर चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-काट कर तीन रुपये कम्बल के लिए जमा किये थे। वह अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

बोध प्रश्न : 1. मुन्नी कौन है ? वह हल्कू को रुपये क्यों देना चाहती थी ?

.....

.....

.....

पूस की अंधेरी रात। आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे । हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बांस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़ा कांप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुंह डाले कूं-कूं कर रहा था। दो में एक को भी नींद न आती थी।

हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा – ''क्यों जबरा, जाड़ा लगता है। कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आये थे। अब खाओ ठंड, मैं क्या करूँ। जानते थे, हलुआ-पूड़ी खाने आ रहा हूँ, दौड़े-दौडे आगे-आगे आये। अब रोओ नानी के नाम को।''

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलायी और अपनी कूं-कूं को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया। उसकी श्वान बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूं-कूं से नींद नहीं आ रही है।

हल्कू ने हाथ निकाल कर जबरा की ठंडी पीठ सहलाते हुए कहा ''कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठंडे हो जाओ । यह रांड पछुआ न जाने कहां से बरफ लिये आ रही है । उठूँ,फिर एक चिलम भरूं । किसी तरह रात कटे। आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मजा है। और एक-एक भागवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाय तो गर्मी से घबड़ाकर भागे। मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्बल मजाक है, जाड़े का जो गुजर हो जाय । तकदीर की खूबी है। मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें।''

हल्कू उठा और गड्ढे में से जरा सी आग निकाल कर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा ''पियेगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ जरा मन बदल जाता है''

जबरा ने उसकी ओर प्रेम से छलकती हुई आंखों से देखा।

हल्कू : ''आज और जाड़ा खा ले। कल से मैं यहां पुआल बिछा दूंगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।''

जबरा ने अगले पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिये और उसके मुंह के पास अपना मुँह ले गया । हल्कू को उसकी गर्म सांस लगी।

चिलम पी कर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो, अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कंपन होने लगी। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भांति उसकी छाती को दबाये हुए।

जब किसी तरह न रहा गया, तो अपने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थप-थपाकर उसे अपनी गोद में सुला दिया । कुत्ते की देह से न जाने कैसी दुर्गन्ध आ रही थी। पर वह उसे अपनी गोद से चिमटाये

BRAOU

हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था । जबरा शायद समझ रहा था कि स्वर्ग यही है, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी । अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता । वह अपनी दीनता से आहत था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुंचा दिया । नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिये थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था ।

बोध प्रश्न : 2. हल्कू ने जबरा को अपनी गोद में क्यों सुलाया ?

.....

.....

.....

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई । इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठंडे झोकों को तुच्छ समझती थी । वह झपटकर उठा और छतरी के बाहर आकर भूँकने लगा । हल्कू ने उसे कई बार चुमकार कर बुलाया, पर वह उसके पास न आया । हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भूंकता रहा । एक क्षण के लिए आ भी जाता, तो तुरन्त ही फिर दौड़ता ।

एक घंटा और गुज़र गया । रात ने शीत की हवा से घबराना शुरु किया । हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसने छिपा लिया । फिर भी ठण्ड कम न हुई । ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है । धमनियो में रक्त की जगह हिम बह रहा था । उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है । सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े थे । ऊपर आ जायेंगे, तब कहीं सवेरा होगा । अभी पहर से ऊपर रात है ।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्प पर आमों का एक बाग था । पतझड़ शुरू हो गई थी । बाग में पत्तियों का ढेर लगा हुआ था । हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियां बटोरूं और उन्हे जलाकर खूब तापूं । रात को कोई मुझे पत्तियां बटोरते देखे तो समझे कोई भूत है । कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिये और उनकी एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगाता हुआ उपला लिये बगीचे की तरफ चला । जबरा ने उसे आते देखा, तो आया और दुम हिलाने लगा ।

हल्कू ने कहा - "अब तो नहीं रहा जाता जबरू । चलो, बगीचे में पत्तियाँ बटोर तापें । टांठे हो जायेंगे , तो फिर आकर सोएंगे, अभी तो रात बहुत है।"

जबरा ने कूं-कूं करके सहमति प्रकट की और आगे बगीचे की ओर चला ।

बगीचे में अंधेरा छाया हुआ था और अन्धकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था वृक्षों से ओस की बूंदें टप-टप नीचे टपक रही थी।

एकाएक एक झोंका मेहंदी के फूलो की खुशबू लिये हुए आया।

हल्कू ने कहा - "कैसी अच्छी महक आयी जबरू? तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगन्ध आ रही है ?

जबरा को कहीं ज़मीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी। उसे चिचोड़ रहा था। हल्कू ने आग ज़मीन पर रख दी और पत्तियां बटोरने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया । हाथ ठिठुरे जाते थे । नंगे पाव गले जाते थे । और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था । इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा ।

थोड़ी देर में अलाव जल उठा । उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छू कर भागने लगी । उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर

BRAOU

रुपयों से उसका कर्ज़ चुका दे । वह जानता है कि यदि रुपये सहना को दे दिये जायें तो वह कम्बल नहीं खरीद सकेगा और अगर नहीं देगा तो सहना की गालियाँ सुनेगा । इसी कारण रुपये देते हुए उसे लगता है मानो हृदय निकालकर दे रहा हो।

पूस की अंधेरी रात में हल्कू अपने कुत्ते जबरा के साथ खेतों की रखवाली करने जाता है । सर्दी के मारे बुरा हाल है । सर्दी से बचाव के लिए वह चिलम पीता है, सूखे पत्ते जलाता है और जबरा कुत्ते को अपनी गोद में दबा लेता है । पुराने गाढे की चादर ओढ़कर बैठने से जरा गर्मी आ जाती है और इसी में हल्कू की आँख लग जाती है। इतने में खेत चरे जाने की आहट होती है और यह देखकर जबरा भौंकता है । हल्कू महसूस करता है कि नील गायें खेत चर रही हैं। लेकिन सर्दी में सिकुड़े हुए हल्कू के हाथ पैरों में उठने की शक्ति नहीं । सुबह तक वह यों ही पड़ा रहता है । एक ओर वह सोचता खेत तो चरे गये हैं अब उठकर करना भी क्या है, दूसरी ओर यह भी सोचता है कि चलो अच्छा ही हुआ सारा किस्सा ही खत्म हो गया, अब मजदूरी ही भली।

पत्नी जब जगाने आती है तो पेट दर्द का बहाना कर पड़ा रहता है । शायद उसके जीवन में यह पहला अवसर था जब वह आराम से चिन्ता मुक्त होकर लेटा था । उसकी पत्नी को चिन्ता होती है कि अब मालगुजारी कैसे चुकाएँगे उसके लिए मजदूरी करनी पड़ेगी । और इधर हल्कू सोचता है कि ऐसे प्राण लेवा जाड़े की रातों में खेतों की रखवाली नहीं करनी पड़ेगी । उसे यह सोचकर राहत मिलती है कि दिन भर मजदूरी करके शाम को रूखा-सूखा खाकर झोंपड़ी के किसी कोने में सोने को तो नसीब होगा । हल्कू के इस विचार से कहानी समाप्त होती है कि ''रात की ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा ।''

11.4 समीक्षा

'पूस की रात' कहानी प्रेमचन्द की 'नशा', 'कफन' आदि कहानियों के समान महाजनी सभ्यता के शोषण तंत्र पर करारा प्रहार करती है । पूस की रात में एक ओर परिस्थितियों से जूझते किसान के रूप में हल्कू संवेदना का पात्र बनता है तो दूसरी ओर प्रेमचन्द यह भी बताते हैं कि हल्कू की निराशा मात्र हल्कू की निराशा ही है, उसकी निराशा और पतन का कारण वह मनोवृत्ति है जो पूँजीवादी शोषण व्यवस्था में और उसके कारण पनप रही थी ।

पति-पत्नी की परस्पर विरोधी मन:स्थितियों के आलेखन से कहानी में संघर्ष का तत्व भी पाठकों के सामने उभरा है। वह है हल्कू का पत्नी मुन्नी से कहना कि सहना आया है, लाओ, जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।'' गला छुड़ाने की मन:स्थिति में वह भूल जाता है कि खेत में बिना कंबल पूस की रात काटना संभव नहीं है। इससे पति-पत्नी में थोड़ा-सा विवाद होता है। हल्कू महाजन की गाली खाने से डरता है। मुन्नी कहती है ?''गाली क्यों देगा ? क्या उसका राज है ?'' किसान स्त्री में यह स्पष्टवादिता और अबोधता होती है जो अनजाने ही मुन्नी के शब्दों में प्रकट हुई है । किन्तु राज किसी का भी हो हल्कू को मेहनत करनी है, सतत सहना है, शोषित होने के लिए हल्कू जैसा भारतीय किसान कुछ भी करने के लिए मजबूर होता है।

''बला से जाडों मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी ।'' यह एक सुंदर वाक्य रचना है। इसमें प्रेमचन्द की भाषा की सहजता है जो पात्रों के साथ न्याय करती है। ''हल्कू ने रुपये लिए और इस तरह बाहर चला मानो अपना हृदय निकाल कर देने जा रहा हो ।'' इस उत्प्रेक्षा में हल्कू का सही परिचय निहित है। पाठक को यहाँ इस तथ्य का पता चलता है कि हल्कू अपने प्रति कम संवेदनशील नहीं है । खुला आसमान, उसके नीच जाड़े में ठिठुरता हल्कू, आग जलाना, कुत्ते को गोद में दबाना, खेतों का चरा जाना आदि का वर्णन कहानी के वातावरण की सजीवता को उभारता है।

जो खेत किसान को प्राणों से भी प्यारे होते हैं उन्हीं खेतों को वह अपनी आंखों के सामने चरे जाते हुए देखता है और मन में कहीं यह सोचकर प्रसन्न होता है कि चलो छुट्टी हुई, जान बची लाखों पाये, अब तो कड़कड़ाती सर्दी में मुसीबत तो न उठानी पड़ेगी । कहानी की चरम सीमा यहीं पर है । हल्कू प्रसन्न होता है पर

पत्नी चिन्तित होती है कि अब मजूरी करके माल गुजारी भरनी पड़ेगी।

इस कहानी के अंत में किसान हल्कू जैसे अपने से ही निस्पृह हो जाता है । इस निस्पृहता के मूल में वैराग्य नहीं है, पराजय है। पराजित आदमी की शांति में वह अपना चैन खोजता है। यह पलायन नहीं है जड़ से उखड़ने की विवशता है। इस प्रकार हल्कू की निष्क्रियता की कई अर्थच्छायाएँ हैं। इस कहानी में खेतों की रखवाली से मुक्ति के अहसास और किसान के मन में पनपते हुए पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति मौन विद्रोह को भी चित्रित किया गया है। कहानी चरित्र प्रधान कम, वातावरण प्रधान अधिक है। संवाद कम हैं। भाषा सहज है। छोटे छोटे वाक्य भी अर्थ पूर्ण व्यंजना से परिपूर्ण हैं जैसे हल्कू अपने कुत्ते से कहता है, ''अगर जल गये बच्चा, तो मैं दवा नहीं करूँगा।''

कुल मिलाकर यह कहानी आर्थिक परिस्थिति को, जिसमें भारतीय किसान जीता है, प्रतिबिंबित करती है। भारतीय किसान परिवार की संवेदना की विविध पर्तों से बनी यह एक स्तरीय रचना है । व्यापक और गहरी मानवीय सहानुभूति के साथ यह कहानी प्रेमचन्द के संयत लेखन का निदर्शन है।

11.5 शब्दार्थ

सहना	–	वह महाजन जिससे हल्कू ने कर्ज लिया है।
गला तो छूटे	–	छुटकारा तो मिले, राहत तो मिले
पूस सिर पर आ गया	–	सबसे अधिक जाड़े का महीना 'पूस' (पौष – नंवबर के आसपास आता है) समीप आ गया ।
घुड़किया	–	डाँट फटकार
बला तो सिर से टली	–	मुसीबत या चिन्ता से मुक्ति मिली
धौंस	–	रौब
ऊख	–	गन्ना
तापना	–	आग में हाथ गर्म करना
टाठे	–	गर्म
अलाव	–	लकड़ी, घास – पत्ते आदि को इकट्ठा करके जलायी गई आग
अकर्मण्यता	–	काम न करने की भावना
सत्यनाश	–	बर्बादी
मड़ैया	–	झोंपड़ी
आहट	–	आवाज
तुच्छ	–	हीन
अरमान	–	इच्छा, कामना
ताड़ लेना	–	जान लेना
तकदीर	–	भाग्य
आलस्य	–	नीरसता, सुस्ती
असूझ	–	बेकार
चौपट होना	–	नाश होना, बर्बाद होना, कुछ भी न बचना

BRAOU

11.6 अभ्यास

11.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. 'पूस की रात' कहानी में भारतीय किसान के प्रति व्यापक और गहरी मानवीय सहानुभूति है स्पष्ट कीजिए ।
2. 'पूस की रात' कहानी की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए
3. 'पूस की रात' कहानी के नायक का चरित्र चित्रण कीजिए ।

11.6.2 परीक्षा केलिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-
   "गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है ।"
2. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-
   "शीत की ठंड में यहाँ सोना तो नहीं पड़ेगा ।"
3. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-
   ऐसी कौन सी विवशता थी कि हल्कू अपने खेत की रक्षा नहीं कर सका।
4. 'पूस की रात' कहानी में हल्कू की पत्नी मुन्नी की मन:स्थिति पर विचार कीजिए ।

11.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

11.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

1. 'पूस की रात' कहानी की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर : 'पूस की रात' कहानी अभावग्रस्त भारतीय कृषक जीवन के यथार्थ की कहानी है । इस कहानी के माध्यम से प्रेमचन्द ने गरीबी और विवशता से संघर्ष करते हुए किसान 'हल्कू' और निर्मम महाजन 'सहना' का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है । हल्कू के जीवन में ऐसी दयनीय स्थिति और विवशता है कि पूस की रात में खेत में सोने के लिए तीन रुपये का कंबल भी वह नहीं खरीद सकता । इस संदर्भ में प्रेमचन्द ने हल्कू की पत्नी मुन्नी की अबोधता व स्पष्टवादिता को भी प्रकट किया है ।

प्रेमचन्द ने पूस की रात में खेतों की रक्षा करते हल्कू की वस्तुस्थिति का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है । जाड़े से बचने के लिए हल्कू का चिलम पीना, पत्ते बटोर कर अलाव जलाना, ओढ़ी हुई गाढ़े की चादर में कुत्ते को गोद मे दबा लेना आदि कहानी के प्रभाव को बढ़ाते हैं ।

थोड़ी सी देर के लिए ही सही जाड़े की रात में हल्कू की आँख लगना, खेतों में आहट पाकर जबरा कुत्ते का भौकना, हल्कू का जगना और यह समझकर भी खेत चरे जा रहे हैं - उठ पाने में असमर्थ होना ये सभी दृश्य गरीब किसान की बेबसी को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

हल्कू किसान की कैसी विचित्र और विवश मानसिक स्थिति है कि जिन खेतों को अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करता है उन्हीं के चरे जाने पर उसे एक प्रकार की राहत महसूस होती है कि अब उसे पूस की रात में काँपते हुए खेतों पर जागना नहीं पड़ेगा। इसकी तुलना में मजदूरी उसे कम कष्टप्रद लगती है।

सर्दी से बचाव के लिए एक कंबल भी न खरीद पाने में किसान की पराजय अवश्य है परन्तु हल्कू की यही दुर्बलता कहानी के अंत में गहरी संवेदना उत्पन्न करती हुई पाठक पर कारुणिक प्रभाव डालती है । कहानी का कथानक बहुत छोटा है। प्रमुख पात्र हल्कू है । हल्कू की पत्नी मुन्नी, सहना और जबरा कुत्ता हल्कू का

मानसिक विश्लेषण करने और परिस्थितियों के यथार्थ को बल देने में सहायक हैं।

कहानी की भाषा सहज प्रवाहमयी है। शिल्प की दृष्टि से कहानी के कथानक में कोई अस्पष्टता नही है। पात्र और वातावरण विश्वसनीय हैं। इस कहानी का उद्देश्य कृषक की गरीबी के प्रति संवेदना जगाना है जिसमें प्रेमचन्द को पूर्ण सफलता मिली है।

11.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

संदर्भ सहित व्यख्या कीजिए :-

''गाली क्यों देगा ? क्या उसका राज है ?''

उत्तर : उपयुर्क्त पंक्तियाँ प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'पूस की रात' नामक कहानी से ली गयी हैं । ये वाक्य हल्कू की पत्नी मुन्नी के हैं।

मुन्नी कंबल खरीदने के लिए तीन रुपये इकट्ठे करती है । लेकिन हल्कू सहना महाजन का कर्ज चुकाने के लिए उससे वे पैसे माँगता है जब मुन्नी देने से इंकार करती है तो हल्कू उदास होकर कहता है कि उसे सहना की गालियाँ सुननी पड़ेंगी।

इस संदर्भ में मुन्नी की स्पष्टवादिता प्रकट होती है वह सोचती है कि क्या सहना इस राज्य का राजा है जो कि उसकी गाली हमें सुननी पड़े।

प्रेमचन्द मुन्नी के माध्यम से किसान स्त्री की अबोधता और स्पष्टवादिता प्रकट करते हैं। इन वाक्यों से प्रेमचन्द यह कहना चाहते हैं कि महाजनों के शोषण से मुक्ति पाने के लिए आदमी या तो बगावत करेगा या तो हल्कू की तरह सहना की घुड़कियों या गालियों से बचने के लिए भविष्य की चिंता छोड़कर तत्क्षण उपाय खोज लेगा, अपने पास जो है वही दे देगा ।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. मुन्नी हल्कू की पत्नी है। वह हल्कू को रुपये इसलिए नहीं देना चाहती थी कि ये रुपए बड़ी कठिनाई से पेट काटकर और एक-एक पैसा जोड़कर जमा किये गये थे ।
2. हल्कू ने जबरा को ठंड से बचने के लिए और उसके प्रति प्रेम के कारण अपनी गोद में सुलाया ।
3. हल्कू ठंड भगाने के लिए पास के आम के बगीचे में गया, सूखे पत्ते इकट्ठा किये और उनमें आग लगाकर तापने लगा।
4. हल्कू जानवरों को भगाने के लिए उठा लेकिन ठंड इतनी ज्यादा थी कि उससे चला नहीं गया और वह झाप्स बुझते हुए अलाव के पास आकर बैठ गया ।
5. मुन्नी इसलिए उदास थी कि फसल नष्ट हो गई और अब उन्हें मालगुजारी भरने के लिए मज़दूरी करनी पड़ेगी। लेकिन हल्कू इसलिए प्रसन्न था कि अब खेती ही नहीं रहेगी तो उसकी रखवाली के लिए जाडे की रातों में बाहर सोना तो नहीं पड़ेगा ।

11. कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कथाकार प्रेमचन्द - सं: डॉ राम दरश मिश्र डॉ ज्ञानचंद गुप्त
2. प्रेमचन्द - सं : सत्येन्द्र
3. मान सरोवर - प्रेमचन्द

इकाई - 12 : शरण दाता - अज्ञेय

12.0 उद्देश्य

12.1 पाठ एवं लेखक परिचय

12.2 मूल पाठ

12.3 सारांश

12.4 समीक्षा

12.5 शब्दार्थ

12.6 अभ्यास

12.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

12.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

12.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

12.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

12.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

12.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.0 उद्देश्य

इस पाठ में हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि एवं कथाकार सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की 'शरणदता' शीर्षक कहानी पर प्रकाश डाला गया है। इस पाठ के अध्ययन से आप :

- भारत-विभाजन की त्रासदी का अनुभव कर सकेंगे।
- सांप्रदायिकता के अमानवीय पहलुओं से परिचित हो सकेंगे।
- धर्मनिरपेक्ष मानवीय सरोकारों को समझ सकेंगे।
- 'शरणदाता' कहानी की विशेषताएँ बता सकेंगे।
- कहानीकार अज्ञेय की कला-चेतना पर प्रकाश डाल सकेंगे।

BRAOU

12.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

'शरणदाता' अज्ञेय जी की एक महत्वपूर्ण कहानी है जो देश-विभाजन की त्रासदी को विषयवस्तु बनाकर रचित है। विवेच्य कहानी का नायक देवेन्दरलाल लाहौर का निवासी है। देश-विभाजन के समय जब पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में साम्प्रदायिक सौमनस्य को धक्का लगा और लोग अपनी-अपनी जन्मभूमि छोड़कर सुरक्षित स्थान की खोज में भागने को बाध्य हो रहे थे तब भी कथानायक अपने मित्र रफीकुद्दीन की मदद से वहीं रह जाता है। किन्तु कालान्तर में जब रफ़ीकुद्दीन पर मोहल्ले के दकियानूस तथा कट्टरवादी धर्मोन्मादियों का दबाव

बढ़ने लगता है तो वह अपने मित्र शेख अताउल्लाह के यहाँ उनके छिपकर रहने का प्रबन्ध करवा देता है। अताउल्लाह पुलिस विभाग में कार्यरत है। उसके मकान के पिछवाड़े की कोठरी में देवेन्दरलाल अकेलेपन की यातना सहते हुए अमानवीय स्थितियों में छिपकर रहने को अभिशप्त है। पर वहाँ भी उसे एक दिन भोजन में विष देकर मार डालने की साजिश की जाती है जिसकी जानकारी भोजन परोसने वाली अताउल्लाह की पुत्री जेबुन्निसा के पुर्जे से उसे मिलती है और वह है और वह वहाँ से भागकर दिल्ली आ जाता है। दिल्ली रेडियो से जब देवेन्दरलाल अपने परिवार के सदस्यों की जानकारी प्राप्त करने के लिए अपील करवाता है तो कुछ दिनों बाद उसे जेबुन्निसा की चिट्ठी मिलती है जिसमें मानवीय मूल्यों की वकालत की गयी है।

कुल मिलाकर यह कहानी धर्मोन्माद के अमानवीय पहलुओं से पाठकों को रू-ब-रू कराती हुई उनके भीतर मानवीय संवेदना उत्पन्न करने में पूरी तरह कारगर सिद्ध होती है।

(आ) लेखक परिचय

हिन्दी साहित्य में श्री सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अधिकतर 'अज्ञेय' के नाम से ही जाने जाते हैं। सन् 1911 में उत्तर प्रदेश के कसिया नामक स्थान में जन्मे अज्ञेय का बचपन और कैशोर्य संपूर्णभारत वर्ष का भ्रमण करते हुए बीता। अज्ञेय की आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई और उच्च शिक्षा मद्रास तथा लाहौर में संपन्न हुई। आपका आरंभिक जीवन काफ़ी उथल पुथल से पूर्ण था। क्रांतिकारी राजनीतिक सक्रियताओं के चलते सन् 1930 में ब्रिटिश शासन द्वारा वे गिरफ़्तार किये गये। इसके बाद वे सेना में भर्ती हुए और द्वितीय महायुद्ध में हिस्सा लिया। सेना से वापसी के बाद अज्ञेय पत्रकारिता एवं स्वतंत्र लेखन करते रहे। 4 अप्रैल सन् 1987 को अज्ञेय जी का देहावसान हुआ।

अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा के धनी लेखक हैं। साहित्य की लगभग सभी विधाओं को आपने समृद्ध किया है। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में अज्ञेय 'प्रयोगवाद' एवं 'नई कविता' जैसे काव्यान्दोलनों के प्रवर्तक माने जाते हैं। वस्तुत : हिन्दी कविता के क्षेत्र में 'प्रयोगवाद' का आरंभ अज्ञेय के संपादकत्व में प्रकाशित 'तार सप्तक' (1943) से माना जाता है। 'तार सप्तक' की भूमिका पर गहराई से विचार करने पर स्पष्ट होता हैं कि अज्ञेय ने इसमें बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ व्यक्ति-स्वातंत्र्य, प्रयोगशीलता और बहुलतावाद पर बल दिया है। सन् 1951 में प्रकाशित 'दूसरा सप्तक' की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं कि "हमें 'प्रयोगवादी' कहना उतना ही सार्थक या निरर्थक है जितना हमें 'कवितावादी' कहना।" उनका मानना है कि कविता में प्रयोग अपने-आप में इष्ट नहीं है, वह साधन है। सच तो यह है कि 'दूसरा सप्तक' (1951) के प्रकाशन के साथ 'प्रयोगवाद' का 'नई कविता' में रूपांतरण हो जाता है। नई कविता नाम भी वस्तुत: उन्हीं का दिया हुआ है। सन् 1959 में अज्ञेय के संपादकत्व में 'तीसरा सप्तक' और सन् 1979 में 'चौथा सप्तक'' प्रकाशित हुआ।

सोच और तकनीक की दृष्टि से अज्ञेय अपने समय के सर्वाधिक आधुनिक लेखकों में एक माने गये हैं। भग्नदूत (1933), चिन्ता (1942) और इत्यलम (1946) उनके प्रारंभिक काव्य संग्रह हैं। 'हरी घास पर क्षण भर' से अज्ञेय की नयी काव्य यात्रा आरंभ होती है। इसके बाद की रचनाओं में 'बावरा अहेरी', 'इन्द्रधनुष रौंदे हुए' 'अरी ओ करुणा प्रभामय', 'आंगन के पार द्वार', 'कितनी नावों में कितनी बार', 'सागर मुद्रा', 'मैं सन्नाटा बुनता हूँ' आदि उल्लेखनीय हैं। इस दौर की लगभग सभी कविताओं में व्यक्तित्व की अद्वितीयता का सार-तत्व अवश्य प्राप्त होता है। काव्य-रचना के दरम्यान शब्दों में नया अर्थ भरने में अज्ञेय माहिर हैं। इस क्रम में उनकी अनेकानेक उक्तियाँ सूक्तियों में बदलकर चमत्कारिक हो उठी हैं।

अज्ञेय कविता की तरह ही उपन्यास-रचना के क्षेत्र में भी प्रयोगशील थे। सच तो यह है कि उनकी प्रयोग धर्मी प्रवृत्ति सर्वप्रथम उपन्यास में ही प्रकट हुई। 'शेखर : एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' और 'अपने-अपने अजनबी' अज्ञेय की औपन्यासिक कृतियाँ हैं। दो खण्डों में रचित अज्ञेय का प्रथम उपन्यास 'शेखर : एक जीवनी' जिस प्रकार अपने कथ्य में प्रयोगात्मक है उसी प्रकार शिल्प - शैली और रूप-विधान में भी। 'नदी के

द्वीप' यथार्थवदी उपन्यासों के पैटर्न से एकदम अलग आधुनिकता से सम्बद्ध उपन्यास है। इस कृति की संरचना में एक संगीतात्मक लय तथा काव्यात्मक संवेदना निहित है और कुल मिलाकर इस औपन्यासिक कृति की अपील इतिहास-बोध के बजाय सौदर्यबोध के प्रति है। 'अपने अपने अजनबी' भी उपन्यास-लेखन के क्षेत्र में एक प्रयोग ही है। इस कृति में रचना के धरातल पर अज्ञेय अजनबीपन की समस्या से टकराते हैं।

ऐसे तो अज्ञेय मूलत: कवि हैं, पर उत्तर-स्वच्छन्दतावाद-युग के एक महत्वपूर्ण कहानीकार के रूप में भी उन्हें जाना जाता है। कविता में भले ही वे कलावादी कहे गए हों, पर उनकी कहानियों में सामाजिकता कदापि उपेक्षित नहीं है। अपनी रचनाओं में वे भाषा और रूप के प्रति अत्यधिक सचेत हैं। अज्ञेय की कुछ कहानियों में जहाँ एक ओर वैयक्तिक संवेदना और मानसिकता को संश्लिष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है वहीं दूसरी ओर उन्होंने क्रान्तिकारी जीवन तथा देश विभाजन के दरम्यान शरणार्थियों की समस्याओं पर भी कहानियाँ लिखीं हैं। विपथगा, 'परंपरा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल', 'ये तेरे प्रतिरूप' आदि उनकी कृतियों में उल्लेखनीय हैं।

अज्ञेय की अन्य कृतियों में 'त्रिशंकु', 'सबरंग', 'आत्मनेपद', 'आलवाल', 'लिखि कागद कोरे', 'अद्यतन', 'संवत्सर' (निबन्ध संग्रह), 'भवंती', 'अंतत: शाश्वति' (साहित्यिक डायरी) 'अरे यायावर रहेगा याद' (यात्रा वृत्तान्त) आदि प्रमुख हैं। इन सबके अलावा उन्होंने प्रतीक, विशाल भारत, दिनमान तथा दैनिक पत्र नव भारत टाइम्स का संपादन भी किया।

12.2 मूल पाठ

''यह कभी हो ही नहीं सकता, देविन्दरलालजी'' रफ़ीकुद्दीन वकील की वाणी में आग्रह था, चेहरे पर आग्रह के साथ चिन्ता और कुछ व्यथा का भाव। उन्होंने फिर दुहराया, ''यह कभी नहीं हो सकता देविन्दरलालजी।''

देविन्दरलाल ने उन के इस आग्रह को जैसे कबूलते हुए, पर अपनी लाचारी जताते हुए कहा, ''सब लोग चले गये। आप से मुझे कोई डर नहीं बल्कि आप का तो सहारा है, लेकिन आप जानते हैं, जब एक बार लोगों को डर जकड़ लेता है और भगदड़ पड़ जाती है, जब एक बार लोगों को डर जकड़ लेता है और भगदड़ पड़ जाती है, तब फिजा ही कुछ और हो जाती है। हर कोई हर किसी को शुबहे की नजर से देखता है, और खाहमखाह दुश्मन हो जाता है। आप तो मुहल्ले के सरबरा हैं, पर बाहर से आने-जानेवालों का क्या ठिकाना है। आप तो देख ही रहे हैं, कैसी-कैसी वरदातें हो रही हैं...''

रफ़ीकुद्दीन ने बात काटते हुए कहा, ''नहीं साहब, हमारी नाक कट जायगी। कोई बात है भला कि आप घर-बार छोड़ कर अपने ही शहर में पनाहगजी हो जाये । हम तो आप को जाने न देंगे - बल्कि जबरदस्ती रोक लेंगे । मैं तो इसे मेजारिटी का फ़र्ज मानता हूँ कि यह माइनारिटी की हिफ़ाजत करे और उन्हें घर छोड़-छाड़ कर भागने न दे। हम पड़ोसी की हिफ़ाजत न कर सके तो मुल्क की हिफ़ाजत क्या खाक करेंगे । और मुझे पूरा यक़ीन है कि बाहर की तो खैर बात ही क्या, पंजाब में ही कई हिन्दू भी, जहाँ उन की बहुतायत है, ऐसा ही सोच और कर रहे होंगे। आप न जाइये, न जाइये। आप की हिफ़ाजत की जिम्मेदारी मेरे सिर, बस।''

देविन्दरलाल के पड़ोस के हिन्दू परिवार धीरे-धीरे एक-एक कर के खिसक गये थे। होता यह कि दोपहर-शाम जब कभी साक्षात् होता, देविन्दरलाल पूछते, ''कहो लालाजी (या बाऊजी या पंडज्जी), क्या सलाह बनायी है आपने।'' और वे उत्तर देते, ''जी सलाह क्या बनानी है, यही रह रहे हैं, देखी जायेगी ..'' पर शाम को या अगले दिन सबेरे देविन्दर लाल देखते कि वे चुपचाप जरूरी सामान ले कर कहीं खिसक गये हैं, कोई लाहौर से बाहर, कोई लाहोर में ही हिन्दुओं के मुहल्ले में । और अन्त में यह परिस्थिति आ गयी थी कि अब उन के दाहिनी ओर चार मकान खाली छोड़-कर एक मुसलमान गूजर का अहाता पड़ता था जिस में एक ओर गूजर की भैंसे और दूसरी ओर कई छोटे-मोटे मुसलमान कारीगर रहते थे; बायीं ओर भी देविन्दर और रफ़ीकुद्दीन के

मकानों के बीच के मकान खाली थे और रफ़ीकुद्दीन के मकान के बाद मोजंग का अड्डा पड़ता था, जिस के बाद तो विशुद्ध मुसलमान बस्ती थी। देविन्दरलाल और रफ़ीकुद्दीन में पुरानी दोस्ती थी, और एक-एक आदमी के जाने पर उन में चर्चा होती थी। अन्त में जब एक दिन देविन्दरलाल ने जताया कि वे भी चले जाने की बात पर विचार कर रहे हैं तब रफ़ीकुद्दीन को धक्का लगा और उन्होंने व्यथित स्वर में कहा, ''देविन्दरलालजी, आप भी।''

रफ़ीकुद्दीन का आश्वासन पाकर देविन्दलाल रह गये। तब यह तय हुआ कि अगर खुदा न करे कोई खतरे की बात हुई ही, तो रफ़ीकुद्दीन उन्हें पहले खबर भी कर देंगे और हिफ़ाज़त का इन्तज़ाम भी कर देंगे – चाहे जैसे हो। देविन्दरलाल की स्त्री तो कुछ दिन पहले ही जालन्धर मायके गयी हुई थी, उसे लिख दिया गया कि अभी न आये, वहीं रहे। रह गये देविन्दर और उनका पहाड़िया नौकर सन्तू।

किन्तु यह व्यवस्था बहुत दिन नहीं चली । चौथे ही दिन सबेरे उठ कर उन्होंने देखा, सन्तू भाग गया है। अपने हाथों चाय बना कर उन्होंने पी, धोने को बर्तन उठा रहे थे कि रफ़ीकुद्दीन ने आ कर खबर दी, सारे शहर में मारकाट हो रही है और थोड़ी देर में मोजग में भी हत्यारों के गिरोह बंध-बंध कर निकलेंगे। कहीं जाने का समय नहीं है, देविन्दरलाल अपना जरूरी और कीमती सामना ले ले और उन के साथ उन के घर चले चलें। यह बला टल जाय तो फिर लौट आवेंगे...

'कीमती' सामान कुछ था नहीं। गहना-छल्ला सब स्त्री के साथ जालंधर चला गया था, रुपया थोड़ा-बहुत बैंक में था; और ज्यादा फैलाव कुछ उन्होंने किया नहीं था। यो गृहस्थ को अपनी गिरस्ती की हर चीज कीमती मालूम होती है .. देविन्दरलाल घंटे-भर ट्रंक-बिस्तर के साथ रफ़ीकुद्दीन के यहाँ जा पहुँचे।

तीसरे पहर उन्होंने देखा, हुल्लड़ मोजग में आ पहुँचा है। शाम होते-होते उनकी निर्निमेष आँखों के सामने ही उन के घर का ताला तोड़ा गया और जो कुछ था, लुट गया। रात को जहाँ-तहाँ लपटें उठने लगीं, और भादों की उमस धुआँ खा कर और भी गलघोंटू हो गई....

रफ़ीकुद्दीन भी आँखों में पराजय लिए चुपचाप देखते रहे। केवल एक बार उन्होंने कहा, ''यह दिन भी था देखने को – और आजादी के नाम पर । या अल्लाह।''

लेकिन खुदा जिसे घर से निकालता है, उसे फिर गली में भी पनाह नहीं देता।

देविन्दरलाल घर से बाहर तो निकल ही न सकते, रफ़ीकुद्दीन ही आते जाते। काम करने का तो वातावरण ही नहीं था, वे घूम-घाम आते, बाजार कर आते और शहर की खबर ले आते, देविन्दर को सुनाते और फिर दोनों बहुत देर तक देश के भविष्य पर आलोचना किया करते । देविन्दर ने पहले तो लक्ष्य नहीं किया लेकिन बाद में पहचानने लगा कि रफ़ीकुद्दीन की बातों में कुछ चिन्ता का, और कुछ एक और पीड़ा का भी स्वर है जिसे वह नाम नहीं दे सकता – थकान? उदासी? विरक्ति? पराजय? न जाने.....

शहर तो वीरान हो गया था। जहाँ-तहाँ लाशें सड़ने लगीं; घर लुट चुके थे और अब जल रहे थे । शहर के एक नामी डाक्टर के पास कुछ प्रतिष्ठित लोग गये थे यह प्रार्थना लेकर कि वे मुहल्लों में जावें ; उनकी सब लोग इज्जत करते हैं, इस लिए उन के समझाने का असर होगा और मरीज भी वे देख सकेंगे। वे दो मुसलमान नेताओं के साथ निकले। दो-तीन मुहल्ले घूमकर मुलसमानों की बस्ती में एक मरीज को देखने के लिए स्टेथेस्कोप निकाल कर मरीज पर झुके थे कि मरीज के ही एक रिश्तेदार ने पीठ में छुरा भोंक दिया...

हिन्दू मुहल्ले में रेलवे के एक कर्मचारी ने बहुत-से निराश्रितों को अपने घर में जगह दी थी जिन के घर-बार सब लुट चुके थे। पुलिस को उस ने खबर दी थी कि वे निराश्रित उसके घर टिके हैं, हो सके तो उन के घरों और माल की हिफ़ाजत की जाए। पुलिस ने आकर शरणागतों के साथ उसे और उसके घर की स्त्रियों को गिरफ़तार कर लिया और ले गयी। पीछे घर पर हमला हुआ, लूट हुई और घर में आग लगा दी गयी । तीन दिन बाद उसे और उस के परिवार को थाने से छोड़ा गया और हिफ़ाजत के लिए हथियारबन्द पुलिस के दो सिपाही साथ किये गये। थाने से पचास कदम के फ़ासले पर पुलिसवालों ने अचानक बन्दूक उठा कर उस पर और उस

के परिवार पर गोली चलाई। वह और तीन स्त्रियाँ मारी गयीं। उस की माँ और स्त्री घायल हो कर गिर गयीं और सड़क पर पड़ी रहीं...

विषाक्त वातावरण, द्वेष और घृणा की चाबुक से तड़फड़ाते हुए हिंसा के घोड़े, विष फैलाने को संप्रदायों के अपने संगठन और उसे भड़काने को पुलिस और नौकर शाही। देविन्दरलाल को अचानक लगता कि वह और रफ़ीकुद्दीन ही लगता है जो कि बैठे हुए है जब कि सब कुछ भड़क रहा है, उफन रहा है, झुलस और जल रहा है.. और वे लक्ष्य करते कि वह अस्पष्ट स्वर जो वे रफ़ीकुद्दीन की बातों में पाते थे, धीरे-धीरे कुछ स्पष्ट होता जाता है - एक लज्जित-सी रूखाई का स्वर....

बोध प्रश्न : 1. कहानीकार ने सांप्रदायिक वैमनस्य फैलाने के लिए पुलिस को भी क्यों जिम्मेदार ठहराया है ?

.....

.....

.....

हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की अनुमानित सीमा के पास के एक गाँव में कई सौ मुसलमानों ने सिक्खों के गाँव में शरण पायी। अन्त में जब आस-पास के गाँव के और अमृतसर शहर के लोगों के दबाव ने उस गाँव में उन के लिए फिर आसन्न संकट की स्थिति पैदा कर दी, तब गाँव के लोगों ने अपने मेहमानों को अमृतसर स्टेशन पहुँचाने का निश्चय किया जहाँ से वे सुरक्षित मुसलमान इलाके में जा सकें, और दो-ढाई सौ आदमी किरपानें निकाल कर उन्हें घेरे में लें कर स्टेशन पहुँचा आये-किसी को कोई क्षति नहीं पहुँची.....

घटना सुन कर रफ़ीकुद्दीन ने कहा, आखिर तो लाचारी होती है, अकेले इनसान को झुकना ही पड़ता है। यहाँ तो पूरा गाँव था, फिर भी उन्हें हारना पड़ा। लेकिन आखिर तक उन्होंने निबाहा, इसकी दाद देनी चाहिए। उन्हें पहुँचा आए....''

देविन्दरलाल ने हामी भरी । लेकिन सहसा पहला वाक्य उन के स्मृति-पटल पर अभर आया - 'आखिर तो लाचारी होती है -- अकेले इनसान को झुकना ही पड़ता है।'

उन्होंने एक तीखी नज़र से रफ़ीकुद्दीन की ओर देखा, पर वे कुछ बोले नहीं।

अपराह्न में छः सात आदमी रफ़ीकुद्दीन से मिलने आये । रफ़ीकुद्दीन ने उन्हें अपनी बैठक में ले जा कर दरवाजे बहन्द कर लिये। डेढ़-दो घंटे तक बाते हुई। सारी बात प्रायः धीरे-धीरे ही हुई, बीच-बीच में कोई स्वर ऊँचा उठ जाता और एक-आध शब्द देविन्दरलाल के कान में पड़ जाता - 'बेवकूफ़ी', 'गद्दारी', इस्लाम.. वाक्यों को पूरा करने की कोशिश उन्होंने आयासपूर्वक नहीं की । दो घंटे बाद जब उन को विदा करके रफ़ीकुद्दीन बैठक से निकल कर आये, तब भी उन से लपक कर पूछने की स्वाभाविक प्रेरणा को उन्होंने दबाया । पर जब रफ़ीकुद्दीन उन की ओर न देख कर खिचा हुआ चेहरा झुकाये उन की बगल से निकल कर बिना एक शब्द कहे भीतर जाने लगे तब उनसे न रहा गया और उन्होंने आग्रह के स्वर में पूछा, ''क्या बात है, रफ़ीक साहब, खैर तो है।''

रफ़ीकुद्दीन ने मुँह उठा कर एक बार उन की ओर देखा, बोले नहीं फिर आँखे झुका ली।

अब देविन्दरलाल ने कहा, ''मैं समझता हूँ । मेरी वजह से आप को जलील होना पड़ रहा है। और खतरा उठाना पड़ रहा है सो अलग। लेकिन आप मुझे जाने दीजिये । मेरे लिए आप जोखिम में न पड़ें। आप ने जो कुछ किया है उस के लिए मैं बहुत शुक्रगुजार हूँ। आप का एहसान...''

रफ़ीकुद्दीन ने दोनों हाथ देविन्दरलाल के कंधों पर रख दिये। कहा, ''देविन्दरलालजी ''। उन की साँस तेज चलने लगी। इस पर वह सहसा भीतर चले गये।

BRAOU

लेकिन खाने के वक्त देविन्दरलाल ने फिर सवाल उठाया। बोले, "आप खुशी से न जाने देंगे तो मैं चुपचाप खिसक जाऊँगा। आप सच-सच बतलाइए, आप से उन्होंने कहा क्या ?"

"धमकियाँ देते रहे और क्या।"

"फिर भी, क्या धमकी आखिर...."

"धमकी भी क्या होती है। उन्हें शिकार चाहिए - हल्ला कर के न मिलेगा तो आग लगा कर लेंगे।"

"ऐसा । तभी तो मैं कहता हूँ, मैं चला। मैं इस वक्त अकेला आदमी हूँ, कहीं निकल ही जाऊँगा । आप घर-बारवाले आदमी - ये लोग तो सब तबाह कर डालने पर तुले हैं।"

"गुंडे हैं बिलकुल।"

"मैं आज ही चला जाऊँगा..."

"यह कैसे हो सकता है। आखिर, आप को चले जाने से हमीं ने रोका था, हमारी भी तो कुछ जिम्मेदारी है..."

"आप ने भला चाह कर ही रोका था - उससे आगे कोई जिम्मेदारी नहीं है..."

"आप जावेंगे कहाँ...."

"देखा जायेगा..."

नहीं यह नामुमकिन बात है।

किन्तु बहस के बाद तय हुआ यही कि देविन्दरलाल वहाँ से टल जायेंगे। रफ़ीकुद्दीन और कहीं पड़ोस से उन के एक और मुसलमान दोस्त के यहाँ छिप कर रहने का प्रबन्ध कर देंगे - वहाँ तकलीफ़ तो होगी पर खतरा नहीं होगा क्योंकि देविन्दरलाल घर में नहीं रहेंगे। वहाँ पर रह कर जान की हिफ़ाजत तो रहेगी, तब तक कुछ और उपाय सोचा जाएगा निकलने का...

देविन्दरलाल शेख अताउल्लाह के अहाते के अन्दर पिछली तरफ पेड़ों के झुरमुट की आड़ में बनी हुई एक गैराज में पहुंचे गए। ठीक गैराज में तो नहीं, गैराज की बगल में एक कोठरी थी जिस के सामने दीवारों से घिरा हुआ एक छोटा-सा आँगन था। पहले शायद यह ड्राइवर के रहने के काम आती हो। कोठरी में ठीक सामने और गैराज की तरफ़ के किवाड़ों को छोड़ कर खिड़की वगैरह नहीं थी। एक तरफ एक खाट पड़ी थी, आले में एक लोटा। फ़र्श कच्चा, मगर लिपा हुआ। गैराज के बाहर लोहे की चादर का मजबूत फाटक था, जिस में ताला पड़ा था। फाटक के अन्दर ही कच्चे फ़र्श में एक गढ़ा-सा खुदा हुआ था जिस की एक ओर चूना-मिली मिट्टी का ढेर और एक मिट्टी का लोटा देख कर गढ़े का उपयोग समझते देर न लगी ?

देविन्दरलाल का ट्रंक और बिस्तर जब कोठरी के कोने में रख दिया गया और बाहर आँगन का फाटक बन्द कर के उसमें भी ताला लगा दिया गया, तब थोड़ी देर वे हतबुद्धि खड़े रहे। यह है आजादी। पहले विदेशी सरकार लोगों को कैद करती थी कि वे आजादी के लिए लड़ना चाहते थे ; अब अपने ही भाई अपनों को तनहाई कैद दे रहे हैं क्योंकि वे आजादी के लिए ही लडाई रोकना चाहते हैं। फिर मानव प्राणी का स्वाभाविक वस्तुवाद जागा, और उन्होंने गैराज-कोठरी-आँगन का निरीक्षण इस दृष्टि से आरम्भ किया कि क्या-क्या सुविधाएँ वे अपन लिए कर सकते हैं ?

गैराज - ठीक है ; थोड़ी-सी दुर्गंध होगी, ज्यादा नहीं; बीच का किवाड़ बन्द रखने से कोठरी में नहीं आयेगी। नहाने का कोई सवाल ही नहीं - पानी शायद मुँह-हाथ धोने को काफ़ी हो जाया करेगा....

BRAOU

कोठरी-ठीक है। रोशनी नहीं है, पढ़ने-लिखने का सवाल नहीं उठता। पर कामचलाऊ रोशनी आँगन से प्रतिबिंबित हो कर आ जाती है क्योंकि आँगन की एक ओर सामने के मकान की कोने वाली बत्ती से रोशनी पड़ती है। बल्कि आँगन में इस जगह खड़े हो कर शायद कुछ पढ़ा भी जा सके । लेकिन पढ़ने को है ही कुछ नहीं, यह तो ध्यान ही न रहा था।

देविन्दरलाल फिर ठिठक गये। सरकारी कैद में तो गा-चिल्ला भी सकते हैं यहाँ तो चुप रहना होगा।

उन्हें याद आया, उन्होंने पढ़ा है, जेल में लोग चिड़िया, कबूतर, गिलहरी, बिल्ली आदि से दोस्ती कर के अकेलापन दूर करते हैं; यह भी न हो तो कोठरी में मकड़ी-चीटी आदि का अध्ययन करके... उन्होंने एक बार चारों ओर नज़र दौड़ाई। मच्छरों से भी बन्धुभाव हो सकता है, यह उन का मन किसी तरह नहीं स्वीकार कर पाया।

बोध प्रश्न : 2. रफ़ीकुद्दीन ने देविन्दरलाल को अताउल्लाह के यहाँ क्यों भेज दिया?

.....

.....

.....

वे आँगन में खड़े हो कर आकाश देखने लगे। आजाद देश का आकाश। और नीचे से, अभ्यर्थना में - जलते हुए घरों का धुआँ। धुपेन धापयाम:। लाल चन्दन - रक्त चन्दन...

अचानक उन्होंने आँगन की दीवार पर एक छाया देखी - एक बिलार। उन्होंने बुलाया, "आओ, आओ।" पर वह वहीं बैठा स्थिर दृष्टि से ताकता रहा।

जहाँ बिलार आता है, वहाँ अकेलापन नहीं है । देविन्दरलाल ने कोठरी में जाकर बिस्तरा बिछाया और थोड़ी देर में निर्द्वन्द्व भाव से सो गए।

दिन छिपे के वक्त केवल एक बार खाना आता था। यों वह दो वक्त के लिए काफ़ी होता था। उसी समय कोठरी और गैराज के लोटे भर दिये जाते थे। लाता था एक जवान लड़का जो स्पष्ट ही नौकर नहीं था ; देविन्दरलाल ने अनुमान किया कि शेख साहब का लड़का होगा । वह बोलता बिलकुल नहीं था। देविन्दरलाल ने पहले दिन पूछा था कि शहर का क्या हाल है तो उस ने एक अजनबी दृष्टि से इन्हें देख लिया था। फिर पूछा कि अभी अमन हुआ है या नहीं। तो उस ने नकारात्मक सिर हिला दिया था। और सब खैरियत। तो फिर हिलाया था - हाँ।

देविन्दरलाल चाहते तो खाना दूसरे वक्त के लिए रख सकते थे ; पर एक बार आता है तो एक बार ही खा लेना चाहिए , यह सोच कर वे डर कर खा लेते थे और बाक़ी बिलार को दे देते थे। बिलार खूब हिल गया था, आ कर गोद में बैठ जाता और खाता रहता, फिर हड्डी-बड्डी लेकर आँगन के कोने में बैठ कर चबाता रहता या ऊब जाता तो देविन्दलाल के पास आ कर घुरघुराने लगता।

इस तरह शाम कट जाती थी, रात घनी हो जाती थी । तब वे सो जाते थे । सुबह उठ कर आँगन में कुछ वरजिश कर लेते थे कि शरीर ठीक रहे ; बाकी दिन कोठरी में बैठे कभी कंकड़ों से खेलते, कभी आँगन की दीवार पर बैठनेवाली गोरैया देखते, कभी दूर से कबूतर की गुटर-गूँ सुनते - और कभी सामने के कोने से शेखजी के घर के लोगों की बातचीत भी सुन पडती। अलग-अलग आवाज़ें वे पहचानने लगे थे और तीन-चार दिन में ही वे घर के भीतर के जीवन और व्यक्तियों से परिचित हो गए थे । एक भारी-सी जनानी आवाज थी - शेख साहब की बीवी की; एक और तीखी जनानी आवाज थी जिस के स्वर में वय का खुरदरापन था - घर की कोई और बुजुर्ग स्त्री ; एक विनीत युवा स्वर था जो प्राय : पहलो आवाज की "जैबू! नी जैबू !" पुकार के उत्तर

में बोलता था और इसलिए शेख साहब की लड़की जेबुन्निसा का स्वर था। दो मर्दानी आवाजें भी सुन पड़ती थीं – एक तो आबिद मियाँ की, जो शेख साहब काल ढका हुआ और जो इस लिए वही लड़का है जो खाना ले कर आता है, और एक बड़ी भारी और चरबी से चिकनी आवाज जो शेख साहब की आवाज है। इस आवाज को देविन्दरलाल सुन तो सकते लेकिन इस की बात के शब्दाकार कभी पहचान में न आते – दूर से तीखी आवाजों के बोल ही स्पष्ट समझ आते हैं।

लेकिन खाते वक्त भी वे सोचते, खाने में कौन–सी चीज किस हाथ की बनी होगी, परोसा किस ने होगा। सुनी बातों से वे जानते थे कि पकाने में बड़ा हिस्सा तो उस तीखी खुरदुरी आवाजवाली स्त्री का रहता था, पर परोसना शायद जेबुन्निसा के ही जिम्मे था। और यही सब सोचते–सोचते देविन्दरलाल खाना खाते और कुछ ज्यादा ही खा लेते थे....

खाने में बड़ी–बड़ी मुसलमानी रोटी के बजाय छोटे–छोटे हिन्दू फुलके देख कर देविन्दरलाल के जीवन की एकरसता में थोड़ा–सा परिवर्तन आया। मांस तो था, लेकिन आज रबड़ी भी थी जब कि पीछे मीठे के नाम पर एक–आध बार शाह टुकड़ा और एक बार फिरनी आई थी। आबिद जब खाना रख कर चला गया, तब देविन्दरलाल क्षण–भर उसे देखते रहे। उन की उँगलियाँ फुलकों से खेलने–सी लगीं – उन्होंने एकाध को उठा कर फिर रख दिया ; पल–भर के लिए अपने घर का दृश्य उन की आँखों के आगे दौड़ गया। उन्होंने फिर दो–एक फुलके उठाये और फिर रख दिये।

हठात् वे चौंके।

तीन–एक फुलकों की तह के बीच में कागज की एक पुड़िया–सी पड़ी थी।

देविन्दरलाल ने पुड़िया खोली।

पुड़िया में कुछ नहीं था।

देविन्दरलाल उसे फिर गोल करके फेंक देनेवाले ही थे कि हाथ ठिठक गया। उन्होंने कोठरी से आँगन में जा कर कोने में पंजों पर खड़े हो कर बाहर की रोशनी में पुर्जा देखा, उस पर कुछ लिखा था। केवल एक सतर।

"खाना कुत्ते को खिला कर खाइएगा।"

देविन्दरलाल ने कागज की चिंदियाँ की। चिंदियों को मसला। कोठरी से गैराज में जा कर उसे गड्ढे में डाल दिया। फिर आँगन में लौट आये और टहलने लगे।

मस्तिष्क ने कुछ नहीं कहा। सन्न रहा। केवल एक नाम उसके भीतर खोया–सा चक्कर काटता रहा, जैबू....जैबू...जैबू....

थोड़ी देर बाद वह फिर खाने के पास जा कर खड़े हो गये।

यह उन का खाना है – देविन्दरलाल का। मित्र के नहीं, तो मित्र के मित्र के यहाँ से आया है। और उन के मेजबान के, उन के आश्रयदाता के।

जैबू के।

जैबू के पिता के।

कुत्ता यहाँ कहाँ है?

देविन्दरलाल टहलने लगे।

आँगन की दीवार पर छाया सरकी। बिलार बैठा था।

देविन्दरलाल ने बुलाया। वह लपक कर कंधे पर आ रहा। देविन्दरलाल ने उसे गोद में लिया और पीठ सहलाने लगे । वह घुरघुराने लगा। देविंदरलाल कोठरी में गये। थोड़ी देर बिलार को पुचकारते रहे, फिर धीरे-धीरे बोले, "देखो बेटा, तुम मेरे मेहमान, मैं शेख साहब का है न। वे मेरे साथ जो करना चाहते हैं, वही मैं तुम्हारे साथ करना चाहता हूँ। चाहता नहीं हूँ पर करने जा रहा हूँ। वे भी चाहते हैं कि नहीं, पता नही तो जानना है। इसीलिए तो मैं तुम्हारे साथ वह करना चाहता हूँ जो मेरे साथ वे पता नहीं चाहते हैं कि नही....नहीं, सब बात गड़बड़ हो गई। अच्छा, रोज मेरी जूठन तुम खाते हो, आज तुम्हारी मैं खाऊँग। हाँ यह ठीक है। लो खाओ..."

बिलार ने मांस खाया। हड्डी झपटना चाहता था, पर देविन्दरलाल ने उसे गोदी में लिये-लिये ही रबड़ी खिलाई - वह सब चाट गया। देविन्दरलाल उसे गोदी में लिये सहलाते रहे।

जानवरों में तो सहज ज्ञान होता है खाद्य-अखाद्य का, नहीं तो वे बचते कैसे। सब जानवरों में होता है, और बिल्ली तो जानवरों में शायद सबसे अधिक ज्ञान के सहारे जीनेवाली है, तभी तो कुत्ते की तरह पलती नहीं.. बिल्ली जो खा ले वह सर्वथा खाद्य है - यों बिल्ली सड़ी मछली खा ले जिसे इनसान न खाए वह और बात है...

सहसा बिलार जोर से गुस्से से, चीखा और उछल कर गोद से बाहर जा कूदा, चीखता-गूर्राता-सा कूद कर दीवार पर चढ़ा और गैराज की छत पर जा पहुँचा । वहाँ से थोड़ी देर तक उस के कानों में अपने-आप से ही लड़ने की आवाज आती रही। फिर धीरे-धीरे गुस्से का स्वर दर्द के स्वर में परिणत हुआ, फिर एक करुण रिरियाहट में, एक दुर्बल चीख में, एक बुझती हुई-सी कराह में, फिर एक सहसा चुप हो जानेवाली लंबी साँस में,-

मर गया...

देविन्दरलाल फिर खाने को देखने लगे। वह कुछ साफ़-साफ़ दीखता हो सो नहीं ; पर देविन्दरलाल जी की आँखें निस्पन्द उसे देखती रहीं।

आज़ादी। भाईचारा। देश - राष्ट्र...

एक ने कहा कि हम जोर कर के रखेंगे और रक्षा करेंगे, पर घर से निकाल दिया । दूसरे ने आश्रय दिया, और विष दिया।

और साथ में चेतावनी का विष दिया जा रहा है।

देविन्दरलाल का मन ग्लानि से उमड़ आया । इस धक्के को राजनीति की भुरभुरी रेत की दीवार के सहारे नहीं, दर्शन के सहारे ही झेला जा सकता था।

देविन्दरलाल ने जाना कि दुनिया में खतरा बुरे की ताकत के कारण नहीं, अच्छे की दुर्बलता के कारण है। भलाई की साहसहीनता ही बड़ी बुराई है। घने बादल से रात नहीं होती, सूरज के निस्तेज हो जाने से होती है।

उन्होंने खाना उठा कर बाहर आंगन में रख दिया। दो घूँट पानी पिया। फिर टहलने लगे।

तनिक देर बाद उन्होंने आकर ट्रंक खोला। एक बार सरसरी दृष्टि से सब चीजों को देखा, फिर ऊपर के खाने में से दो एक कागज दो-एक फोटो, एक सेविंग बैंक की पास-बुक और एक बड़ा-सा लिफ़ाफ़ा निकाल कर, एक काले शेरवानी-नुमा कोट की जेब में रख कर कोट पहन लिया। आँगन में आ कर एक क्षण-भर कान लगा कर सुना।

फिर वे आँगन की दीवार पर चढ़ कर बाहर फाँद गए और बाहर सड़क पर निकल आए - वे स्वयं नहीं जान सके कि कैसे।

इस के बाद की घटना, घटना नहीं है । घटनाएँ सब अधूरी होती है । पूरी तो कहानी होती हैं । कहानी की संगति मानवीय तर्क या विवेक या कला या सौंदर्य-बोध की बनाई हुई संगति है, इसलिए मानव को दीख जाती है और वह पूर्णता का आनन्द पा लेता है। घटना की संगति मानव पर किसी शक्ति की - कह लीजिए काल या

प्रकृति या संयोग या दैव या भगवान की - बनाई हुई संगति है । इस लिए मानव को सहसा नहीं भी दीखती । इस लिए इस के बाद जो कुछ हुआ और जैसे हुआ वह बताना जरूरी नहीं । इतना बताने से काम चल जायेगा कि डेढ़ महीने बाद अपने घर का पता लेने के लिए देविन्दरलाल अपना पता दे कर दिल्ली रेडियो से अपील करवा रहे थे तब एक दिन उन्हें लाहौर की मुहर वाली एक छोटी-सी चिट्ठी मिली थी।

"आप बच कर चले गये, इसके लिये खुदा का लाख-लाख शुक्र है। मैं मानती हूँ कि रेडियो पर जिन के नाम आप ने अपील की है, वे सब सलामती से आपके पास पहुँच जाये। अब्बा ने जो किया या करना चाहा उस के लिए में माफ़ी माँगती हूँ और यह भी याद दिलाती हूँ कि उस की काट मैं ने ही कर दी थी। अहसान नहीं जताती - मेरा कोई अहसान आप पर नहीं है - सिर्फ़ यह इल्तजा करती हूँ कि आप के मुल्क में अकलीयत का कोई मजलूम हो तो याद कर लीजियेगा। इसलिए नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए कि आप इनसान हैं। खुदा हाफ़िज।"

देविन्दरलाल की स्मृति में शेख अता उल्लाह की चर्बी से चिकनी भारी आवाज गूँज गई, जैबू! जैबू! और फिर गैराज की छत पर छटपटा कर धीरे-धीरे शांत होनेवाले बिलार की वह दर्द-भरी कराह, जो केवल एक लम्बी साँस बन कर चुप हो गई थी।

उन्होंने चिट्ठी की छोटी-सी गोली बना कर चुटकी से उड़ा दी।

12.3 सारांश

सन् 1947 में हुआ भारत-विभाजन भारतीय उपमहाद्वीप में बीसवीं सदी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण दुर्घटनाओं में से एक है । सच तो यह है कि भारत - विभाजन को भारतीय - इतिहास में स्वाधीनता संग्राम की प्रक्रिया का त्रासद अंत कहना अनुपयुक्त न होगा, जिसका महत्वपूर्ण पड़ाव सन् 1857 का आन्दोलन कहा जा सकता है। स्पष्ट ही सन् 1857 में भारतीय स्वाधीनता संग्राम की प्रथम उदात्त लहर में तमाम राष्ट्रवादी ताकतों ने बहादुरशाह ज़फ़र को निर्विवाद रूप से अपना नेता मानकर अँग्रेजों से लोहा लिया था, पर सन् 1857 के बाद ब्रिटिश शासकों ने हिन्दू और मुसलमान जनता के बीच सांस्कृतिक अलगाववाद को हवा देकर भारत में सामाजिक-विभाजन और राजनैतिक-विभाजन की ज़मीन तैयार करने में सफ़लता प्राप्त की। ब्रिटिश शासन ने अपने औपनिवेशिक हितों को बचाने के लिए भारत विभाजन की जो रूपरेखा तैयार की, उसे कालान्तर में राष्ट्रीय आन्दोलन से उभरकर आए नेतृत्ववर्ग को भी परिस्थितिवश स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ा। बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक से सांप्रदायिक राजनीति का जो खुल्लमखुल्ला खेल शुरू हुआ उसके दुष्परिणामस्वरूप सदियों से साथ-साथ रह रही हिन्दू और मुस्लिम जनता को भौगोलिक विभाजन की सदी एक भयानक त्रासदी को झेलने के लिए अभिशप्त होना पड़ा।

कहना न होगा कि जिन लोगों ने विभाजन की पीड़ा का अनुभव किया वे भारत और पाकिस्तान दोनों जगहों पर हैं। इसीलिए हिन्दी-उर्दू की कहानियाँ चाहे जहाँ भी लिखी गयी हों, उनमें विभाजन संबन्धी आतंक, हैवानियत की यादें और अपनी जन्मभूमि से विस्थापित होकर नये ठौर-ठिकाने में अजनबीपन की अनुभूति आदि के चित्रण प्राय: मिलते - जुलते हैं । ज्यादातर लेखकों ने भारत की गंगा - जमुनी तहजीब की रचना के स्तर पर वकालत की है। सच तो यह है कि इतिहास के किसी भी कालखण्ड में भारतीय संस्कृति की मूलधारा सांप्रदायिकता से परिचालित नहीं रही है । इसलिए संस्कृतिकर्मियों ने सांप्रदायिकता को राजनीति से ज्यादा एक सांस्कृतिक चुनौती के रूप में स्वीकार करते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से इस अमानवीय विकृति का पर्दाफ़ाश किया है।

'शरणदाता' शीर्षक कहानी में अज्ञेय ने साम्प्रदायिकता और धर्मोन्माद के महादैल्य से हमें परिचित करवाया है। स्पष्ट ही एक रचनाकार जब लेखन-क्रम में समाजशास्त्रीय प्रामाणिकता के साथ कलात्मक संवेदनशीलता का सही विनियोग कर पाता है तभी उसकी रचना कालजयी होती है । दूसरे शब्दों में इतिहास -

चेतना के साथ कला – चेतना का समुचित वियोग महान रचना केलिए आवश्यक शर्त है और स्पष्ट ही अज्ञेय की यह कहानी इस शर्त को बखूबी पूरा करती है।

12.4 समीक्षा

विवेच्य कहानी में जिस विस्तार के साथ सांप्रदायिक हिंसा, हत्या, लूटपाट आदि का चित्रण है उतनी ही बारीकी के साथ धर्मनिरपेक्ष मानवता को एक सामाजिक और रचनात्मक मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित करने की बेचैनी भी है। लेखक यह अनुभव कराना चाहता है कि सांप्रदायिक सोच वस्तुत:हारे हुए हताश जनमानस की पहचान है जिसके तहत उसमें अपने अस्तित्व की मिथ्या–चेतना जन्म लेती है । उसके भीतर एक तथाकथित आत्मगौरव का संचार होता है। उदाहरण के लिए कोई हिन्दू या मुसलमान यदि बेरोजगार है, सहज जीवन–यापन की न्यूनतम सुविधा से रहित है, रचनाशीलता तथा किसी कला–कौशल के अभाव के चलते कुंठित है तो यथासमय उसका कट्टर धर्मोन्मादी और वहशी हो जाना एक हद तक स्वाभाविक ही है । ऐसे में संस्कृतिकर्मी का काम है मानवीय संवेदना का जीर्णोद्धार करना, मनुष्यता की टूटी कड़ियों को जोड़ना और एक ऐसा मानवीय वातावरण उत्पन्न करना जहाँ निराशा और हताशा के लिए जगह न हो । 'शरणदता' कहानी में जेबुन्निसा के माध्यम से अज्ञेय ने यही कार्य किया है।

12.5 शब्दार्थ

फ़िजा	–	वातावरण
खाहमखाह	–	अकारण
सरवरा	–	प्रधान
मेज़ारिटी	–	बहुसंख्यक
माइनारिटी	–	अल्पसंख्यक
बहुतायत	–	अधिकता
हिफ़ाजत	–	सुरक्षा
अहाता	–	घेरा
जतायां	–	प्रतीत करवाया
निराश्रित	–	बिना आश्रय का, बेघर
प्रबन्ध	–	इंतजाम
निरीक्षण	–	मुआयना
निर्द्वन्द्व	–	निश्चिंत
वर्जिश	–	व्यायाम
चिंदियाँ	–	छोटे – छोटे टुकड़े
इलतजा	–	निवेदन
मजलूम	–	पीड़ित
फिरकापरस्ती	–	सांप्रदायिकता

BRAOU

वय – उम्र

पनाहगज़ी – शरणार्थी

12.6 अभ्यास

12.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. भारत – विभाजन भारतीय महाद्वीप में बीसवीं सदी की एक दुर्घटना क्यों है?
2. सन् 1857 के बाद अंग्रेजों ने भारतीय हिन्दू और मुसलमान जनता के बीच सांस्कृतिक अलगाववाद को क्यों बढ़ावा दिया?
3. 'शरणदता' कहानी में कहानीकार की कला-चेतना कहाँ और किस रूप में अभिव्यक्त हुई है?
4. जेबुन्निसा का चरित्र-चित्रण कीजिए?

12.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. रफ़ीकुद्दीन का चरित्र-चित्रण कीजिए?
2. देविन्दरलाल को लिखे पत्र में जेबुन्निसा ने क्या निवेदन किया था?
3. दंगा शुरू हो जाने पर लोग शहर के डाक्टर के यहाँ क्यों गए?
4. ''शरणदाता'' कहानी का मूल स्वर सांप्रदायिकता विरोधी है? विवेचन कीजिए?

12.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

12.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : जेबुन्निसा का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर : जेबुन्निसा विवेच्य कहानी में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पात्र है । वह रफ़ीकुद्दीन ने दोस्त शेख अताउल्लाह की बेटी है। रफ़ीकुद्दीन के यहाँ से जब देविन्दरलाल शेख अताउल्लाह के घर के पिछवाड़े की एक सूनी कोठरी में आकर ठहरता है तो अकेलेपन की पीड़ा से वह व्यथित हो उठता है। धीरे-धीरे वह कमरे से जुड़े आंगन के कोने से शेख जी के परिवार के सदस्यों की बातचीत सुनकर प्रत्येक सदस्य की अलग-अलग आवाज पहचानने लग जाता है और कुछ ही दिनों के अन्दर वह शेख साहब के घर के जीवन और सदस्यों से लगभग परिचित हो जाता है। देविन्दरलाल को जेबुन्निसा के विनीत युवा स्वर से लगाव है । उसे विश्वास है कि इतना विनीत मनुष्य कतई फिरकापरस्त नहीं हो सकता।

जेबुन्निसा को परिवार में लोग प्यार से जैबू के नाम से पुकारते हैं । देविन्दरलाल को ऐसी प्रतीति है कि घर में भोजन पकाने में बड़ा हिस्सा तो जेबुन्निसा की माँ का रहता था जिसकी आवाज में तीखापन तथा उम्र का खुरदरापन था, पर भोजन परोसना शायद जेबुन्निसा के ही जिम्मे था । इस प्रतीति की वजह से कथानायक को जाने-अनजाने भोजन कुछ ज्यादा ही सुस्वादु लगता है।

देविन्दरलाल को इस बात का अहसास है कि पुलिस विभाग के कर्मचारी का घर यदि एक ओर किसी दंगा-पीड़ित के लिए सुरक्षित शरणस्थली हो सकता है तो दूसरी ओर कई बार यह तथाकथित सुरक्षित स्थान बहुत-से उपद्रवों की जड़ भी होता है। ऐसे में जब एक दिन अत्यन्त सुस्वादु भोजन भेजा जाता है तो वे अपनी समबुद्धि की प्रेरण से बार-बार ठिठक जाते हैं। इसी दरम्यान 'तीन एक फुलकों की तह में कागज की एक पुड़िया -सी पड़ी' देखकर देविन्दरलाल हठात चौंक पड़े। वस्तुतः वह एक पुर्जा था जिस पर चेतावनी लिखी थी

BRAOU

कि खाना कुत्ते को खिलाकर ही खाया जाय। पुर्जा पढ़ते ही कथानायक को यह समझते देर न लगी कि जेबुन्निसा को अपने पिता द्वारा रचे गये षड्यंत्रों की भनक लगी होगी और अपनी आत्मा की आवाज पर उसीने रोटियों के बीच पुर्जा लिखकर उसे सावधान किया हैं।

स्पष्ट ही जेबुन्निसा के चरित्र के माध्यम से कहानीकार ने हैवानियत पर इनसानियत की जीत दिखाई है। एक दकियानूस पुलिस कर्मचारी के यहाँ पलने-बढ़ने के बावजूद उसका जमीर मरा नहीं है। उसकेभीतर मानवीय संवेदना का पुट है। इसीलिए अपनी सीमा में रहकर वह शक्ति का परिचय देती है। और सही मौके पर एक अनजान शरणार्थी की रक्षा करती है। वस्तुत : अज्ञेय की इस कहानी में शेख अताउल्लाह रक्षक के रूप में भक्षक है और असली शरणदाता है जेबुन्निसा।

जेबुन्निसा के दूसरे पत्र में जो बातें हैं उनसे गुजरते हुए साफ़ पता चलता है कि उसका मानवीय विवेक अत्यन्त जाग्रत है और वह मनुष्यता की उच्च भूमि पर अवस्थित है। इस पत्र द्वारा यह देविन्दरलाल से अपने पिता की कारगुजारियों के लिए माफ़ी मांगती है। साथ ही उनसे अपेक्षा करती है कि यथासमय वे भी इनसानियत का परिचय दें। सच तो यह है कि जेबुन्निसा के माध्यम से ही कहानीकार अज्ञेय की कला-चेतना परवान चढ़ी है। इसलिए उसका चरित्र हर दृष्टि से उल्लेखनीय है।

12.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए

''वे आँगन में खड़े होकर आकाश देखने लगे। आजाद देश का आकाश । और नीचे से, अभ्यर्थना में जलते हुए घरों का धुआँ। धूपेन धापयाम: । लाल चन्दन - रक्त चन्दन ...''

उत्तर : उपर्युक्त गद्यांश अज्ञेय रचित शरणदाता कहानी से उद्धृत है। साम्प्रदायिक दंगे की आग में झुलस रही आजादी का यहाँ सजीव चित्रांकन प्रस्तुत करने में ये पंक्तियाँ समर्थ हैं। कहानी में यह गद्यांश वहाँ आया है जब कथानायक देविन्दरलाल को उसका दोस्त रफ़ीकुद्दीन खुद समुचित सुरक्षा प्रदान करने में असमर्थ होने की वजह से अपने एक दूसरे मित्र शेख अताउल्लाह के यहाँ पहुँचा देता है जहाँ वे अकेले में आत्मचिंतन करते हैं।

कहना न होगा कि किसी धर्म विशेष या ईश्वर में आस्था रखना एक आंतरिक मनोभाव है। परन्तु जैसे ही एक व्यक्ति या समुदाय, दूसरे व्यक्ति या समुदाय की आस्थाओं या पूजा-पद्धतियों के प्रति आक्रामक हो जाता है, यही से बात मात्र परस्पर विरोधी धार्मिक विचारों के वादविवादों में ही सीमित नहीं रह जाती, अपितु देश एवं समाज के सामुदायिक जीवन के विरुद्ध खड़ी हो जाती है।

स्पष्ट ही सन् 1947 की याद केवल आजादी की याद तक सीमित नहीं है। इससे जुडे जो एहसास ज्यादा गहरे हैं, वे जख्म हैं सन् 1947 के भयावह सांप्रदायिक दंगे जिसमें लाखों इनसानों की बलि, लाखों स्त्रियों के साथ हर प्रकार के अमानवीय व पाशविक अत्याचार और करीब एक करोड़ लोगों का अभूतपूर्व विस्थापन।

यह गद्यांश अज्ञेय की समाजदार्शनिक दृष्टि और आत्मचिंतनपरक शैली का सुन्दर उदाहरण है। सांप्रदायिकता पर धर्मनिरपेक्षता एवं मनुष्यता की विजय दिखाना ही कहानीकार का अभीष्ट है।

प्रश्न 2 : शरणदाता कहानी का मूल स्वर सांप्रदायिकता-विरोधी है - विवेचन कीजिए।

उत्तर : सांप्रदायिकता धार्मिक कट्टरता का ही दूसरा नाम है । जाहिर है कि ब्रिटिश शासकों ने अपनी सत्ता की डूबती नैया को बचाने के लिए अपने शासन काल के अंतिम दशकों में भारतीय जनता के बीच धार्मिक भेदभाव पर आधारित राजनीति को हवा देनी शुरू की । दूसरे शब्दों में कहें तो भारत की जनता को हिन्दू-मुस्लिम के दो परस्पर आक्रामक खेमों में बांटकर देश को और ज्यादा दिनों तक गुलाम बनाये रखने की साजिश ब्रिटिश साम्राज्यवाद की थी जिसे अपने निहित स्वार्थ के लिए मजहबी-राजनीति करने वाले लोगों ने अमली जामा पहनाया । इसी सांप्रदायिक राजनीति के भयावह ताण्डव का चित्रण करते हुए अज्ञेय ने विवेच्य कहानी में रचना

के स्तर पर सांप्रदायिकता के मनुष्यता-विरोधी पहलू का पर्दाफ़ाश किया है ।

सच तो यह है कि संप्रदायवाद की राजनीति करने वाले लोग समाज का मजहबी केन्द्रीयकरण करके जीवन और समाज में सुलगते ज्वलंत समाजार्थिक प्रश्नों से जनता का ध्यान हटाकर उन्हें भावनात्मक स्तर पर बाँट देते हैं । पर इन सारी विपरीत और भयावह स्थितियों में भी कही न कहीं मनुष्यता के बीजांकुर पनप रहे होते हैं। 'शरणदाता' कहानी में ज़ेबुन्निसा की उपस्थिति वस्तुतः मानवीय उपस्थिति है।

बोध प्रश्नोत्तर

1 : एक कठिन समय में आम लोगों में शांति और सुरक्षा की भावना पैदा करने के बजाय निरश्रितों को अपने घर में जगह देने वाले रेलवे कर्मचारी की सपरिवार हत्या कर देने के कारण ही कहानीकार ने पुलिस को भी कटघरे में खड़ा किया है।

2 : रफ़ीकुद्दीन और देविन्दरलाल जिगरी दोस्त थे। जब शहर में सांप्रदायिक हिंसा फैल गयी और देविन्दरलाल ने एक दिन रफ़ीकुद्दीन को जताया कि वे भी शहर छोड़कर चले जाने की बात पर गौर कर रहे हैं तब रफ़ीकुद्दीन को गहरा सदमा पहुँचा उसने दोस्ती निभायी और मित्र को अपने घर में टिका लिया। किन्तु मुहल्ले के कट्टरपंथी एवं धर्मोन्मादग्रस्त लोगों की वजह से उसने देविन्दरलाल को पुलिस विभाग में कार्यरत अपने एक मित्र अताउल्लाह के यहाँ छिपा दिया।

12.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. विपथगा – अज्ञेय
2. शरणार्थी – अज्ञेय
3. अज्ञेय – सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

BRAOU

इकाई-13 : ठेस - फणीश्वरनाथ रेणु

13.0 उद्देश्य

13.1 पाठ एवं लेखक परिचय

13.2 मूल पाठ

13.3 सारांश

13.4 समीक्षा

13.5 शब्दार्थ

13.6 अभ्यास

13.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

13.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

13.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

13.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

13.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.0 उद्देश्य

इस पाठ में कथाकार फणीश्वर नाथ रेणु की 'ठेस' कहानी पर प्रकाश डाला गया है। इस कहानी से आप :

- गाँव के वातावरण में एक स्वाभिमानी कलाकार की स्थिति को समझ सकेंगे।
- कलाकार सिरचन के चरित्र की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- ग्रामीण आँचलिक परिवेश से लेखक के लगाव को देख सकेंगे।
- इस कहानी द्वारा लेखक के कलाकार सम्बन्धी विचारों से परिचित हो सकेंगे।
- इस कहानी की कलात्मक विशेषताओं को जान सकेंगे।

13.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

'ठेस' कहानी प्रसिद्ध कहानीकार फणीश्वर नाथ रेणु द्वारा लिखी गई है। इसमें लेखक ने आंचलिक क्षेत्र के एक कलाकार के स्वाभिमान को प्रस्तुत किया है। इस कहानी का नायक सिरचन अपनी कला के लिए गाँव में ही नहीं बल्कि पटना और कलकत्ता के परिचित परिवारों में भी प्रसिद्ध है। वह मोथी घास, परेरी की रंगीन शीतल पाटी, बाँस की चिक, सतरंगी डार के मोढे, मूजकी रस्सी के जाले आदि वस्तुएँ बनाने में कुशल है। सिरचन को गाँव के लोग मुफ्तखोर और कामचोर समझते हैं क्योंकि वह चिड़चिडे स्वभाव का व्यक्ति है इसका

BRAOU

कारण यह है कि सिरचन अपने जीवन में पत्नी और बच्चों को खोकर अकेला और बेसहारा हो गया था। इसलिए वह गाँव वालों से आत्मीयता और सहानुभूति की अपेक्षा करता है लेकिन जब उसे अपनत्व की जगह उपेक्षा मिलती है तो उसका स्वाभिमानी हृदय आहत हो उठता है। इसी कारण वह चिड़चिड़े स्वभाव का व्यक्ति बन गया था। किन्तु सिरचन अपना स्वाभिमान आहत होने पर भी अपने कर्तव्य का पालन करना नहीं भूलता बल्कि अपनी कला द्वारा हवेली की लाज बचाता है।

(आ) लेखक का परिचय :

फणीश्वर नाथ रेणु का जन्म सन् 1921 ई. में एक मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ। उनका जन्म स्थान बिहार प्रांत के पूर्णिया जिले का औराही हिंगना गाँव है। उनकी आरम्भिक शिक्षा फारबिस गंज विद्यालय, विराट नगर, नेपाल में हुई। उन्होंने उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त की। रेणु जी ने सन् 1942 के स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भाग लिया और तीन वर्ष जेल में रहे। उन्होंने समाजवादी दल के कार्यकर्ता के रूप में बिहार के किसान अंदोलन में भाग लिया। रेणु ने नेपाल के प्रथम ऐतिहासिक मजदूर संघर्ष की बागडोर सम्भली। उनका नेपाल के कोइराला बन्धुओं के साथ घनिष्ठ राजनैतिक सम्बन्ध रह है। रेणु स्वभाव से विद्रोही प्रकृति के व्यक्ति रहे। 1952-53 में लम्बी बीमारी के बीच पटना अस्पताल से उनका लेखन कार्य व्यवस्थित हुआ । वे एक जागरूक चिन्तक और सशक्त लेखक रहे हैं।

रेणु की प्रथम कहानी बटबाबा 1946 में कलकत्ते के साप्ताहिक पत्र विश्वमित्र में प्रकाशित हुई। शुरू से ही उनकी कहानियों में गाँव का दु:ख दर्द प्रकट होता रहा। 1954 में प्रकाशित मैला आँचल उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव प्रस्तुत करने वाला रहा है। इसमें पूर्णिया जिले के मेरीगंज गाँव की 1947-48 की कथा रही है। इस उपन्यास का अनेक भाषओं में अनुवाद हुआ। रेणु का दूसरा उपन्यास 'परती परिकथा' 1957 में प्रकाशित हुआ जिसमें बिहार के निर्धन वर्ग के जीवन का सजीव चित्र मिलता है। 'दीर्घतपा' उनका तीसरा और 'जुलूस' (1961) चौथा उपन्यास रहा। जिसमें भारत विभाजन से विस्थापितों के जीवन में आये संघर्ष की कहानी मिलती है। रेणु का पाँचवाँ उपन्यास 'कितने चौराहे' स्वातंयोत्तर भारतीय सामाजिक जीवन का प्रस्तुत करता है। जिसमें मनुष्य के मानसिक और भौतिक संघर्ष का वर्णन मिलता है।

वास्तव में 1953 के पूर्व से ही रेणु हिन्दी के पत्र पत्रिकाओं में कहानियाँ, रेखाचित्र, रिपोर्ताज लिखते रहे। सन् 1959 ई.में उनका पहला कहानी संग्रह ठुमरी प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह की प्रसिद्ध कहानी 'मारे गये गुल्फाम उर्फ तीसरी कसम' नाम से सिनेमा पर सर्वोच्च राष्ट्रपति पुरस्कार राष्ट्रपति स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। उनका दूसरा कहानी संग्रह 'आदिम शत्रि की महक' 1967 में और तीसरा कहानी संग्रह 'अग्निखोर' 1973 में प्रकाशित हुआ इसके अलावा कमलेश्वर द्वारा रेणु की श्रेष्ठ कहानियाँ नाम से रेणु की चुनी हुई कहानियों का संकलन आया। 1968 से रेणु जी पुन: राजनीति में सक्रिय हो गये। लोक नायक जय प्रकाश नारायण के साथ आंदोलन में सक्रिय होने के कारण उन्हें बिहार सरकार ने जेल में बन्द कर दिया। वे आपात काल से मुक्ति दिलाने के संघर्ष में भी सक्रिय रहे। अप्रेल 1977 में पेट के अलसर के कारण पटना में रेणु का देहांत हो गया। वे स्वभाव से फक्कड़, भावुक, हंसमुख, सुकोमल हृदय, अन्याय और पाखण्ड के दृढ विरोधी साहित्यकार रहे हैं।

रेणु की कहानियाँ ग्रामीण अंचल की सांस्कृतिक सुषमा से संबद्ध रही है। उनकी कहानियों में बिहार के लोक जीवन का सम्पूर्ण सौंदर्य प्रस्तुत हुआ है। उन्होंने अपनी रचनओं में लोगों की वेशभूषा, आचार व्यवहार, आशओं आकाँक्षाओ का अत्यन्त सहज भाव से चित्रण किया हैं। उनकी कहानियों में सजीव जीवन के सारे दृश्य साकार मिलते है जिसके लिए उन्होंने लोक कथाओं का प्रयोग किया है जिससे उनकी कहानियों का अकर्षण दुगुना हुआ है। रेणु की कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता मनुष्य हृदय के सूक्ष्म मनोभावों की पकड़ रही है। उनकी कहानियों में 'तीसरी कसम', 'लालपान की बेगम', 'संवदिया', रसप्रिया और तीर्थोदक सर्वाधिक चर्चित रही हैं।

BRAOU

13.3 मूल पाठ

खेती-बारी के समय, गाँव के किसान सिरचन की गिनती नहीं करते। लोग उसको बेकार ही नहीं, 'बेगार' समझते हैं। इसलिए, खेत-खलिहान की मजदूरी के लिए कोई नहीं बुलाने जाता है सिरचन को। क्या होगा उसको बुलाकर? दूसरे मजदूर खेत पहुँचकर एक-तिहाई काम कर चुकेंगे, तब कहीं सिरचन राय हाथ में खुरपी डुलाता हुआ दिखाई पड़ेगा - पगडण्डी पर तौल-तौलकर पाँव रखता हुआ धीरे-धीरे। मुफ़्त में मजदूरी देनी हो तो और बात है।

बोध प्रश्न : 1. गाँव के किसान सिरचन को क्या समझते थे?

.....

.....

.....

....आज सिरचन को मुफ़्तखोर, कामचोर या चटोर कहले कोई। एक समय था, जबकि उसकी मड़ैया के पास बड़े-बड़े बाबू लोगों की सवारियाँ बंधी रहती थीं। उसे लोग पूछते ही नहीं थे, उसकी खुशामद भी करते थे .. अरे, सिरचन भाई! अब तो तुम्हारे ही हाथ में यह कारीगरी रह गई है सारे इलाक़े में। एक दिन भी समय निकालकर चलो। कल बड़े भैया की चिट्ठी आई है शहर से - सिरचन से एक जोड़ा चिक बनवाकर भेज दो।

मुझे याद है... मेरी माँ जब कभी सिरचन को बुलाने के लिए कहती, मैं पहले ही पूछ लेता - भोग क्या-क्या लगेगा?

माँ हँसकर कहती - जा जा, बेचारा मेरे काम में पूजा-भोग की बात नहीं उठाता कभी।

ब्राह्मण टोली के पंचानंद चौधरी के छोटे लड़के को एक बार मेरे सामने ही बेपानी कर दिया था सिरचन ने। - तुम्हारी भाभी नाखून से खाँटकर तरकारी परोसती है और इमली का रस डालकर कढ़ी तो हम कहार-कुम्हारों की घरवाली बनाती है। तुम्हारी भाभी ने कहाँ से बनाई?

बोध प्रश्न : 2. सिरचन ने किसको बेपानी कर दिया था?

.....

.....

.....

इसलिए, सिरचन को बुलाने के पहले मैं, माँ को पूछ लेता..।

सिरचन को देखते ही मां हुलसकर कहती -आओ सिरचन! आज नेनू मथ रही थी, तो तुम्हारी याद आई। घी की (खखोरन) डाड़ी के साथ चूडा तुमको बहुत पसन्द है न...! और बड़ी बेटी ने ससुराल से संवाद भेजा है, उसकी ननंद रूठी हुई है, मोथी की शीतलपाटी के लिए।

सिरचन अपनी पनियाई जीभ को सम्हालकर हँसता - घी की सौंधी सुगन्ध सूँघकर ही आ रहा हूँ काकी। नहीं तो इस शादी-ब्याह के मौसम में दम मारने की भी छुट्टी कहाँ मिलती है?

सिरचन जाति का कारीगर है। मैने घंटों बैठकर उसके काम करने के ढंग को देखा है। एक-एक मोथी और पटेर को हाथ में लेकर बड़े जतन से उसकी कुच्ची बनाता। फिर, कुच्चियों को रँगने से लेकर सुतली सुलझाने में पूरा दिन समाप्त।....काम करते समय उसकी तन्मयता में जरा भी बाधा पड़ी कि गेहुँअन साँप की तरह फुफकार उठता - फिर किसी दूसरे से करवा लीजिए काम। सिरचन मुँहजोर है, कामचोर नहीं।

BRAOU

बिना मजदूरी के पेट-भर भात पर काम करने वाला कारीगर। दूध में कोई मिठाई न मिले, कोई बात नहीं किन्तु बात में जरा भी झाल वह नहीं बरदाश्त कर सकता।

बोध प्रश्न : 3. सिरचन क्या बरदाश्त नहीं कर सकता था?

.....

.....

.....

सिरचन को लोग चटोर भी समझते है.. तली-बघारी हुई तरकारी, दही की कढ़ी, मलाई वाला दूध, इन सबका प्रबन्ध पहले कर लो, तब सिरचन को बुलाओ, दुम हिलाता हुआ हाजिर हो जाएगा। खाने-पीने में चिकनाई की कमी हुई कि काम की सारी चिकनाई खत्म! काम अधूरा रखकर उठ खड़ा होगा - आज तो अब अधकपाली दर्द से माथा टनटना रहा है। थोड़ा-सा रह गया है, किसी दिन आकर पूरा कर दूँगा.... किसी दिन - माने कभी नहीं।

मोथी घास और पटेर की रंगीन शीतलपाटी, बाँस की तीलियों की झिलमिलाती चिक, सतरंगे डोर के मोढ़े, भूसी-चुन्नी रखने के लिए मूँज की रस्सी के बड़े-बड़े जाले, हलवाहों के लिए ताल के सूखे पत्तों की छतरी-टोपी तथा इसी तरह के बहुत-से काम हैं, जिन्हें सिरचन के सिवा गाँव में और कोई नहीं जानता। यह दूसरी बात है कि अब गाँव में ऐसे कामों को बेकाम का काम समझते हैं लोग - बेकाम का काम, जिसकी मजदूरी में अनाज या पैसे देने की कोई जरूरत नहीं। पेट-भर खिला दो, काम पूरा होने पर एकाध पुराना-धुराना कपड़ा देकर विदा करो। वह कुछ भी नहीं बोलेगा।

बोध प्रश्न : 4. सिरचन क्या-क्या बनाना जानता था?

.....

.....

.....

कुछ भी नहीं बोलेगा, ऐसी बात नहीं। सिरचन को बुलाने वाले जानते हैं, सिरचन बात करने में भी कारगर है।.....महाजन टोले के भज्जू महाजन की बेटी सिरचन की बात सुनकर तिलमिला उठी थी - ठहरो! मैं माँ से जाकर कहती हूँ। इतनी बड़ी बात।

- बड़ी बात ही है बिटिया। बड़े लगों की बस बात ही बड़ी होती है। नहीं तो दो-दो पटेर की पाटियों का काम सिर्फ खँसारी का सत्तू खिलाकर कोई करवाए भला? यह तुम्हारी माँ ही कर सकती है बबुनी। सिरचन ने मुसकराकर जवाब दिया था।

उस बार मेरी सबसे छोटी बहन की विदाई होने वाली थी। पहली बार ससुराल जा रही थी मानू। मानू के दूल्हे न पहले ही बड़ी भाभी को खत लिखकर चेतावनी दे दी है - मानू के साथ मिठाई की पतीली न आए कोई बात नहीं। तीन जोड़ी फैशनेबल चिक और पटेर की दो शीतल-पाटियों के बिना आएगी मानू तो..। भाभी ने हँसकर कहा - बैरंग वापस! इसलिए, एक सप्ताह पहले से ही सिरचन को बुलाकर काम पर तैनात करवा दिया था माँ ने देख सिरचन! इस बार नई धोती दूँगी, असली मोहर छाप वाली धोती। मन लगाकर ऐसा काम करो कि देखने वाले देखकर देखते ही रह जाएँ!

बोध प्रश्न : 5. मानू के पति ने किस बात की चेतावनी दी?

.....

BRAOU

.....

.....

पान जैसी पतली छुरी से बाँस की तीलियों और कमानियों को चिकनाता हुआ सिरचन अपने काम में लग गया। रंगीन सुतलियों में झब्बे डालकर वह चिक बुनने बैठा। डेढ़ हाथ की बिनाई देखकर ही लोग समझ गए कि इस बार एकदम नये फैशन की चीज बन रही है, जो पहले कभी नहीं बनी।

मँझली भाभी से नहीं रहा गया, परदे की आड़ से बोली - पहले ऐसा जानती कि मोहर छाप वाली धोती देने से ही अच्छी चीज बनती है तो भैया को खबर भेज देती।

काम में व्यस्त सिरचन के कानों में बात पड़ गई। बोला - मोहर छाप वाली धोती के साथ रेशमी कुरता देने पर भी ऐसी चीज नहीं बनती बहुरिया! मानू दीदी काकी की सबसे छोटी बेटी है .. मानू दीदी का दूल्हा अफ़सर आदमी है!

मँझली भाभी का मुँह लटक गया। मेरी चाची ने फुसफुसाकर कहा - किससे बात करती है बहू? मोहर छाप वाली धोती नहीं, मुँगिया - लड्डू। बेटी की विदाई के समय रोज मिठाई जो खाने को मिलेगी। देखती है न!

दूसरे दिन चिक की पहली पाँति में सात तारे जगमगा उठे, सात रंग के। सतभैया तारा! सिरचन जब काम में मगन रहता है तो उसकी जीभ जरा बाहर निकल आती है, होंठ पर। अपने काम में मगन सिरचन को खाने-पीने की सुध नहीं रहती। चिक में सुतली के फन्दे डालकर उसने पास पड़े सूप पर निगाह डाली - चिउरा और गुड़ का एक सूखा ढेला। मैंने लक्ष्य किया, सिरचन की नाक के पास दो रेखाएँ उभर आई। मैं दौड़कर माँ के पास गया - माँ, आज सिरचन को कलेवा किसने दिया है, सिर्फ़ चिउरा और गुड़?

माँ रसोईघर के अन्दर पकवान आदि बनाने में व्यस्त थी। बोली मैं अकेली कहाँ-कहाँ क्या-क्या देखूं। ...अरी मँझली, सिरचन को बुँदिया क्यों नहीं देती?

- बुँदिया मैं नहीं खाता, काकी। सिरचन के मुँह में चिउरा भरा हुआ था। गुड़ का ढेला सूप में एक किनारे पर पड़ा रहा, अछूता।

माँ की बोली सुनते ही मँझली भाभी की भौंहें तन गई। मुट्ठी-भर बुंदिया सूप में फेंककर चली गई।

सिरचन ने पानी पीकर कहा - मँझली बहूरानी अपने मैके से आई हुई मिठाई भी इसी तरह हाथ खोलकर बाँटती है क्या?

बोध प्रश्न : 6. सिरचन ने मंझली बहूरानी से क्या कहा?

.....

.....

.....

बसक मँझली भाभी अपने कमरे में बैठकर रोने लगी। चाची ने माँ के पास जाकर लगाया - छोटी जाति के आदमी का मुँह भी छोटा होता है। मुँह लगाने से सिर पर चढ़ेगा ही। ...किसी की नैहर-ससुराल की बात क्यों करेगा वह?

मँझली भाभी माँ की दुलारी बहू है। माँ तमककर बाहर आई - सिरचन, तुम काम करने आए हो, अपना काम करो . बहुओं से बतकुट्टी करने की क्या जरूरत? जिस चीज की जरूरत हो, मुझसे कहो।

सिरचन का मुँह लाल हो गया। उसने कोई जवाब नहीं दिया। बाँस में टँगे हुए अधूरे चिक में फन्दे डालने लगा।

BRAOU

मानू पान सजाकर बाहर बैठक खाने में भेज रही थी। चुपके से पान का एक बीड़ा सिरचन को देती हुई बोली, इधर-उधर देखकर – सिरचन दादा, काम-काज का घर। पाँच तरह के लोग पाँच किस्म की बात करेंगे। तुम किसी की बात पर कान मत दो।

सिरचन ने मुसकराकर पान का बीड़ा मुँह में ले लिया। चाची अपने कमरे से निकल रही थी। सिरचन को पान खाते देखकर अवाक हो गई। सिरचन ने चाची को अपनी ओर अचरज से घूरते देखकर कहा – छोटी चाची, जरा अपनी डिबिया का गमकौआ जर्दा तो खिलाना। बहुत दिन हुए ....।

बोध प्रश्न 7) सिरचन ने छोटी चाची से क्या माँगा?

.....

.....

.....

चाची कई कारणों से जली-भुनी रहती थी सिरचन से। गुस्सा उतारने का ऐसा मौका फिर नहीं मिल सकता। झनकती हुई बोली – मसखरी करता है? तुम्हारी बढ़ी हुई जीभ में आग लगे। घर में भी पान और गमकौआ जर्दा खाते हो।....चटोर कहीं के। मेरा कलेजा धड़क उठा ... यत्परो नास्ति।

बस, सिरचन की उँगलियों में सुतली के फन्दे पड़ गए। मानो, कुछ देर तक वह चुपचाप बैठा पान को मुँह में घुलाता रहा। फिर अचानक उठकर पिछवाड़े पीक थूक आया। अपनी छुरी, हँसिया वगैरह समेट सम्हालकर झोले में रखे। टँगी हुई अधूरी चिक पर एक निगाह डाली और हनहनाता हुआ आँगन से बाहर निकल गया।

चाची बड़बड़ायी – अरे बाप रे बाप! इतनी तेजी! कोई मुफ्त में तो काम नहीं करता? आठ रुपये में मोहर छाप वाली धोती आती है।... इस मुँहझोसे के न मुँह में लगाम है, न आँख में शील। पैसा खर्च करने पर सैकड़ों चिकें मिलेंगी। बातर टोली की औरतें सिर पर गट्ठर लेकर गली-गली मारी फिरती हैं।

मानू कुछ नहीं बोली। चुपचाप अधूरी चिक को देखती रही।..... सातों तारे मन्द पड़ गए।

माँ बोली – जाने दे बेटी। जी छोटा मत कर, मानू। मेले से खरीदकर भेज दूँगी।

मानू को याद आई, विवाह में सिरचन के हाथ की शीतलपाटी दी थी माँ ने। ससुराल वालों ने न जाने कितनी बार खोलकर दिखलाया था पटना और कलकत्ता के मेहमानों को। वह उठकर बड़ी भाभी के कमरे में चली गई।

मैं सिरचन को मनाने गया। देखा, एक फटी हुई शीतलपाटी पर लेटकर वह कुछ सोच रहा है। मुझे देखते ही बोला – बबुआजी। अब नहीं। कान पकड़ता हूँ, अब नहीं।... मोहर छाप वाली धोती लेकर क्या करूँगा? कौन पहनेगा?.... ससुरी खुद मरी, बेटे-बेटियों को ले गई अपने साथ। बबुआजी, मेरी घरवाली जिन्दा रहती तो मैं ऐसी दुर्दशा भोगता? यह शीतलपाटी उसी की बुनी हुई है। इस शीतलपाटी को छूकर कहता हूँ, अब यह नहीं करूँगा।... गाँव-भर में तुम्हारी हवेली में मेरी कदर होती थी। अब क्या? मैं चुपचाप वापस लौट आया। समझ गया, कलाकर के दिल में ठेस लगी है। वह नहीं आ सकता।

बोध प्रश्न : 8. लेखक के बुलाने पर सिरचन क्यों नहीं आया?

.....

.....

.....

BRAOU

बड़ी भाभी अधूरी चिक में रंगीन छीट का झालर लगाने लगी – यह भी बेजा नहीं दिखलाई पड़ता, क्यों मानू?

मानू कुछ नहीं बोली।...बेचारी । किंतु मैं चुप नहीं रह सका चाची और मँझली भाभी की नजर न लग जाए इसमें भी।

मानू को ससुराल पहुँचाने मैं ही जा रहा था।

स्टेशन पर सामान मिलाते समय देखा, मानू बड़े जतन से अधूरी चिक को मोड़कर लिये जा रही है अपने साथ। मन-ही-मन सिरचन पर गुस्सा हो आया। चाची के सुर-में-सुर मिलाकर कोसने को जी हुआ। ...कामचोर, चटोर।

गाड़ी आई। सामना चढ़ाकर मैं दरवाजा बन्द कर रहा था क प्लेटफ़ार्म पर दौड़ते हुए सिरचन पर नजर पड़ी – बबुआजी। उसने दरवाजे के पास आकर पुकारा।

– क्या है? मैंने खिड़की से गरदन निकालकर झिड़की के स्वर में कहा। सिरचन ने पीठ पर लदे हुए बोझ को उतारकर मेरी ओर देखा .. दौड़ता आया हूँ। ...दरवाजा खोलिए। मानू दीदी कहाँ है! एक बार देखूँ!

मैंने दरवाजा खोल दिया।

– सिरचन दादा । मानू इतना ही बोल सकी।

खिड़की के पास खड़े होकर सिरचने ने हकलाते हुए कहा – यह मेरी ओर से है। सब चीज है दीदी। शीतलपाटी, चिक और एक जोड़ी आसनी, कुश की। गाड़ी चल पड़ी।

बोध प्रश्न : 9. सिरचन स्टेशन क्या लेकर पहुँचा?

.....

.....

.....

मानू मोहरछाप वाली धोती का दाम निकालकर देने लगी। सिरचन ने जीभ को दाँत से काटकर दोनों हाथ जोड़ दिए।

मानू फूट-फूटकर रो रही थी। मैं बण्डल को खोलकर देखने लगा-ऐसी कारीगरी, एसी बारीकी, रंगीन सुतलियों के फन्दों का ऐसा काम, पहली बार देख रहा था।

13.3 सारांश

'ठेस' कहानी प्रसिद्ध कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा लिखी गई है। इसमें उन्होंने बिहार के एक गाँव के कारीगर के स्वाभिमान को प्रस्तुत किया है। इस कहानी का नायक सिरचन एक कुशल कारीगर है वह मोथी घास और पोर की रंगीन शीतल पाटी बांस की तीलियों की झिलमिलाती चिक सतरंगे डोर के मोढ़े भून्नी-चुन्नी रखने के लिए मोज की रस्सी के बड़े-बड़े जाले हलवाहों के लिए ताल के सूखे पत्तों की छतरी-टोपी आदि बनाने में बेजोड़ कारीगर रहा। लेकिन गाँव में उसकी कला की पररव थी कद्र नहीं थी। उसकी कला को लोग बेकार का काम मानते थे। उसकी कला की मजदूरी न देकर उसे पेट भर खाना और कोई पुराना कपड़ा देना पर्याप्त समझते थे। सिरचन अपने जीवन में पत्नी और बच्चों को खोकर अकेला और बेसहारा हो गया था। लेकिन वह लोभी था लालची नहीं था। वह दूसरों से आत्मीयता और अपनत्व के व्यवाहर की अपेक्षा करता था जिसकी उसके जीवन में कमी रही। परंतु गाँव के लोग उसकी भावनाओं को समझ नहीं पाते थे इसी कारण वे उसे कामचोर, आलसी, चटोरा और चिड़-चिड़े स्वाभाव का बेकार व्यक्ति मानते थे।

BRAOU

गाँव की हवेली की बेटी मानू की शादी पर सिरचन द्वारा बनायी गई शीतल पाटी दी गई थी। जिसकी उसके ससुराल में पटना और कलकत्ता से आये सभी मेहमानों ने प्रशंसा की थी। इसीलिए मानू की फरमाइश पर सिरचन को शीतल पाटी और चिक बनाने के लिए बुलाया गया। उससे काम लेना आसान नहीं था फिर भी गाँव की बेटी की छोटी सी फरमाइश होने के कारण वह हवेली में ही काम करने लगा किन्तु काम के दौरान हवेली की औरतों से कहासुनी होने पर चिढ़ कर सिरचन अधूरी चिक छोड़कर चला जाता है। मानू दुःखी होकर उस अधूरी चिक को ही संभाल कर रख लेती है। लेखक स्वयं सिरचन को मनाने गये परन्तु उसके घर पहुँच कर उन्होंने पाया कि एक स्वाभिमानी कलाकार के हृदय को ठेस लगी है और वे चुपचाप लौट पड़े। लेकिन ससुराल को जाते समय मानू को अधूरी चिक संभालकर रखते देख लेखक को सिरचन पर क्रोध आया। किन्तु तभी उन्होंने स्टेशन पर देखा कि सिरचन पीठ पर बोझ लादे गाड़ी की ओर दौड़ते हुए आ पहुँचा और पीठ से बोझ उतार कर मानू को भेंट कर दिया। उसमें मानू की फरमाइश की सारी चीजें थीं। वह मानू के द्वारा मोहर छाप वाली धोती का दाम देने पर लेने से इंकार कर वह हाथ जोड़ देता है और गाड़ी चल पड़ती है। जब लेखक सिरचन द्वारा दिये गये बंडल को खोल कर देखते हैं तो वह सिरचना के हाथों की कुशल कारीगरी और अद्‌भुत कला को देख आश्चर्य चकित रह जाते हैं।

13.4 समीक्षा

'ठेस' कहानी में फणीश्वरनाथ रेणु ने एक गरीब कारीगर के स्वाभिमान को लगी ठेस को उजागर किया है। लेखक यह दर्शाते हैं कि प्रत्येक कलाकार का अपना स्वाभिमान होता है। इस कहानी के नायक सिरचन का स्वभाव भी कुछ इसी प्रकार का है। वह एक ऐसा गरीब कलाकार है जो अपनी कला के बदले मजदूरी न मिलने पर दुःखी नहीं होता बल्कि उस की उपेक्षा के व्यवहार से दुःखी होता है। वह गाँव के लोगों से अपने प्रति आत्मीयता और अपनत्व के व्यवहार की अपेक्षा करता है वह स्वाभिमानी कलाकार है लालची या लोभी नहीं है।

इस कहानी में लेखक ने सिरचन के माध्यम से एक कलाकार के हृदय का चित्रण किया है। उन्होंने यह दर्शाया है कि कलाकार स्वभावतः प्रेम और अपनत्व का लोभी होता है। किन्तु उसके लोभ को स्वार्थ नहीं कहा जा सकता। बल्कि वह उस कलाकार का अपना स्वाभिमान है। उसका स्वाभिमान उसे घमंडी और उद्‌दण्ड नहीं बनाता। इस कहानी के नायक सिचरन के स्वाभिमानी हृदय को भी, इस पर भी वह अपने कर्तव्य का पालन करता है। लोगों के कटु व्यवहार और उपेक्षा से ठेस पाकर भी वह हवेली की बेटी की लाज बचाने के लिए अपने हाथों की बनी सुन्दर वस्तुएँ भेंट करता है जिससे उसकी सहृदयता और आत्मीयता का परिचय मिलता है।

इस प्रकार लेखक ने अपने कहानी का शीर्षक 'ठेस' देते हुए सिचरन जैसे कलाकार के स्वाभिमान को लगी ठेस का कुशल चित्रण किया है। इस कहानी में सिरचन को एक ऐसे कलाकार पात्र के रूप में प्रस्तुत किया गया जो लोगों से मात्र सद्‌व्यवहार और अपनी कला की इज्ज़त की अपेक्षा रखता है। उसके चरित्र में दूसरों को अपना समझने और हर किसी से निस्संकोच हँसी मजाक करने की विशेषता है उसके चरित्र में यह स्वाभाविक सहजता मिलती है कि वह गाँव भर के लोगों से पलभर में अपनत्व का सम्बन्ध बना लेता है बल्कि सारा गाँव उसे अपना परिवार सा लगता है। इसीलिए वह प्रत्येक व्यक्ति से सहज रूप में हँसी मजाक करते दिखाया गया है। लेखक ने ग्रामीण परिवेश की लोक भाषा और संवाद शैली का प्रयोग किया है। सिरचन के चरित्र द्वारा एक कुशल कलाकार के स्वाभिमान सहज भावुकता और आत्मीयता को पूरी सहानुभूति के साथ प्रस्तुत किया गया है।

इस कहानी के अध्ययन से पाठक को यह ज्ञात होता है कि सच्चा कलाकार धन का लोभी नहीं होता बल्कि प्रतिभा का धनी व्यक्ति प्रेम और अपनत्व का भूखा रहता है। जहाँ कही उसे आत्मीयता और सद्‌व्यवहार मिल जाये वही उसकी अद्‌भुत प्रतिभा और कला उभरकर आ जाती है। इस कहानी को पढ़ कर कहा जा सकता है कि रेणु जैसा कुशल कलाकार ही दूसरे कलाकार की प्रतिभा और स्वाभिमान का ऐसा कुशल चित्रण कर सकता है।

BRAOU

13.5 शब्दार्थ

तोल-तोल कर पाँव रखना	–	धीरे धीरे चलना, आलस्य के साथ चलना
मडैय्या	–	झोंपड़ी
भुलसकर	–	उल्लास से भरकर
मुहज़ोर	–	स्पष्टवादी
गेहुँअन साँप	–	ज़हरीला साँप
अधकपाली दर्द	–	आधे सिर का दर्द
उश	–	चिउड़ा
सिर चढ़ना	–	घमण्डी बनना, अभिमानी बनना
		हैसियत से बढ कर बात करना
बतकुट्टी	–	हँसी मज़ाक
बढी हुई ज़ीभ	–	बड़ी-बड़ी बातें करना
यत्परो नास्ति	–	जिसके बाद कुछ नहीं
खुरपी	–	घास काटने का हथियार
ढुलाता	–	हिलाता
पगडण्डी	–	पैदल चलने का रास्ता
चटोर	–	खाने का प्रेमी
मुफ्तखोर	–	मुफ्त में सबकुछ चाहने वाला
बेपासी करना	–	चुप कर देना
सौंधी	–	अच्छी
कलेवा	–	नाश्ता
जली-भुनी	–	चिढ़ी हुई
हनहनाता हुआ	–	गुस्से में चिढ़ कर
कोसना	–	गाली देना, भला-बुरा कहना

13.6 अभ्यास

13.6.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1) 'ठेस' कहानी के आधार पर ग्रामीण परिवेश में कलाकार की स्थिति पर विचार कीजिये।

2) सिरचन ने किस प्रकार अपने स्वाभिमान की रक्षा करते हुए हवेली की लाज बचाई-स्पष्ट कीजिये?

3) रेणु ने ठेस कहानी के माध्यम से कलाकार के किस रूप को स्पष्ट किया?

4) कहानीकार फणीश्वरनाथ रेणु का साहित्यिक परिचय दीजिये।

BRAOU

13.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1) ठेस कहानी के आधार पर कलाकार की समस्या को स्पष्ट कीजिये।

2) ठेस कहानी में लेखक का उद्देश्य क्या रहा? बतलाइए।

3) सिरचन का स्वभाव चिड़चिड़ा और गुस्सैल क्यों है? स्पष्ट कीजिए।

4) संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

अ) ''बिना मजदूरी के पेट भर भात पर काम करने वाला कारीगर, दूध में कोई मिठाई न मिले, कोई बात नहीं, किन्तु बात में जरा भी झाल वह नहीं बरदाश्त कर सकता ।''

आ) ''बबुआजी। अब नहीं। कान पकड़ता हूँ, अब नहीं। मोहर छाप वाली धोती लेकर मैं क्या करूँगा? कौन पहनेगा?..... ससुरी खुद मरी बेटे-बेटियों को ले गई अपने साथ।''

इ) ''बड़ी बात ही है बिटिया। बड़े लोगों की बस बात ही बड़ी होती है, नहीं तो दो-दो पटेर की पाटियों का काम सिर्फ़ खसारों का सत्तू खिलाकर कोई करवाए भला।''

ई) खाने-पीने में चिकनाई की कमी हुई कि काम की सारी चिकनाई खत्म।

13.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

13.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : ठेस कहानी के आधार पर ग्रामीण परिवेश में कलाकार की स्थिति पर विचार कीजिए।

उत्तर : फणीश्वर नाथ रेणु ने अपनी कहानी 'ठेस' में एक कलाकार के स्वाभिमान का वर्णन किया है। उन्होंने सिरचन के कलाकार हृदय को गाँव के लोगों के कठोर व्यवहार से लगी ठेस को प्रस्तुत किया है। सिरचन मोथी घास, परेरी की रंगीन शीतल पाटी, बाँस की चिक, सतरंगी डोर के मोढे, मूँज की रस्सी के जाले आदि वस्तुएँ बनाने वाला एक कुशल ग्रामीण कलाकार रहा। उसने अपनी कला को व्यवसाय बनने नहीं दिया। वह केवल फरमाइश पर ही वस्तुएँ बनाकर देता था और बदले में पैसे न लेकर मात्र भर पेट भोजन ओर सद्व्यवहार की अपेक्ष रखता था। जहाँ उसका और उसकी कला का सम्मान नहीं होता वहाँ कभी काम नहीं करता था । सिरचन स्वभाव से आलसी, भावुक और कल्पनाशील रहा। किन्तु वह अपने कार्य को पूरे लगाव के साथ करता था और यदि कोई उसके स्वभाव और उसकी कला में कोई खोट निकाल दे तो वह चिढ़ कर कार्य अधूरा छोड़ चला जता था और फिर वह अधूरा कार्य कभी पूरा नहीं होता था। यहाँ तक कि हँसी मज़ाक में भी यदि कोई कटु शब्द कह दे तो वह सहन नहीं कर पाता था। उसके इस चिड़चिड़े स्वभाव के कारण ही लोग उसे मुफ्तखोर, क़ामचोर, चटोर, आलसी अदि कहा करते थे। लेकिन उसके स्वभाव को सही रूप मे उस ग्रामीण परिवेश में कोई समझ नहीं पाया था। यहाँ तक कि हवेली में काम करते समय मँझली भाभी के व्यंग्य और चाची के कटु वचन सुन उसके कलाकार के मन को चोट लगती है और वह तुरन्त काम अधूरा छोड़ कर चला जाता है। किन्तु वह हवेली की लाड़ली बेटी को गाँव से निराश होकर ससुराल जाते नहीं देख पाता। इसी कारण वह मानू को शीतल पाटी, चिक और आसनी लाकर स्टेशन पर भेंट देकर मूल्य लिये बिना लौट जाता है। इससे सिरचन के हृदय की उदारता और सहृदयता का परिचय मिलता है। सिरचन गरीब स्वाभिमानी कलाकार है। उसके कलाकार के स्वाभिमान को कटु व्यवहार से ठेस लगती है जिससे मुक्त हो पाना सहज नहीं है वह एक ऐसा कलाकार है जो अपनी कला के बदले पैसा नहीं बल्कि मानवीय सद्भावना और सद्व्यवहार चाहता है जिसके अभाव में किसी भी व्यक्ति के भीतर का मनुष्य और कलाकार जीवित नहीं रह सकता।

BRAOU

13.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : 'ठेस' कहानी के आधार पर कलाकार की समस्या को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : रेणु जी की कहानी 'ठेस' का कलाकार सिरचन अपनी कला को बेचकर पैसा कमाना नहीं चाहता बल्कि वह अपनी कला के बदले में लोगों से सद्व्यवहार सद्भावना मानवीयता और अपनत्व की अपेक्षा करता है जिसके अभाव में कोई व्यक्ति मनुष्य और कलाकार नहीं बन सकता। विशेषकर सिरचन के जीवन में इसका अभाव रहा है। वह अपनी पत्नी और बच्चों को खोकर अकेला दु:खी जीवन जी रहा था उसके जीवन में निराशा से उत्पन्न आलस्य को लोग उसकी कामचोरी मुफ्तखोरी और चटोरी प्रवृत्ति मानते हैं। लेकिन सिरचन गाँव के लोगों में अपनत्व ढूँढता रहता है। इसी कारण जब वह किसी के यहाँ काम करने जाता है तो वहाँ किसी से हँसी-मज़ाक भी कर लेता है किन्तु हास्य में भी वह एक भी कटु वचन या उपेक्षा का भाव देख लेता तो चिढ जाता। उसका चिड़-चिड़ा स्वभाव और गुस्सा उसकी आत्मीयता, उदारता, सहृदयता और कर्तव्य परायणता के बीच बाधा नहीं बनता। इसी कारण वह मानू को अपनी कला से बनी वस्तुएँ देकर अपनी सहृदयता और मानू के प्रति वात्सल्य प्रेम का परिचय देता है।

अत: कह सकते हैं कि किसी भी सही और सच्चे कलाकार के लिए स्वाभिमान मानवीय सहृदयता सद्व्यवहार सद्भावना आदि गुणों के अतिरिक्त अपनी कला से प्रेम होना जरूरी है। अन्यथा कलाकार न अपने स्वाभिमान की रक्षा कर सकता है और न ही अपनी कला के महत्व को बनाये रख सकता है। यही समस्या इस कहानी के नायक सिरचन की प्रमुख समस्या रही है जिसे लेखक ने बड़ी कुशलता से प्रस्तुत किया है। इसी में लेखक की रचना क्षमता और प्रतिभा की सफलता भी है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1) गाँव के किसान सिरचन को बेकार ही नहीं बेगार समझते थे क्योंकि उससे काम लेना आसान नहीं था ।

2) सिरचन ने ब्राह्मण टोली के पंचानन्द चौधरी के छोटे लड़के को बेपानी कर दिया था।

3) सिरचन 'बात में ज़रा सी भी झाल' बरदाश्त नहीं कर सकता था अर्थात वह किसी की कड़ी बात नहीं सुन सकता था।

4) सिरचन रंगीन शीतलपाटी, बांस की तीलियों की झिलमिलाती चिक, सतरंगे डोर को मोढ़ें, मूँज की रस्सी के जाले, ताल के सूखे पत्तों की छतरी-टोपी आदि बनाना जानता था।

5) मानू के पति ने चेतावनी दी कि अगर मानू के साथ तीन जोड़ी फैशनेबल चिक और पटेर की दो शीतलपाटी न भेजी जाएँ तो वह बहुत बुरा मानेंग।

6) सिरचन ने मँझली भाभी के उसे अच्छा नाश्ता न देने पर कहा कि क्या वे अपने मायके से आई मिठाई बाँटने में भी इसी तरह कंजूसी करती हैं।

7) सिरचन ने छोटी चाची से उनकी डिबिया का गमकौआ जर्दा माँगा।

8) लेखक के बुलाने पर सिरचन इसलिए नहीं आया कि चाची ने उसका अपमान किया था और उसके दिल को ठेस लगी थी।

9) सिरचन शीतलपाटी, चिक और एक जोड़ी कुश की आसनी लेकर स्टेशन पहुँचा।

BRAOU

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मैला आँचल	–	फणीश्वरनाथ रेणु (उपन्यास 1954)
परती परिकथा	–	फणीश्वरनाथ रेणु (उपन्यास 1957)
जुलूस	–	फणीश्वरनाथ रेणु (उपन्यास 1961)
कितने चौराहे	–	फणीश्वरनाथ रेणु

समीक्षात्मक पुस्तकें

1) फणीश्वनाथ रेणु अर्थात् मृदंगिये का मर्म, सं.–भारत यायावर

2) फणीश्वनाथ रेणु : सृजन और संदर्भ–डॉ. अशोक कुमार आलोक

3) फणीश्वनाथ रेणु : व्यक्तित्व, काल और कृतियाँ–गोपी कृष्ण प्रसाद

4) फणीश्वनाथ रेणु का कथा–शिल्प–डा. रेणु शाह

BRAOU

इकाई - 14 : भोलाराम का जीव : हरिशंकर परसाई

14.0 उद्देश्य

14.1 पाठ एवं लेखक परिचय

14.2 मूल पाठ

14.3 सारांश

14.4 समीक्षा

14.5 शब्दार्थ

14.6 अभ्यास

14.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

14.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

14.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

14.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

14.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

14.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.0 उद्देश्य

इस पाठ में प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक हरिशंकर परसाई की भोलाराम का जीव व्यंग्य प्रधान कहानी पर प्रकाश डाला गया है। इस पाठ के माध्यम से आप

- सरकारी दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदि कुप्रवृत्तियों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- सामाजिक विसंगतियों पर विचार कर सकेंगे।
- सरकारी दफ्तरों में अधिकारी वर्ग की लापरवाही तथा गैरजिम्मेदारी पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- एक गरीब सेवानिवृत्त व्यक्ति की विवशता तथा असहायता को समझ सकेंगे।

BRAOU

14.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

'भोलाराम का जीव' हरिशंकर परसाई की एक व्यंग्य प्रधान कहानी है। इस कहानी में सरकारी दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अधिकारियों की लालची वृत्ति पर प्रकाश डाला गया है। इन कुप्रवृत्तियों का शिकार बने भोलाराम नामक एक गरीब सेवानिवृत्त व्यक्ति के दयनीय जीवन का चित्र इसमें प्रस्तुत है। यह कहानी आज के समाज में व्याप्त विसंगतिपूर्ण स्थितियों को व्यंग्यात्मक ढंग से व्यक्त करती है। इन विसंगतियों को प्रस्तुत कर लेखक ने इसमें सुधार की अपेक्षा पूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया है। भोलाराम एक गरीब सरकारी नौकर था। सेवानिवृत्त होने के पाँच साल बाद भी तथा बारंबार प्रार्थना पत्र भेजने पर

भी उसे निवृत्ति - वेतन (पेंशन) नहीं मिला।

इसका कारण यह था कि उसने अधिकारियों को प्रसन्न करने के लिए प्रार्थनापत्रों के साथ रिश्वत नहीं दी थी। अत्यधिक आर्थिक संकट, धन का अभाव तथा उदरनिर्वाह की विकट समस्या के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है। मृत्यु के बाद भी भोलाराम का जीव यमदूतों के साथ न जाकर फाइलों में अटक जाता है। उसे यमलोक में लाने के लिए नारद द्वारा किए गए प्रयत्नों का बड़ा ही मार्मिक अंकन इसमें किया गया है। सरकारी कार्यालयों में निहित रिश्वतखोरी की कुप्रवृत्ति तथा सेवानिवृत्त व्यक्ति की पीड़ा को व्यक्त करने के लिए लेखक ने व्यंग्य को माध्यम बनाया है। इसमें लेखक को पूर्ण सफलता मिली है।

(आ) लेखक परिचय

हरिशंकर परसाई का जन्म सन् 1924 ई.में मध्य प्रदेश में इटारसी के पास जमानी गाँव में हुआ। नागपुर विश्वविद्यालय में उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की। प्रारंभ में भोपाल में अध्यापन कार्य करते हुए उन्होंने साहित्य - सृजन के क्षेत्र में प्रवेश किया। हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा को प्रतिष्ठित और लोकप्रिय बनाने में परसाई ने उल्लेखनीय कार्य किया है। सफल व्यंग्य के लिए आवश्यक सामाजिक कुरीतियों का उन्हें गहरा ज्ञान होने के कारण इन्हें प्रकाश में लाने के लिए 'वसुधा' नामक साहित्यिक मासिक पत्रिका के संपादक के रूप में कार्य किया। अनेक पत्र-पत्रिकाओं के वे नियमित स्तंभ लेखक भी रहे। 'नई दुनिया' 'सुनो भाई साधो', 'नई कहानी में उलझी-उलझी', 'कल्पना में' और 'अंत में' परसाई के कुछ नियमित स्तंभ हैं। 'हँसते हैं रोते है, जैसे उनके दिन फिरे, 'तब की बात' आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं। 'तट की खोज', 'ज्वाला और जल', 'रानी नागफनी की कहानी' उनके उपन्यास हैं। इसके अतिरिक्त 'अपनी अपनी बीमारी', 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', 'तिरछी रेखाएँ', 'पंगडंडियों का जमाना', 'भूत के पाँव पीछे', 'वैष्णव की किस्मत', 'सदाचार का तावीज', 'बेईमानी की परत', शिकायत मुझे भी है, 'निठल्ले की डायरी' आदि उनकी उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

समाज और व्यक्ति में दिखाई देनेवाली असंगति, अंतर्विरोध, मिथ्याचार, वैषम्य, राजनीति के दाँवपेचों, सभ्यता के आवरण में होनेवाले अनैतिक क्रिया-कलाप आदि पर उन्होंने तीखे व्यंग्य प्रहार किए हैं। उनकेअनुसार शोषण और भ्रष्टाचार से पूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन लाए बिना, संवेदना को जगाए बिना केवल भाषण और उपदेशों से लाभ नहीं होगा। उनके विचार से चेतना में हलचल हो जाय, कोई विसंगति नजर के सामने आ जाय। इतना काफी है। सुधरने वाले खुद अपनी चेतना से सुधरते हैं।

उनके व्यंग्य में प्रौढ़ता एवं वास्तविकता है जो पाठक को संबंधित विषय पर सोचने के लिए बाध्य करती है। उनका व्यंग्य केवल परिहास और विनोद का व्यंग्य नहीं बल्कि उसमें करुणा का स्पर्श है। उनकी रचनाएँ सार्थक तथा सजीव हैं। ''भोलाराम का जीव'' कहानी, ''तिरछी रेखाएँ'' में संकलित है। संक्षेप में हरिशंकर परसाई आधुनिक युग के लोकप्रिय व्यंग्य लेखक माने जाते हैं।

14.2 मूल पाठ

ऐसा कभी नहीं हुआ था।

धर्मराज लाखों वर्षों से असंख्य आदमियों को कर्म और सिफारिश के आधार पर स्वर्ग या नरक में निवास-स्थान 'अलाट' करते आ रहे थे। पर ऐसा कभी नहीं हुआ था।

सामने बैठे चित्रगुप्त बार-बार चश्मा पोंछ, बार-बार थूक से पन्ने पलट, रजिस्टर पर रजिस्टर देख रहे थे। गलती पकड़ में ही नहीं आ रही थी। आखिर उन्होंने खोजकर रजिस्टर इतने जोर से बन्द किया कि मक्खी चपेट में आ गयी। उसे निकालते हुए वे बोले, महाराज, रिकार्ड सब ठीक है। भोलाराम के जीव ने पाँच दिन पहले देह त्यागी और यमदूत के साथ इस लोक के लिए रवाना भी हुआ, पर यहाँ अभी तक नहीं पहुँचा।''

धर्मराज ने पूछा, "और वह दूत कहाँ है?"

"महाराज वह भी लापता है।"

इसी समय द्वार खुले और एक यमदूत बड़ा बदहवास वहाँ आया। उसका मौलिक कुरूप चेहरा परिश्रम, परेशानी और भय के कारण और भी विकृत हो गया था। उसे देखते ही चित्रगुप्त चिल्ला उठे, "अरे तू कहाँ रहा इतने दिन? भोलाराम का जीव कहाँ है?"

यमदूत हाथ जोड़कर बोला, "दयानिधान, मैं कैसे बतलाऊँ कि क्या हो गया? आज तक मैंने धोखा नहीं खाया था, पर भोलाराम का जीव मुझे चकमा दे गया। पाँच दिन पहले जब जीव ने भोलाराम की देह को त्यागा, तब मैंने उसे पकड़ा और इस लोक की यात्रा आरम्भ की। नगर के बाहर ज्योंही मैं उसे लेक एक तीव्र वायु-तरंग पर सवार हुआ त्योंही वह मेरे चंगुल से छूटकर न जाने कहाँ गायब हो गया? इन पाँच दिनों में मैंने सारा ब्रह्माण्ड छान डाला, पर उसका कहीं पता नहीं चला।"

धर्मराज क्रोध से बोले, "मूर्ख । जीवों को लाते-लाते बूढ़ा हो गया, फिर भी एक मामूली बूढ़े आदमी के जीव ने तुझे चकमा दे दिया।"

दूत ने सिर झुकाकर कहा, महाराज, मेरी सावधानी में बिल्कुल कसर नहीं थी। मेरे इन अभ्यस्त हाथों से, अच्छे-अच्छे वकील भी नहीं छूट सके। पर इस बार तो कोई इन्द्रजाल ही हो गया।"

चित्रगुप्त ने कहा, "महाराज, आजकल पृथ्वी पर इस प्रकार का व्यापार बहुत चला है। लोग दोस्तों को कुछ चीज भेजते हैं और उसे रास्ते में ही रेलवेवाले उड़ा लेते हैं। होजरी के पार्सलों के मोजे रेलवे अफसर पहनते हैं। मालगाड़ी के डब्बे के डब्बे रास्ते में कट जाते हैं। एक बात और हो रही है। राजनैतिक दलों के नेता विरोधी नेता को उड़ाकर बन्द कर देते हैं। कहीं भोलाराम के जीव को भी तो किसी विरोधी ने मरने के बाद दुर्गति करने के लिए नहीं उड़ा दिया।"

धर्मराज ने व्यंग्य से चित्रगुप्त की ओर देखते हुए कहा, "तुम्हारी भी रिटायर होने की उम्र आ गयी। भला भोलाराम जैसे नगण्य, दीन आदमी से किसी को क्या लेना-देना।"

इसी समय कहीं से घूमते-घामते नारद मुनि वहाँ आ गये। धर्मराज को गुमसुम बैठे देख बोले, "क्यों धर्मराज, कैसे चिन्तित बैठे हैं। क्या नरक में निवास स्थान की समस्य अभी हल नहीं हुई।"

धर्मराज ने कहा, "वह समस्या तो कभी की हल हो गयी। नरक में पिछले सालों में बड़े गुणी कारीगर आ गये हैं। कई इमारतों के ठेकेदार हैं, जिन्होंने पूरे पैसे लेकर रद्दी इमारतें बनायीं। बड़े-बड़े इंजीनियर भी आ गये हैं, जिन्होंने ठेकदारों से मिलकर पंचवर्षीय योजनाओं का पैसा खाया। ओवरसीयर है, जिन्होंने मजदूरों की हाजिरी भरकर पैसा हड़पा, जो कभी काम पर गये ही नहीं। इन्होंने बहुत जल्दी नरक में कई इमारतें तान दी हैं। वह समस्या तो हल हो गयी, पर एक बड़ी विकट उलझन आ गयी है। भोलाराम नाम के एक आदमी की पाँच दिन पहले मृत्यु हुई। उसके जीव को यह दूत यहाँ ला रहा था, कि जीव इसे रास्ते में चकमा देकर भाग गया। इसने सारा ब्रह्माण्ड छान डाला, पर वह कहीं नहीं मिला। अगर ऐसा होने लगा, तो पाप-पुण्य का भेद ही मिट जायेगा।"

नारद ने पूछा, "उस पर इनकमटैक्स तो बकाया नहीं था। हो सकता है, उन लोगों ने रोक लिया हो।"

चित्रगुप्त ने कहा, "इनकम होती तो टैक्स होता। भुकमरा था।"

नारद बोले, "मामला बड़ा दिलचस्प है। अच्छा मुझे उसका नाम, पता तो बताओं। मैं पृथ्वी पर जाता हूँ।"

चित्रगुप्त ने रजिस्टर देखकर बताया, भोलराम नाम था उसका। जबलपुर शहर में घमापुर मोहल्ले में नाले के किनारे एक-डेढ़ कमरे के टूटे-फूटे मकान में वह परिवार समेत रहता था. उसकी एक स्त्री थी, दो लड़के

और एक लड़की। उम्र लगभग साठ साल। सरकारी नौकर था। पाँच साल पहले रिटायर हो गया था। मकान का किराया उसने एक साल से नहीं दिया, इसलिए मकान-मालिक उसे निकालना चाहता था। इतने में भोलाराम ने संसार ही छोड़ दिया। आज पाँचवाँ दिन है। बहुत सम्भव है कि अगर मकान-मालिक उसे निकालना चाहता था। इतने में भोलाराम ने संसार ही छोड़ दिया। आज पाँचवाँ दिन है। बहुत सम्भव है कि अगर मकान-मालिक वास्तविक मकान-मालिक है, तो उसने भोलाराम के मरते ही, उसके परिवार को निकाल दिया होगा। इसलिए आपको परिवार की तलाश में काफी घूमना पड़ेगा।''

बोध प्रश्न : 1. धर्मराज लाखों वर्षों से कौन-सा काम करते थे?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 2. रेलवे से क्या गायब होता है?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 3. धर्मराज की चिन्ता का क्या कारण था?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 4. भोलाराम क्या था?

.....

.....

.....

BRAOU

माँ-बेटी के सम्मिलित क्रंदन से ही नारद भोलाराम का मकान पहचान गये।

द्वार पर जाकर उन्होंने आवाज लगायी, ''नारायन नारायन'' लड़की ने देखकर कहा, ''आगे जाओ महाराज।''

नारद के कहा, ''मुझे भिक्षा नहीं चाहिए; मुझे भोलाराम के बारे में कुछ पूछताछ करनी है। अपनी माँ को जरा बाहर भेजो, बेटी।''

भोलाराम की पत्नी बाहर आयी। नारद ने कहा, ''माता, भोलाराम को क्या बीमारी थी?''

''क्या बताऊँ। गरीबी की बीमारी थी। पाँच साल हो गये, पेंशन पर बैठे, पर पेंशन अभी तक नहीं मिली। हर दस-पन्द्रह दिन में एक दरख्वास्त देते थे, पर वहाँ से या तो जवाब आता ही नहीं था और आता, तो यही कि तुम्हारी पेंशन के मामले पर विचार हो रहा है। इन पाँच सालों में सब गहने बेचकर हम लोग खा गये। फिर बरतन बिके। अब कुछ नहीं बचा था। फाके होने लगे थे। चिन्ता में घुलते-घुलते और भूखे मरते-मरते उन्होंने दम तोड़

दिया।''

नारद ने कहा, ''क्या करोगी माँ? उनकी इतनी ही उम्र थी।''

ऐसा तो मत कहो, महाराज। उम्र तो बहुत थी। पचास-साठ रुपया महीना पेंशन मिलती थी तो कुछ और काम कही करके गुजारा हो जाता। पर क्या करें। पाँच साल नौकरी से बैठे हो गये और अभी तक एक कौड़ी नहीं मिली।

दुख की कथा सुनने की फुरसत नारद को थी नहीं। वे अपने मुद्दे पर आये, ''माँ, यह तो बताओ कि यहाँ किसी से उनका विशेष प्रेम था, जिसमे उनका जी लगा हो।''

पत्नी बोली, ''लगाव तो महाराज, बाल-बच्चों से ही होता है।''

''नहीं, परिवार के बाहर भी हो सकता है। मेरा मतलब है, किसी स्त्री -'' स्त्री ने गुर्राकर नारद की ओर देखा। बोली, हर कुछ मत बको महाराज । तुम साधु हो, उचक्के नहीं हो। जिन्दगी-भर उन्होंने किसी दूसरी स्त्री को आँख उठा कर नहीं देखा।''

नारद हँसकर बोले, ''हाँ, तुम्हारा यह सोचना ठीक ही है। यही हर अच्छी गृहस्थी का आधार है। अच्छा, माता मैं चला।''

स्त्री ने कहा, ''महाराज, आप तो साधु है, सिद्ध हैं, सिद्ध पुरुष हैं। कुछ ऐसा नहीं कर सकते कि उनकी रुकी हुई पेंशन मिल जाये। इन बच्चों का पेट कुछ दिन भर जाये।''

नारद को दया आ गयी थी। वे कहने लगे, ''साधुओं की बात कौन मानता है। मेरा यहाँ कोई मठ तो है नहीं। फिर भी मैं सरकारी दफ्तर में जाऊँगा और कोशिश करूँगा।''

वहाँ से चलकर सरकारी दफ्तर में पहुँचे । वहाँ पहले ही कमरे में बैठे बाबू से उन्होंने भोलाराम के केस के बारे में बातें की। उस बाबू ने उन्हें ध्यानपूर्वक देखा और बोला, ''भोलाराम ने दरख्वास्तें तो भेजी थीं, पर उन पर वजन नहीं रखा था, इसलिए कहीं उड़ गयी होंगी।''

नारद ने कहा, ''भई, ये बहुत-से 'पेपर-वेट' तो रखे हैं। इन्हें क्यों नहीं रख दिया?''

बाबू हँसा -''आप साधु हैं, आपको दुनियादारी समझ में नहीं आती। दरख्वास्तें पेपर-वेट से नहीं दबतीं। खैर, आप उस कमरे में बैठे बाबू से मिलिए।''

नारद उस बाबू के पास गये। उसने तीसरे के पास भेजा, तीसरे ने चौथे के पास, चौथे ने पाँचवे के पास। जब नारद पचीस-तीस बाबुओं और अफसरों के पास घूम आये तब एक चपरासी ने कहा, महाराज आप क्यों इस झंझट में पड़ गये। आप अगर साल-भर भी यहाँ चक्कर लगाते रहें, तो भी काम नहीं होगा। आप तो सीधे बड़े साहब से मिलिए। उन्हें खुश कर लिया, तो अभी काम हो जायेगा।''

बोध प्रश्न : 5. भोलाराम को क्या बीमारी थी?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 6. भोलाराम की मृत्यु कैसे हुई?

.....

BRAOU

.....

.....

बोध प्रश्न : 7. भोलाराम की पेंशन क्यों रुक गई थी?

.....

.....

.....

नारद बड़े साहब के कमरे में पहुँचे । बाहर चपरासी ऊँघ रहा था इसलिए उन्हें किसी ने छेड़ा नहीं। बिना विजिटिंग कार्ड के आया देख, साहब बड़े नाराज़ हुए। बोले, "इसे कोई मन्दिर-वन्दिर समझ लिया है क्या? धड़धड़ाते चले आये। चिट क्यों नहीं भेजी?"

नारद ने कहा, "कैसे भेजता। चपरासी सो रहा है।"

"क्या काम है।" साहब ने रोब से पूछा।

नारद ने भोलाराम का पेंशन केस बतलाया।

साहब बोले, "आप हैं वैरागी। दफ्तरों के रीति-रिवाज नहीं जानते। असल में भोलाराम ने गलती की। भई, यह भी एक मन्दिर है। यहाँ भी दान-पुण्य करना पड़ता है। आप भोलाराम के आत्मीय मालूम होते हैं। भोलाराम की दरख्वास्तें उड़ रही हैं, उन पर वजन रखिए।"

नारद ने सोचा कि यहाँ वजन की समस्या खड़ी हो गयी – साहब बोले, "भई, सरकारी पैसे का मामला है। पेंशन का केस बीसों दफ्तरों में जाता है। देर लग ही जाती है। बीसों बार एक ही बात को बीस जगह लिखना पड़ता है, तब पक्की होती है। जितनी पेंशन मिलती है, उतनी ही स्टेशनरी लग जाती है। हाँ, जल्दी भी हो सकता है, मगर"– साहब रुके।

नारद के कहा, "मगर क्या?"

साहब ने कुटिल मुसकान के साथ कहा, "मगर वजन चाहिए। आप समझे नहीं। जैसे आपकी यह सुन्दर वीणा है, इसका भी वजन भोलाराम की दरख्वास्त पर रखा जा सकता है। मेरी लड़की गाना-बजाना सीखती है। यह मैं उसे दे दूँगा। साधु-सन्तों की वीणा से तो और अच्छे स्वर निकलते हैं।"

नारद अपनी वीणा छिनते देख जरा घबड़ाये। पर फिर सँभलकर उन्होंने वीणा टेबिल पर रखकर कहा, "यह लीजिए। अब जरा जल्दी उसकी पेंशन का ऑर्डर निकाल दीजिए।"

साहब ने प्रसन्नता से उन्हें कुरसी दी, वीणा को एक कोने में रखा और घण्टी बजायी। चपरासी हाजिर हुआ।

साहब ने हुक्म दिया, "बड़े बाबू से भोलाराम के केस की फाइल लाओ।"

थोड़ी देर बाद चपरासी भोलाराम की सौ-डेढ़ सौ दरख्वास्तों से भरी फाइल लेकर आया। उसमें पेंशन के कागजात भी थे। साहब ने फाइल पर का नाम देखा और निश्चित करने के लिए पूछा, क्या नाम बताया साधुजी आपने।"

नारद समझे कि साहब कुछ ऊँचा सुनते हैं। इसलिए जोर से बोले, "भोलाराम।"

सहसा फाइल में से आवाज आयी, "कौन पुकार रहा है मुझे । पोस्टमैन है। क्या पेंशन का ऑर्डर आ गया।"

नारद चौंके । पर दूसरे ही क्षण बात समझ गये। बोले, ''भोलाराम। तुम क्या भोलाराम के जीव हो।''

''हाँ,'' आवाज आयी।

नारद ने कहा, मैं नारद हूँ।''मैं तुम्हें लेने आया हूँ। चलो, स्वर्ग में तुम्हारा इन्तजार हो रहा है। ''

आवाज आयी, ''मुझे नहीं जाना। मैं तो पेंशन की दरख्वास्तों में अटका हूँ। यहीं मेरा मन लगा है। मैं अपनी दरख्वास्तें छोड़कर नहीं जा सकता।''

बोध प्रश्न : 8. साहब दफ्तर को क्या मानते हैं?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 9. नारद ने दरख्वास्तों पर वजन के रूप में क्या रखा?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 10. भोलाराम का जीव कहाँ अटका था?

.....

.....

.....

14.3 सारांश

'भोलाराम' का जीव' हरिशंकर परसाई की व्यंग्यपरक यथार्थवादी कहानी है। सरकारी कार्यालयों में निहित रिश्वतखोरी की कुप्रवृत्ति पर इसमें प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त सेवानिवृत्त होने के बाद निवृत्ति वेतन न मिलने के कारण भोलाराम जैसे सरकारी नौकरों की दुर्दशा का करुण चित्रण इसमें किया गया है। भोलाराम एक गरीब सरकारी नौकर था। सेवानिवृत्त होने के पाँच साल बाद भी तथा बारबार प्रार्थनापत्र देने के बाद भी उसे निवृत्तिवेतन नहीं दिया जाता। कार्यालय की एक मेज से दूसरे मेज तक भोलाराम का केस पहुँचने में अनेक वर्ष बीत जाते हैं। इसके मध्य बर्तन, जेवर आदि बेचकर वह परिवार का भरण-पोषण करने का प्रयास करता है किन्तु इसकेबाद अत्यधिक गरीबी तथा उदरभरण का साधन न होने के कारण भोलाराम की मृत्यु हो जाती है।

लेखक ने भोलाराम की मृत्यु के बाद यमलोक का चित्रण कर पौराणिक पात्रों को आधुनिक परिवेश में ढालकर प्रस्तुत किया है। जब यमदूत भोलाराम के जीव को साथ ले जाने के लिए आते हैं तब वह उन्हें धोखा दे कर गायब हो जाता है। जीव यमलोक में न पहुँचने के कारण यमधर्ण चित्रगुप्त आदि चिन्तित हो जाते हैं। यमधर्म, यमदूत तथा चित्रगुप्त के संवादों के माध्यम से रिश्वत लेकर अपराधी व्यक्तियों को दोषमुक्त करनेवाले लोभी वकील, रेलवे से जानेवाली दूसरों की वस्तुओं को अपने लिए लेनेवाले स्वार्थी अधिकारी, विपक्षीय नेताओं को कहीं बन्द कर मत प्राप्त करनेवाले अवसरवादी नेता आदि पर व्यंग्य किया गया है। भ्रमण करते हुए जब नारदजी का यमलोक में आगमन होता है तब उनके और यमधर्म के मध्य हुए वार्तालाप के माध्यम से रिश्वत लेकर कच्ची और खोखली ईमारतें बनानेवाले इंजीनियर, ठेकेदार, ओवरसीयर आदि की स्वार्थी, तथा

BRAOU

लोभी वृत्ति को उदघाटित किया गया है। भोलाराम के जीव को ढूँढने के लिए नारदजी जब उसके घर गए तब उन्होंने घर के लोगों को शोकाकुल स्थिति में देखा। भोलाराम की पत्नी ने अपनी दुखदस्थिति का वर्णन कर निवृत्तिवेतन पाने के लिए सहायता करने की उनसे प्रार्थना की। नारदजी जब कार्यालय पहुँचे तब उन्हें मालूम हुआ कि बिना रिश्वत दिए (फाइल पर वजन रखे बिना) निवृत्ति वेतन (पेंशन) नहीं मिल सकता। उस कार्यालय के मुख्य अधिकारी उनसे रिश्वत के रुप में वीणा लेते हैं। जब भोलाराम की फाइल लाने के लिए उसका नाम पुकारा गया तब फाइल में से उस जीव ने अपने निवृत्तिवेतन के संबंध में उत्सुकता प्रकट की। नारदजी ने उसके जीव को पहचानकर उसे स्वर्ग लोक ले जाने का विचार प्रकट किया किन्तु उस जीव ने निवृत्तिवेतन के प्रार्थनापत्रों की फाइल से निकलना अस्वीकार किया।

आज के सरकारी कार्यालयों की व्यवस्था पर तीक्ष्ण व्यंग्य का प्रहार किया गया है। रिश्वत समाज को घुन के समान लग गयी है। यही इस कहानी के माध्यम से बताया गया है।

14.4 समीक्षा

'भोलाराम का जीव' एक मार्मिक व्यंग्य प्रधान कहानी है। परसाई जी ने इस कहानी में प्रारंभ से लेकर अंत तक समाज की कुरीतियों पर कसकर व्यंग्य किया है। आज के आधुनिक जीवन में बदलती मानसिकता, बदलते मूल्य, सामाजिक विसंगति तथा वैषम्य को उद्घाटित करना लेखक का उद्देश्य है। सरकारी कार्यालय, न्यायालय, भवन निर्माण, रेलवे, राजनीति आदि विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अर्थलोलुपता, अवसरवादिता आदि कुप्रवृत्तियों पर इस कहानी के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। उच्चवर्ग की शोषण नीति के कारण पिसते-घुटते सामान्य आदमी की पीड़ा तथा व्यथा को इसमें वाणी दी गई है। भोलाराम इसी आदमी का प्रतिरूप है। भोलाराम का जीव यह शीर्षक अत्यंत सार्थक है। भोलाराम जैसे गरीब व्यक्तियों के लिए तड़पना ही जीवन की नियति है। ऐसे व्यक्ति न जीते जी सुख प्राप्त कर सकते हैं न मरने के बाद। सरकारी कार्यालयों में व्याप्त रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार आदि कुप्रवृत्तियों का शिकार बने भोलाराम नामक गरीब सेवानिवृत्त व्यक्ति के दयनीय जीवन का करुण चित्र इसमें साकार हुआ है। सरकारी कार्यालयों की विलम्बपूर्ण कारवाई, अधिकारी तथा कर्मचारियों की लापरवाही, गैरजिम्मेदारी तथा रिश्वत के बिना मामले को आगे न बढ़ाने की कुवृत्ति के कारण भोलाराम जैसे सेवानिवृत्त व्यक्ति निवृत्ति वेतन प्राप्त किए बिना ही आर्थिक अभावों को झेलते हुए इस दयाहीन संसार से विदा लेते हैं। लेखक ने ऐसे समाज में गरीबी को एक रोग माना है। इस मृत व्यक्ति के परिवार के रहने के लिए निवास तथा खाने के लिए भोजन के अभाव में जीवन जीना कठिन हो जाता है। इसमें निम्न मध्य वर्ग की समस्या का यथार्थ अंकन किया गया है।

यह कहानी यमलोक का वातावरण, भोलाराम के परिवार का वातावरण तथा सरकारी कार्यालय का वातावरण इन तीन भागों में विभाजित है। नारद, चित्रगुप्त, यमधर्म, यमदूत आदि पौराणिक चरित्रों को आधुनिक परिवेश में ढालकर आज की समस्याओं को उद्घाटित करने में लेखक की कल्पनाशक्ति दर्शित होती है।

इस कहानी की कथा को संवादों के माध्यम से गति मिली है। नारदजी के साथ अधिकारी के "भई यह भी एक मन्दिर है। यहाँ भी दान-पुण्य करना पड़ता है, भेंट चढ़ानी पड़ती है" इस कथन से उसकी लालची तथा स्वार्थी वृत्ति दर्शित होती है। नारदजी के भोलाराम की पत्नी के साथ हुए "माँ यह तो बताओ कि यहाँ किसी से क्या उनका विशेष प्रेम था, जिसमें उनका जी लगा हो... मेरा मतलब है, कोई स्त्री।' इस वार्तालाप में उनकी कलह निर्माण करने की विशेष वृत्ति को प्रकट किया गया है। इसके अतिरिक्त व्यंग्य इस कहानी का प्राण है उदा - 'दरख्वास्ते पेपरवेट से नहीं दबती'। शैली की हष्टि से इस कहानी को स्वाभाविक बनाने के लिए अलाट, रजिस्टर, रिकार्ड, रेलवे अफसर इंजीनियर, ओवरसियर, इनकम, फाइल आदि अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया गया है। भोलाराम के जीव का "मैं तो पेंशन की दरखास्तों में अटका हूँ, वहीं मेरा मन लगा है।" कथन हृदयस्पर्शी है। अतः इस कहानी के व्यंग्य में करुणा का स्पर्श निहित है। नारदजी की सरलता, अधिकारियों की

चालाकी, भोलाराम की विवशता आदि का सुंदर अंकन इसमें हुआ है। संक्षेप में भोलाराम की समस्या को केंद्रीभूत कर लेखक ने पूरे परिवेश की विसंगतियों का चित्रण किया है।

14.5 शब्दार्थ

असंख्य	–	अनगिनत
नगण्य	–	जिसकी गिनती नहीं होती
ब्रह्माण्ड	–	संसार
क्रन्दन	–	चिल्लाकर रोना
असमर्थ	–	अयोग्य
ज्वाला	–	लपटें
दरखास्त पर वज़न रखना	–	प्रार्थनापत्र के साथ रिश्वत देना।
सिफारिश	–	किसी के अनुकूल अनुरोध
अलॉट करना	–	निर्धारित करना
खीझकर	–	चिढ़कर
चपेट	–	धक्का
लापता	–	गायब, जिसका पता न लगे
बदहवास	–	बेहोश, व्याकुल
छान डालना	–	खोजना
अभ्यस्त	–	दक्ष निपुण
इंद्रजाल	–	जादूटोना
व्यापार	–	कार्य
गुमसुम	–	चुपचाप
ठेकेदार	–	ठेका लेनेवाला
बकाया	–	शेष
दिलचस्प	–	मनोहर, चित्ताकर्षक
तलाश	–	खोज
दरखास्त	–	अर्जी, आवेदनपत्र
फाका	–	उपवास
घुलना	–	दुर्बल होना
झंझट	–	झमेला
ऊँघना	–	झपकी लेना

BRAOU

रौब	–	दबाव
आत्मीय	–	रिश्तेदार
कागजात	–	आवश्यक कागज
इंतज़ार	–	राह देखना

मुहावरे

1.	चकमा देना	–	धोखा देना
2.	इंद्रजाल होना	–	जादूटोना सा होना
3.	जी लगना	–	प्रेम होना, चित्त प्रवृत्त होना
4.	आँख उठाकर देखना	–	ध्यानपूर्वक देखना
5.	चक्कर लगाना	–	फेरा लगाना, घूमना

विशेष संदर्भ

धर्मराज – यमराज। मृत्यु के देवता। कल्पना है कि मनुष्य की आयु खत्म हो जाने के बाद यमराज अपने दूत भेजकर प्राणी का जीव उठाकर ले जाते हैं।

चित्रगुप्त – चौदह यमों में से एक जो प्राणियों के पाप पुण्य का लेखा रखते हैं। नारद – देवर्षि, ब्रह्म के पुत्र। वे बड़े हरिभक्त तथा कलहप्रिय थे। तीनों लोकों में स्वर्ग, मृत्यु, पाताल में उनका मुक्त संचार था।

14.6 अभ्यास

14.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. 'भोलाराम का जीव' कहानी का व्यंग्य स्पष्ट कीजिए।
2. 'भोलाराम के जीव में' व्यक्त सामाजिक परिवेश पर प्रकाश डालिए।
3. नारद ने सरकारी दफ्तर में जाकर क्या अनुभव किया?

14.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए

अ) आप साधु है, आपको दुनियादारी समझ में नहीं आती। दरखास्तें पेपरवेट से नहीं दबती।

ब) भई, यह भी एक मन्दिर है। यहाँ भी दान पुण्य करना पड़ता है, भेंट चढ़ानी पड़ती है।

स) मेरे इन अभ्यस्त हाथों से अच्छे अच्छे वकील भी नहीं छूट सके, पर इस बार तो कोई इंद्रजाल ही हो गया।

14.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

14.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

1. 'भोलाराम का जीव' कहानी में व्यक्त व्यंग्य को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : भोलाराम का जीव एक मार्मिक व्यंग्य कहानी है। परसाई जी ने कहानी में आरंभ से लेकर अंत तक समाज की कुरीतियों पर तीक्ष्ण व्यंग्य प्रहार किया है। आज के समाज में व्याप्त विसंगतिपूर्ण स्थितियों को

BRAOU

व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत कर लेखक ने इसमें परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया है। रिश्वतखोरी एक संक्रामक रोग के समान समाज के अधिकांश क्षेत्रों में फैली हुई है। दोस्तों को भेजे गए फल रेलवेवाले ले लेते हैं। हौजरी-पार्सलों के मोजे रेलवे अफसर पहनते हैं, मालगाड़ी के डिब्बे के डिब्बे रास्ते में कट जाते हैं। वकील रिश्वत लेकर अपराधी व्यक्ति को दोषमुक्त करते हैं। राजनीतिक दलों के नेता विरोधी नेता को कहीं बंद कर देते हैं। पूरे पैसे लेकर ठेकेदार निम्न कोटि की इमारतें बनाते हैं। ठेकेदारों से मिलकार इंजीनियर भारत की पंचवर्षीय योजनाओं का पैसा खाते हैं। काम पर न आनेवाले मज़दूरों की हाजिरी भरकर ओवरसीयर पैसा लेते हैं। ऐसे व्यक्तियों की अर्थलोलुपता, भ्रष्टाचार, अवसरवादी प्रवृत्ति तथा स्वार्थी वृत्ति पर इसमें व्यंग्य किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकारी कार्यालयों में मामले निपटाने में होनेवाला विलम्ब, बार-बार प्रार्थनापत्र देने पर भी उस मामले की ओर ध्यान न देने की कर्मचारियों की लापरवाही, इसके कारण सेवानिवृत्त व्यक्तियों की परेशानी, अधिकारियों की लालची वृत्ति आदि पर इसके माध्यम से व्यंग्य किया गया है। सरकारी कार्यालयों में वजन के बिना (रिश्वत) के बिना दरखास्ते आगे नहीं बढ़ती। एक मेज से दूसरे मेज तक मामला पहुँचने में वर्षों लग जाते हैं। इस प्रकार अधिकारियों की गैरजिम्मेदारी, उसके सहानुभूतिहीन व्यवहार, स्वार्थी तथा लालची वृत्ति के कारण भोलाराम जैसे सेवानिवृत व्यक्ति निवृत्तिवेतन प्राप्त किए बिना ही इस दयाहीन संसार से विदा लेते हैं। उच्चवर्गीय समाज की अवसरवादी मानसिकता के कारण निम्न मध्यवर्गीय परिवारों को जीवन-निर्वाह के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। समग्रतः इस कहानी में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी की कुप्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है।

14.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

निम्नलिखित अवतरण की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए:-

(अ) आप साधु है, आपको दुनियादारी समझ में नहीं आती। दरखास्ते पेपरवेट से नहीं दबतीं।

संदर्भ - यह अवतरण 'भोलाराम का जीव' नामक व्यंग्यात्मक कहानी से लिया गया है। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध व्यंग्य-लेखक श्री हरिशंकर परसाई ने सामाजिक कुप्रवृत्तियों पर व्यंग्य किया है। मृत्यु के पश्चात भोलाराम का जीव यमलोक में न पहुँचने के कारण उसे ढूँढने के लिए नारद पृथ्वी पर आते हैं। भोलाराम के निवृत्तिवेतन न मिलने से उसके परिवार की दयनीय स्थिति को देखकर तथा भोलाराम की पत्नी की प्रार्थना को स्वीकार कर उनकी सहायता करने के लिए जब सरकारी कार्यालय में जाते हैं तब उनके साथ किस प्रकार व्यवहार किया जाता है इसका उदाहरण यह वाक्य है।

व्याख्या - सरकारी कार्यालय में पहुँच कर नारदजी ने पहले ही कमरे में बैठे बाबू से भोलाराम के निवृत्तिवेतन के संबंध में बातें कीं। तब उनकी ओर ध्यानपूर्वक देखकर बाबू ने दरखास्तों पर वजन न रखने के कारण कारवाई में विलम्ब होने की बात की। जब नारद ने उनपर पेपरवेट रखने के लिए कहा तब उस बाबू ने उसका स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि आज के समाज में पेपरवेट से नहीं रिश्वत के वजन से दरखास्तों पर ध्यान दिया जाता है।

विशेष - इस उद्धरण से समाज की बदलती मानसिकता, नैतिक मूल्यों का ह्रास दर्शित होता है। सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी की कुप्रवृत्ति की उपर्युक्त पंक्तियाँ परिचायक हैं। आज के युग में नारद जैसे निश्छल व्यक्ति सामाजिक मलिनता को देखकर असमंजस में पड़ जाते हैं। सरकारी कर्मचारियों की लापरवाही, सहानुभूतिहीनता, स्वार्थी तथा अवसरवादी वृत्ति पर इसके माध्यम से प्रकाश डाला गया है।

बोध प्रश्नोत्तर

1) धर्मराज लाखों वर्षों से असंख्य आदमियों को कर्म और सिफारिश के आधार पर स्वर्ग या नरक में निवास - स्थान अलॉट करते आ रहे थे।

BRAOU

2) लोग दोस्तों को कुछ चीजें भेजते हैं वह रास्ते में ही रेलवे वाले उड़ा देते हैं। हौजरी के पार्सलों के मोजे रेलवे अफसर पहनते हैं।

3) भोलाराम नाम के आदमी की पाँच दिन पहले मृत्यु होने पर उस जीव को जब दूत यमलोक ला रहा था तब वह जीव रास्ते में चकमा देकर भाग गया इसके कारण धर्मराज चिन्तित थे।

4) भोलाराम सरकारी नौकर था।

5) भोलाराम को गरीबी की बीमारी थी।

6) चिन्ता में घुलते-घुलते और भूखे मरते-मरते उसने दम तोड दिया।

7) भोलाराम ने पेंशन की दरख्वास्ते भेजी थीं लेकिन उस पर वजन नहीं रखा था इसलिए उसकी पेंशन रुकी थी।

8) साहब के अनुसार दफ़्तर भी एक मंदिर है। यहाँ भी दान-पुण्य करना पड़ता है।

9) नारद ने दरख्वास्तों पर वजन के रूप में अपनी वीणा रखी।

10) भोलाराम का जीव पेंशन की दरख्वास्तों में अटका था।

14.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) हँसते हैं रोते हैं – हरिशंकर परसाई

2) जैसे उनके दिन फिरे – हरिशंकर परसाई

3) निठल्ले की डायरी – हरिशंकर परसाई

BRAOU

इकाई - 15 : चीफ़ की दावत - भीष्म साहनी

15.0 उद्देश्य

15.1 पाठ एवं लेखक परिचय

15.2 मूल पाठ

15.3 सारांश

15.4 समीक्षा

15.5 शब्दार्थ

15.6 अभ्यास

15.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

15.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

15.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

15.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

15.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

15.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.0 उद्देश्य

इस पाठ में श्री. भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ़ की दावत' पर विचार किया गया है। इसे पढ़कर आप :

- नयी पीढ़ी के शिक्षितों द्वारा अपने माता-पिता को बोझ समझने की मानसिकता को समझ सकेंगे।
- आज के पढ़े-लिखे युवाओं में अपनी संस्कृति के प्रति पायी जाने वाली हीन भावना को समझ सकेंगे।
- अधिकारी-वर्ग की दिखावटी जिन्दगी को जान सकेंगे।
- शिक्षित संतानों द्वारा अपने अपढ़ माता-पिता के साथ किये जाने वाले दुर्व्यवहार का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- शामनाथ के चरित्र द्वारा पदोन्नति के लिए अफ़सर की चापलूसी और खुशामद करने की प्रवृत्ति को देख सकेंगे।

15.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

'चीफ़ की दावत' कहानी भीष्म साहनी द्वारा लिखी गयी है। इसमें लेखक ने आज के समाज का वर्णन किया है। इस कहानी में इस समाज में समय के साथ-साथ बदलने वाले जीवन मूल्यों को प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने शामनाथ के चरित्र के द्वारा नयी पीढ़ी की संतानों में अपने माता-पिता के प्रति दुर्व्यवहार का प्रमाण

BRAOU

प्रस्तुत किया है। आज के पढ़े-लिखे वर्ग में अपनी संस्कृति के प्रति पायी जाने वाली हीन भावना को दर्शाया है। इस कहानी में अधिकारी वर्ग की दिखावटी जिन्दगी का परिचय भी मिलता है। लेखक ने शामनाथ के चरित्र द्वारा पदोन्नति के लिए अफ़सर की चापलूसी करने वाली प्रवृत्ति को भी प्रस्तुत किया है। साथ ही अपढ़-अशिक्षित पुरानी पीढ़ी की अपनी संतान के प्रति निस्वार्थ भावना और ममता को भी उभारा है।

(आ) लेखक परिचय

भीष्म साहनी का जन्म 8 अगस्त सन् 1915 में पंजाब प्रान्त के रावलपिण्डी जिले में हुआ। उन्होंने सन् 1937 में लाहौर गवर्नमेंट कालेज से एम.ए और अंग्रेजी साहित्य में पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की। आरंभ में कुछ वर्ष पिता के साथ व्यापार करने के साथ-साथ स्थानीय कालेज में अध्यापन कार्य करते रहे। वे पंजाब के कालेज में यूनियन के जनरल सेक्रेटरी बने और कुछ समय बाद कालेज से मुक्त कर दिये गये। उन्होंने कुछ समय तक जन नाट्य संघ में भी काम किया। किन्तु उनकी विद्रोही प्रवृत्ति के कारण वे वहाँ से भी हटा दिये गये। देश विभाजन के बाद कुछ समय मुंबई में रहे और बाद में दिल्ली के एक कालेज में अध्यापन कार्य करने लगे। वही से साहनी जी का साहित्यिक कार्य नियमित रूप में आरंभ हुआ। लड़कपन से ही उनमें इतिहास, साहित्य और समाज शास्त्र के प्रति रुचि रही। वे अंग्रेजी साहित्य के अध्ययन के माध्यम से साहित्य की ओर उन्मुख हुए। स्कूल के दिनों में उनकी पहली कहानी और कालेज के दिनों में कुछ कविताएँ भी छप चुकी थीं । उनकी पहली कहानी 'नीली आँखें' शीर्षक से हंस में प्रकाशित हुई। इसके अलावा 'भारत और समाज' शीर्षक लेख 'विशाल भारत' पत्रिका में छपा। अन्य पत्रिकाओं में भी सांस्कृतिक और साहित्यिक विषयों पर कुछेक लेख छपते रहे । कालेज छोड़ने के बाद साहनी जी पर प्रेमचन्द के पत्र इकट्ठा करने की धुन सवार हुई।

भीष्म साहनी का पहला कहानी संग्रह 'भाग्यरेखा' नाम से सन् 1953 में प्रकाशित हुआ और तीन साल बाद दूसरा कहानी संग्रह पहला पाठ छपा। सन् 1957 में साहनी जी मास्को के विदेशी भाषा प्रकाशन गृह में अनुवादक बने। लगभग सात वर्ष तक वहाँ रहे और इस बीच बीस रूसी पुस्तकों का अनुवाद किया। जिसमें टालस्टाय का 'पुनरुत्थान' तथा लंबी कहानियाँ, निकोलाई आस्त्राव्स्की का 'जयजीवन' आश्तमातोव का 'पहला अध्यापक' आदि प्रमुख रहे। इसके अलावा सन् 1965 में 'नई कहानियाँ' का संपादन-कार्य आरंभ किया। ढ़ाई वर्ष तक उस कार्य को निभाते रहे। इसी बीच सन् 1965 में उनका तीसरा कहानी संग्रह 'भटकती राख' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। अब तक भीष्म साहनी जी के कुल छः कहानी संग्रह, चार उपन्यास, दो नाटक, एक बालोपयोगी कहानी संग्रह, एक जीवनी 'मेरे भाई बलराज' प्रकाशित हो चुके हैं। साहनी जी को सन् 1975 में 'तमस' उपन्यास पर साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ । इसी वर्ष पंजाब सरकार के भाषा विभाग ने इन्हें 'शिरोमणि लेखक' पुरस्कार प्रदान किया है। इसके अलावा सन् 1980 में इन्हें एफ्रो-एशियाई लेखक संघ की ओर से 'लोटस' पुरस्कार प्रदान किया गया। इन्होंने अनेक रचनाओं का अनुवाद भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में किया है। वे 'प्रगतिशील लेखक महासंघ' तथा 'ऐफ्रो एशियाई लेखक संघ' से जुड़े रहे।

भीष्म साहनी जी ने अपनी कहानियों में सामाजिक विडंबनाओं का सफल चित्रण किया है। इनका जीवन उनके समूचे लेखन और जीवन-दृष्टि को भी प्रभावित करने वाला रहा। वे अपने भाई बलराज साहनी की तरह वामपंथ की ओर आकृष्ट रहे। साहनी जी वर्षों दिल्ली में अंग्रेजी के अध्यापक रहे किन्तु हिन्दी में लिखना उनका शौक रहा। वे कट्टर साम्यवादी होने के नाते धर्म के गूढ़तावाद में विश्वास नहीं रखते। बाल्यावस्था से ही विद्यमान उनकी विद्रोही प्रवृत्ति कालान्तर में मार्क्सवाद की दिशा में विकसित हुई। वे अपनी राजनीतिक आस्थाओं और बौद्धिक प्रतिबद्धता से जुड़े रहे लेकिन इनका जीनव सुखी और संपन्न रहा। उन्होंने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को अपनी कहानियों में ढालकर हिन्दी साहित्य का विकास किया। उनके लिए जीवन, साहित्य के क्षेत्र में आदान-प्रदान का विषय रहा । इसीलिए घटनाओं के माध्यम से विभिन्न पहलुओं को गहराई से आँका है। इसी कारण उनकी रचनाएँ समकालीन भारतीय साहित्य की सर्वाधिक जीवन्त कृतियाँ रही हैं। उन्होंने बदलते सामाजिक परिवेश में मनुष्य के आर्थिक-सामाजिक संघर्ष को सहज रूप में प्रस्तुत किया है।

उनकी रचनाओं में मुखौटावृत्ति और काइयाँपन के प्रति आक्रोश और व्यंग्य का स्वर भी मिलता है । कला की दृष्टि से भीष्म साहनी की कहानियाँ प्रेमचन्द की परंपरा को विकसित करने वाली रही है।

15.2 मूल पाठ

आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ़ की दावत थी।

शामनाथ और उसकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फुर्सत न थी। पत्नी ड्रैसिंग गाउन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाए, मुंह पर फैली हुई सुर्खी और पाउडर को भूले, और मिस्टर शामनाथ सिगरेट-पर-सिगरेट फूंकते हुए, चीजों की फेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ-जा रहे थे।

आखिर पांच बजते-बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियां, मेज, तिपाइयां, नैपकिन, फूल, सब बरामदे में पहुंच गए। ड्रिंक का इंतजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, मां का क्या होगा?

इस बात की ओर न उनका और न उनकी कुशल गृहिणी का ध्यान गया था। मिस्टर शामनाथ, श्रीमती की ओर घूमकर अंग्रेजी में बोले - ''मां का क्या होगा?''

श्रीमती काम करते-करते ठहर गई, और थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं - ''इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो। रात-भर बेशक वहीं रहें। कल आ जाएं।''

शामनाथ सिगरेट मुंह में रखे, सिकुड़ी आंखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पल-भर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले - ''नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहां फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बंद किया था। मां से कहें कि जल्दी ही खाना खाके शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएं। मेहमान कहीं आठ बजे आएंगे। इससे पहले ही अपने काम से निपट लें।''

सुझाव ठीक था दोनों को पसंद आया । मगर फिर सहसा श्रीमती बोल उठीं - ''जो वह सो गई और नींद में खर्राटे लेने लगीं तो। साथ ही तो बरामदा है जहां लोग खाना खाएंगे।''

बोध प्रश्न : 1. शामनाथ अपनी माँ से क्यों परेशान था?

.....

.....

.....

''तो इन्हें कह देंगे कि अंदर से दरवाजा बंद कर लें । मैं बाहर से ताला लगा दूंगा या मां को कह देता हूं कि अंदर जाकर सोएं नहीं, बैठी रहें, और क्या।''

''और जो सो गई तो। डिनर का क्या मालूम कब तक चले। ग्यारह-ग्यारह बजे तक तो तुम ड्रिंक ही करते रहते हो।''

शामनाथ कुछ खीझ उठे, हाथ झटकते हुए बोले - ''अच्छी-भली यह भाई के पास जा रही थी, तुमने यूं ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टांग अड़ा दी।''

बोध प्रश्न : 2. शामनाथ की पत्नी ने माँ को कहाँ जाने से रोका था?

.....

.....

''वाह। तुम मां और बेटे की बातों में मैं क्यों बुरी बनूं। तुम जानो और वह जानें।''

मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था, समस्या का हल ढूंढ़ने का था। उन्होंने घूरकर मां की कोठरी की ओर देखा। कोठरी का दरवाजा बरामदे में खुलता था। बरामदे की ओर देखते हुए झट से बोले – मैंने सोच लिया है और उन्हीं कदमों मां की कोठरी के बाहर जा खड़े हुए। मां दीवार के साथ एक चौकी पर बैठी, दुपट्टे में मुंह-सिर लपेटे, माला जप रही थी। सुबह से तैयारी होती देखते हुए मां का भी दिल धड़क रहा था। बेटे के दफ्तर का बड़ा साहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाए।

मां, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जाएंगे।

मां ने धीरे से मुंह पर से दुपट्टा हटाया और बेटे को देखते हुए कहा, आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जानते तो हो मांस-मछली बने तो मैं कुछ नहीं खाती।''

बोध प्रश्न : 3. शामनाथ की माँ खाना क्यों नहीं खाना चाहती थी?

.....

.....

.....

''जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निपट लेना।''

''अच्छा बेटा।''

''और मां, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहां बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहां आ जाएं, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।''

मां अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगीं। फिर धीरे से बोली – ''अच्छा बेटा।''

''और मां आज जल्दी सो नहीं जाना। तुम्हारे खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है।''

मां लज्जित-सी आवाज में बोली – ''क्या करूं, बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी से उठी हूं नाक से सांस नहीं ले सकती।''

मिस्टर शामनाथ ने इन्तजाम तो कर दिया फिर भी उनकी उधेड़बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ़ अचानक उधर आ निकला तो। आठ-दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियां होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह फिर झुंझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले – ''आओ मां, इस पर जरा बैठो तो।''

मां माला संभालती, पल्ला ठीक करती उठीं, और धीरे से कुर्सी पर आकर बैठ गई।

''यूं नहीं मां, टांगे ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते । यह खाट नहीं है।''

मां ने टांगे नीचे उतार ली।

''और खुदा के वास्ते नंगे पांव नहीं घूमना । न ही वह खड़ाऊं पहनकर सामने आना । किसी दिन तुम्हारी वह खड़ाऊं उठाकर मैं बाहर फेंक दूंगा।''

मां चुप रहीं।

''कपड़े कौन से पहनोगी, मां।''

''जो हैं वही पहनूंगी बेटा। जो कहो, पहन लूं।''

BRAOU

मिस्टर शामनाथ सिगरेट मुंह में रखे, फिर अधखुली आंखों से मां की ओर देखने लगे, और मां के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हर बात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके अपने हाथ में था। खूंटियां कमरों में कहां लगाई जाएं, बिस्तर कहां पर बिछें, किस रंग के पर्दे लगाए जाएं, श्रीमती कौन-सी साड़ी पहनें, मेज किस साइज की हो... शामनाथ को चिंता थी कि अगर चीफ़ का साक्षात् मां से हो गया, तो कहीं लज्जित नहीं होना पड़े। मां को सिर से पांव तक देखते हुए बोले - ''तुम सफेद कमीज और सफेद सलवार पहन लो, मां। पहन के आओ तो, ज़रा देखूं।''

बोध प्रश्न : 4. शामनाथ को चिंता किस बात की थी?

.....

.....

.....

मां धीरे से उठीं और अपनी कोठरी में कपड़े पहनने चली गई।

''यह मां का झमेला ही रहेगा, उन्होंने फिर अंग्रेजी में अपनी स्त्री से कहा - ''कोई ढंग की बात हो तो भी कोई कहे। अगर कहीं कोई उल्टी-सीधी बात हो गई, चीफ़ को बुरा लगा तो सारा मजा जाता रहेगा।''

मां सफेद कमीज और सफेद सलवार पहनकर बाहर निकली। छोटा-सा कद, सफेद कपड़ों में लिपटा, छोटा-सा सूखा हुआ शरीर, धुंधली आंखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्ले की ओट में छिप पाये थे। पहले से कुछ ही कम कुरूप नजर आ रही थीं।

''चलो, ठीक है। कोई चूड़ियां-वूड़ियां हों, तो वह भी पहन लो। कोई हर्ज नहीं।''

''चूड़ियां कहां से लाऊँ बेटा। तुम तो जानते हो सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।''

यह वाक्य शामनाथ को तीर की तरह लगा। तुनककर बोला - ''यह कौन-सा राग छेड़ दिया मां। सीधा कह दो, नहीं हैं जेवर, बस। इससे पढ़ाई-वढ़ाई का क्या ताल्लुक है। जो जेवर बिका, तो कुछ बनकर ही आया हूं, निरा लंडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था उससे दुगना ले लेना।''

''मेरी जीभ जल जाए बेटा, तुमसे जेवर लूंगी। मेरे मुंह से यूं ही निकल गया। जो होते तो लाख बार पहनती।''

साढे पांच बज चुके थे। अभी मिस्टर शामनाथ को खुद भी नहा - धोकर तैयार होना था। श्रीमती कब की अपने कमरे में जा चुकी थी। शामनाथ जाते हुए एक बार फिर मां को हिदायात करते गए - ''मां, रोज की तरह गुमसुम बन के नहीं बैठी रहना। अगर साहब इधर आ निकलें और कोई बात पूछें तो ठीक तरह से बात का जवाब देना।''

''मैं न पढ़ी, न लिखी, बेटा मैं क्या बात करूंगी। तुम कह देना, मां अनपढ़ है, कुछ जानती-समझती नहीं। वह नहीं पूछेगा।''

सात बजते-बजते मां का दिल धक्-धक् करने लगा। अगर चीफ़ सामने आ गया और उसने कुछ पूछा तो वह क्या जवाब देगी। अंग्रेजी को तो दूर से ही देखकर वह घबरा उठती थी, यह तो अमरीकी है, न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूंगी। मां का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाए। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थी? चुपचाप कुर्सी पर टांगे लटकाए वहीं बैठी रही।

एक कामयाब पार्टी वह है जिसमें ड्रिंक कामयाबी से चल जाए। शामनाथ की पार्टी सफलता के शिखर चूमने लगी। वार्तालाप उसी रौ में बह रहा था जिस रौ में गिलास भरे जा रहे थे। कहीं कोई रुकावट न थी, कोई

अड़चन न थी। साहब को व्हिस्की पसन्द आयी थी। मेमसाहब को पर्दे पसन्द आए थे, सोफा-कवर का डिजाइन पसंद आया था, कमरे की सजावट पसंद आयी थी, इससे बढ़कर क्या चाहिए? साहब तो ड्रिंक के दूसरे दौर में ही चुटकुले और कहानियां कहने लग गए थे। दफ्तर में जितना रोब रखते थे, यहां पर उतने ही दोस्त-परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेंट और पाउडर की महक से ओत-प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केंद्र बनी हुई थीं। बात-बात पर हंसती, बात-बात पर सिर हिलातीं और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थी जैसे उनकी पुरानी सहेली हो।

और इसी रौ में पीते-पिलाते साढ़े दस बज गए। वक्त गुज़रते पता ही न चला।

आखिर सब लोग अपने-अपने गिलासों में से आखिरी घूंट पीकर खाना खाने के लिए उठे और बैठक से बाहर निकले। आगे-आगे शामनाथ रास्ता दिखाते हुए, पीछे चीफ़ और दूसरे मेहमान।

बरामदे में पहुंचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए (जो दृश्य उन्होंने देखा उससे उनकी टांगे लड़खड़ा गई, और क्षण-भर में सारा नशा हिरन होने लगा) बरामदे में ऐन कोठरी के बाहर मां अपनी कुर्सी पर ज्यों-की-त्यों बैठी थी। मगर दोनों पांव कुर्सी की सीट पर रखे हुए और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था। और मुंह में से लगातार गहरे खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते। और फिर जब झटके-से नींद टूटती, तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था, और मां के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त-व्यस्त बिखर रहे थे।

बोध प्रश्न : 5. शामनाथ का नशा क्यों उतर गया?

.....

.....

.....

देखते ही शामनाथ क्रुद्ध हो उठे। जी चाहा कि मां को धक्का देकर उठा दें, और उन्हें कोठरी में धकेल दें, मगर ऐसा करना संभव न था, चीफ़ और बाकी मेहमान पास खड़े थे।

मां के देखते ही देसी अफसरों की कुछ स्त्रियां हंस दीं कि इतने में चीफ़ ने धीरे से कहा - पूअर डियर।

मां हड़बड़ा के उठ बैठी। सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबरायी कि कुछ कहते न बनी। झट से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गई और जमीन को देखने लगीं। उनके पांव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उंगलियां थर-थर कांपने लगीं।

''मां, तुम जाके सो जाओं, तुम क्यों इतनी देर तक जाग रही थीं।''

- और खिसियायी हुई नजरों से शामनाथ चीफ़ के मुंह की ओर देखने लगे।

चीफ के चेहरे पर मुसुकराहट थी। वह वहीं खड़े-खड़े बोले, ''नमस्ते।''

मां ने झिझकते हुए, अपने में सिमटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अंदर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर, ठीक तरह से नमस्ते भी न कर पाई। शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे।

इतने में चीफ़ ने अपना दायां हाथ, हाथ मिलाने के लिए मां के आगे किया। मां और भी घबरा उठी।

मां, हाथ मिलाओ।

पर हाथ कैसे मिलाती। दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में मां ने बायां हाथ ही साहब के दायें हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल ही दिल में जल उठे। देसी अफसरों की स्त्रियां खिलखिलाकर हंस पड़ी।

BRAOU

यूं नहीं, मां। तुम तो जानती हो दायां हाथ मिलाया जाता है। दायां हाथ मिलाओ। मगर तब तक चीफ़ मां का बायां हाथ ही बार-बार हिलाकर कह रहे थे - "हाउ डू यू डू।"

"कहो मां, मैं ठीक हूं, खैरियत से हूं।"

मां कुछ बड़बडाई।

"मां कहती हैं, मैं ठीक हूं। कहो मां हाउ डू यू डू।"

मां धीरे से सकुचाते हुए बोलीं - हाउ डू डू ..."

एक बार फिर कहकहा उठा।

वातावरण हल्का होने लगा। साहब ने स्थिति संभाल ली थी। लोगा हंसने-चहकने लगे थे। शामनाथ के मन का क्षोभ भी कुछ-कुछ कम होने लगा था।

साहब अपने हाथ में मां का हाथ अब भी पकड़े हुए थे, और मां सिकुड़ी जा रही थीं । साहब के मुंह से शराब की बू आ रही थी।

शामनाथ अंग्रेजी में बोले - "मेरी मां गांव की रहनेवाली हैं । उमर-भर गांव में रही हैं इसलिए आपसे लजाती हैं।"

साहब इस पर खुश नजर आए। बोले - "सच। मुझे गांव के लोग बहुत पसन्द हैं, तब तो तुम्हारी मां गांव के गीत और नाच भी जानती होंगी। चीफ़ खुशी से सिर हिलाते हुए मां को टिकटिकी बांधे देखने लगे।"

बोध प्रश्न : 6. शामनाथ अपनी माँ से क्या सुनाने के लिए कहता है ?

.....

.....

.....

"मां, साहब कहते हैं, कोई गाना सुनाओ। कोई पुराना गीत, तुम्हें तो कितने ही याद होंगे।"

मां धीरे-से बोलीं - मै क्या गाऊंगी, बेटा, मैंने कब गाया है ?

"वाह मॉं । मेहमान का कहा भी कोई टालता है। साहब ने इतनी रीझ से कहा है, नहीं गाओगी तो साहब बुरा मानेंगे।"

"मैं क्या गाऊं बेटा, मुझे क्या आता है ?

"वाह। कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनारां दे..."

देसी अफसर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर तालियां पीटीं । मां कभी दीन-दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखती, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गंभीर आदेश-भरे लहजे में कहा - "मां।"

इसके बाद हां या ना का सवाल ही न उठता था । मां बैठ गई और क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं -

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है।

BRAOU

देसी स्त्रियां खिलखिला के हंस उठीं। तीन पंक्तियां गा के मां चुप हो गई।

बरामदा तालियों से गूंज उठा। साहब तालियां पीटना बंद ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। मां ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियां थमने पर साहब बोले – ''पंजाब के गांवों की दस्तकारी क्या है?''

शामनाथ खुशी में झूम रहे थे। बोले – ''ओ, बहुत कुछ साहब । मैं आपको एक सेट उन चीजों का भेंट करूंगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे?''

मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेजी में फिर पूछा – ''नहीं, मैं दुकानों की चीज नहीं मांगता । पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं।''

बोध प्रश्न : 7. शामनाथ चीफ़ को क्या भेंट करना चाहता है?

.....

.....

.....

शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले – ''लड़कियां गुड़ियां बनाती हैं, औरतें फुलकारियां बनाती हैं ।''

''फुलाकरी क्या।''

शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्टा करने के बाद मां को बोले – ''क्यों मां, कोई पुरानी फुलकारी घर में है।''

मां चुपचाप अंदर गई और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लाई।

साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फुलकारी थी, जगह-जगह से उसके धागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले – ''यह फटी हुई है साहब, मैं आपको नई बनवा दूंगा। मां बना देंगी। क्यों मां, साहब को फुलकारी बहुत पसंद है; इन्हें ऐसी ही एक फुलाकरी बना देगी न।''

मां चुप रही । फिर डरते-डरते धीरे से बोली – ''अब मेरी नजर कहां है बेटा। बूढ़ी आंखे क्या देखेंगी?''

मगर मां का वाक्य बीच ही में तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले – ''वह जरूर बना देंगी । आप उसे देखकर खुश होंगे।''

साहब ने सिर हिलाया, धन्यवाद किया और हल्के-हल्के झूमते हुए खाने की मेज की ओर बढ़ गए। बाकी मेहमान भी उनके पीछे-पीछे हो लिए।

जब मेहमान बैठ गए और मां पर से सब की आंखें हट गई, तो मां धीरे से कुर्सी पर से उठीं, और सबसे नजरें बचाती हुई अपनी कोठरी में चली गई।

मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आंखो से छल-छल आंसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार-बार उन्हें पोंछतीं, पर वह बार-बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बांध तोड़कर उमड़ आए हों। मां ने बहुतेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े, भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार-बार आंखें बंद की, मगर आंसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

आधी रात का वक्त होगा। मेहमान खाना खाकर एक-एक करके जा चुके थे। मां दीवार से सटकर बैठी आंखें फाड़े दीवार को देखे जा रही थीं। घर के वातावरण में तनाव ढीला पड़ चुका था। मुहल्ले की निस्तब्धता

BRAOU

शामनाथ के घर पर भी छा चुकी थी केवल रसोई में प्लेटों के खनकने की आवाज आ रही थी । तभी सहसा मां की कोठरी का दरवाजा जोर से खटकने लगा।

"मां, दरवाजा खोलो।"

मां का दिल बैठ गया। हड़बड़ाकर उठ बैठी। क्या मुझसे फिर कोई भूल हो गई। मां कितनी देर से अपने आपको कोस रही थी। कि क्यों उसे नींद आ गई, क्यों वह ऊंघने लगी। क्या बेटे ने अभी तक क्षमा नहीं किया । मां उठी और कांपते हाथों से दरवाजा खोल दिया।

दरवाजा खुलते ही शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आए और मां को आलिंगन में भर लिया।

"ओ मम्मी। तुमने तो आज रंग ला दिया।.... साहब तुम से इतना खुश हुआ कि क्या कहूं। ओ अम्मी। अम्मी"

मां की छोटी-सी काया सिमटकर बेटे के आलिंगन में छिप गई । मां की आंखों में फिर आंसू आ गए । उन्हें पोंछती हुई बोली – "बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कब से कह रही हूं।"

शामनाथ का झूमना सहसा बंद हो गया और उसकी परेशानी पर फिर तनाव के बल पड़ने लगे। उनकी बांहें मां के शरीर पर से हट गई।

"क्या कहा मां। यह कौन-सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?"

शामनाथ का क्रोध बढ़ने लगा था, बोलते गए – "तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो ताकि दुनिया कहे कि बेटा मां को अपने पास नहीं रख सकता।"

"नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा-पहन लिया। अब यहां क्या करूंगी? जो थोड़े दिन जिंदगानी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूंगी। तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।"

"तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनाएगा। साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।"

"मेरी आंखें अब नहीं हैं बेटा, जो फुलकारी बना सकूं। तुम कहीं और से बनवा लो। बनी-बनाई ले लो।"

"मां, तुम मुझे धोखा देके यूं चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी। जानती नहीं साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी।"

मां चुप हो गई। फिर बेटे के मुंह की ओर देखती हुई बोलीं – "क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा है?"

"कहा नहीं, मगर देखती नहीं कितना खुश गया है। कहता था, जब तेरी मां फुलकारी बनाना शुरू करेंगी तो मैं देखने आऊंगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया तो मुझे इससे बड़ी नौकरी भी मिल सकती है, मैं बड़ा अफसर बन सकता हूं।"

मां के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे-धीरे उसका झुर्रियों-भरा मुंह खिलने लगा, आंखों में हल्की-हल्की चमक आने लगी।

"तो तेरी तरक्की होगी, बेटा।"

"तरक्की यूं ही हो जाएगी। साहब को खुश रखूंगा तो कुछ करेगा वर्ना उसकी खिदमत करनेवाले और थोड़े हैं।"

BRAOU

''तो मैं बना दूंगी बेटा, जैसे बन पड़ेगा बना दूंगी।''

और मां दिल ही दिल में फिर बेटे के उज्जवल भविष्य की कामनाएं करने लगीं और मिस्टर शामनाथ अब सो जाओ मां कहते हुए तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गई।

बोध प्रश्न : 8. शामनाथ की माँ फुलकारी बनाने के लिए क्यों तैयार हो जाती है ?

.....

.....

.....

15.3 सारांश

प्रसिद्ध कहानीकार भीष्म साहनी की कहानी चीफ़ की दावत का सारांश इस प्रकार है :-

मिस्टर शामनाथ के घर चीफ़ की दावत थी जिसकी तैयारी में वह और उसकी पत्नी सारा दिन जुटे रहे। शाम के पाँच बजते-बजते तैयारी पूरी हो गई। सारी आवश्यक चीजें बरामदे में पहुँचा दी गई। बैठक में ड्रिंक की व्यवस्था की गई। फ़ालतू सामान अलमारियों और पलंगों के नीचे छिपाये जाने लगे। तभी शामनाथ का ध्यान अपनी बूढ़ी माँ की ओर गया जो अपढ़, गंवार और कुरूप थी। उसे मेहमानों से मिलवाने और अपनी माँ बताने में शामनाथ को शर्म महसूस हो रही थी। इसी कारण उसके सामने अपनी माँ को छिपाने की समस्या उत्पन्न हो गयी। उसने सोचा कि माँ को मेहमानों की नज़रों से बचाने केलिए बरामदे में कोठरी के बाहर एक कुर्सी पर बैठा देगा। क्योंकि उसकी बूढ़ी माँ को जल्दी सोने और सोते में ऊँची आवाज में खर्राटे लेने की आदत थी। अत: उसने अपनी माँ को बैठाये रखना ही ज्यादा उचित समझा। उसे इस बात का भय था कि लोग उसे एक अपढ, गरीब, ग्रामीण स्त्री का पुत्र जान लेंगे तो उसकी हँसी उड़ाएँगे।

शाम के सात बजते-बजते पार्टी आरंभ हुई। ड्रिंक के साथ-साथ पार्टी में रंगत चढ़ती गयी और मेहमान तथा चीफ़ पार्टी का मज़ा उठाते हुए बातचीत व हँसी मज़ाक में व्यस्त रहे। शामनाथ की पार्टी सफलता के चरम शिखर को चूमने लगी थी। इस पार्टी में साहब को व्हिस्की, मेमसाहब को पर्दे, सोफ़ा कवर और कमरे की सजावट पसंद आयी। वह शामनाथ की पत्नी के साथ पुरानी सहेली के समान बातें करने लगीं। इस तरह लगभग साढ़े दस बजे तक ड्रिंक और बातचीत चलती रही। उसके बाद सभी मेहमान भोजन के लिए बरामदे में पहुँचे। वहाँ शामनाथ ने अपनी माँ को कुर्सी पर अस्त-व्यस्त हालत में खर्राटे लेते देखा जिससे उसका सारा नशा उतर गया। तभी माँ जाग गई और वहां पहुँचे मेहमानों को देखकर घबरा गई। वह कुर्सी से पैर नीचे कर खड़ी हो गयी; उसके हाथ-पैर काँपने लगे । लेकिन तभी चीफ़ ने उसे नमस्ते करते हुए अपना हाथ मिलाने के लिए उसकी ओर बढ़ाया। मां ने घबराहट में बायाँ हाथ बढ़ा दिया क्योंकि उसके दाहिने हाथ में माला थी। बायें हाथ को हिलाते हुए चीफ़ ने उसकी कुशलता पूछी और उसे ग्रामीण परिवेश की स्त्री जानकर उससे कोई लोक गीत सुनाने को कहा। माँ ने पहले तो इन्कार किया मगर अपने पुत्र के दबाव के कारण उसने एक पुराने विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले गीत की दो-तीन पंक्तियाँ गाई। जिसे सुनकर चीफ़ और उपस्थित सभी मेहमान खुश होकर तालियाँ बजाने लगे। इस पर शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल गई । चीफ़ ने माँ से पंजाब के गाँवों में बनने वाली दस्तकारी के बारे में पूछा । शामनाथ ने उसे ऐसी चीजों का पूरा सेट खरीदकर भेंट देने की इच्छा व्यक्त की। किन्तु चीफ़ को शामनाथ की माँ के हाथ की बनी फुलकारी चाहिए थी। चीफ़ को प्रसन्न देख शामनाथ ने माँ की आँखे फुलकारी बनाने योग्य न होने पर भी उससे फुलकारी बनवाकर देने की हामी भर दी। इसके बाद सारे मेहमान भोजन कर अपने अपने घर चले गए। शामनाथ की माँ अपनी कोठरी मैं बैठकर रोने लगी। मेहमानों के लौट जाने के बाद जब शामनाथ माँ के पास पहुँचा तो मां ने प्रार्थना की कि अब वह यहाँ नहीं रहना चाहती और हरिद्वार चली जाना चाहती है। परन्तु शामनाथ ने उसे अपने स्वार्थ के लिए रोकते हुए फुलकारी बनाने के लिए कहा। माँ की

BRAOU

आँखें खराब हो चुकी थीं। यह पता चला कि फुलकारी बनाने से उसके बेटे की तरक्की होगी तो वह खुशी के साथ फुलकारी बनाने के लिए तैयार हो गई।

15.4 समीक्षा

इस कहानी में लेखक ने नयी पीढ़ी की उस झूठी आधुनिकता को प्रस्तुत किया है जो अपने पूर्वजों और माता-पिता का परिचय कराने में शर्म का अनुभव करती है। जिनके मन में अपनी संस्कृति के प्रति लज्जा का भाव है। इस कहानी का नायक शामनाथ और उसकी पत्नी झूठी शान में जीने वाले घमण्डी वर्ग के प्रतिनिधि हैं। जो अपनी माँ को बोझ और बेकार का सामान समझते हैं। किन्तु समाज के भय से उसे अपने पास रख लेते हैं। उनमें अपनी माँ के प्रति सेवाभाव, आदर और आत्मीयता नहीं है। उनके लिए बूढी माँ किसी भी प्रकार से उपयोगी नहीं है।,

इस कहानी में लेखक ने शामनाथ को एक ऐसे पात्र के रूप में प्रस्तुत किया जो अपनी तरक्की के लिए बडे अधिकारी की चापलूसी और खुशामद करता है। और अपने चीफ़ को खुश करने के लिए घर पर पार्टी देता है। लेकिन अपनी बूढी, कुरूप, बीमार माँ की तकलीफ़ का कोई ध्यान नहीं रखता। बल्कि वृद्धावस्था में अपनी माँ को कष्ट देते हुए उसे भूखे-प्यासे, बरामदे में कुर्सी पर बैठाये रखता है। माँ वहीं बरामदे में कुर्सी पर बैठे-बैठे हीं नींद लेने लगती है। साँस लेने में तकलीफ़ के कारण उसके मुँह से खर्राटे निकलने लगते हैं जिसे देख शामनाथ का गुस्सा उबल पड़ता है किन्तु इसके विपरीत चीफ़ के मन में सहानुभूति पैदा होती है। माँ को देख न केवल शामनाथ का नशा उतर जाता है बल्कि उसे लगता है कि उसकी माँ ने उसकी शानदार पार्टी के मजे को पूरी तरह खराब कर दिया है। लेकिन चीफ़ उसकी माँ से आत्मीयता से व्यवहार करता है। वह उससे ग्रामीण गीत सुनकर प्रसन्न हो जाता है। शामनाथ चीफ़ को प्रसन्न देख खुशामद करने पर उतर आता है। माँ के कष्ट की चिन्ता न करते हुए ज़बरदस्ती उससे फुलकारी बनाने के लिए हामी भरवाता है। जो शामनाथ अपनी माँ को बेकार का सामान और अपने अपमान के लिए जिम्मेदार मान रहा था वहीं अपनी तरक्की के लिए माँ की उपयोगिता जानकर उसे फुलकारी बनाने के लिए रोकता है। किन्तु ऐसे खुदगर्ज, स्वार्थी और मतलबी पुत्र के प्रति माँ के हृदय में जरा भी क्रोध दिखाई नहीं देता। वह उसकी नीचता और अमानुषिक व्यवहार पर कृद्ध होने के बदले उसकी तरक्की के लिए कष्ट उठाने को तैयार हो जाती है जिससे उसकी ममता, सहन शीलता और वात्सल्य का परिचय मिलता है।

लेखक ने इस कहानी में पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के बीच के संबंधों में आनेवाले बदलाव का वर्णन किया है। उन्होंने अशिक्षित पीढ़ी से उत्पन्न शिक्षित पीढ़ी द्वारा अपने माता-पिता से किये जाने वाले दुर्व्यवहार को चित्रित किया है। नयी पीढ़ी के शिक्षितों में तरक्की के लिए चापलूसी और खुशामद करने की आदत को उभारा है। अपने विकास के लिए अपने माता-पिता तक का उपयोग करने वाली मानसिकता और स्वार्थी प्रवृत्ति को दर्शाया है। साथ ही नयी पीढी में पायी जाने वाली झूठी शान और दिखावे को भी प्रस्तुत किया है। लेखक ने आज के शिक्षितों में अपनी भाषा, सभ्यता और संस्कृति के प्रति पायी जाने वाली हीन भावना के यथार्थ रूप को चित्रित किया है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से शामनाथ का चरित्र पूरी तरह से अपने वास्तविक रूप में प्रकट किया गया। वह आज के शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला चरित्र है। उसकी पत्नी का चरित्र दिखावटी शान में जीने वाली अधुनिक नारी के रूप में प्रस्तुत हुआ है। किंतु चीफ़ के चरित्र के माध्यम से पुरानी पीढ़ी से सहानुभूति, आदर-भाव और सरल व्यवहार को प्रस्तुत किया गया। लेखक ने अपनी लेखन प्रतिभा के द्वारा चीफ़ की दावत कहानी का शीर्षक सार्थक रूप में उभारा है। इस कहानी में 'चीफ़ की दावत' ही कथानक का मूल आधार है। उसीके माध्यम से शामनाथ का चरित्र तथा उसकी माँ के चरित्र के अन्तर को दर्शाया गया जो वास्तव में दो पीढ़ियों के बीच के अंतर को प्रकट करता है। चीफ़ के चरित्र द्वारा सही आधुनिकता और शिक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया गया है। चीफ़ में अपनी शिक्षा और पद का गर्व नहीं है। वह सरल और मृदुभाषी व्यक्तित्व है। उसमें अपनी संस्कृति के प्रति आकर्षण तथा पुरानी पीढ़ी के प्रति सहानुभूति है उसके विपरीत माँ के चरित्र

BRAOU

में ममता वात्सल्य और विशाल हृदय का गुण देखा जा सकता है 'चीफ़ की दावत' कहानी यथार्थ की ऐसी कलात्मक प्रस्तुति है जिसमें करुणा और व्यंग्य दोनों का मिश्रण है।

15.5 शब्दार्थ

फेहरिस्त	–	सूची
मुकम्मल	–	पूरी
खीझ	–	चिढ
सुभीते से	–	ठीक से
इन्तजाम	–	व्यवस्था
उधेड़बुन	–	परेशानी, उलझन
गुसल खाना	–	स्नानघर
झुंझलाना	–	चिढ़ना
तरतीब	–	ढंग से
खूँटी	–	कपड़े टांगने की कील
तआल्लुक	–	सम्बन्ध
लंडूरा	–	आवारा
हिदायत देना	–	समझाना
गुमसुम	–	खामोश, शांत
हुक्म	–	आदेश
शै	–	धारा, प्रवाह
रोब	–	दब दबा
खिसियाना	–	शर्मिंदा होना
झिझकते हुए	–	संकोच से
खैरियत	–	कुशल
टप्पे	–	बोल, मुखड़ा, पंक्तियाँ
लरजती	–	लड़खड़ाती
दस्तकारी	–	कारीगरी, हाथ का कार्य
फुलकारी	–	हाथ से बुना हुआ
बहुतेरा	–	कई प्रकार से
निस्तब्धता	–	शांति

BRAOU

खनकने	–	टकराने
पेशानी	–	माया, भाल
इकरार	–	स्वीकार
तरक्की	–	पदोन्नति, प्रगति, विकास
झुर्रियाँ	–	चेहरे की रेखाएं
खिदमत	–	सेवा
तनिक	–	थोड़ा

15.6 अभ्यास

15.6.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. चीफ़ की दावत कहानी में जीवन मूल्यों के बदलाव और उनमें आई गिरावट को किस प्रकार बतलाया गया है?
2. शामनाथ का चरित्र आधुनिक युग की स्वार्थी प्रवृत्ति का जीवन्त उदाहरण है सिद्ध कीजिए।
3. चीफ की दावत कहानी की कथावस्तु बताते हुए लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
4. कहानीकार भीष्म साहनी का साहित्यिक परिचय दीजिए।

15.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. भीष्म साहनी ने अपनी कहानी में नयी पीढ़ी की मानसिकता को किस प्रकार प्रस्तुत किया है?
2. चीफ़ के चरित्र से क्या शिक्षा मिलती है?
3. चीफ़ की दावत कहानी में झूठी शान, दिखावटी जिन्दगी और हीन भावों का सफ़ल चित्रण हुआ है – सिद्ध कीजिए।
4) संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

   अ) ''नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहाँ फिर शुरु हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बंद किया था।''

   आ) ''यह कौन-सा राग छेड़ दिया माँ। सीधा कह दो, नहीं है जेवर बस। उससे पढ़ाई-वढ़ाई का क्या तआल्लुक है? जो जेवर बिका तो कुछ बनकर ही आया हूँ, निरा लंडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था उससे दुगुना ले लेना।''

   इ) सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबराई कि कुछ कहते न बनी झट से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गई और जमीन को देखने लगी। उसके पाँव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उँगलियाँ थर-थर काँपने लगी।

   ई) ''तुम चली जाओगी तो फुलकारी कौन बनाएगा? साहब से तुम्हारी सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।''

BRAOU

15.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

15.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'चीफ़ की दावत' कहानी में जीवन मूल्यों के बदलाव और उनमें आई गिरावट को किस प्रकार बतलाया गया है?

उत्तर : चीफ़ की दावत कहानी में लेखक भीष्म साहनी ने अशिक्षित प्राचीन पीढ़ी से उत्पन्न नयी पीढ़ी की आधुनिकता का वर्णन किया है। इस कहानी में शामनाथ का चरित्र नयी पीढ़ी के शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला रहा और उसकी माँ का चरित्र पुरानी पीढ़ी का परिचायक है। नयी पीढ़ी के शामनाथ को पुरानी पीढ़ी की गरीब ग्रामीण परिवेश की अशिक्षित बूढ़ी माँ बोझ दिखाई देने लगती है। वह एक ऐसा शिक्षित अधिकारी है जिसे अपनी पुरानी पीढ़ी और बूढ़ी माँ से प्रेम, आत्मीयता और उसके प्रति आदर नहीं है, बल्कि वह अपने लिए उसकी उपयोगिता को महत्व देता है। अपनी माँ के प्रति उसके मन में सेवाभाव नहीं है। वह शिक्षित होकर यह भूल जाता है कि उसी गरीब अनपढ़ गँवार माँ ने ही उसे कठोर परिश्रम द्वारा पढ़ा लिखाकर अफ़सर बनाया है। उसे अपनी माँ के कष्टों का एहसास नहीं है। इसके विपरीत वह समाज के लोगों से अपनी मां का परिचय करवाने में भी शर्म का अनुभव करता है। वह अपनी माँ के उपकार को पैसों से चुकाने की बात करता है। वह अपनी बूढ़ी माँ को समाज के भय से अपने पास रखे हुए है। वह सुशिक्षित वर्ग का ऐसा स्वार्थी व्यक्ति है जो अपनी तरक्की के लिए और अपने चीफ़ को खुश करने के लिए बूढ़ी बीमार माँ को कष्ट देता है। वह माँ के बुढापे और स्वास्थ्य का ध्यान न रखते हुए उसे कोठरी में बंद तक कर देने की सोचता है। इसके अलावा चीफ़ की दावत के दौरान साढ़े दस बजे रात तक बूढ़ी माँ को भूखी-प्यासी बरामदे में एक कुर्सी पर बैठा देता है। जहाँ बैठे-बैठे थककर वह वहीं सो जाती है। सोते में उसकी अस्त-व्यस्तता और श्वास की परेशानी के कारण पैदा होने वाले खर्राटों को सुनकर क्रोध में उसे थापड़ तक मारने को वह उतारू हो जाता है। लेकिन चीफ़ की अपनी माँ के प्रति सहानुभूति को देखकर उसे खुश करने के लिए बूढी माँ से गीत गाने को कहता है। साथ ही आँखें न दिखने पर भी फुलकारी बना कर देने के लिए हामी भरवाता है। पार्टी के बाद माँ को अपने स्वार्थ के लिए हरिद्वार जाने से रोकता है। किन्तु माँ अपने स्वार्थी व मक्कार पुत्र की तरक्की की बात जानती है तो बुढापे में भी आँखों से दिखलायी न पड़ने पर भी फुलकारी बनाने के लिए तैयार हो जाती है । इस प्रकार इस कहानी में शामनाथ स्वार्थी प्रवृत्ति का मक्कार पुत्र है। वह चापलूस और खुशामदी मानसिकता रखने वाली नयी पीढ़ी के शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन पुत्र के प्रति निस्वार्थ भाव, कल्याण की कामना, आत्मीयता और सहनशीलता का परिचय देनेवाली ममतामयी माँ का चरित्र पुरानी पीढ़ी के संस्कारों और जीवन मूल्यों को जीवित रखने वाला चरित्र रहा है। इस कहानी में लेखक दो अलग-अलग पीढ़ियों के पात्रों के माध्यम से समय के साथ-साथ समाज में आनेवाले जीवन मूल्यों में बदलाव को प्रस्तुत किया है।

15.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : निम्न लिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए

''तुम चली जाओगी तो फुलकारी कौन बनाएगा । साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।''

उत्तर : प्रस्तुत प्रसंग भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ़ की दावत' से लिया गया है। यह कथन कहानी के नायक **शामनाथ** द्वारा अपनी माँ से कहा हुआ है।

'चीफ़ की दावत' कहानी का नायक शामनाथ आधुनिक मानसिकता का अधिकारी है जो अपनी पदोन्नति के लिए अपने चीफ़ की खुशामद करने के लिए दावत देता है। उसे अपने चीफ़ से माँ का परिचय कराने में शर्म महसूस होती है। क्योंकि उसकी माँ बूढी होने के कारण कुरूप, आधी गंजी, अनपढ़, गंवार

संकोची स्वभाव की गरीब महिला है। किन्तु जब इसी माँ के प्रति चीफ़ की सहानुभूति और मृदुव्यवहार को देख उसके महत्व और उपयोगिता को समझता है। पार्टी के बाद माँ द्वारा हरिद्वार चले जाने की इच्छा व्यक्त करने पर वह अपने स्वार्थ के लिए उसे रोकना चाहता है। वह अपनी माँ से कहता है कि यदि वह चली जाएगी तो उसे फुलकारी कौन बनाकर देगा? साथ ही यह भी बताता है कि यदि वह फुलकारी बनाकर देगी तो उसका साहब खुश हो जाएगा और उसकी तरक्की हो सकती है। यह जानकर माँ प्रसन्न होकर अपनी असमर्थता के बावजूद उसे फुलकारी बनाकर देने के लिए तैयार हो जाती है जिससे उसका अपने स्वार्थी पुत्र के प्रति निस्वार्थ वात्सल्य प्रेम और मंगल की कामना का परिचय मिलता है।

बोध प्रश्नोत्तर

1. शामनाथ अपनी माँ से इसलिए परेशान था कि उसकी माँ बूढ़ी थी, नए तौर-तरीके नहीं जानती थी और नींद में जोर-जोर से खर्राटे लेती थीं।
2. शामनाथ की पत्नी ने माँ को उनके भाई के पास जाने से रोका था।
3. शामनाथ की मां खाना इसलिए खाना नहीं चाहती थी कि वह शाकाहारी थी और उस दिन घर में पार्टी के लिए माँस-मछली बना था।
4. शामनाथ को चिंता इस बात की थी कि अगर माँ चीफ़ के सामने पड़ जाए तो उन्हें लज्जित होना पड़ेगा।
5. शामनाथ का नशा यह देखकर उतर गया कि उनकी माँ कुर्सी पर पैर ऊपर उठाये बैठी सो रही थी और खर्राटे ले रही थी। उनके कपड़े और बाल बिखरे हुए थे।
6. शामनाथ अपनी माँ से पंजाबी टप्पा सुनाने को कहता है।
7. शामनाथ चीफ़ को फुलकारी भेंट करना चाहता है।
8. शामनाथ की माँ फुलकारी बनाने के लिए इसलिए तैयार हो जाती है कि इससे उसका चीफ़ खुश होगा और शामनाथ को तरक्की देगा।

15.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भाग्य रेखा (कहानी संग्रह) – भीष्म साहनी
2. पहला पाठ (कहानी संग्रह) – भीष्म साहनी
3. भटकती राख (कहानी संग्रह) – भीष्म साहनी
4. पटरिया (कहानी संग्रह) – भीष्म साहनी
5. तमस (उपन्यास) – भीष्म साहनी
6. भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना – सं. राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर

BRAOU

इकाई -16 : वापसी - उषा प्रियंवदा

16.0 उद्देश्य

16.1 पाठ एवं लेखक परिचय

16.2 मूल पाठ

16.3 सारांश

16.4 समीक्षा

16.5 शब्दार्थ

16.6 अभ्यास

16.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

16.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

16.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

16.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

16.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

16.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.0 उद्देश्य

इस पाठ में प्रसिद्ध महिला कहानीकार उषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी पर प्रकाश डाला गया है। इस कहानी के माध्यम से आप

- पारिवारिक जीवन की विसंगति पर विचार कर सकेंगे।
- आधुनिक जीवन में मानवीय मूल्यों एवं संबंधों के परिवर्तन पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- पुरानी पीढ़ी के साथ नई पीढ़ी के संबंधों में शिथिलता, उदासीनता, उपेक्षा आदि पर विचार कर सकेंगे।
- परिवार में स्नेह तथा आत्मीयता प्राप्त न होने के कारण सेवानिवृत्त व्यक्ति के एकाकीपन तथा अजनबीपन की पीड़ा को समझ सकेंगे।

16.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

आधुनिक जीवन ने पारिवारिक संबंधों में परिवर्तन उपस्थित किया है। उषा प्रियंवदा की वापसी कहानी आधुनिक जीवन में पारिवारिक विसंगति को प्रस्तुत करनेवाली मार्मिक कहानी है। रेलवे की नौकरी से सेवानिवृत्त (रिटायर) होकर गजाधरबाबू वर्षों तक परिवार से अलग रहने के बाद जब परिवार के साथ सुखपूर्वक रहने की इच्छा से घर लौट आते हैं तब उन्हें मालूम होता है कि उनकी उपस्थिति उस घर में असंगत लगने लगी

BRAOU

है। बेटे, बहू तथा बेटी के स्नेहहीन, उपेक्षापूर्ण व्यवहार से तथा पत्नी के आत्मीयताहीन व्यवहार से वे अपने ही घर में अजनबी बन जाते हैं। इससे उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब जाती है। इस कहानी में गजाधरबाबू को अकेलेपन की पीड़ा को, समय के साथ आधुनिक पीढ़ी की बदली हुई मानसिकता को सामाजिक परिवर्तनों के साथ आदमी के बदलते संबंधों को यथार्थ रूप में प्रकट किया गया है। जीवन भर सारे परिवार का बोझ ढोकर भी अन्त में गजाधर बाबू अकेले रहने के लिए विवश हो जाते हैं। उनका अकेलापन आधुनिक जीवन के मध्य उभरती हुई विवशता का अकेलापन है। सारी पुरानी पीढ़ी उसे झेल रही है। लेखिका ने इसी समस्या पर प्रकाश डाला है।

(आ) लेखिका का परिचय

आधुनिक हिन्दी कहानी लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का एक विशिष्ट स्थान है। उनका जन्म कानपुर में हुआ । कानपुर और प्रयाग में उन्होंने शिक्षा ग्रहण की। प्रयाग विश्वविद्यालय में कुछ समय के लिए उन्होंने अंग्रेजी का अध्यापन भी किया । अध्यापन में अधिक विकास के लिए वे अमेरिका गयीं। विदेशी वातावरण में रहते हुए भी उन्होंने हिन्दी में अनेक उपन्यासों तथा कहानियों की रचना की। मानव जीवन के विशिष्ट प्रसंगों को चुनकर उनका मार्मिक अंकन करने तथा पारिवारिक समस्याओं पर प्रकाश डालने में वे अधिक समर्थ हैं। 'रुकोगी नहीं राधिका?' तथा 'पचपन खंभे लाल दीवारें' उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। 'पचपन खंभे लाल दीवारें' का दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारण हुआ है। उनके चार कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं वे हैं। 'फिर बसंत आया', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', 'एक कोई-दूसरा त्याग' तथा 'कितना बड़ा झूठ'।

उनकी कहानियों की संवेदना समसामयिक है। उनकी कहानियों में महानगरीय पारिवारिक जीवन की विभिन्न समस्याओं का सूक्ष्म अंकन हुआ है। लेखिका के विचार से "प्राय: चरित्रों का बीज जीवन से आता है, परंतु कहानी शुरू करते हुए मेरे मन में जो इमेज होती है अंत होने तक एकदम बदल जाती है क्योंकि बहुत बार मैं स्वयं नहीं जानती कि लिखते समय स्मृति या अनुभव का कौन सा दरवाजा रबोल कौन बाहर आ खड़ा होगा।" पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के कारण आज अनेक परिवारों में अकेलापन, विसंगति, उदासीनता, विश्रृंखलता आदि स्थितियाँ पनप रही हैं। उनके अनुसार आधुनिक भौतिक सभ्यता के साथ-साथ सहज मानवीय रागात्मकता का निर्वाह करना आवश्यक है। इसकी उपेक्षा की ही तरह विसंगति को झेलना पड़ता है। उन्होंने देशी और विदेशी परिवेश की भावभूमि पर स्त्री-पुरुष संबंधों का, समाज की विसंगतियों का तथा मानव-मूल्यों का सही अंकन किया है। लेखिका को मानव संबंधों की सूक्ष्म पहचान है। मूलत : स्वातंत्र्योत्तर नारी चेतना का अंकन करनेवाली यह सशक्त लेखिका है। नारी की मानसिकता का यथार्थ चित्रण उनकी कहानियों में हुआ है। उनकी अधिकांश कहानियों में भौतिक सुविधाओं से युक्त परिवारों में पति-पत्नी के मध्य अह का टकराव, मानसिक रिक्तता, वैवाहिक संबंधों में दूरी आदि की सूक्ष्म अभिव्यक्ति हुई है।

उनकी कहानियों की भाषा सरल तथा मुहावरेदार है। देशी, विदेशी भाषाओं के प्रचलित शब्दों के प्रयोग के कारण उनमें अधिक सहजता है।

16.2 मूलपाठ

गजाधर बाबू ने कमरे में जमा सामान पर एक नजर दौड़ाई-दो बक्स, डोलची, बालटी-"यह डिब्बा कैसा है, गनेशी।" उन्होंने पूछा । गनेशी बिस्तर बाँधता हुआ, कुछ गर्व, कुछ दु:ख, कुछ लज्जा से बोला, "घर-वाली ने साथ को कुछ बेसन के लड्डू रख दिए हैं। कहा, बाबूजी को पसन्द थे, अब-कहाँ हम गरीब लोग आपकी कुछ खातिर कर पाएँगे।" घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक विषाद का अनुभव किया, जैसे एक परिचित, स्नेह-आदरमय, सहज संसार से उनका नाता टूट रहा था।

"कभी-कभी हम लोगों की भी खबर लेते रहिएगा।" गनेशी बिस्तर में रस्सी बाँधता हुआ बोला।

"कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी। इस अगहन तक बिटिया की शादी कर दो।"

गनेशी ने अँगोछे के छोर से आँखें पोंछीं, "अब आप लोग सहारा न देंगे तो कौन देगा। आप यहाँ रहते तो शादी में कुछ हौसला रहता।"

गजाधर बाबू चलने को तैयार बैठे थे। रेलवे क्वार्टर का वह कमरा, जिसमें उन्होंने कितने वर्ष बिताए थे, उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था। आँगन में रोपे पौधे भी जान-पहचान के लोग ले गए थे और जगह-जगह मिट्टी बिखरी हुई थी। पर पत्नी, बाल-बच्चों के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह एक दुर्बल लहर की तरह उठकर विलीन हो गया।

गजाधर बाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे। इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रहकर काटा था। उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे। इसी आशा के सहारे वह अपने अभाव का बोझ ढो रहे थे। संसार की दृष्टि में उनका जीवन सफल कहा जा सकता था। उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था, बड़े लड़के अमर और लड़की कान्ति की शादियाँ कर दी थीं, दो बच्चे ऊँची कक्षाओं में पढ़ रहे थे। गजाधर बाबू नौकरी के कारण प्राय: छोटे स्टेशनों पर रहे और उनके बच्चे और पत्नी शहर में, जिससे पढ़ाई में बाधा न हो। गजाधर बाबू स्वभाव से बहुत स्नेही व्यक्ति थे और स्नेह के आकांक्षी भी। जब परिवार साथ था, ड्यूटी से लौटकर बच्चों से हँसते-बोलते, पत्नी से कुछ मनोविनोद करते-उन सबके चले जाने से उनके जीवन में गहन सूनापन भर उठा। खाली क्षणों में उनसे घर में टिका न जाता। कवि प्रकृति के न होने पर भी, उन्हें पत्नी की स्नेहपूर्ण बातें याद रहती और उनके स्टेशन से वापस आने पर गरम-गरम रोटियाँ सेंकती - उनके खा चुकने और मना करने पर भी थोड़ा-सा कुछ और थाली में परोस देती, और बड़े प्यार से आग्रह करती। जब वह थके-हारे बाहर से आते, तो उनकी आहट पा वह रसोई के द्वार पर निकल आती और उनकी सलज्ज आँखें मुस्करा उठतीं। गजाधर बाबू को तब हर छोटी बात भी याद आती और वह उदास हो उठते...अब कितने वर्षों बाद वह अवसर आया था जब वह फिर उसी स्नेह और आदर के मध्य रहने जा रहे थे।

बोध प्रश्न : 1. गजाधर बाबू के नौकर का क्या नाम था?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 2. गजाधर बाबू कौन-सी नौकरी से सेवानिवृत्त हुए?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 3. गजाधर बाबू रिटायर होकर क्यों खुश थे?

.....

.....

.....

टोपी उतारकर गजाधर बाबू ने चारपाई पर रख दी, जूते खोलकर नीचे खिसका दिए, अन्दर से रह-रहकर कहकहों की आवाज आ रही थी, इतवार का दिन था और उनके सब बच्चे इकट्ठे होकर नाश्ता कर रहे थे। गजाधर बाबू के सूखे चेहरे पर स्निग्ध मुस्कान आ गई, उसी तरह मुस्कराते हुए वह बिना खाँसे अन्दर चले

BRAOU

आये। उन्होंने देखा कि नरेन्द्र कमर पर हाथ रखे शायद गत रात्रि की फिल्म में देखे गए किसी नृत्य की नकल कर रहा था और बसन्ती हँस-हँसकर दुहरी हो रही थी। अमर की बहू को अपने तन-बदन, आँचल या घूँघट का कोई होश न था और वह उन्मुक्त रूप से हँस रही थी। गजाधर बाबू को देखते ही नरेन्द्र धप-से बैठ गया और चाय का प्याला उठाकर मुँह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ढक लिया, केवल बसन्ती का शरीर रह-रहकर हँसी दबाने के प्रयत्न में हिलता रहा।

गजाधर बाबू ने मुस्कराते हुए उन लोगों को देखा। फिर कहा, क्यों नरेन्द्र क्या नकल हो रही थी।''कुछ नहीं बाबू जी।'' नरेन्द्र ने सिटपिटाकर कहा। गजाधर बाबू ने चाहा था कि वह भी इस मनोविनोद में भाग लेते, पर उनके आते ही जैसे सब कुण्ठित हो चुप हो गए, उससे उनके मन-में थोड़ी सी खिन्नता उपज आई । बैठते हुए बोले, ''बसन्ती, चाय मुझे भी देना। तुम्हारी अम्मा की पूजा अभी चल रही है क्या?''

बसन्ती ने माँ की कोठरी की ओर देखा, ''अभी आती ही होंगी,'' और प्याले में उनके लिए चाय छानने लगी। बहू चुपचाप पहले ही चली गई थी, अब नरेन्द्र भी चाय का आखिरी घूँट पीकर उठ खड़ा हुआ, केवल बसन्ती, पिता के लिहाज में, चौके में बैठी माँ की राह देखने लगी। गजाधर बाबू ने एक घूँट चाय पी, फिर कहा, ''बिट्टी - चाय तो फीकी है।''

''लाइए चीनी और डाल दूँ।'' बसन्ती बोली।

''रहने दो, तुम्हारी अम्मा जब आयेगी, तभी पी लूँगा।''

थोड़ी देर में उनकी पत्नी हाथ में अर्ध्य का लोटा लिये निकली और अशुद्ध स्तुति कहते हुए तुलसी में डाल दिया । उन्हें देखते ही बसन्ती भी उठ गई । पत्नी ने गजाधर बाबू को देखा और कहा, ''अरे, आप अकेले बैठे हैं - ये सब कहाँ गये।'' गजाधर बाबू के मन में फाँस-सी करक उठी, ''अपने-अपने काम में लग गए हैं - आखिर बच्चे ही हैं।''

पत्नी आकर चौके में बैठ गई ; उन्होंने नाक-भौ चढ़ाकर चारों ओर जूठे बर्तनों को देखा। फिर कहा, ''सारे में जूठे बर्तन पड़े हैं। इस घर में धरम-करम कुछ नहीं। पूजा करके सीधे चौके में घुसो।'' फिर उन्होंने नौकर को पुकारा, जब उत्तर न मिला तो एक बार और उच्च स्वर में, फिर पति की ओर देखकर बोली, ''बहू ने भेजा होगा बाजार।'' और एक लम्बी साँस लेकर चुप हो रहीं।

गजाधर बाबू बैठकर चाय और नाश्ते का इन्तजार करते रहे। उन्हें अचानक ही गनेशी की याद आ गई। रोज सुबह, पैसंजर आने से पहले वह गरम-गरम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठकर तैयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाथ लाकर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, काँच के गिलास में ऊपर तक भरी लबालब, पूरे ढाई चम्मच चीनी और गाढ़ी मलाई। पैसेंजर भले ही रानीपुर लेट पहुँचे, गनेशी ने चाय पहुँचाने में कभी देर नहीं की। क्या मजाल कि कभी उससे कुछ कहना पड़े।

पत्नी का शिकायत-भरा स्वर सुन उनके विचारों में व्याघात पहुँचा। वह कह रही थी, ''सारा दिन इसी खिच-खिच में निकल जाता है। इस गृहस्थी का धन्धा पीटते-पीटते उमर बीत गई। कोई जरा हाथ भी नहीं बँटाता।''

''बहू क्या किया करती है?'' गजाधर बाबू ने पूछा।

''पड़ी रहती है। बसन्ती को तो, फिर कहो कि कॉलेज जाना होता है।''

गजाधर बाबू ने जोश में आकर बसन्ती को आवाज दी। बसन्ती भाभी के कमरे से निकली तो गजाधर बाबू ने कहा, ''बसन्ती, आज से शाम का खाना बनाने की जिम्मेदारी तुम पर है । सुबह का भोजन तुम्हारी भाभी बनायेगी''

BPAOU

बसन्ती मुँह लटकाकर बोली, ''बाबू जी, पढ़ना भी तो होता है।''

गजाधर बाबू ने प्यार से समझाया, तुम सुबह पढ़ लिया करो। तुम्हारी माँ बूढ़ी हुई, उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची है। तुम हो, तुम्हारी भाभी है, दोनों को मिलकर काम में हाथ बँटाना चाहिए।

बसन्ती चुप रह गई। उसके जाने के बाद उसकी माँ ने धीरे से कहा, ''पढ़ने का तो बहाना है। कभी जी ही नहीं लगता, लगे कैसे? शीला से ही फ़ुरसत नहीं, बड़े-बड़े लड़के हैं उस घर में हर वक्त वहाँ घुसा रहना, मुझे नहीं सुहाता। मना करूँ तो सुनती नहीं।''

नाश्ता कर गजाधर बाबू बैठक में चले गए । घर छोटा था और ऐसी व्यवस्था हो चुकी थी कि उसमें गजाधर बाबू के रहने के लिए कोई स्थान न बचा था। जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबन्ध कर दिया जाता है, उसी प्रकार बैठक में कुरसियों को दीवार से सटाकर बीच में गजाधर बाबू के लिए पतली-सी चारपाइ डाल दी गई थी। गजाधर बाबू उस कमरे में पड़े-पड़े कभी-कभी अनायास ही, इस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते। उन्हें याद हो आती उन रेलगाड़ियों की, जो आती और थोड़ी देर रुककर किसी और लक्ष्य की ओर चली जातीं।

घर छोटा होने के कारण बैठक में ही अब अपना प्रबंन्ध किया था। उनकी पत्नी के पास अन्दर एक छोटा कमरा अवश्य था, पर वह एक ओर अचारों के मर्तबान, दाल-चावल के कनस्तर और घी के डिब्बों से घिराया, दूसरी ओर पुरानी रजाइयँ, दरियों में लिपटी और रस्सी से बंधी रखी थीं; उसके पास के बड़े-से टीन के बक्स में घर-भर के गरम कपड़े थे। बीच में एक अलगनी बंधी हुई थी, जिसपर प्राय: बसन्ती के कपड़े लापरवाही से पड़े रहते थे। वह भरसक उस कमरे में नहीं जाते थे। घर का दूसरा कमरा अमर और उसकी बहू के पास था, तीसरा कमरा, जो सामने की ओर था, बैठक था। गजाधर बाबू के आने से पहले उसमें अमर की ससुराल से आयी बेत की तीन कुरसियों का सेट पड़ा था, कुरसियों पर नीली-पीली गद्दियाँ और बहू के हाथों के कढ़े कुशन थे।

बोध प्रश्न : 4. गजाधर बाबू की बेटी का नाम क्या था?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 5. घर छोटा होने के कारण गजाधर बाबू ने अपना प्रबन्ध कहाँ किया था?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 6. गजाधर बाबू के लिए बैठने का साधन क्या था?

.....

.....

.....

जब कभी उनकी पत्नी को कोई लम्बी शिकायत करनी होती, तो अपनी चटाई बैठक में डाल पड़ जाती थीं। वह एक दिन चटाई लेकर आ गई। गजाधर बाबू ने घर-गृहस्थी की बातें छेड़ीं, वह घर का रवैया देख रहे थे। बहुत हलके-से उन्होंने कहा कि अब हाथ में पैसा कम रहेगा, कुछ खर्च कम होना चाहिए।

''सभी खर्च तो वाजिब-वाजिब हैं, किसका पेट काटूं। यही जोड़ गाँठ करते-करते बूढ़ी हो गई, न मन का पहना, न ओढ़ा।''

गजाधर बाबू ने आहत, विस्मित दृष्टि से पत्नी को देखा। उनसे अपनी हैसियत छिपी न थी। उनकी पत्नी तंगी का अनुभव कर उसका उल्लेख करती। यह स्वाभाविक था, लेकिन उनमें सहानुभूति का पूर्ण अभाव गजाधर बाबू को बहुत खटका। उनसे यदि राय-बात की जाती कि प्रबन्ध कैसे हो, तो उन्हें चिन्ता कम, सन्तोष अधिक होता। लेकिन उनसे तो केवल शिकायत की जाती थी, जैसे परिवार की सब परेशानियों के लिए वही जिम्मेदार थे।

''तुम्हें किस बात की कमी है अमर की माँ, घर में बहू है, लड़के बच्चे हैं, सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता'' गजाधर बाबू ने कहा और कहने के साथ ही अनुभव किया। यह उनकी आन्तरिक अभिव्यक्ति थी-ऐसी कि उनकी पत्नी नहीं समझ सकतीं। हाँ, बड़ा सुख है न बहू से आज रसोई सो गई। गजाधर बाबू बैठे हुए पत्नी को देखते जिसकी मुस्कान की याद में उन्होंने सम्पूर्ण जीवन काट दिया था। उन्हें लगा कि वह लावण्यमयी युवती जीवन की राह में कहीं खो गई और उसकी जगह आज जो स्त्री है, वह उनके मन और प्राणों के लिए नितान्त अपरिचिता है। गाढ़ी नींद में डूबी उनकी पत्नी का भारी-सा शरीर बहुत बेडौल और कुरूप लग रहा था, चेहरा श्रीहीन और रूखा था। गजाधर बाबू देर तक निस्संग दृष्टि से पत्नी को देखते रहे और फिर लेटकर छत की ओर ताकने लगे।

अन्दर कुछ गिरा और उनकी पत्नी हड़बड़ाकर उठ बैठीं, ''लो, बिल्ली ने कुछ गिरा दिया शायद'' और वह अन्दर भागी। थोड़ी देर में लौटकर आई तो उसका मुँह फूला हुआ था, ''देखा बहू को, चौका खुला छोड़ आई, बिल्ली ने दाल की पतीली गिरा दी। सभी तो खाने को है, अब क्या खिलाऊँगी? वह साँस लेने को रूकी और बोली एक तरकारी और चार पराँठे बनाने में सारा डिब्बा घी उँड़ेलकर रख दिया। जरा सा दर्द नहीं है, कमानेवाला हाड़ तोड़े और यहाँ चीजे लुटें। मुझे तो मालूम था कि यह सब काम किसी के बस का नहीं है।''

गजाधर बाबू को लगा कि पत्नी कुछ और बोलेगी तो उनके कान झनझना उठेंगे। ओठ भींच, करवट लेकर उन्होंने पत्नी की ओर पीठ कर ली।

रात का भोजन बसन्ती ने जान-बूझकर ऐसा बनाया था कि कौर तक निगला न जा सके। गजाधर बाबू चुपचाप खाकर उठ गए पर नरेन्द्र थाली सरकाकर उठ खड़ा हुआ और बोला, ''मैं ऐसा खाना नहीं खा सकता।''

बसन्ती तुनककर बोली,'' तो न खाओ, कौन तुम्हारी खुशामद करता है।''

''तुमसे खाना बनाने को कहा किसने था?'' नरेन्द्र चिल्लाया।

''बाबू जी ने।''

''बाबू जी को बैठे-बैठे यही सूझता है।''

बसन्ती को उठाकर माँ ने नरेन्द्र को मनाया और अपने हाथ से कुछ बनाकर खिलाया। गजाधर बाबू ने बाद में पत्नी से कहा, ''इतनी बड़ी लड़की हो गई और उसे खाना बनाने तक का शऊर नहीं आया।''

''अरे आता सब कुछ है, करना नहीं चाहती''। पत्नी ने उत्तर दिया। अगली शाम माँ को रसोई में देख, कपड़े बदलकर बसन्ती बाहर आई तो बैठक से गजाधर बाबू ने टोक दिया, ''कहाँ जा रही हो।''

''पड़ोस में शीला के घर।'' बसन्ती ने कहा।

''कोई जरूरत नहीं है, अन्दर जाकर पढो। गजाधर बाबू ने कड़े स्वर में कहा। कुछ देर अनिश्चित खड़े रहकर बसन्ती अन्दर चली गई। गजाधर बाबू शाम को रोज टहलने चले जाते थे, लौटकर आये तो पत्नी ने कहा, ''क्या कह दिया बसन्ती से। शाम से मुँह लपेटे पड़ी है। खाना भी नहीं खाया।''

BRAOU

गजाधर बाबू खिन्न हो आए। पत्नी की बात का उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि बसन्ती की शादी जल्दी ही कर देनी है। उस दिन के बाद बसन्ती पिता से बची-बची रहने लगी। जाना होता तो पिछवाड़े से जाती। गजाधर बाबू ने दो-एक बार पत्नी से पूछा तो उत्तर मिला, रूठी हुई है। गजाधर बाबू को और रोष हुआ। लड़की के इतने मिज़ाज, जाने को रोक दिया तो पिता से बोलेगी नहीं। फिर उनकी पत्नी ने ही सूचना दी कि अमर अलग रहने की सोच रहा है।

''क्यों।''गजाधर बाबू ने चकित होकर पूछा।

पत्नी ने साफ-साफ उत्तर नहीं दिया। अमर और उसकी बहू की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेश बैठक में ही पड़े रहते है, कोई आने-जानेवाला हो तो कहीं बिठाने की जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा-सा समझते थे और मौके-बेमौके टोक देते थे। बहू को काम करना पड़ता था और सास जब-तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थी। ''हमारे आने के पहले भी कभी ऐसी बात हुई थी?'' गजाधर बाबू ने पूछा। पत्नी ने सिर हिलाकर जताया कि''नहीं''। पहले अमर घर का मालिक बनकर रहता था, बहू को कोई रोकटोक न थी, अमर के दोस्तों का प्राय: यहीं अड्डा जमा रहता था और अन्दर से नाश्ता-चाय तैयार होकर जाता रहता था। बसन्ती को भी वही अच्छा लगता था।

गजाधर बाबू ने बहुत धीरे से कहा, ''अमर से कहो, जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है।''

अगले दिन वह सुबह घूमकर लौटे तो उन्होंने पाया कि बैठक में उनकी चारपाई नहीं है। अन्दर आकर पूछनेवाले ही थे कि उनकी दृष्टि रसोई के अन्दर बैठी पत्नी पर पड़ी। उन्होंने यह कहने को मुँह खोला कि बहू कहाँ है, पर कुछ याद कर चुप हो गए। पत्नी की कोठरी में झाँका तो अचार, रजाइयों और कनस्तरों के मध्य अपनी चारपाई लगी पाई। गजाधर बाबू ने कोट उतारा और कहीं टाँगने को दीवार पर नजर दौड़ाई। फिर उसे मोड़कर अलगनी के कुछ कपड़े खिसकाकर एक किनारे टाँग दिया। कुछ खाए बिना ही अपनी चारपाई पर लेट गए। कुछ भी हो, तन आखिरकार बूढ़ा ही था। सुबह-शाम कुछ दूर टहलने अवश्य चले जाते, पर आते-आते थक उठते थे। गजाधर बाबू को अपना बड़ा-सा, खुला हुआ क्वार्टर याद आ गया। निश्चिंत जीवन, सुबह पैसेंजेर ट्रेन आने पर स्टेशन की चहल-पहल, चिर-परिचित चेहरे और पटरी पर रेल के पहियों की खट्-खट् जो उनके लिए मधुर संगीत की तरह था। तूफान और डाक गाड़ी के इंजनों की चिंघाड़ उनकी अकेली रातों की साथी थी। सेठ रामजीलाल के मिल के कुछ लोग कभी-कभी पास आ बैठते, वही उनका दायरा था, वही उनके साथी। वह जीवन अब उन्हें एक खोई निधि-सा प्रतीत हुआ। उन्हें लगा कि वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए है। उन्होंने जो कुछ चाहा उसमें से उन्हें एक बूँद भी न मिली।

लेटे हुए वह घर के अन्दर से आते विविध स्वरों को सुनते रहे। बहू और सास की छोटी-सी झड़प, बालटी पर खुले नल की आवाज, रसोई के बर्तनों की खटपट और उसी में दो गौरैयों का वार्तालाप-और अचानक ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किसी बात में दखल न देंगे। यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह यहीं है, तो यहीं पड़े रहेंगे। अगर कहीं और डाल दी गई तो वहाँ चले जाएँगे यदि बच्चों के जीवन में उनके लिए कहीं स्थान नहीं, तो अपने ही घर में परदेशी की तरह पड़े रहेंगे ... और उस दिन के बाद सचमुच गजाधर बाबू कुछ नहीं बोले। नरेन्द्र माँगने आया तो बिना कारण पूछे उसे रुपये दे दिये-बसन्ती काफी अँधेरा हो जाने के बाद भी पड़ोस में रही तो भी उन्होंने कुछ नहीं कहा-पर उन्हें सबसे बड़ा गम यह था कि उनकी पत्नी ने भी उनमें कुछ परिवर्तन लक्ष्य नहीं किया। वह मन ही-मन कितना बार ढो रहे हैं, इससे वह अनजान ही बनी रही। बल्कि उन्हें पति के घर के मामले में हस्तक्षेप न करने के कारण शान्ति ही थी। कभी-कभी कह भी उठतीं, ठीक ही है, आप बीच में न पड़ा कीजिए, बच्चे बड़े हो गये हैं, हमारा जो कर्तव्य था, कर रहे हैं। पढ़ा रहे हैं, शादी कर देंगे।

BRAOU

बोध प्रश्न : 7. सुबह घूमकर लौट आने के बाद गजाधर बाबू ने क्या देखा?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 8. बीता हुआ जीवन गजाधर बाबू को कैसा प्रतीत हुआ?

.....

.....

.....

बोध प्रश्न : 9. गजाधर बाबू ने क्या निश्चय किया?

.....

.....

.....

गजाधर बाबू ने आहत दृष्टि से पत्नी को देखा । उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी व बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्तमात्र है। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिन्दूर डालने की अधिकारी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है, उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्तव्यों से छुट्टी पा जाती है। वह घी और चीनी के डिब्बों में इतनी रमी हुई है कि अब वही उसकी सम्पूर्ण दुनिया बन गई है। गजाधर बाबू उसके जीवन के केन्द्र नहीं हो सकते; उन्हें तो अब बेटी की शादी के लिए भी उत्साह बुझ गया। किसी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपायी थी। उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब गई।

इतने सब निश्चयों के बावजूद भी गजाधर बाबू एक दिन बीच में दखल दे बैठे। पत्नी स्वभावानुसार नौकर की शिकायत कर रही थी, ''कितना कामचोर है, बाजार की हर चीज़ में पैसा बनाता है, खाने बैठता है, तो खाता ही चला जाता है।'' गजाधर बाबू को बराबर यह महसूस होता रहता था कि उनके घर का रहन-सहन और खर्च उनकी हैसियत से कहीं ज्यादा है। पत्नी की बात सुनकर लगा कि नौकर का खर्च बिलकुल बेकार है। छोटा-मोटा काम हैं, घर में तीन मर्द है, कोई-न-कोई कर ही देगा। उन्होंने उसी दिन नौकर का हिसाब कर दिया। अमर दफ्तर से आया तो नौकर को पुकारने लगा। अमर की पत्नी बोली, ''बाबू जी ने नौकर छुड़ा दिया है।''

''क्यों।''

''कहते हैं, खर्च बहुत हैं।''

यह वार्तालाप बहुत सीधा-सा था पर जिस टोन में बहू बोली, गजाधर बाबू को खटक गया। उस दिन जी भारी होने के कारण गजाधर बाबू टहलने नहीं गये थे। आलस्य में उठकर बत्ती भी नहीं जलाई-इस बात से बेखबर नरेन्द्र माँ से कहने लगा, ''अम्मा, तुम बाबू जी से कहती क्यों नहीं। बैठे-बिठाये कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया । अगर बाबू जी यह समझे कि मैं साइकिल पर गेहूँ रख आटा पिसाने जाऊँगा तो मुझसे यह नहीं होगा।''''हाँ अम्मा'', बसन्ती का स्वर था, ''मैं कॉलेज भी जाऊँ और लौटकर घर में झाड़ू भी लगाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं है।''

''बूढ़े आदमी हैं'', अमर भुनभुनाया, ''चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं।'' पत्नी ने बड़े व्यंग्य से कहा, ''और कुछ नहीं सूझा तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई तो पन्द्रह दिन का राशन पाँच दिन में बनाकर रख दिया।'' बहू कुछ कहे, इससे पहले वह चौके में घुस गई। कुछ देर में अपनी कोठरी में आई और बिजली जलादी तो गजाधर बाबू को लेटे देख बड़ी सिटपिटाई। गजाधर बाबू की मुख-मुद्रा से वह उनके भावों का अनुमान न लगा सकीं। वह चुप आँखें बन्द किये लेटे रहे।

गजाधर बाबू चिट्ठी हाथ में लिए अन्दर आये और पत्नी को पुकारा। वह भीगे हाथ लिए निकलीं और आँचल से पोछती हुई पास आ खड़ी हुई। गजाधर बाबू ने बिना किसी भूमिका के कहा, ''मुझे सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी मिल गई है। खाली बैठे रहने से तो चार पैसे घर में आएँ, वही अच्छा है। उन्होंने तो पहले ही कहा था, मैंने ही मना कर दिया था।'' फिर कुछ रुककर, जैसे बुझी हुई आग में एक चिनगारी चमक उठे, उन्होंने धीमे स्वर में कहा, ''मैंने सोचा था कि बरसों तुम सबसे अलग रहने के बाद, अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूँगा। खैर, परसों जाना है। तुम भी चलोगी।'' ''मैं''! पत्नी ने सकपकाकर कहा, ''मैं चलूँगी तो यहाँ का क्या होगा? इतनी बड़ी गृहस्थी, फिर सयानी लड़की ...'' बात बीच में काट गजाधर बाबू ने हताश स्वर में कहा, ''ठीक है, तुम यहीं रहो। मैंने तो ऐसे ही कहा था।'' और गहरे मौन में डूब गए।

नरेन्द्र ने बड़ी तत्परता से बिस्तर बाँधा और रिक्शा बुला लाया। गजाधर बाबू का टिन का बक्स और पतला-सा बिस्तर उसपर रख दिया गया। नाश्ते के लिए लड्डू और मठरी की डलिया हाथ में लिए गजाधर बाबू रिक्शे में बैठ गये। दृष्टि उन्होंने अपने परिवार पर डाली। फिर दूसरी ओर देखने लगे और रिक्शा चल पड़ा। उनके जाने के बाद सब अन्दर लौट आये, बहू ने अमर से पूछा, ''सिनेमा ले चलिएगा न।'' बसन्ती ने उछलकर कहा, ''भइया, हमें भी।''

गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चौके में चली गई। बची हुई मठरियों को कंटोरदान में रखकर अपने कमरे में लायी और कनस्तरों के पास रख दिया, फिर बाहर आकर कहा, ''अरे नरेन्द्र, बाबू जी की चारपाई कमरे से निकाल दे। उसमें चलने तक की जगह नहीं है।''

16.3 सारांश

'वापसी' एक वातावरण प्रधान, यथार्थवादी कहानी है। गजाधर बाबू के परिवार का चित्रण कर उषा प्रियंवदा ने पारिवारिक विघटन तथा संबंधों की शिथिलता का मार्मिक अंकन किया है। जीवनभर परिवार को सुखसुविधाएँ देने के लिए परिवार से दूर रहकर रेलवे में नौकरी करनेवाले गजाधरबाबू सेवामुक्त हो जाते हैं। पैंतीस वर्ष जिस स्थान में व्यतीत किए उस रेलवे क्वार्टर को छोडते समय तथा अपने नौकर गनेशी के आदरपूर्ण एवं आत्मीयतापूर्ण व्यवहार से वे भावुक हो जाते हैं। गजाधारबाबू परिवार के प्रति पूर्णत: समर्पित थे। उन्होंने पारिवारिक दायित्वों का जैसे बेटे-बेटियों की उच्च शिक्षा का प्रबन्ध उनके विवाह आदि का निर्वाह किया था। लम्बे अन्तराल के बाद अपने परिवार के साथ शेष जीवन उल्लास के साथ बिताने की कामना से जब वे अपने घर में पहुँचते हैं तब वहाँ का पहले से उल्लसित वातावरण-बच्चों की हँसी ठिठोली, मौज-मस्ती अचानक शान्त हो जाती है। उनकी पत्नी जिससे उनको स्नेह तथा आत्मीयता की अपेक्षा थी, अपने गृहकार्यों में व्यस्त तथा उनके प्रति उदासीन दिखाई देती है। उनके लिए घर में अस्थायी प्रबंध किया गया था। उनकी बातों तथा विचारों घर न ध्यान दिया जाता था और न ही उसका पालन किया जाता था। परिवार के लोगों के व्यवहार से उन्हें ऐसा लगने लगा कि 'उनकी उपस्थिति उस पर में ऐसी असंगत लगने लगी थी जैसी सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई। उनका बड़ा बेटा अमर उसकी बहू, दूसरा बेटा नरेन्द्र तथा बेटी बसंती को न गृहकार्यों में रूचि थी और न ही वे इसमें अपनी माँ का हाथ बँटाना अवाश्यक समझते थे। उनके इस व्यवहार से वे दुखी हुए। पत्नी सहित किसी भी सदस्य की उनके प्रति स्नेह तथा आत्मीयता की भावना नहीं थी। उन्हें यह प्रतीत हुआ कि वे केवल धनोपार्जन के निमित्त मात्र हैं। जिस व्यक्ति के (गृहस्वामी) के अस्तित्व से स्त्री को समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त होती

है वह उन्हें दो वक्त का भोजन देकर कर्तव्यमुक्त हो जाती है। सेवानिवृत्ति के बाद उनकी भावनाओं को जानना वह आवश्यक नहीं समझती । बेटे बेटियों के स्वच्छंद जीवन में अनुशासन के लिए किये गये उनके हस्तक्षेप से परिवार में तनावपूर्ण स्थिति निर्माण हो जाती है। परिवार के सदस्यों के इस स्नेहहीन, सहानुभूतिहीन तथा उपेक्षापूर्ण व्यवहार से वे अत्यंत उदास हुए। उनका संवेदनशील हृदय आहत हुआ। सेवानिवृत्ति के बाद अपने ही घर में वे स्वयं को अनावश्यक, अजनबी तथा नगण्य मानने लगे। उनका संवेदनशील हृदय निराशा तथा एकाकीपन की पीड़ा से ग्रस्त हुआ। उनका उत्साह आशाएँ तथा सुख की कल्पनाएँ टूट जाती हैं। अन्त में परिवार के सदस्यों की इस बदलती मानसिकता से ऊबकर तथा विवश होकर निस्संग भाव से सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी के लिए जाने का निश्चय करते हैं। उनके इस विचार को सुनकर कोई भी उन्हें रोकने का प्रयास नहीं करता। सभी लोग उनके जाने का बड़ी तत्परता के साथ प्रबंध करते हैं। उनके जाने के बाद परिवार के सभी व्यक्ति अपने मन के अनुसार जीवन बिताने के लिए मुक्त हो जाते हैं। तथा उनके अस्तित्व की प्रतीक चारपाई को कमरे से निकाल दिया जाता है। जीवनभर दायित्वों का बोझ ढोनेवाले गजाधरबाबू परिवार के लिए स्वयं एक बोझ बन जाते हैं। सेवानिवृत्त व्यक्ति की भावनाओं का उसके मानसिक द्वन्द्व का, उसके तथा एकाकीपन की पीड़ा का इसमें हृदयस्पर्शी अंकन हुआ है।

16.4 समीक्षा

'वापसी' उषा प्रियंवदा द्वारा लिखित एक उत्कृष्ट कहानी है। इसमें आधुनिक कहानी की लगभग सब विशेषताएँ निहित हैं। इसमें मानवीय अनुभवों का सूक्ष्म चित्रण है। लेखिका ने स्त्री सुलभ सहृदयता से इस कहानी को अत्यंत स्वाभाविक तथा सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। महानगरीय परिवारों में संबंधों के विघटन के परिप्रेक्ष्य में जीवन के यथार्थ को सहज ढंग से व्यक्त करने के कारण ये कहानी चर्चित रही है। आधुनिकता ने जहां सभ्यता और संस्कृति के नये आयामों का उद्घटान किया है वहाँ जीवन-मूल्यों का विघटन, संबंधों में शिथिलता, बिखराव, अजनबीपन तथा एकाकीपन की पीड़ा भी उसकी महत्वपूर्ण देन है। इस कहानी में इसी पीड़ा को भावबोध के स्तर पर बड़े संयमित रूप में तथा कौशल के साथ व्यक्त किया गया है। गजाधर बाबू के परिवार में आगमन के साथ ही संघर्ष प्रारंभ हो जाता है। इसमें पारिवारिक संघर्ष तथा गजाधर बाबू के मन का द्वन्द्व बहुत सफलतापूर्वक चित्रित हुआ है। गजाधरबाबू जैसे गृहस्वामी परिवार की सुख सुविधा के लिए परिवार से दूर रहकर नौकरी करते हैं तब इस दूरी के कारण परिवार के सदस्यों की उनके प्रति स्नेह, सहानुभूति, आत्मीयता नष्ट होने लगती है। परिवार के लोग उन्हें केवल धनोपार्जन का साधन मात्र मानते हैं। सेवानिवृत्ति के बाद उसी परिवार के लोगों से उन्हें उपेक्षा और अनादर प्राप्त होता है जिनके लिए उन्होंने जीवनभर परिश्रम किया था। इतना ही नहीं उनकी जीवनसंगिनी से भी स्नेह तथा आत्मीयता प्राप्त नहीं होती। गजाधर बाबू का स्नेह के लिए लालायित मन इस व्यवहार से दुखी तथा उदास होता है। उनकी इस मानसिकता का सूक्ष्म अंकन इस कहानी में हुआ है। इसमें दो पीढ़ियों के विचार संघर्ष को उद्घाटित किया गया है।

प्रस्तुत कहानी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कथ्य को अत्यंत सहज ढंग से सरल तथा बोलचाल की भाषा के माध्यम से गहरे और मार्मिक प्रभाव के साथ व्यक्त किया गया है। एक परिवार के चित्रण के माध्यम से दो पीढ़ियों के मध्य मानसिक तनाव, वैचारिक संघर्ष, संबंधों की शिथिलता, पति-पत्नी के मध्य सहानुभूति तथा आत्मीयता का अभाव, सेवानिवृत्त व्यक्ति के प्रति अनादर सहानुभूतिहीनता आदि की ओर संकेत किया गया है। इस कहानी की कथावस्तु अत्यंत संक्षिप्त है तथा उसे सुसंगठित रूप से यथाक्रम प्रस्तुत किया गया है। गजाधर बाबू को केंद्रबिन्दु मानकर कहानी की विविध घटनाओं को उचित क्रम से प्रस्तुत करते हुए उसकी गतिमानता की ओर यथोचित ध्यान रखा गया है। कहानी का शीर्षक संक्षिप्त, सूचक एवं प्रतीकात्मक है। 'वापसी' शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया गया है। एक सेवानिवृत्त होकर गजाधर बाबू की घर-गृहस्थी की ओर वापसी जो उत्साह तथा उमंग से ओतप्रोत थी। दूसरी, परिवार में अपने को असंगत एवं अनावश्यक मानकर स्वयं निर्वाह करने के निर्णय के साथ घर से दूर नौकरी के लिए वापसी जो निराशा तथा उदासीनता से ओत प्रोत

BRAOU

है। 'वापसी' शब्द कथा के नायक की आशा और निराशा दोनों को अभिव्यक्त करता है। अत: यह शीर्षक सार्थक है।

पात्र एवं चरित्र चित्रण की दृष्टि से पात्रों की संख्या सीमित है। कहानी में गजाधर बाबू और उनकी पत्नी दो मुख्य पात्र हैं तथा अन्य गौण पात्र हैं। गणेशी का गजाधर बाबू के प्रति आदरयुक्त स्नेह, आतिथ्यशीलता, गजाधर बाबू की पत्नी की एक गृहिणी के रूप में कार्यव्यस्तता, नीरसता, संवेदनहीनता, सहानुभूतिशून्यता, गजाधरबाबू की भावुकता, स्नेहप्राप्ति की लालसा, इसके अभाव में उत्पन्न उदासीनता, निराशा, एकाकीपन की पीड़ा का मनोवैज्ञानिक अंकन किया गया है। कहानी में संवाद स्वाभाविक एवं पात्रानुरूप हैं जो कथावस्तु को गति प्रदान करने में सहायक हुए हैं। उदाहरण के लिए ''फिर कुछ रुककर जैसे बुझी हुई आग में एक चिनगारी चमक उठे उन्होंने धीमे स्वर में कहा – मैंने सोचा था कि बरसों तुम सबसे अलग रहने के बाद अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूँगा। खैर परसों जाना है।'' गजाधर बाबू के अपने ही घर में असंगत होने के भाव को चारपाई के प्रतीक द्वारा बड़े ही कौशल के साथ व्यक्त किया गया है। भाषाशैली की दृष्टि से लेखिका ने इसमें देशी-विदेशी शब्दों का तथा मुहावरों का प्रयोग कर कहानी को अधिक सजीव बनाया है जैसे हौसला, लिहाज, इंतजार, मजाल आदि अरबी फारसी शब्द तथा रेलवे क्वार्टर, रिटायर, स्टेशन आदि अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसमें हाथ बँटाना, नाक-भौ चढ़ाना, मुँह लटकाना आदि मुहावरों का प्रयोग दर्शित होता है। कहीं-कहीं भाषा अलंकृत है उदा-'वह जीवन अब उन्हें एक खोई निधि-सा प्रतीत हुआ।' समग्रत: मानसिक भावबोध को प्रस्तुत करने वाली यह मार्मिक कहानी है।

16.5 शब्दार्थ

डोलची	–	छोटी टोकरी
बालटी	–	लोहे या पीतल का बना डोल
बक्सा	–	कपड़े रखने का सन्दूक
विषाद	–	दु:ख
अगहन	–	अग्रहायण, मर्गशीर्ष मास
अंगोछा	–	तौलिया
हौसला	–	हिम्मत
बिछोह	–	वियोग
खिसकाना	–	हटाना
कहकहे लगाना	–	खिलखिलाकर हँसना
सिटपिटाना	–	घबराहट से सहम जाना
खिन्नता	–	उदास होना
कुंठित	–	निराश
लिहाज	–	ध्यान
अर्घ्य	–	पूजा में देने योग्य वस्तु
फाँस सी करकना	–	फाँस सी चुभना
मजाल	–	शक्ति, सामर्थ्य

BRAOU

व्याघात	–	बाधा
अस्थायी	–	क्षणिक,
प्रबन्ध	–	व्यवस्था
मर्तबान	–	मिट्टी का बर्तन जिसमें अचार रखते हैं
कनस्तर	–	टीन का पीपा
रवैया	–	व्यवहार
वाजिब	–	जरूरी, उचित
आहत	–	घायल
विस्मित	–	आश्चर्य
हैसियत	–	योग्यता
तंगी	–	पैसों की कमी
नितान्त	–	अत्यंत
श्रीहीन	–	कांतिहीन
निस्संग	–	एकाकी
तुनककर	–	छोटी सी बात पर नाराज होना
खुशामद	–	चापलूसी
शऊर	–	काम का ढंग जाननेवाला
फूहड़पन	–	बेढंगापन
अलगनी	–	कपड़े टाँगने के लिए बाँधी हुई रस्सी
दायरा	–	कार्य का क्षेत्र
मठरी	–	मैदे की बनी नमकीन टिकिया
डलिया	–	बाँस का बना एक पात्र

BRAOU

16.6 अभ्यास

16.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. वापसी कहानी में कौन-कौन सी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है?
2. गजाधर बाबू की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?
3. वापसी कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

16.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. निम्नलिखित अवतरण की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :-

अ) "उन्हें लगा कि वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उन्हें एक बूँद भी न मिली।"

ब) ''उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी।''

स) ''उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी व बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्त है।''

2. ''वापसी कहानी में आधुनिक परिवार की विसंगति की स्पष्ट झलक मिलती है''। स्पष्ट कीजिए।

3. ''यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह नहीं है'' इस वाक्य के आधार पर बताइए कि घर में गजाधर बाबू के साथ किस प्रकार व्यवहार हुआ होगा।

16.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

16.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : वापसी कहानी में कौन-कौन सी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है।

उत्तर : उषा प्रियंवाद की 'वापसी' कहानी में पारिवारिक विघटन का यथार्थ चित्रण किया गया है। इस कहानी के प्रमुख पात्र गजाधर बाबू के मानसिक द्वन्द्व का, आशा-निराशा का यथार्थ अंकन इसमें हुआ है। गृहस्वामी होन के नाते जीवनभर परिवार की सुख सुविधा के लिए परिवार से दूर रहकर नौकरी करनेवाले गजाधर बाबू को केवल धनोपार्जन का साधन माना जाता है। सेवानिवृत्ति के बाद वृद्धावस्था में शेष जीवन परिवार के साथ सुखपूर्वक बिताने की कल्पना से जब वे घर में पहुँचते हैं तब बेटे, बहू, बेटी तथा पत्नी के स्नेहहीन, सहानुभूतिहीन तथा आत्मीयताहीन व्यवहार से स्वयं को असंगत मानते हैं। जीवनभर परिवार के दायित्वों का बोझ ढोनेवाला व्यक्ति सेवानिवृत्ति के बाद अपने ही घर में अजनबी बन जाता है तथा परिवार के लिए बोझ बन जाता है। सजी हुई बैठक में चारपाई के समान उस व्यक्ति को अनावश्यक तथा नगण्य माना जाता है। उनकी पत्नी भी उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार न कर गृहकार्यों में व्यस्त रहती है। इस प्रकार संबंधों की शिथिलता का मार्मिक अंकन इस कहानी में हुआ है। घर की बिगड़ी हुई अवस्था में सुधार लाने के लिए जब वे आदेश देते हैं तब घर में तनावपूर्ण स्थिति निर्माण होती है। इन समस्त घटनाओं के कारण गजाधर बाबू की सारी आशाएँ उदासीनता में डूब जाती है। उनके दु:ख, निराशा, एकाकीपन की पीड़ा तथा निस्संग वृत्ति का इसमें सूक्ष्म अंकन हुआ है। परिवार में स्वयं को असंगत मानकर घर से दूर फिर से नौकरी के लिए वापसी बड़ी दयनीय है जो परिवार के सदस्यों के प्रति निस्संगता की परिचायक है। माता-पिता का आदर कर उनकी सहायता करने की अपेक्षा सुखसाधनों को प्रधानता देनेवाले आज के युवा वर्ग की निर्मम वृत्ति पर भी इसमें प्रकाश डाला गया है।

अत: आधुनिक परिवेश के साथ व्यक्ति की बदलती मानसिकता को, दो पीढ़ियों के मध्य वैचारिक संघर्ष को, पति-पत्नी के मध्य आत्मीयताहीन संबंधो को, वृद्ध व्यक्ति की विवशता तथा नई पीढ़ी की सुखासीन एवं स्वच्छंदतावादी वृत्ति को इसमें बड़े कौशल के साथ प्रस्तुत किया गया है।

16.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

निम्नलिखित अवतरण की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :-

(अ) ''उन्हें लगा कि वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उन्हें एक बूँद भी न मिली।''

संदर्भ - उपर्युक्त अवतरण उषा प्रियंबदा द्वारा लिखित 'वापसी' नामक यथार्थवादी कहानी से लिया गया है। जीवनभर परिवार को सुखी और सुविधापूर्ण बनाने के लिए परिवार से दूर रहकर नौकरी करनेवाले गजाधर बाबू सेवानिवृत्त होने के बाद अपनी पत्नी तथा बेटे बेटियों के बीच शेष जीवन उल्लास के साथ बिताने की कल्पना से जब घर पहुँचते हैं तब उन्हें किस स्थिति का सामना करना पड़ता है उसका हृदयस्पर्शी चित्रण इसमें किया गया है।

व्याख्या :- घर की अव्यवस्थित स्थिति को देखकर एक अनुशासन बनाने के लिए तथा पत्नी की सहायता के लिए जब गजाधर बाबू ने अमर की पत्नी को तथा कन्या बसंती को एक-एक समय खाना बनाने का कार्य सौंप दिया तब अमर की पत्नी ने सामग्री का अपव्यय किया तथा बसंती ने स्वादहीन खाना बनाया। गजाधर बाबू के डाँटने पर बसंती रूठ गयी। अमर ने अलग रहने का निश्चय किया। गजाधर बाबू के आदेशों से घर में तनाव का निर्माण हुआ। एक दिन उनकी चारपाई बैठक से हटाकर जब कोठरी में डाल दी गई तब उनको स्वाभाविक रूप में अपना रेलवे क्वार्टर का जीवन याद आया। गणेशी की सेवा, ट्रेनों की मधुर संगीत सी आवाजें, सेठ रामजीमल की मिल के लोगों की भेंट आदि उन्हें घर के जीवन की तुलना में जीवन की एक निधि-सी लगा। वह निधि अब खो गई-थी। अपने घर में सुख पाने की जो इच्छा थी उसमें से उन्हें कुछ भी प्राप्त न होने के कारण उन्हें लगा जिंदगी ने उन्हें ठगा है, उनके साथ विश्वासघात हुआ है। उन्हें जीवन में आशा, सुख के स्थान पर दु:ख और उदासी ही प्राप्त हुई है।

विशेषता - परिवार के सदस्यों के उपेक्षापूर्ण, अनादरपूर्ण, व्यवहार से उनकी स्नेह प्राप्ति की आकांक्षा अधूरी रह गई ।इसके कारण गजाधर बाबू के दु:ख, निराशा, उदासीनता, एकाकीपन की पीड़ा का इसमें अंकन हुआ है। इस वाक्य में उनके निराश मन की व्यथा व्यक्त हुई है। इसमें लेखिका ने गजाधरबाबू के जीवन की शोकांतिका की ओर स्पष्ट संकेत किया है।

बोध प्रश्नोत्तर

1) गजाधरबाबू के नौकर का नाम गनेशी था।

2) गजाधरबाबू रेलवे की नौकरी से सेवानिवृत्त हुए।

3) पैंतीस साल की नौकरी में अधिकांश समय अकेले रहकर रिटायर होने के बाद अपने परिवार के साथ समय बिताने की कल्पना से गजाधरबाबू खुश थे।

4) गजाधर बाबू की बेटी का नाम बसंती था।

5) घर छोटा होने के कारण गजाधर बाबू ने अपना प्रबंध बैठक में किया था।

6) गजाधर बाबू के लिए बैठने का साधन चारपाई थी।

7) सुबह घूमकर लौट आने के बाद गजाधर बाबू को बैठक में चारपाई दिखाई नहीं दी।

8) बीता हुआ जीवन गजाधर बाबू को एक खोई निधि-सा प्रतीत हुआ।

9) उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किसी बात में दखल नहीं देंगे।

10) परिवार में गजाधर बाबू ने अनुभव किया कि वह पत्नी व बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्तमात्र है।

11) उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी।

16.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मेरी प्रिय कहानियाँ - उषा प्रियंवदा

BRAOU

खण्ड-4 : उपन्यास साहित्य

BRAOU

विषय प्रवेश

उपन्यास का अर्थ होता है उप+न्यास अर्थात ऐसी वस्तु जो समीप रखी हुई है अर्थाथ जिसे पढ़कर ऐसा लगे कि यह हमारे ही जीवन से जुड़ा है अर्थात हमारा ही है। हिन्दी उपन्यास का आरंभ भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना और आधुनिक काल के आरंभ से हुआ। उन्नीसवी शती के अन्तिम दशकों में भारत में अंग्रेजी राज्य जड़ जमा चुका था किन्तु उसके खिलाफ विद्रोह की चेतना भी पनपने लगी थी। विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलनों और अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के कारण भारतीयों में नई बौद्धिक चेतना जाग गई थी। मुद्रण और प्रकाशन के साधनों ने इस चेतना को गद्य-साहित्य की विभिन्न विधाओं के आरंभ और विकास के रूप में फैलाया। इसलिए आधुनिक काल को गद्यकाल भी कहा जाता है।

हिन्दी का पहला उपन्यास लाला श्रीनिवास दास का लिखा 'परीक्षा गुरु' माना जाता है जो सन् 1882 में प्रकाशित हुआ। किन्तु प्रेमचन्द ने ही हिन्दी उपन्यासों को सही दिशा दी। प्रेमचन्द ने साहित्य को सामाजिक आदर्शों से जोड़ा और उपन्यास के बारे में तो उनका कहनाथा - ''मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र समझता हूँ।'' प्रेमचन्द ने अपने समय की सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं का चित्रण उपन्यासों में किया। प्रेमचन्द के पूर्व हिन्दी उपन्यास विषय-वस्तु, भाषा और शैली की दृष्टि से आकार ग्रहण कर रहा था जिसे प्रेमचन्द ने निश्चित रूप और दिशा दी। प्रेमचन्द के पहले तीन प्रकार के उपन्यास लिखे जारहे थे - सामाजिक और उपदेशात्मक, तिलिस्मी और जासूसी तथा अर्द्ध ऐतिहासिक और रोमांस । सामाजिक और उपदेशात्मक प्रवृत्ति को लेकर ही 'परीक्षागुरु' लिखा गया था जिसमें आधुनिक पश्चिमी ढंग के रहन-सहन में एक अमीर युवक के बिगडने और एक मित्र के उसे सुधारने की कथा है। इसी प्रकार के उपन्यास 'सौं अजान एक सुजान', 'नूतन ब्रह्मचारी' (बालकृष्म भट्ट) और राधाकृष्ण दास लिखित 'निस्सहाय हिन्दू' हैं। दूसरे प्रकार के तिलिस्मी और जासूसी उपन्यासों में मनोरंजन का तत्व अधिक है। तिलिस्मी-ऐयारी उपन्यासों में देवकीनन्दन खत्री ने इतनी रोचकता पैदा की कि बताया जाता है कि हजारों लोगों ने इन उपन्यासों को पढ़ने के लिए हिन्दी सीखी देवकीनन्दनखत्री को तिलिस्मी-ऐयारी धारा के अग्रणी लेखक के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। उनके उपन्यासों में 'चन्द्रकान्ता', 'चन्द्रकान्तासन्तति' आदि प्रमुख हैं। जासूसी उपन्यासकारों में गोपालराम गहमरी प्रसिद्ध हैं। तीसरे प्रकार की प्रवृत्ति के उपन्यास हैं - अर्ध्द ऐतिहासिक और रोमासंपूर्ण उपन्यास । इस धारा के प्रवर्तक थे किशोरीलाल गोस्वामी। इन उपन्यासों में ऐतिहासिक तथ्य बहुत कम हैं, कल्पना के आधार पर इनकी रचना की गई हैं। इनके अतिरिक्त अंग्रेजी, बंगला और मराठी आदि भाषाओं से अनुवाद भी किए गए।

हिन्दी उपन्यासों के विकास में प्रेमचन्द के उपन्यास युग प्रवर्तक उपन्यास हैं। प्रेमचन्द के उपन्यासों में सेवासदन, प्रेमाश्रम, कर्मभूमि, रंगभूमि, निर्मला, गबन, गोदान प्रमुख हैं। 'सेवासदन' में वेश्या-जीवन का यथार्थ रूप प्रस्तुत किया गया है तो 'निर्मला' में दहेज प्रथा और अनमेल विवाह की शिकार भातीय नारी की व्यथा-कथा कही गई है। कर्मभूमि, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, गोदान आदि में ब्रिटीश राज के शोषण, किसान-मजदूरों की दयनीय स्थिति, राष्ट्रीय स्वाधीनता-आन्दोलन आदि का यथार्थ चित्रण है। प्रेमचन्द के उपन्यासों का फलक बहुत व्यापक है। अपने समय की कोई ऐसी समस्या नहीं जिसे प्रेमचन्द ने न छुआ हैं। भाषा और शैली की दृष्टि से भी प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास को नई ऊँचाई पर पहुँचाया। प्रेमचन्द के अतिरिक्त उस युग में जयशंकर प्रसाद उल्लेखनीय हैं। प्रतापनारायण मिश्र, विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, सुदर्शन, वृन्दावनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री आदि ने अपने सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासो के कारण प्रसिद्धि प्राप्त की।

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यासों में कई नई प्रवृत्तियां प्रकट हुई जैसे मनो वैज्ञानिक और आंचलिक। ऐसी बात नहीं कि इससे पूर्व के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक चित्रण नहीं होता था। लेकिन इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र और अज्ञेय जैसे उपन्यासकारों ने व्यक्ति के अन्तर्मन को केन्द्रित कर चरित्रों के मनोविश्लेषण को प्रधानता देते हुए लिखा। इन उपन्यासकारों में जैनेन्द्र ने फ्रायड की मनोवैज्ञानिक मान्यताओं को आधार लिया। उनके उपन्यासों

में 'सुनीता', 'परख', 'त्यागपत्र' आदि उल्लेखनीय हैं।

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में 'पर्दे की रानी', 'निर्वासित', 'सन्यासी', 'जहाज का पंछी', 'भूत का भविष्य' उल्लेखनीय हैं। अज्ञेय ने विषय-वस्तु, चरित्र-चित्रण, भाषा-शैली और कथ्य की दृष्टि से हिन्दी उपन्यास को गहराई और कलात्मकता दी। इनके उपन्यासों में 'शेखर एक जीवनी' व 'नदी के द्वीप' प्रसिद्ध हैं। उनका तीसरा उपन्यास 'अपने अपने अजनबी' पश्चिमी शैली में भारतीय दर्शन की नई व्याख्या प्रस्तुत करता है।

यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि इस युग के अन्य महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं।

विचारधारा की दृष्टि से प्रेमचन्द के उपन्यासों में आदर्शवाद (गांधीवाद) और यथार्थवाद (मार्क्सवाद) में टकराहट दिखाई देती है। प्रेमचन्द यथार्थवाद की दिशा में ही बढ़े। उनके बाद यशपाल जो मार्क्सवादी विचारधारा को अपनातेहुए उपन्यास-रचना की। स्वतंत्रता-आन्दोलन और देश-विभाजन की पृष्ठिभूमि में यशपाल का 'झूठासच' उपन्यास विशेष उल्लेखनीय है।

फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने 'मैला आँचल' (1954) में भारतीय ग्रामीण जीवन को स्थानीय रंगों में ढालकर प्रस्तुत किया जिससे आंचलिक उपन्यासों की धारा शुरू हुई। रेणु के अन्य उपन्यास हैं 'परती परिकथा' और 'दीर्घतपा'। रेणु की इस धारा को आगे बढ़ाया नागार्जुन, भैरव प्रसाद गुप्त, राजेन्द्र अवस्थी, रामदरश मिश्र, जगदीशचन्द्र आदि ने विवेकीराय, राही मासूम रज़ा, अब्दुल बिस्मल्लाह, राजेन्द्रयादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, कामतानाथ आदि हिन्दी को स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नए विषय, कथ्य और शैली के नए प्रयोग देने वाले उपन्यासकार हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के हिन्दी उपन्यासकारों में महिलाओं का आभूतपूर्व योगदान रहा। मन्नू भंडारी, कृष्णासोबती, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, निरुपमा सेवती, मालती जोशी, शिवानी, दीप्ति खंडेलवाल, कृष्णा अग्निहोत्री, शशिप्रभाशास्त्री, मेहरुन्निसा परवेज़, नासिरा शर्मा आदि ने हिन्दी उपन्यास लेखन को नया आयाम दिया।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सौ वर्षों के ऊपर के अपने विकास-क्रम में हिन्दी उपन्यास विचारधारा, विषय-वस्तु और भाषा-शैली की दृष्टि से निरंतर प्रगतिशील रहा है। इसमें समकालीन जीवन अपनी पूरी प्रामाणिकता के साथ चित्रित हुआ है। आज इस विकास में कई नए नाम जुड़े हैं जैसे विनोदकुमार शुक्ल, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, अलका सरावंगी आदि।

BRAOU

इकाई - 17 : निर्मला उपन्यास की कथावस्तु

17.1 उद्देश्य

17.2 पाठ एवं लेखक परिचय

17.3 मूल पाठ

17.4 सारांश

17.5 समीक्षा

17.6 शब्दार्थ

17.7 अभ्यास

17.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

17.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

17.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

17.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

17.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

17.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.1 उद्देश्य

इस पाठ में प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' की कथावस्तु दी गई है। इस पाठ के अध्ययन से आप-

- उपन्यास के कथानक से भली भाँति परिचित हो सकेंगे।
- कथा को क्रम से समझ सकेंगे।
- चरित्रों के विकास को समझ सकेंगे।
- प्रत्येक चरित्र से परिचित हो सकेंगे।

BRAOU

17.2 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द जी का यथार्थवादी उपन्यास 'निर्मला' है। समाज में स्त्रियों की दहेज जैसी कुप्रथा के कारण होनेवाली दुर्दशा का वर्णन इस उपन्यास में हुआ है। इस पाठ में 'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु दी गई है।

(आ) लेखक-परिचय

प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के उपन्यास-सम्राट कहे जाते हैं। उनका असली नाम धनपतराय श्रीवास्तव था।

उन्होंने अपना लेखनकार्य पहले उर्दू में प्रारंभ किया। उनका पहला उर्दू उपन्यास 'आवाजे-खल्क' सन् 1903 में प्रकाशित हुआ था। हिन्दी में उनका पहला उपन्यास 1907 में प्रकाशित हुआ जिसका नाम था 'प्रेमा'। प्रेमचन्द नाम से लेखक के रूप में उनका पहला परिचय मिला सन् 1911 में प्रकाशित कहानी 'बड़े घर की बेटी' से।

प्रेमचन्द ने एक नई राष्ट्रीय चेतना लेकर उपन्यास लिखने आरंभ किये थे। वे एक निष्ठावान लेखक थे। वे सक्रिय राजनीति से जुड़े नहीं किंतु अपनी कलम से वे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक तीनों मोर्चों पर आजीवन लड़ते रहे। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रीय चेतना ने एक संगठित शक्ति का रूप ग्रहण कर लिया था। भारतेन्दु काल में जो राष्ट्रीय जागरण केवल सांस्कृतिक सुधार तथा भारतीय गौरव के पुनरुत्थान के रूप में आरम्भ हुआ था, वह स्वराज्य स्थापना का रूप ग्रहण कर चला था। पारिणामत: साहित्य में भी हमें यही परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में निम्न वर्ग, मध्य वर्ग, किसान वर्ग और मज़दूर वर्ग के जीवन की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है और इन समस्याओं से उत्पन्न परिवारिक एवं व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं का सफल चित्रण किया है। जीवन के यथार्थ में उनकी पकड़ इतनी गहरी है कि जिन्दगी स्वयं उनकी कहानियों में बोलती है। गाँधीजी के नेतृत्व में चलनेवाले स्वाधीनता संग्राम के प्रत्येक कार्यक्रम जैसे स्वदेशी वस्त्र, असहयोग, हरिजन-उद्धार, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, लगानबंदी, साम्प्रदायिक एकता आदि कार्यक्रम ही प्रेमचन्द साहित्य की रीढ़ हैं।

प्रेमचन्द जी से पूर्व हिन्दी उपन्यास जीवन से दूर था। प्रेमचन्द ने उपन्यास को जीवन का मुख्य अंग मानकर उपन्यास के माध्यम से मानव-जीवन के विविध आख्यानों और कथनों पर प्रकाश डाला । उपन्यास को उन्होंने मानव-जीवन की व्याख्या का साधन बनाया। उन्होंने उपन्यास की व्याख्या करते हुए लिखा है-- "मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।"

प्रेमचन्द के उपन्यास हैं - प्रेमा, प्रतिज्ञा, सेवासदन, प्रेमाश्रम, निर्मला, रंगभूमि, कर्मभूमि, कायाकल्प, गबन, गोदान और मंगलसूत्र(अपूर्ण) उन्होंने लगभग 300 कहानियाँ लिखी हैं। उनके लिखे साहित्य, समाज और कला से संबंधित चिन्तनपूर्ण निबंध ऐतिहासिक दस्तावेज हैं। भाषा के क्षेत्र में प्रेमचन्द जी का महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने सरल, दैनिक बोलचाल की मुहावरेदार भाषा का प्रयोग किया है।

17.3 मूल पाठ

'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु निम्न प्रकार है :-

निर्मला के पिता बाबू उदयभानु के परिवार में उनकी पत्नी कल्याणी, बड़ी बेटी निर्मला, छोटी बेटी कृष्णा, के बाद बड़ा पुत्र चन्द्रभानु और छोटा पुत्र सूर्यभानु हैं। निर्मला के विवाह का प्रसंग चलता है। भालचंद्र सिन्हा के कृष्णा ज्येष्ठ पुत्र डॉ. भुवनमोहन के साथ विवाह निश्चित हो जाता है। भालचंद्र ने दहेज के रूप में कुछ निश्चित नहीं किया था अत: उदयभानु अच्छे से अच्छा विवाह करना चाहते थे किन्तु उनके पास जमापूँजी कुछ नहीं थी। इधर निर्मला भविष्य की चिन्ता में लीन हो जाती है और सोचते-सोचते उसे नींद आ जाती है। वह स्वप्न देखती है कि वह एक उमडती नदी के किनारे पार जाने के लिए नाव की प्रतीक्षा कर रही है। एक सुन्दर नाव आकर किनारे पर लगती है जब निर्मला उस पर चढ़ने के लिए पैर बढ़ाती है तो उस नाव का मल्लाह उसे ये कहकर रोक देता है कि ये नाव उसके लिए नहीं है और पीछे आने वाली नाव उसके लिए है। पीछे वाली नाव नाव नहीं एक छोटी सी डोंगी है। वह जर्जरित है। उसमें पाल, पतवार, मस्तूल तक नहीं है और उसका पेंदा फटा हुआ है। मल्लाह कहता है कि यह नाव तुम्हारे लिए ही भेजी गई है। निर्मला इस आशा में उस नाव पर सवार होती है कि शायद यह नाव उस पार पहुँच जाय। कुछ दूर चलकर नाव डगमगाने लगती है और उसमें पानी भरने लगता है। निर्मला मल्लाह के साथ दोनों हाथों से पानी उलीचती है। अन्तत: नाव डूब ही जाती है। निर्मला स्वप्न देखती हुई चिल्ला उठती है। आँख खुलने पर उसकी माँ सामने खड़ी हुई उसका कंधा हिलाती दिखाई पड़ती है। निर्मला का

यह स्वप्न औपन्यासिकता की दृष्टि से सुंन्दर और नाटकीय बन पड़ा है और साथ ही यह स्वप्न यह भी संकेत करता है कि इस कथानक का अंत दुखान्त होगा।

बाबू उदयभानु निर्मला के विवाह की तैयारी जोरों से करने लगे। रिश्तेदारों की भीड़ इकट्ठी हो गई। खर्चे का अनुमान 5 हजार से बढ़कर 10 हजार हो गया। निर्मला की माँ कल्याणी लड़कों के भविष्य की चिन्ता करके अधिक खर्च करने से बाबू उदयभानु को रोकना चाहती है। इस बात पर दोनों पति-पत्नी में तकरार इतनी बढ़ जाती है कि कल्याणी रात्रि में ही घर छोड़ कर चलने को उद्यत हो जाती है किन्तु पुत्रों का वात्सल्य उसे रोक देता है। इधर बाबू उदयभानु कल्याणी को नसीहत देने के लिए गंगा के किनारे अपना कुर्ता और उसमें परिचय कार्ड छोड़कर चार-पांच दिन के लिए मिज़पुर जाने का निश्चय करते है। उन्होंने सोचा था कि उनकी मृत्यु का समाचार फैल जायगा, पाँच दिन में कल्याणी की अक्ल ठिकाने आ जायगी और तब वे प्रकट होकर कल्याणी को चकित कर देंगे किन्तु वे यह नहीं जानते थे कि विधि-विधान से उनकी मृत्यु की घटना सत्य होने जा रही थी।

बाबू उदयभानु गंगातट की ओर रात्रि के अंधकार में बढ़े चले जा रहे थे कि इतने में तीन साल पहले डाके के अभियोग में सजा काटकर उसी दिन छूटा मतई नामक बदमाश अनुकूल अवसर देखकर उनके सिर पर लाठी जमाकर अपना बदला ले लेता है। उसकी लाठी से बाबू उदयभानु की तत्काल मृत्यु हो जाती है।

बोध प्रश्न : 1. बाबू उदयभानु की मृत्यु कैसे हुई ?

.....

.....

.....

बाबू उदयभानु की मृत्यु से सारी स्थिति ही बदल जाती है। भालचन्द्र सिन्हा दहेज न मिलने की स्थिति भाँप कर सम्बन्ध तोड़ देते हैं । सारे रिश्तेदार एवं सम्बन्धी चले जाते हैं। दुख और पश्चाताप में डूबी कल्याणी पंडित मोटेराम शास्त्री के हाथ पत्र भेजती है जिसे पढ़कर भालचन्द्र की पत्नी रंगीली बाई का मन पसीज जाता है किन्तु दहेज के लोभी भालचन्द्र और उनका पुत्र भुवनमोहन तिलभर भी नहीं पसीजते और विवाह सम्बन्ध करने से साफ़ इन्कार कर देते है।

भालचंद्र सिन्हा के मना कर देने पर कल्याणी के सम्मुख निर्मला का विवाह एक विषम समस्या बन कर खडा हो जाता है। वरों की कमी नहीं पर दहेज के अभाव में पंडित मोटेराम शास्त्री द्वारा लाये गये संबंधों में केवल एक संबंध को कल्याणी स्वीकार करती है और यह संबंध है पैतीस वर्ष के अधेड़ वकील मुंशी तोताराम का।

कल्याणी अपनी पंद्रह वर्ष की कन्या का विवाह तीन पुत्रों के पिता दुहेजू मुंशी तोताराम के साथ कर अपना बोझ उतार लेती है और पंद्रह वर्ष की निर्मला के सुकोमल कंधों पर एक अनचाहे परिवार का बोझ डाल देती है।

स्वप्न में आयी सुन्दर नाव निर्मला के लिये नहीं होती और पाल, पतवार, मस्तूल टूटे, पेंदा फटे डोंगी में निर्मला को सवार होना पड़ता है और यथार्थ में तीन पुत्रों के पिता, दुहेजू मुंशी तोताराम की डोली में निर्मला को सवार होना पड़ता है।

निर्मला विवाह के बाद ससुराल आती है जहाँ मुंशी जी के तीन पुत्र मंसाराम सोलह वर्ष, जियाराम बारह वर्ष और सियाराम सात वर्ष और मुंशी जी की विधवा बहन रुक्मिणी आदि रहते हैं। मुंशी जी निर्मला को प्रसन्न रखने के, लिए उसका सहज स्वाभाविक प्रेम प्राप्त करने के अनेक प्रयत्न करते हैं किन्तु आयु के अन्तर को मिटा नहीं पाते हैं। निर्मला को गृहस्वामिनी बना देते हैं, अब सारा रुपया पैसा सब निर्मला के हाथ में आ जाता है इससे

BRAOU

रुक्मिणी उससे चिढ़ती है और किसी न किसी बात को लेकर उस पर व्यंग्य कसते रहती है।

बोध प्रश्न : 2. रुक्मिणी किस बात से चिढ़ती है ?

.....

.....

.....

एक दिन जियाराम और सियाराम को पैसे माँगने पर रुक्मिणी निर्मला के पास भेज देती है। निर्मला मना कर देती है। सियाराम के कड़वे बोलों पर मुंशी तोताराम का मन जीतने के लिए सियाराम की खूब पिटाई कर देते हैं। इससे निर्मला सहम जाती है। बालक सियाराम को गोदी में लेकर रुक्मिणी के व्यंग्य बाणों से बचती हुई अपने कमरे में चली जाती है और वहाँ सियाराम को पुचकारते हुए परम तृप्ति का अनुभव करती है।

इधर मुंशी तोताराम उपहारों से निर्मला का हृदय जीतने में असफल होकर अपने मित्र नयनसुख की सलाह से युवा बनने का अभिनय करना आरम्भ कर देते हैं। बालों को काला करने और सुरमा आदि के प्रयोग से उनका कायाकल्प सा हो जाता है। किन्तु पेट को छुपा नहीं पाते। वे निर्मला को अपने साहस और शौर्य का किस्सा सुनाते हैं कि कैसे उन्होंने केवल छड़ी से ही तीन तलवारधारियों के छक्के छुड़ा दिये। वे अभी डींग मार ही रहे थे कि हाँफती हुई रुक्मिणी उसके कमरे में साँप निकलने की बात कहती है। मुंशी तोताराम के चेहरे का रंग उड़ जाता है। वे लोगों को बुलाने के लिए बाहर चले जाते हैं।

बोध प्रश्न : 3. मुंशी तोताराम की बहादुरी की पोल कैसे खुलती है ?

.....

.....

.....

इतने में भोजन पर बैठा मंसाराम उठ कर हॉकी के डण्डे से साँप को मार कर ले आता है। रुक्मिणी तोताराम से कहती है – ''देख ली तुम्हारी मर्दानगी'' निर्मला को सन्देह होने लगता है कि उसके पति को उन्माद तो नहीं हो गया है, परन्तु वह समझ जाती है कि उसका पति सारे स्वांग उसे प्रसन्न करने के लिए ही कर रहा है।

मुंशी जी के उन्माद को देखकर निर्मला उनकी प्रसन्नता के लिए अपने अन्तर्द्वन्द्व को रोककर पूर्ण आत्मीयता का व्यवाहर करने लगती है। वह मंसाराम से अंग्रेजी पढ़ना प्रारंभ करती है और इस बात को वह मुंशी तोताराम से छिपाती है क्योंकि वह अंग्रेजी में बातें करके मुंशी जी को चकित कर देना चाहती थी। मंसाराम के प्रति निर्मला का सहज वात्सल्य था।

वह उसके आने पर आनन्द एवं तृप्ति का अनुभव करती।

मुंशी तोताराम निर्मला और मंसाराम के संबंध को पाप-जनित शंका की दृष्टि से देखते हैं। उनका संदेह बढ़ता ही जाता है। वे मंसाराम को बोर्डिंग हाउस में रहने का आदेश देते हैं। मंसाराम के हृदय को आघाता लगता है। निर्मला भी मुंशी जी के संदेह को दूर करने के लिए मंसाराम के साथ ऊपर से कठोर व्यवहार करने लगती है। मंसाराम का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरने लगता है।

मंसाराम घर के वातावरण से इतना उद्विग्न हो जाता है कि स्कूल हेडमास्टर से मिलकर बोर्डिंग में रहने की व्यवस्था कर लेता है।

बोध प्रश्न : 4. मंसाराम कहाँ और क्यों चला जाता है ?

BRAOU

.....

.....

.....

निर्मला पर वज्रपात होता है, जाते समय मंसाराम निर्मला से मिलने भी नहीं आता, किन्तु निर्मला न कुछ कह पाती है और न कर पाती है।

मंसाराम के बोर्डिंग हाउस में चले जाने से घर सूना हो जाता है। निर्मला की उद्विग्नता बढ़ जाती है। वह जियाराम और सियाराम से प्रतिदिन मंसाराम की कुशलक्षेम पूछती है, छुट्टी के दिन घर आने के लिए कहला भेजती है किन्तु मंसाराम इस से क्षुब्ध हो उठता है। वह अपने भाइयों को डाँट देता है। नौकरानी भुंगी द्वारा लड्डू भेजे जाने पर वह नौकरानी पर बिगड़ जाता है। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य गिरने लगता है। उसे ज्वर जकड़ लेता है। सोचते-सोचते मंसाराम के हृदय में पिता का संदेह बिजली की भाँति चमक कर उजागर हो जाता है।

अब उसकी समझ में पिता के सम्मुख निर्मला का कठोर व्यवहार भी आ जाता है। अब मंसाराम को संसार से विरक्ति हो जाती है । असाध्य बीमारी से लड़ने के लिये उसे किसी युवा रक्त दिये जाने की सलाह डॉक्टर देते हैं। निर्मला को जैसे ही खबर मिलती है वह मुंशी जी की परवाह किये बिना अस्पताल पहुँचती है। वहाँ पति की जलीकटी बातें सुनकर भी वह अपना रक्त मंसाराम के लिए देने को उद्यत होती है । तभी मंसाराम आकर निर्मला की गोद में सिर रखकर उससे क्षमा माँगता है और प्राण त्याग देता है। मुंशी का निर्मला और मंसाराम के प्रति सन्देह दूर हो जाता है। वे निर्मला से कहते हैं - "आज तक तुम मेरे भोग की वस्तु थी, आज से भक्ति की वस्तु हो । मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया मुझे क्षमा करो।"

मुंशी जी को निर्मला के निर्दोष होने का विश्वास हो गया, पर कब ? जब तीर हाथ से निकल चुका था। पुत्र के वियोग में मुंशी तोताराम को अपना जीवन भार-स्वरूप लगने लगा। निर्मला को पति से सच्ची सहानुभूति थी। वह उनको प्रसन्न रखने का सतत प्रयास करती।

उपन्यासकार यहाँ तक निर्मला की करुणा भरी कहानी प्रस्तुत करने के पश्चात डॉ. भुवनमोहन सिन्हा और उसकी पत्नी सुधा की कहानी प्रारंभ कर देते हैं । इस अन्तराल से निर्मला और पाठकों को थोड़ा विश्राम मिलता है। यह कहानी भी निर्मला की कहानी का ही अंग बन जाती है ।

मंसाराम का इलाज डॉ. भुवनमोहन ने किया था। इस कारण मुंशी जी और उनमें मित्रता हो गई थी।

वे मुंशी जी को समझाया करते थे। निर्मला भी उनके घर कई बार हो आई थी। वह सुधा और डॉ. भुवनमोहन के सुखमय दाम्पत्य जीवन को देखकर उदास रहती है। सुधा को निर्मला से आत्मीयता हो गई थी।

निर्मला के गर्भ का आठवाँ महीना चल रहा है। उसे अपनी विषम स्थिति के साथ में अपनी छोटी बहन कृष्णा के विवाह की भी चिन्ता है। सुधा को मालूम हो जाता है कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ने दहेज के लालच में निर्मला का संबंध ठुकरा दिया था। हास्य व्यंग्य के आवरण में इस तथ्य को डॉ. सिन्हा पर प्रगट कर देती है और साथ ही उनको इस बात के लिए प्रेरित करती है कि वे निर्मला की छोटी बहन कृष्णा से अपने छोटे भाई का विवाह करा कर प्रायश्चित करें। डॉ. सिन्हा अपनी पत्नी की बात मान लेते हैं।

बोध प्रश्न : 5. सुधा डॉ. भुवनमोहन सिन्हा को किस बात के लिए प्रेरित करती है ?

.....

.....

.....

BRAOU

कुछ दिनों के अंतर से कई महत्वपूर्ण घटनाएँ एक साथ घटित होती हैं। निर्मला कन्या को जन्म देती है। निर्मला की छोटी बहन कृष्णा का विवाह डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के छोटे भाई से निश्चित होता है। मुँशी तोताराम का मकान नीलामी पर चढ़ जाता है। मुँशीजी ने महाजन से रुपये उधार लेकर एक गाँव रेहन रखा था परंतु न तो गाँव से लाभ हुआ और न वे महाजन को रुपया ही चुका पाये।

महाजन ने नालिश करके डिग्री करा ली और गहने बेच कर मकान बचाने का प्रस्ताव रखा, किन्तु मुंशी जी ऐसा करने के लिए सहमत नहीं हुए । पुत्री के जन्म से उन्हें वेदना हुई परन्तु निर्मला फूली न समाती थी । लड़की में मंसाराम को पाकर मुंशी जी पुन: हाथ-पाँव मारने लगते हैं ।

निर्मला कृष्णा के विवाह में माता के आग्रह पर एक महीना पहले ही मायके पहुँच जाती है । उसे इस बात का आश्चर्य था कि कृष्णा का विवाह उसी घर में किस प्रकार हो गया, जिस घर में दहेज के कारण उसे ठुकराया जा चुका है, परन्तु वह कृष्णा के सुख की कल्पना से प्रसन्न है । सुधा ने निर्मला के नाम से निर्मला की माँ को पाँच सौ रुपये भेज दिये थे ।

निर्मला के लिये ये सारी बातें रहस्य बनी हुई हैं, निर्मला को अभी तक यह नहीं मालूम कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ही वह व्यक्ति हैं जिनके साथ उसका विवाह सम्बन्ध छूट गया था और अब वे ही कृष्णा के होनेवाले जेठ और सुधा जिठानी हैं ।

विवाह के समय सारा घर मेहमानों से भर जाता है । बरात के आने पर नाई और मोटेराम शास्त्री से पूछने पर निर्मला को पता चलता है कि दूल्हे के बड़े भाई सुधा के पति ही हैं ।

बोध प्रश्न : 6. निर्मला को किस बात का पता चलता है ?

.....

.....

.....

BRAOU

अब निर्मला पर सुधा की कृपा का रहस्य खुल जाता है और यह रहस्य भी खुल जाता है कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ने दहेज के कारण उसका संबंध ठुकरा दिया था। सुधा अपने पति और निर्मला का सामना भी कर देती है।

कृष्णा के विवाह के पश्चात् मुंशी तोताराम चले जाते हैं । सुधा भी चली जाती है किन्तु निर्मला नहीं जाती। यहाँ बच्चों में ही उसका मन बहला रहता है। निर्मला के लिए अब ससुराल में कोई आकर्षण नहीं रह जाता । सुधा के कई बार पत्र लिखने पर भी निर्मला नहीं आई । एक दिन सुधा अपने पुत्र सोहन और नौकर को लेकर निर्मला के पास पहुँच जाती है और उसे जियाराम एवं सियाराम की उद्दण्डता तथा मुंशी तोताराम की करुण व्यथा की बात सुनाती है जिसे सुन कर निर्मला चिंतित हो उठती है । सुधा के बेटे की तबीयत बिगड़ने लगती है निर्मला की माँ 'नजर' कहकर डॉक्टर को न दिखाकर झाड़ फूँक करवाती है । तीन दिन के बाद सुधा के बेटे की मृत्यु हो जाती है ।

सुधा इस बीच अपने पति को पुत्र की बीमारी की सूचना भी नहीं दे पाती है । पुत्र के निधन पर वह पति से अपनी गलती की क्षमा माँगती है ।

मंसाराम की मृत्यु से लोग मुंशी तोताराम और निर्मला की आलोचना करने लगते हैं । कुछ लोग जियाराम और सियाराम के प्रति सस्ती सहानुभूति व्यक्त कर उन्हें अपने पिता और नई माँ के प्रति भड़काते हैं । मुंशी तोताराम की आमदनी भी दिन प्रतिदिन कम होने लगती है । घर की नीलामी के कारण उन्हें किराये के घर आ जाना पड़ता है । नौकरों में सब हटा दिये जाते हैं केवल भुंगी ही रह जाती है । बच्चों को आर्थिक तंगी का यह

वातावरण अखरने लगता है। बच्चे उद्दण्ड होते जाते हैं । जियाराम के व्यवहार से मुंशी जी शंकित एवं भयभीत रहते हैं । जियाराम एक दिन डॉ. सिन्हा के पास चला जाता है । डॉ. सिन्हा के समझाने पर वह घर आता है किन्तु मुंशी जी की बातों से वह फिर भड़क जाता है ।

बोध प्रश्न : 7. जियाराम कैसा बालक है ?

.....

.....

.....

मुंशी जी का चलाया हुआ थप्पड़ निर्मला के मुँह पर पड़ जाता है। घूँसा चलाने पर जियाराम उनका हाथ पकड़ लेता है। इस विषम वातावरण के कारण निर्मला की चिन्ता और अधिक बढ़ जाती है।

इन विषम परिस्थितियों में एक रात्रि निर्मला जियाराम को अपने कमरे से निकलते देखती है किन्तु उसे कोई सन्देह नहीं होता। सवेरे जब वह जियाराम से पूछती है तो जियाराम साफ मना कर देता है। दोपहर में सुधा के पास जाने के लिये जब वह भुंगी से गहनों की सन्दूकची मंगवाती है तब उसे गहनों की चोरी का पता चलता है। पूरी संदूकची ही गायब है। शाम में वह जियाराम से फिर पूछती है और रात में उसके कमरे से निकलने की बात कह देती है। इससे जियाराम झेंप जाता है और मन ही मन सोचने लगता है कि यदि डिब्बा उसके पास रहता तो वह उस डिब्बे को उसकी जगह ज्यों का त्यों रख देता किन्तु अब तो डिब्बा उसके दोस्तों के द्वारा सर्राफ की दुकान में पहुँच चुका और औने पौने दामों में बिक चुका।

इधर निर्मला सिर पीट लेती है। मुंशी जी को कचहरी से लौटते ही इस घटना की सूचना दे देती है किन्तु जियाराम को अपने कमरे से निकलते देखने की बात छुपा लेती है। मुंशी जी थाने में रिपोर्ट दर्ज करा देते हैं । थानेदार अंत में इस परिणाम पर पहुँचता है कि यह केवल घर के ही सदस्य का काम है। मुंशी जी मामला रफा दफा करने के लिए थानेदार अलीयार खाँ को 500 रु. की रिश्वत भी देते हैं किन्तु भयभीत जियाराम घर से निकल जाता है और लज्जा के कारण जहर खाकर मर जाता है।

बोध प्रश्न : 8. जियाराम जहर क्यों खाता है ?

.....

.....

.....

आभूषणों के चले जाने से निर्मला कठोर हो जाती है। पुत्री के भविष्य की चिन्ता उसके सामने है ।

वह हर खर्चे में कमी कर देती है। सौदों के लिए भी वह भुंगी के बदले सियाराम को ही भेजती है और मनमाफिक वस्तु न प्राप्त होने पर वह सियाराम को बार-बार बाजार भेजती है। मुंशी जी को कुछ कहने का साहस नहीं था। वे हर काम मशीन की भाँति करते थे। एक तो उनके पास मुकदमे कम आते थे और जो भी आते थे वे तैयारी के अभाव में हार जाते थे। उनकी आमदनी बहुत गिर गई थी। निर्मला की सारी कठोरता पुत्री के भविष्य के कारण थी। सियाराम घर के व्यवहार से तंग आ चुका था।

घी लाकर लौटाने, बनिये के न लेने और साधू रूपी ठग परमानन्द की सहायता से बनिये के ले लेने से सियाराम साधू रूपी ठग परमानन्द से प्रभावित हो जाता है। घर से वह पूर्ण विरक्त हो उठता है।

बोध प्रश्न : 9. सियाराम का मन घर से क्यों विरक्त हो उठता है ?

BRAOU

वह बगैर खाये पिये दिन भर उस साधू को पुनः मिलने का प्रयत्न करता है और अन्त में शाम के समय साधू के सात शहर छोड़ कर चला जाता है।

सियाराम के चले जाने से मुंशी तोताराम पूर्ण रूप से टूट जाते हैं। उनका आखरी सहारा भी चला जाता है। वे सियाराम के पलायन का दोषी निर्मला को मानते हैं और बिना कुछ खाये पिये सियाराम की खोज में सारे शहर में भटकते फिरते हैं परन्तु उसका पता नहीं चलता।

अंत में वे निराश होकर घर लौट आते हैं।

सियाराम के पलायन से मुंशी तोताराम का मन घर से उचट जाता है। वे शहर से बाहर जाकर सियाराम की खोज करने का निश्चय करते हैं। निर्मला के मना करने पर भी वह अपना बिस्तर लेकर सियाराम की खोज में शहर छोड़ कर चले जाते हैं।

सियाराम की खोज में गये हुए मुंशी तोताराम को एक महीना व्यतीत हो गया है। वे अभी तक लौट कर नहीं आये और न उनका कोई पत्र ही आया। निर्मला के सामने विषम परिस्थितियों का पहाड़ खड़ा हो जाता है। वह अपना मन बहलाने के लिये प्रायःसुधा के यहाँ चली जाया करती है। एक दिन सवेरे ही वह सुधा के यहाँ पहुँच जाती है। सुधा नदी-स्नान के लिए गई हुई थी। वह सुधा के कमरे में जाकर पलंग पर लेटकर पुस्तक पढ़ते हुए सुधा की प्रतीक्षा करती है। उसी समय अपनी ऐनक खोजते हुए डॉ. भुवनमोहन सिन्हा आ जाते हैं और उससे अनुचित छेड़छाड़ करते हैं। निर्मला तुरंत सुधा के घर से चल देती है। दरवाजे पर ही सुधा मिल जाती है किन्तु वह सुधा से बिना कुछ बोले चली जाती है। सुधा घर के भीतर आकर अपने पति से निर्मला के चले जाने का कारण पूछती है। संतोषजनक समाधान न पाकर सुधा अनुमान लगा लेती है कि उसके पति ने अवश्य ही ऐसा व्यवहार किया है जिससे निर्मला चली गई। वह तत्काल निर्मला के यहाँ पहुँच जाती है और निर्मला से सही कारण पूछती है। निर्मला रो-रोकर जो कुछ कहती है, उससे वह अपने पति के अनुचित व्यवहार का आभास पा लेती है और गुस्से में घर लौट जाती है।

बोध प्रश्न : 10. डॉ. सिन्हा निर्मला से अनुचित व्यवहार क्यों करते हैं ?

.....

.....

.....

निर्मला तीव्र ज्वर से पीड़ित हो जाती है। रुक्मिणी से उसे पता लगता है कि सुधा के पति डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ने जहर खाकर आत्महत्या कर ली है।

निर्मला पर वज्रपात होता है। वह इसका दोषी स्वयं को मानती हुई पश्चात्ताप और ग्लानि से भर जाती है। सुधा अब भी उसका समाधान करती हुई कहती है - "ईश्वर को जो मंजूर था, वह हुआ। ऐसे सौभाग्य से मैं वैधव्य को बुरा नहीं समझती। दरिद्र प्राणी उस धनी के समान कहाँ सुखी है जिसे उसका धन साँप बन कर काटने दौड़े।"

इसी समय डाक्टर सिन्हा के छोटे भाई और कृष्णा घर में प्रवेश करते हैं। घर में कोहराम मच जाता है।

सुधा अपने देवर के साथ चली जाती है। अब निर्मला के लिए मन बहलाने का भी कोई सहारा नहीं रहता। वह एक छोटा-सा मकान किराये पर लेकर रहने लगती है। निर्मला ज्वर में पड़ी हुई पूर्ण रूप से टूट जाती है ।

BRAOU

अब जीवन के प्रति उसका किंचित भी मोह नहीं रह जाता। वह बच्ची को रुक्मिणी के हाथों में सौंपती हुई कहती है--

''दीदीजी चाहे इसे कुँवारी रखिए चाहे विष देकर मार दीजिए किन्तु कुपात्र के साथ इसका विवाह न कीजिए।'' इतना कह कर निर्मला सदा के लिए नेत्र बंद कर लेती है।

बोध प्रश्न : 11. निर्मला बच्ची को किसके हाथों सौंपती है और क्या कहती है ?

.....

.....

.....

उसकी मृत्यु पर उपन्यासकार की ये पंक्तियाँ पाठक को झकझोर देती हैं - ''चौथे दिन संध्या के समय वह विपत्ति-कथा समाप्त हो गई। उसी समय जब पशु-पक्षियों के झुण्ड बसेरे की ओर लौट रहे थे, निर्मला का प्राण-पक्षी भी दिनभर शिकारियों के निशानों, शिकारी चिड़ियों के पंजों और वायु के प्रचण्ड झोंकों से आहत और व्यथित अपने बसेरे को उड़ गया।''

मुहल्ले के लोग इकट्ठे हो जाते हैं। यह प्रश्न उठता है कि कौन दाह देगा ? मुखाग्नि कौन करेगा? इसी समय एक बूढ़ा पथिक एक बकुचा लटकाये आ खड़ा हो जाता है। यह मुंशी तोताराम थे । यहीं उपन्यास समाप्त हो जाता है।

17.4 सारांश

'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द ने भारतीय समाज की उन कुरीतियों का यथार्थ चित्रण किया है जिनके कारण एक दो व्यक्ति नहीं बल्कि तीन-तीन परिवार अपना सुख चैन गँवा बैठते हैं।

निर्मला में तीन परिवारों की कहानी है। उदयभानुलाल का परिवार, मुंशीजी का परिवार तथा भालचंद्र सिन्हा का परिवार । उदयभानुलाल सम्पन्न प्रतिभावान वकील हैं। उनके परिवार में मुख्य रूप से उनकी पत्नी कल्याणी, बड़ी बेटी निर्मला, छोटी बेटी कृष्णा, कृष्णा से छोटे दो भाई चन्द्रभानु और सूर्यभानु हैं। उदयभानुलाल की सम्पन्नता को देखकर ही भालचन्द्र सिन्हा अपने बेटे डॉ. भुवनमोहन का विवाह निर्मला से इसी उम्मीद पर करना चाहते हैं कि बिन माँगे ही उन्हें बहुत दान दहेज मिलेगा। घटनाक्रम कुछ यूँ बदलता है कि विवाह से एक महीना पहले वकील उदयभानुलाल अपनी पत्नी से झगड़ कर पत्नी को मजा चखाने घर से बाहर चले जाते हैं । दुर्भाग्य से घर से दूर जाने के बाद ही एक सजायाफ़ता गुण्डे के हाथों मारे जाते हैं। यहीं से इस उपन्यास की कथा एक कारुणिक मोड़ लेती है। पिता के अभाव में पुत्री का विवाह करना हिन्दू विधवा के लिए अत्यन्त कष्टप्रद है। निर्मला की माँ कल्याणी भी इस चिन्ता से ग्रस्त हो जाती है। वकील साहब के न रहने पर भालचन्द्र सिन्हा और उनके पुत्र भुवनमोहन को यह विश्वास हो जाता है कि अब उन्हें दान-दहेज नहीं मिलेगा। अतः वे यह रिश्ता तोड़ देते हैं। इस संबंध के टूटने से वैधव्य से दुखी कल्याणी का हृदय और भी दुखी हो जाता है। वे एक हृदयद्रावक पत्र देकर पं. मोटेराम शास्त्री को भेजती हैं किन्तु भालचंद्र सिन्हा अपनी पत्नी रंगीली बाई के कहने पर भी इस प्रस्ताव को ठुकराते हुए अपनी जिद पर अड़े रहते हैं । पण्डित जी से सब हाल सुनकर कल्याणी भालचन्द्र को गालियाँ देते हुए पण्डितजी को अन्य संबंध देखने के लिए कहती है और पण्डितजी के लाए हुए पाँच रिश्तों में से बिना दहेज के दुहाजू वर मुंशी तोताराम के साथ वे निर्मला का विवाह पक्का करती है। यद्यपि कल्याणी के पास एक दो हजार दहेज देकर भी विवाह करने के लिए यथेष्ट धन था किन्तु कल्याणी बेटों को भली प्रकार से शिक्षित करने के लिए बचाकर रखती है और इस प्रकार दहेज की वेदी पर पन्द्रह वर्ष की निर्मला पैंतीस वर्ष के तोताराम के लिए बलि चढ़ जाती है।

BRAOU

दहेज से ही जुड़ी दूसरी समस्या अनमेल विवाह की है। हिन्दू समाज में अनमेल विवाह की घटना साधारण सी बात है। निर्मला पिता की मृत्यु से आहत है ही, उस पर विधुर एवं बड़ी उम्र के पति को पाकर और भी व्याकुल हो जाती है किन्तु पिंजरे के पक्षी की भाँति पंख फड़फड़ाकर रह जाती है। भाग्य को सर्वोपरि मानकर निर्मला परिस्थितियों से समझौता करती है और घर परिवार के कामों में रुचि लेकर जीवन काट देने का निश्चय करती है।

मुंशी तोताराम निर्मला को प्रसन्न रखने के लिए आभूषण, नये वस्त्र एवं मिठाइयों के तोहफे देता है और तरह-तरह की औषधियों से तथा अपने साथियों की नेक सलाहों से स्वयं को युवा रखने एवं दिखाने की चेष्टा करता है। किन्तु निर्मला तोताराम को पितृतुल्य समझ उन्हें केवल सम्मान ही देती है। उसके मन में अन्य कोई भावना आती ही नहीं।

मुंशी तोताराम को पहली पत्नी से तीन पुत्र हैं - मंसाराम आयु 16 वर्ष, जियाराम 13 वर्ष और सियाराम 10 वर्ष। निमला इन तीनों से स्नेह और ममत्वपूर्ण व्यवहार करती है तथा इन तीनों से अपना मन बहलाव करती है। मंसाराम से वह अंग्रेजी पढ़ने लगती है किन्तु इस बात से अनजान मुंशी तोताराम निर्मला को बेटों के साथ हँसते बोलते देखकर उन पर शक करता है और मंसाराम को बिना किसी ठोस प्रमाण के छात्रावास भेज देता है। निर्मला की ननंद रुक्मिणी को इस प्रकार बेटे को छात्रावास भेजने में विमाता की बू आती है। मुंशी और रुक्मिणी अपनी अपनी धारणाओं के कारण निर्मला के प्रति क्रूर हो उठते हैं। निर्मला मुंशी तोताराम के भाव को ताड़ जाती है और मंसाराम से बात बंद कर देती है।

मंसाराम माता-पिता के इस व्यवहार से दुखी हो जाता है। जब उसे पिता द्वारा अपने चरित्र पर संदेह किये जाने की बात मालूम होती है तो वह मानसिक रूप से रुग्ण होकर घुलने लगता है। निर्मला तोताराम के डर से उससे मिलने अस्पताल भी नहीं जाती। किन्तु जब मंसाराम की हालत बहुत बिगड़ जाती है तब वह तोताराम की परवाह किये बिना मंसाराम को अपना रक्त देकर बचा लेने के इरादे से अस्पताल चली जाती है जहाँ तोताराम बिना उसका आशय जाने उसे जली कटी सुनाता है। इतने में मंसाराम झूठे लांछन की पीड़ा और स्नेहमयी विमाता निर्मला के प्रति पिता का क्रूर व्यवहार देखकर जीवन से ही मुक्त होना चाहता है। अस्पताल में निर्मला के चरण छूकर माफी माँग कर निर्मला की गोद में ही वह प्राण त्याग देता है। मुंशी तोताराम को अपनी गलती का एहसास होता है। बेटे की मृत्यु से जैसे उनकी कमर ही टूट गई। दुख और पश्चात्ताप से भरा मन और बढ़ती आयु लेकर वकालत कब तक चलती? आर्थिक अभाव के कारण परिवार में तनाव और परस्पर वैमनस्य बढ़ने लगता है। नौकरों में सब को हटाकर केवल भुंगी को ही रख लिया जाता है। मंसाराम की मृत्यु को एक साल बीतते न बीतते निर्मला एक बच्ची की माँ बन जाती है और बच्ची के रूप में अपने पुत्र मंसाराम को मुंशी जी फिर से पा लेते हैं।

अस्पताल में मंसाराम की देखभाल करनेवाले डॉ. सिन्हा से मुंशी तोताराम की आत्मीयता बढ़ जाती है और जब दोनों को ये पता चलता है कि उन दोनों का घर पास-पास ही है तो दोनों के परिवारों में घनिष्ठता बढ़ जाती है। डॉ. सिन्हा की पत्नी सुधा और निर्मला में स्नेह इतना बढ़ जाता है कि दोनों अपने-अपने हृदय का रहस्य एक दूसरे के सम्मुख खोल देती हैं जिससे सुधा को यह पता चलता है कि दहेज के कारण ही निर्मला का रिश्ता उसके पति डॉ. भुवनमोहन सिन्हा से टूट गया था और जब डॉ. सिन्हा को अपनी पत्नी सुधा द्वारा पता चलता है कि यही वो निर्मला है जिसे उन्होंने दहेज के लालच में छोड़ दिया था तो उन्हें बहुत दुख होता है और वे पश्चातापस्वरूप अपने छोटे भाई का विवाह निर्मला की छोटी बहन कृष्णा से बिना दहेज लिए कर देते हैं। इस विवाह के पश्चात् निर्मला के मायके में ही सुधा अपने एकमात्र पुत्र सोहन को झाड़-फूँक और नजर के चक्कर में बिना डॉक्टर या वैद्य से इलाज करवाये खो बैठती है। कुछ दिनों बाद निर्मला से एकांत में अपनी दबी इच्छा को अभिव्यक्त कर और बाद में सुधा द्वारा प्रताड़ित होकर डॉ. सिन्हा आत्महत्या कर लेते हैं। निर्मला इसके लिए भी स्वंय को दोषी ठहराती है।

BRAOU

घर की बिगड़ती आर्थिक स्थिति से जियाराम एक दिन निर्मला के गहनों का डिब्बा चुरा लेता है और मित्रों द्वारा उन्हें औने पौने दामों में बिकवा देता है। भेद खुलने पर घर से भाग कर जहर खाकर आत्महत्या कर लेता है। निर्मला ऐसी स्थिति में कतर ब्योंत के साथ घर चलाने लगती है। अब उसका एक मात्र लक्ष्य है अपनी बेटी के दहेज के लिए धन एकत्रित करना जिससे वह अपनी पुत्री का विवाह उसके समवयस्क, मनपसन्द वर के साथ कर सके। इसी कारण वह मुंशी तोताराम के छोटे पुत्र सियाराम को कई बार बाजार भेजती है जिससे तंग आकर सियाराम घर छोड़कर साधुओं के साथ निकल जाता है।

दो-दो पुत्रों की मृत्यु से टूटे मुंशी तोताराम अपने छोटे पुत्र सियाराम की खोज में निकल पड़ते हैं। घर पर निर्मला, रुक्मिणी और निर्मला की बेटी ही रहते हैं। इन सारी घटनाओं ने रुक्मिणी को निर्मला के प्रति सदय बना दिया है। घर की हालत बिगड़ती जा रही थी। निर्मला के लिए जीवन अब असह्य हो उठा और एक दिन वह चिर निद्रा में सो गयी। मरते समय निर्मला अपनी बेटी के लिए रुक्मिणी से कहती है कि – ''दीदीजी, चाहे इसे कुंवारी रखिए, चाहे गला घोंट कर मारिए किन्तु अपात्र के साथ इसका ब्याह न करना।''

निर्मला के दाह संस्कार के लिए अत्यन्त फटे मैले कपड़ों में एक बूढ़ा आ खड़ा होता है और यह बूढ़ा है मुंशी तोताराम।

इस प्रकार दहेज एवं अनमेल विवाह से उभरने वाले प्रौढ़ पति एवं नवयौवना पत्नी के परस्पर संबंध एवं संदेहों को प्रेमचन्द ने चित्रित किया है।

17.5 समीक्षा

निर्मला उपन्यास करुणांत है। निर्मला की चिता में आग लगवाकर मानो उपन्यासकार कुत्सित दहेज-प्रथा और अनमेल विवाह की प्रथा भस्म कर डालने का संदेश देता है। कथानक में एक साथ कई आत्महत्याएँ और मृत्युओं का ताँता है। इससे कथानक अतिरंजित लगने लगता है परंतु उपन्यास का पाठक पर तीव्र और करुण प्रभाव पड़ता है।

कथावस्तु की दृष्टि से यह उपन्यास प्रेमचन्द के छोटे उपन्यासों में से एक है। प्रेमचन्द की प्रवृत्ति है उपन्यासों में व्यक्ति और समाज का व्यापक चित्रण करना। इसलिए उनके उपन्यास बड़े होते हैं, उनमें अपने युग की तस्वीर होती है, सामजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याओं का पूरा जाल होता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में कई चरित्र होते हैं। ये चरित्र समाज के अलग-अलग वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन 'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द जी ने कथावस्तु को बहुत बिखरने नहीं दिया है। इसमें उन्होंने एक ही समस्या पर जोर दिया है और वह है दहेज प्रथा और अनमेल विवाह। इसी समस्या को केन्द्र में रखते हुए इसके भयंकर परिणामों का चित्रण उन्होंने किया है। 'निर्मला' उपन्यास में पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण भी इसकी कथावस्तु को प्रभावशाली बनाता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु सुगठित, सुनियोजित है, इसमें एक सहज विकास है।

17.6 शब्दार्थ

कुप्रथा	–	खराब रिवाज, ऐसे रीति-रिवाज जो हानि पहुँचाने वाले हों।
पुनरुत्थान	–	फिर से उठना, फिर से उन्नति करना
जर्जरित	–	टूटी-फूटी, कमजोर
औपन्यासिकता	–	उपन्यास लिखने की कला, उपन्यास की विशेषता
उद्यत	–	तैयार

BRAOU

नसीहत	–	सबक, शिक्षा
विधि विधान	–	ईश्वर की इच्छा या योजना
तिल भर भी नहीं पसीजना	–	जरा भी दया नहीं दिखाना
दुहेजू	–	जिसका पहले विवाह हो चुका हो और दुबारा होने वाला हो
स्वांग	–	नकल, अभिनय
आघात	–	चोट
उद्विग्न	–	बेचैन
वज्रपात	–	बिजली गिरना (दुख और चिन्ता होना)
क्षुब्ध	–	क्रोधित और दुखी
असाध्य	–	जो सध न सके, जो ठीक न हो सके
हास्य-व्यंग्य के आवरण में	–	हँसी-मजाक में
नालिश	–	दावा, मुकदमा
उद्दण्ड	–	जिद्दी
आहत	–	घायल (दुखी)

17.7 अभ्यास

17.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

(1) 'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु संक्षेप में अपने शब्दों में बतलाइए ।

(2) ''निर्मला उपन्यास की कथावस्तु अनावश्यक चित्रणों से परे है । यह सीधा-सादा सरल और रोचक लघु उपन्यास है'' – इस कथन की व्याख्या कीजिए ।

(3) 'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु की विशेषताएँ बतलाइए ।

17.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

(1) सिद्ध कीजिए कि 'निर्मला' एक यथार्थवादी उपन्यास है ।

(2) 'निर्मला' उपन्यास में चित्रित मध्यम वर्ग की दुर्दशा पर प्रकाश डालिए ।

(3) ''निर्मला' उपन्यास की रचना भारतीय स्त्री को दृष्टि में रखकर की गई है'' – इस कथन का प्रतिपादन कीजिए ।

(4) 'निर्मला' उपन्यास की प्रमुख समस्या क्या है ?

17.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

17.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न ''निर्मला उपन्यास की कथावस्तु अनावश्यक चित्रणों से परे है। यह सीधा-सादा, सरल और रोचक लघु उपन्यास है'' इस कथन की व्याख्या कीजिए।

BRAOU

उत्तर : प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों की तुलना में 'निर्मला' छोटा उपन्यास है। छोटा होने पर भी यह अत्यंत रोचक और परिपूर्ण उपन्यास है । प्रेमचन्द ने स्वयं इस उपन्यास में अपनी लेखन-शैली का अलग रंग दिखाया है। प्रेमचन्द समाज से जुड़कर समाज के लिए लिखने वाले कथाकार थे। इसलिए उनेक उपन्यासों में उनके समय की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियों का चित्र मिलता है। उनके उपन्यासों में कई सामस्याएँ, कई स्थितियाँ और पात्र होते हैं। ऐसा इसलिए कि उपन्यास को वे ''मानव चरित्र का चित्र'' समझते हैं। इन कई समस्याओं और स्थितियों का चित्रण करने और इन चरित्रों को निभाने में उनके उपन्यासों में लम्बे-लम्बे वर्णन, लम्बे-लम्बे संवाद और स्थितियों के विस्तृत विवरण होते हैं। लेकिन 'निर्मला' उपन्यास में लेखक ने केवल एक समस्या पर ध्यान केन्द्रित किया है, कहानी उसी एक समस्या को लेकर लिखी गई है इसलिए पात्रों की संख्या भी सीमित है। प्रेमचन्द जी ने इस उपन्यास में वातावण भी उन्ही स्थितियों का चित्रित किया है जो मुख्य कहानी से जुड़े हुए हैं। उपन्यास की मुख्य कथा के साथ केवल एक सहायक कथा है डॉ. भुवनमोहन और सुधा की। ये दोनों चरित्र मुख्य कथा में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इसके अलावा मंसाराम और जियाराम व सियाराम का प्रसंग भी अनावश्यक विस्तार से बचा है। इस उपन्यास में स्पष्ट रूप से लेखक ने केवल निर्मला की त्रासदी और उसके माध्यम से भारतीय नारी मात्र की त्रासदी पर अपना ध्यान केन्द्रित रखा है।

17.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : 'निर्मला ' में चित्रित मध्यम वर्ग की दुर्दशा पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : 'निर्मला' में भारतीय मध्यमवर्ग की सामजिक, दुर्वस्था पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। निर्मला एक मध्यम वर्गीय परिवार की कन्या है जिसका अनमेल विवाह केवल इसलिए होता है कि उसकी विधवा माँ के पास देने के लिए दहेज नहीं है। दहेज देने की मजबूरी और लेने का लालच मध्यवर्ग के पढ़े लिखे लोगों में है। डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के पिता अपने बेटे की पूरी कीमत वसूल करना चाहते हैं, स्वय डॉक्टर दहेज चाहता है। मुंशी तोताराम जैसे शिक्षित व्यक्ति भी केवल अपने विलास के लिए एक किशोरी से विवाह करते हैं। अंधविश्वास का शिकार पढ़ा लिखा वर्ग भी है। सुधा अपने बेटे की बीमारी का इलाज नहीं करवाती यह सोचकर कि उसे 'नजर' लग गई है। और बच्चे की मृत्यु हो जाती है। तोताराम का छोटा बेटा सियाराम साधू के बहकावे में आ जाता है। आर्थिक दृष्टि से भी वे ही लोग सुखी हैं जो खूब रिश्वत लेते हैं, धोखा-धड़ी करते हैं और मुनाफा कमाते हैं। इस तरह मध्य वर्ग की सामाजिक-आर्थिक दुर्वस्था और भी स्त्री की दयनीय स्थिति का इसमें चित्रण किया गया है।

BRAOU

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. तीन साल पहले डाके का अभियोगी समय देख कर रात के अंधेरे में बाबू उदयभानुलाला के सिर पर लाठी जमाकर अपना बदला ले लेता है और बाबू उदयभानु की मृत्यु हो जाती है।
2. निर्मला को गृहस्वामिनी बना कर सारा रुपया पैसा उसके हाथ में दे देने से रुक्मिणी चिढ़ जाती है।
3. अचानक रुक्मिणी के साँप-साँप कहते घुसने से मुंशी तोताराम घबराकर लोगों को बुलाने बाहर चले जाते हैं। इस प्रकार उनकी बहादुरी की पोल खुल जाती है।
4. मंसाराम बोर्डिंग में रहने की व्यवस्था कर लेता है और वहीं चला जाता है। क्योंकि वह अपने पिता की नाराजगी समझ जाता है।
5. सुधा को मालूम हो जाता है डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ने ही निर्मला का संबंध दहेज के लालच में ठुकरा दिया था सुधा उन्हें यह बात बताकर उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करती है कि वो उनके भाई का विवाह निर्मला की बहन के साथ बिना दहेज के कर प्रायश्चित कर लें।

6. बरात के आने पर नाई और पंडित मोटेराम शास्त्री से पूछने पर निर्मला को पता चलता है कि सुधा और डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ही वर के भैया भाभी हैं और भुवनमोहन सिन्हा ही वो व्यक्ति हैं जिन्होंने दहेज के लालच में उसका संबंध ठुकरा दिया था।

7. जियाराम किशोर वय का बालक है जो डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के समझाने पर सुधर जाता है किंतु मुंशी जी के पुराने व्यवहार से फिर बिगड़ जाता है।

8. थानेदार से भयभीत होकर और लज्जा के कारण जियाराम जहर खा लेता है।

9. बार-बार सौदे लौटाकर आने और स्कूल में अनुपस्थिति पड़ने से सियाराम का मन घर से विरक्त हो उठता है।

10. निर्मला से अनुचित व्यवहार डॉ. भुवनमोहन सिन्हा इसलिए करते हैं कि वे उसके प्रति आकर्षित थे।

11. निर्मला बच्ची को रुक्मिणी के हाथों सौंपती हुई कहती है - ''दीदी जी चाहे इसे कँवारी रखिए चाहे विष देकर मार दीजिए किंतु कुपात्र के साथ इसका विवाह न कीजिए।''

17.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. निर्मला - प्रेमचंद

BRAOU

इकाई-18 : 'निर्मला' उपन्यास में चित्रण

18.1 उद्देश्य

18.2 पाठ एवं लेखक परिचय

18.3 मूल पाठ

18.4 सारांश

18.5 समीक्षा

18.6 शब्दार्थ

18.7 अभ्यास

18.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

18.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

18.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

18.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

18.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

18.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

18.1 उद्देश्य

इस पाठ में प्रेमचन्द के 'निर्मला' उपन्यास के पात्रों के चरित्र चित्रण पर प्रकाश डाला गया है । इस पाठ के अध्ययन से आप-

- उपन्यास के प्रमुख पात्रों की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे ।
- प्रत्येक पात्र के चरित्र की नाटकीय भूमिका को समझ सकेंगे ।
- पात्रों के चरित्र चित्रण से लेखक के उद्देश्य को भली भाँतिसमझ सकेंगे।

18.2 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

इस पाठ में 'निर्मला' उपन्यास के निम्नलिखित पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है ।

1. निर्मला के पितृगृह से संबंधित पात्र -
   निर्मला, बाबू उदयभानुलाल (निर्मला के पिता),
   कल्याणी (निर्मला की माँ), कृष्णा (निर्मला की छोटी बहन),
2. निर्मला के पतिगृह से संबंधित पात्र -
   मुंशी तोताराम (निर्मला के पति), मंसाराम, जियाराम, सियाराम (मुंशी तोताराम के पुत्र)
   रुक्मिणी (मुंशी तोताराम की बहिन)

RPAOU

3. सहायक कथा के पात्र –

बाबू भालचंद्र सिन्हा, डॉ. भुवनमोहन सिन्हा, सुधा।

4. अन्य पात्र –

ऊपर लिखित सभी पात्रों का कथानक में महत्व है और वे कथानक को विकसित करनेवाले तथा निर्मला के चरित्र को प्रकाशित करनेवाले हैं।

(आ) लेखक-परिचय (देखिए इकाई 17.2)

18.3 मूल पाठ

(1) प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण

(अ) निर्मला

प्रेमचन्द जी का उपन्यास 'निर्मला' नायिका प्रधान है और इसकी नायिका निर्मला है। समाज में व्याप्त दहेज की कुप्रथा पर प्रेमचन्द जी ने निर्मला का बलिदान देकर इस उपन्यास को यथार्थवादी बना दिया है। निर्मला की मृत्यु और उसकी मृत्यु पर उसकी चिता में आग लगवा कर उपन्यासकार जैसे दहेज की कुप्रथा के भस्म होने का संकेत करता है।

'निर्मला' उपन्यास की प्रत्येक घटना और प्रत्येक पात्र की गतिविधियों का केन्द्र निर्मला ही है। निर्मला के पिता बाबू उदयभानु उसके विवाह की धूम-धाम से तैयारी करते हैं किन्तु उनकी आकस्मिक मृत्यु ने सब कुछ बदल दिया। दहेज देने में असमर्थ निर्मला की माँ के बारे में सोचकर दहेज के लालची भालचंद्र सिन्हा अपने बेटे डॉ. भुवनमोहन सिन्हा का भी बिना दहेज के इस घर से विवाह संबंध करना पसंद नहीं करते। निर्मला की माँ कल्याणी ऐसी अवस्था में निर्मला का विवाह तीन बच्चों के पिता अधेड़ मुंशी तोताराम से कर देती है। निर्मला के सुखद दाम्पत्य जीवन का सपना टूट जाता है और उसे अपने पिता की आयु वाले पुरुष के साथ जीवन बिताने के लिए विवश होना पड़ता है किन्तु निर्मला बड़े आत्म संयम से हृदय की उद्दण्ड अभिलाषाओं का दमन करती है।

नवयुवती निर्मला अपने चरित्र पर आँच नहीं आने देती है। वह पत्नी के कर्तव्य का पालन बड़ी ईमानदारी से निभाती है। निर्मला को प्रसन्न करने के लिए उसका पति जो जवान होने का स्वांग करता है इससे उसे पति की स्थिति पर दया आती है और वह उसके सुख दुख की साथिन बनने का प्रयास करती है।

विवाह से पूर्व निर्मला ने स्वप्न में निर्णय लिया था – "यहाँ अकेले पड़ी रहने से नाव में बैठ जाना फिर भी अच्छा है। किसी भयंकर जन्तु के पेट में जाने से तो यही अच्छा है कि नदी में डूब जाऊँ।" निर्मला अपने इस निर्णय का आजीवन पालन करती है।

निर्मला का हृदय वात्सल्य से भरा हुआ है। वह सपत्नी-पुत्रों को अपने पुत्रों जैसा ही प्यार करती है। फिर भी उसे अपनी ननद रुक्मिणी के व्यंग्य बाणों का सामना करना पड़ता है। मुंशी तोताराम का बड़ा पुत्र मंसाराम उसकी ही आयु का है। उससे हँसने बोलने में हम उम्र से बात करने की स्वाभाविक इच्छा पूरी होती है इसलिए वह उससे अंग्रेजी सीखती है किन्तु वह कलुषित प्रेम की बात सोचती भी नहीं।

निर्मला का दुर्दैव उसका पीछा नहीं छोड़ता। उसका पति उसके और मंसाराम के सहज वात्सल्य जन्य स्नेह को कलुषित दृष्टि से देखता है। पति की यह शंका उसे भीतर ही भीतर घुलाने लगती है। इस शकों को दूर करने के लिए मंसाराम अपने प्राणों का बलिदान कर देता है। मंसाराम की मृत्यु उसके जीवन को तोड़ देती है। पति की आय में कमी होने से, मकान नीलाम हो जाने से और पुत्री के जन्म लेने से निर्मला के स्वभाव में

परिवर्तन होता है वह एक-एक पैसा बचाने का प्रयास करती है । जियाराम का उसके गहनों की सन्दूकची चुरा लेना और फिर आत्महत्या कर लेना, सियाराम का नकली साधू के साथ घर से चला जाना और पति का उसकी खोज में चल देना आदि घटना-चक्र निर्मला के जीवन को शून्य कर देता है ।

निर्मला को एक मात्र सहारा सुधा का रह जाता है । दुर्भाग्य से सुधा का घर भी अब उसके लिए सुरक्षित नहीं रह पाता है । सुधा का पति वास्तव में वही व्यक्ति हैं जिसने दहेज के लालच में निर्मला से संबंध तोड़ लिया था, बाद में निर्मला के बारे में जान कर और उसकी सुन्दरता को देखकर एक दिन अकेले में वह निर्मला को छेड़ता है और सुधा के फटकारने पर वह आत्महत्या कर लेता है । सुधा अपने देवर के घर चली जाती है और निर्मला सर्वथा निराश्रित रह जाती है । वह रोग शय्या पर पड़ जाती है और अंत में उसके जीवन का दीप टिमटिमाकर बुझ जाता है। उसका पति तब घर लौटता है जब यह प्रश्न उठता है कि उसकी चिता में आग कौन लगाये ?

बोध प्रश्न : 1. निर्मला का विवाह किसके साथ होता है ?

.....

.....

.....

(आ) सुधा

इस प्रकार निर्मला का चरित्र समाज में दहेज की कुप्रथा पर बलिदान हो जानेवाली नारी का चरित्र है ।

'निर्मला' उपन्यास में हृदयग्राही दूसरा चरित्र सुधा का है । सुधा डॉ. भुवनमोहन सिन्हा की पत्नी है ।

डॉ. भुवनमोहन सिन्हा वह व्यक्ति हैं जो बाबू उदयभानुलाल की आकस्मिक मृत्यु से दहेज न मिलने की आशंका से निर्मला से निश्चित किये हुए संबंध को तोड़ देते हैं और अधिक दहेज के लालच में सुधा से विवाह करते हैं। मंसाराम की अस्वस्थता के कारण उसकी चिकित्सा डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ही करते हैं और इसी बीच उनकी आत्मीयता मुंशी तोताराम से अधिक बढ़ जाती है जो पारिवारिक मित्रता में बदल जाती है। इस कारण निर्मला सुधा की प्राणप्रिय सहेली बन जाती है। निर्मला से उसकी कथा सुनकर सुधा समझ जाती है कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा ने दहेज के लालच में उससे विवाह किया है और इस कारण निर्मला को अपने पिता की आयु वाले विधुर मुंशी तोताराम से विवाह करना पड़ा। अत: निर्मला की सच्चे हृदय से सब प्रकार से सहायता करने का सुधा दृढ़ निश्चय करती है। सुधा अपने देवर का विवाह बिना दहेज लिए निर्मला की छोटी बहन कृष्णा से करवा देती है और निर्मला की माँ के पास निर्मला के नाम से पाँच सौ रुपयों का मनीआर्डर भी भेज देती है।

बोध प्रश्न : 2. सुधा निर्मला की सहायता किस प्रकार करती है ?

.....

.....

.....

सुधा की स्थिति उपन्यास की नायिका निर्मला के चरित्र के सहायक के रूप में है। सुधा अपनी स्निग्धता और सहानुभूति से निर्मला का मन बहलाती रहती है और यथाशक्ति सहायता भी करती रहती है। सुधा ने सर्वत्र आत्मबल और साहस का परिचय दिया है। अपने पति के प्रति उसका निम्नलिखित कथन स्पष्ट है -"बूढ़ा आदमी सोचता है मुझे सारा खर्च संभालना पड़ेगा, कन्यापक्ष से जितना ऐंठ सकूँ उतना ही अच्छा । मगर यह वर का धर्म है कि यदि वह स्वार्थ के हाथों बिलकुल बिक नहीं गया है तो वो अपने आत्मबल का परिचय दे, अगर

© BRAOU

उस कालिमा को धो दूँगा।''

अस्पताल में निर्मला मंसाराम को बचाने के लिए अपना रक्त देने के लिए तैयार होती है। डॉक्टर, रक्त निकालने की चेष्टा कर ही रहा था कि मंसाराम अपने उज्जवल चरित्र की अंतिम झलक दिखा कर इस से विदा हो जाता है।

बोध प्रश्न : 5. मंसाराम को बचाने के लिए कौन अपना रक्त देने के लिए तैयार होता है ?

.....

.....

.....

(2) सहायक पात्रों का चरित्र चित्रण

(उ) कल्याणी

कल्याणी बाबू उदयभानुलाल जी की पत्नी और नायिका निर्मला की माँ है। बाबू उदयभानुलाल की अच्छी आमदनी है। जिसके कारण रिश्तेदार भी बहुत सारे उनके घर में आकर रहते थे। निर्मला के विवाह में बाबू उदयभानुलाल कर्जा लेकर भी निर्मला का विवाह धूम-धाम से करना चाहता है। कल्याणी एक कुशल गृहिणी की तरह विरोध करती है - ''...पक्का इरादा कर लो कि मैं पाँच हजार से अधिक खर्चा न करूँगा। घर में तो टका है नहीं कर्जा का ही सहारा है। इतना कर्ज क्यों लें कि जिन्दगी में अदा न हो। आखिर मेरे और बच्चे भी तो हैं।''

बाबू उदयभानुलाल के अपने निर्णय पर अड़े रहने के कारण कल्याणी की उनसे कहा सुनी हो जाती है और वह घर से निकल कर चल देती है। परन्तु बच्चों का वात्सल्य उसे रोक लेता है।

पति की अचानक मृत्यु से कल्याणी के ऊपर वज्रपात होता है। वह पति की मृत्यु के लिए स्वयं को दोषी ठहराती हुई अपार वेदना से घिर जाती है।

इस शोक के वातावरण में भी कल्याणी निर्मला का विवाह आगे टालना नहीं चाहती। क्योंकि फिर इतनी तैयारी कौन करेगा ? वह झट पुरोहित मोटेराम शास्त्री को एक पत्र के साथ बाबू भालचंद्र सिन्हा के यहाँ भेज देती है। उनके मना कर देने पर निर्मला के विवाह की समस्या उसके सामने खड़ी हो जाती है। वह दहेज देने में असमर्थ होने के कारण तीन बच्चों के पिता मुंशी तोताराम वकील से निर्मला का विवाह कर देती है।

बोध प्रश्न : 6. कल्याणी दहेज देने में असमर्थ होने के कारण निर्मला का निर्मला का विवाह किस से कर देती है ?

.....

.....

.....

कल्याणी की छोटी पुत्री कृष्णा का विवाह जब भालचन्द्र सिन्हा के छोटे पुत्र से बिना दहेज के होना निश्चय हो जाता है तो वह फूली नहीं समाती।

(ऊ) कृष्णा

कृष्णा निर्मला की छोटी बहन है। उपन्यास के आरम्भ में कृष्णा एक बालिका के रूप में पाठकों के सम्मुख आती है। उसकी बड़ी बहन निर्मला का विवाह होने जा रहा है। वह यह सोच कर परेशान है कि बिना

BRAOU

बहन के वह अकेली यहाँ किस प्रकार रहेगी ? या तो निर्मला उसे अपने साथ ले जाए अथवा निर्मला भी ना जाए।

उसके बालमनोविज्ञान का यथार्थ रूप निम्नलिखित वार्तालाप से स्पष्ट है ?

कृष्णा – मैं तुम्हारे साथ चलूँगी। अकेले मुझसे यहाँ न रहा जाएगा ?

निर्मला मुस्कुराकर बोली – तुझे अम्मा न जाने देगी ?

कृष्णा – तो मैं भी तुम्हें न जाने दूँगी । अम्मा से कह क्यों नहीं देती कि न जाऊँगी ?

निर्मला – कह तो रही हूँ, कोई सुनता है ?

कृष्णा – तो क्या यह घर तुम्हारा नहीं है ?

निर्मला – नहीं मेरा होता तो कोई जबरदस्ती निकाल देता ?

कृष्णा – इसी तरह मैं भी किसी दिन निकाल दी जाऊँगी ?

निर्मला – क्यों नहीं, क्या तू बैठी रहेगी ? हम लड़कियाँ हैं हमारा घर कहीं नहीं होता ?

कृष्णा – चन्दर भी निकाल दिया जाएगा ?

निर्मला – चन्दर तो लड़का है उसे कौन निकालेगा ?

कृष्णा – तो लड़कियाँ बहुत खराब होती हैं ?

निर्मला – खराब न होती तो घर से भगाई क्यों जाती ?

कृष्णा – चन्दर इतना बदमाश है उसे कोई नहीं भगाता हम तुम तो बदमाशी भी नहीं करती ?

बोध प्रश्न : 7. कृष्णा कैसी है ?

.....

.....

.....

BRAOU

उपन्यास के उत्तरार्ध में दूसरी बार कृष्णा पाठकों के सम्मुख आती है। सुधा के कारण उसे अच्छा घर वर मिल जाता है। वह सुखद दाम्पत्य जीवन की आशा में फूली नहीं समाती। कृष्णा ने सुना है कि उसका भावी पति स्वदेशी वस्तु पसंद करता है अत: वह रात्रि में सबके सो जाने पर चर्खा चलाने बैठ जाती है। कृष्णा उस सूत से अपने पति का साफा बनाएगी।

निर्मला उपन्यास में कृष्णा का चरित्र एक भोली बालिका और बाद में किशोरी के रूप में पाठकों के सम्मुख आया है जहाँ उसके रूप में बालमनोविज्ञान का विश्लेषण होता है वहाँ एक किशोरी की आकांक्षाओं का यथार्थ चित्र भी सामने आता है।

लेखक अपनी परिस्थितियों से प्रभावित होता है। प्रेमचन्द जी गाँधीवाद से प्रभावित थे अत: उन्होंने अपने उपन्यास में कृष्णा से चर्खा चलवाया है।

(ऋ) रुक्मिणी

रुक्मिणी 'निर्मला' उपन्यास में निर्मला के पति मुंशी तोताराम की विधवा बहन है और निर्मला की ननंद। वह विधवा और निस्संतान है॥ अत: वह मुंशी तोताराम के घर में ही रहती है। मुंशी तोताराम के दूसरे विवाह से पूर्व मुंशी तोताराम के घर की देखभाल वही करती थी और सब रुपया पैसा उसके ही हाथों में रहता था जिसे वह

सबका सब खर्च कर देती थी। मुंशी तोताराम के दूसरे विवाह के पश्चात् घर की जिम्मेदारी और सब रुपया पैसा निर्मला के हाथों में आ जाता है। कथानक में रुक्मिणी की स्थिति निर्मला के समानान्तर चलती है। निर्मला की परिस्थितियों को विषय बनाने में उसका भी योगदान है। कभी मुंशी तोताराम के बच्चों को निर्मला के पीछे लगा देती है और कभी निर्मला पर व्यंग्य बाणों की बौछार इस कारण करती है कि निर्मला ने ही पैसे दे देकर बच्चों को और घर को बिगाड़ा है। इससे निर्मला तंग आ जाती है।

कथानक के अंतिम भाग में रुक्मिणी का हृदय परिवर्तित होता है। बीमार निर्मला को वह सांत्वना देती हुई कहती है – ''बहू ! इस तरह कब तक घुला करोगी ? जी से ही जहान है। चलो किसी वैद्य को दिखा लाऊँ। ऐसे दिल छोटा मत करो। अभी तुमने संसार का सुख देखा ही क्या है ?''

बोध प्रश्न : 8. रुक्मिणी का हृदय कब परिवर्तित होता है ?

.....

.....

.....

रुक्मिणी के हृदय में निर्मला के प्रति तनिक भी द्वेष भाव नहीं रहता। वह घण्टों निर्मला के पास बैठ कर उसे कथा-पुराण सुनाया करती। वह कोई न कोई एसी चीज पकाती जिसे निर्मला रुचि से खाए। यदि वह कभी निर्मला को हँसते देख लेती तो निहाल हो जाती। निर्मला की बच्ची को सदैव अपने गले का हार बनाए रखती। अंत में वह अपने व्यवहार पर निर्मला के समक्ष पश्चात्ताप करते हुए कहती है – ''बहू, तुम्हारा कोई अपराध नहीं। ईश्वर से कहती हूँ कि तुम्हारी ओर से मेरे मन में जरा भी मैल नहीं है। हाँ, मैंने सदैव तुम्हारे साथ कपट किया इसका मुझे मरते समय तक दुख रहेगा।''

रुक्मिणी का यह कथन पाठकों की सहानुभूति उसके प्रति अर्जित कर लेता है। हृदय से वह कर्कश और कठोर नहीं है। परम्परागत ननदों के चरित्र का प्रतिनिधित्व रुक्मिणी ने किया है किन्तु अंत में उसके हृदय-परिवर्तन ने रुक्मिणी की विशेषताओं को प्रकाशित किया है।

(क) भुंगी

'निर्मला' उपन्यास में भुंगी ऐसा पात्र है जो प्रमुख कड़ियों को मिलाने में सहायक है। मुंशी तोताराम के घर की नौकरानी भुंगी है। उपन्यास के उत्तरार्ध में आर्थिक तंगी में अन्य नौकरों के निकाल दिये जाने पर भी भुंगी घर में बनी रहती है। भुंगी अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है।

निर्मला उसे बार-बार मंसाराम के पास भेजती है और उसके द्वारा मंसाराम की कुशलता जानती रहती है। भुंगी का तकिया कलाम है– 'झूठ क्यों बोलूँ'। उदाहरण के लिए –

निर्मला ने पूछा	–	पहले से कुछ हरे हुए हैं ?
भुंगी	–	हरे वरे तो नहीं हुए। और सूख गये हैं।
निर्मला	–	क्या जी अच्छा नहीं ?
भुंगी	–	यह तो नहीं बहूजी, झूठ क्यों बोलूँ। हाँ, वहाँ का कहार देवर लगता है। वह कहता था कि तुम्हारे मालिक की खुराक कुछ नहीं है। दो फुलकियाँ खाकर उठ जाते हैं और फिर दिन भर कुछ नहीं खाते। हरदम पढ़ते रहते हैं।
निर्मला	–	तूने नहीं पूछा कि लड्डू क्यों लौटा दिये हैं ?

भुंगी – यह तो नहीं पूछा बहूजी झूठ क्यों बोलूँ। उन्होंने कहा इसे लेती जा। यहाँ रखने का कुछ काम नहीं। तो मैं लेती आई।

निर्मला – और कुछ नहीं कहते थे ? पूछा नहीं, कल क्यों नहीं आए, छुट्टी थी ?

भुंगी – ''बहूजी झूठ क्यों बालूँ ? यह पूछने की तो मुझे सुध ही नहीं रही। हाँ यह कहते थे कि अब तू यहाँ कभी न आना। न मेरे लिये कोई चीज लाना और अपनी बहूजी से यह कह देना कि मेरे पास कोई चिट्ठी पत्री न भेजें। लड़कों से भी हमारे पास कोई संदेश न भेजें और एक बात एसी कही कि मुँह से निकाल नहीं सकती'' और रोने लगी।

प्रश्न : 9. भुंगी का तकियाकलाम क्या है ?

.....

.....

.....

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भुंगी की स्थिति उपन्यास की नायिका निर्मला के चरित्र के विकास में सहायक है। भुंगी नौकर वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है।

(ख) जियाराम

मुंशी तोताराम की पहली पत्नी से उत्पन्न द्वितीय पुत्र है जियाराम। जियाराम किशोरवय का बालक है। मंसाराम की मृत्यु का कारण वह मुंशी तोताराम और विमाता निर्मला को समझता है। मंसाराम की मृत्यु से जियाराम उद्दण्ड बन जाता है।

डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के समझाने पर जियाराम अपने व्यवहार को बदलने की कोशिश करता है। वह पिता के साथ सरल ढंग से पेश आता है। किन्तु उसकी इस परिवर्तित मनोवृत्ति से अनभिज्ञ, मुंशी तोताराम का व्यवहार जब वैसा ही होता है तो जियाराम की परिवर्तित मनोवृत्ति भी अपने पुराने रूप में आ जाती है।

विमाता और अपनी सौतेली बहन को वह अपने सुख के रास्ते का कंटक समझता है। अपने ऐश के लिए एक दिन वह विमाता के गहनों की संदूकची चोरी कर लेता है और उसे अपने मित्रों द्वारा सर्राफ की दुकान पर भिजवा देता है।

बोध प्रश्न : 10. जियाराम किसे अपने सुख के रास्ते का कंटक समझता है ?

.....

.....

.....

थानेदार के घर पर आकर पूछ–ताछ कर जाने से जियाराम भयभीत हो जाता है। अब तक तो उसे आशा थी कि उसका भांडा नहीं फूटेगा लेकिन थानेदार के आ जाने से जियाराम अधिक भयभीत हो गया। वह घर से भाग जाना चाहता था किन्तु बाहर जाने पर थानेदार के भय ने उसे इतना आतंकित कर दिया कि उसने जहर खाकर आत्महत्या कर ली।

मंसाराम का चरित्र आदर्श चरित्र है जबकि जियाराम का चरित्र बिलकुल इसके विपरीत है।

BRAOU

(ग) सियाराम

सियाराम मुंशी तोताराम का तीसरा पुत्र है। पिता की दूसरी शादी से पहले उसकी सारी इच्छाएँ पूरी होती थीं। मंसाराम की मृत्यु के बाद जियाराम के साथ रह कर सियाराम भी उद्दण्ड बन जाता है और वह अपने पिता तथा विमाता को बिना आदर के जवाब देते रहता है।

जियाराम की मृत्यु के बाद ही सियाराम पाठकों के सम्मुख आता है। स्वयं उपन्यासकार के शब्दों में सियाराम का चित्रण देखिए - ''सियाराम में काटकपट की आदत नहीं थी औने-पौने करना न जानता था। प्राय:बाज़ार का सारा काम इसी को करना पड़ता। निर्मला एक-एक चीज़ को तौलती जरा भी कोई चीज़ तौल में कम निकलती तो उसे लौटा देती। सियाराम का बहुत सा समय उसे लौटा फेरी में बीत जाता था। बाजार वाले उसे जल्दी कोई सौदा न देते थे।

आर्थिक तंगी के कारण निर्मला हर दम सियाराम को ही बाज़ार भेजती है क्योंकि उसे भुंगी पर विश्वास न था। एक दिन घी की हांड़ी वापस करवाने पर सियाराम को अत्याधिक मानसिक क्लेश हुआ। इस बीच बाज़ार के सौदा बदल कर लाने में सियाराम की स्कूल में अनुपस्थिति होने लगी जिससे सियाराम का घर से मन उचट गया और वह बच्चों को बहका कर ले जाने वाले चोर साधुओं के सात घर छोड़कर चला जाता है।

बोध प्रश्न : 11. मन उचट जाने पर सियाराम क्या करता है ?

.....

.....

.....

(घ) भालचन्द्र सिन्हा

बाबू भालचन्द्र सिन्हा आबकारी दफ़्तर में अफ़सर थे। ठेकेदारों से खूब रिश्वत लेते थे। उदयभानुलाला की बेटी निर्मला से अपने बेटे भुवनमोहन सिन्हा का विवाह इसलिए निश्चिय करते हैं कि उदयभानुलाल की आमदनी बहुत थी और भालचन्द्र सिन्हा को आशा थी कि वे बेटी की शादी में उनकी आशा से भी अधिक देंगे।

भालचन्द्र सिन्हा के व्यक्तित्व का उपन्यासकार ने जो शब्द चित्र प्रस्तुत किया है वह पाठकों को हँसाये बिना नहीं रहता और यह दृश्य उस समय का है जब पंडित मोटेराम शास्त्री उनके पास उदयभानु लाल की मृत्यु के बाद पहुँचते हैं।

''.....भालचन्द्र सिन्हा दीवानखाने के सामने आराम कुर्सी पर नंग-धड़ंग लेटे हुए हुक्का पी रहे थे। बहुत ही स्थूल ऊँचे कद के आदमी थे। ऐसा मालूम होता था कि कोई काला देव है। या कोई हब्शी आफ्रिका से पकड़कर लाया है।'' सिर से पैर तक एक ही रंग था। काला चेहरा इतना स्पष्ट था कि मालूम न होता था कि माथे का अन्त कहाँ है और सिर का आरम्भ कहाँ। बस कोयले की एक सजीव मूर्ति थी। दो आदमी खड़े पंखा झुला रहे थे। उस पर भी पसीने का तार बधा हुआ था। ठेकदारों से खूब रिश्वत लेते थे। ठेकदार शराब के नाम पर पानी बेचें। चौबीसों घंटे दुकान खुली रखें। आपको खुश रखना काफ़ी था सारा कानून आपकी खुशी थी।

भालचन्द्र सिन्हा दहेज के लालची हैं। निर्मला के पिता की मृत्यु से जब परिस्थिति बदल जाती है तो वे निर्मला का विवाह अपने बेटे से करना अस्वीकार कर देते हैं और अपनी लोभी प्रकृति को वे पुरोहित मोटेराम के सामने बड़ी कुशलता से छिपा भी लेते हैं - ''यह मृत्यु एक प्रकार के अमंगल की सूचना है जो विधाता की ओर से मिला है। यह किसी आने वाली मुसीबत की आकाशवाणी है। विधाता स्पष्ट रीति से कह रहा है कि यह विवाह मंगलमय नहीं होगा। ....जान बूझ कर मक्खी नहीं निगली जाती।''

BPAOU

भालचन्द्र ने दहेज के लालच को सर्वोपरि बनाकर सीधी सहृदय पत्नी को विधवा कल्याणी के बारे में यह कह रखा था कि कल्याणी ने सारी संपत्ति दबाकर रखी हुई है और वह गरीबी का ढोंग रचकर बिना दहेज के ही विवाह कर देना चाहती है । एक छँटी हुई औरत है । इससे यह साफ समझ में आता है कि भालचन्द्र जैसा लालची व्यक्ति किसी से भी किसी के व्यक्तित्व को उल्टा-सीधा व्यक्त कर सकता है।

(ङ) डॉ. भुवनमोहन सिन्हा

'निर्मला' उपन्यास के 25वें पृष्ठ पर डॉ. भुवनमोहन सिन्हा का प्रथम परिचय पाठकों को मिलता है यह वही व्यक्ति है जिससे उपन्यास की नायिका निर्मला का संबंध निश्चिय हुआ था।

उपन्यासकार के शब्दों में भुवनमोहन का भौतिक सौंदर्य चित्रण देखिए - ''ऐसा सुन्दर सुडौल बलिष्ठ युवक कॉलेजों में बहुत कम देखने में आते हैं। बिलकुल माँ को पड़ा था, वही गोरा चिट्टा रंग वही पतले-तले गुलाब की पत्ती जैसे होंठ, बड़ा चौड़ा माथा। वही बड़ी-बड़ी आँखें, डील-डौल बाप का सा था । ऊँचा कोट, बीचेज टाई, बूट, हैट उस पर खूब खिल रहे थे। हाथ में एक हाकी स्टिक थी चाल में जवानी का गुरूर था। आँखों में आत्मगौरव।

इतने सुन्दर तन वाले व्यक्ति का मन कितना कलुषित है उसे देखिए -

भुवन - कहीं ऐसी जगह शादी करवाइए कि खूब रुपया मिले और न सही, एक लाख का तो डौल हो। वहाँ अब क्या रखा है। वकील साहब रहे ही नहीं। बुढ़िया के पास अब क्या होगा ?

रंगीलीबाई - तुम्हें ऐसी बातें मुँह से निकालते शर्म नहीं आती ?

भुवन - इसमें शर्म की कौन सी बात है ? रुपया किसे काटता है ? लाख रुपया तो लाख जन्म में भी न जमा कर पाऊँगा। इस साल पास भी हो गया तो कम से कम पाँच साल तक रुपया की सूरत न नज़र आएगी फिर सौ दो सौ रुपया महीने कमाने लगूँगा, पाँच-छह तक पहुँचते-पहुँचते उम्र के तीन भाग बीत जाएँगे। रुपया जमा करने की नौबत न आएगी। दुनिया का कुछ मज़ा न उठा सकूँगा। किसी धनी की लड़की से शादी हो जाती तो जिन्दगी चैन से कटती। मैं ज्यादा नहीं चाहता बस एक लाख नगद हो या फिर कोई ऐसी दहेज वाली बेवा मिले जिसकी एक ही लड़की हो।

रंगीलीबाई - चाहे औरत कैसी भी मिले।

भुवन - धन सारे ऐबों को छिपा देगा। मुझे वह गालियाँ भी सुनाए तो चुप करूँ। दूधारू गाय की लात किसे बुरी मालूम होती है ?

डॉ. भुवनमोहन सिन्हा दूसरी बार पाठकों के सम्मुख उस समय आते हैं जब वे बड़े पुत्र मंसाराम की चिकित्सा कर रहे होते हैं। इस समय तक वे सुधा के पति और एक पुत्र के पिता बन चुके होते हैं। भुवनमोहन सिन्हा का हृदय सहृदयता और मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत है। यद्यपि उन्होंने उस समय बिना दहेज के विवाह करना स्वीकार नहीं किया था। परन्तु यह जानकर कि निर्मला को दयनीय स्थिति में डालने के वे ही कारण हैं उनको पश्चात्ताप होता है। वे इसका प्रायश्चित करते हैं और निर्मला की छोटी बहन कृष्णा का विवाह बिना दहेज के अपने छोटे भाई से करवा देते हैं।

बोध प्रश्न : 12. डॉ. भुवनमोहन सिन्हा प्रायश्चित कैसे करते हैं ?

.....

.....

.....

BRAOU

डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के हृदय में मानवीय दुर्बलता है। वे निर्मला की ओर आकर्षित होते हैं। एक दिन सुधा की अनुपस्थिति में निर्मला उनके यहाँ आती है और वे उससे छेड़-छाड़ कर बैठते हैं। सुधा को यह सब कुछ पता चल जाता है। वह उनकी भर्त्सना कर देती है और वे आत्मग्लानिवश आत्महत्या कर लेते हैं।

18.4 सारांश

'निर्मला' उपन्यास में पात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। इन पात्रों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है – निर्मला के पितृगृह से संबंधित पात्र, निर्मला के पतिगृह से संबंधित पात्र और सहायक कथा के पात्र। निर्मला उपन्यास की नायिका है। उसके पिता बाबू उदयभानुलाल और माता कल्याणी है। निर्मला की छोटी बहन है कृष्णा। निर्मला का विवाह पहले बाबू भालचन्द्र सिन्हा के पुत्र डॉ. भुवनमोहन सिन्हा से निश्चिय होता है लेकिन दहेज न दे सकने के कारण उसका विवाह तीन बच्चों के पिता मुंशी तोताराम से हो जाता है। मुंशी तोताराम के तीन पुत्र पहले विवाह से उत्पन्न हुए थे – मंसाराम, जियाराम और सियाराम। इसके अलावा डॉ. भुवनमोहन सिन्हा की पत्नी सुधा इस उपन्यास में मुख्य भूमिका निभाती है। इस उपन्यास में एक और मुख्य स्त्री पात्र है रुक्मिणी जो मुंशी तोताराम की विधवा बहन है। इसके अतिरिक्त रंगीली बाई, भुंगी आदि स्त्री पात्र और पंडित मोटेराम शास्त्री जैसे पुरुष पात्र इस उपन्यास को रोचक और गतिशील बनाते हैं। लेखक ने इन सभी पात्रों के चरित्र को कथा के विकास में महत्वपूर्ण बनाते हुए चित्रित किया है।

'निर्मला' उपन्यास की नायिका है निर्मला। उसी के नाम पर इस उपन्यास का नामकरण किया गया है। वह इस उपन्यास की कथा, घटनाचक्र और पात्रों की गतिविधियों का केन्द्र है। निर्मला के चरित्र का विकास क्रमशः होता है और उसके गुण धीरे-धीरे सामने आते है। पिता की असमय मृत्यु के कारण और दहेज देने में असमर्थ माता के द्वारा तय किये गये विवाह को वह सिर झुकाकर स्वीकार कर लेती है। अपने पिता की उम्र वाले पुरुष के साथ वह दाम्पत्य जीवन बिताती है। लेकिन उसका पति बड़े पुत्र मंसाराम उसके हँसने-बोलने को संदेह की दृष्टि से देखता है। मंसाराम इसी दुख में बीमार होकर मर जाता है। जियाराम निर्मला के गहने चुराकर भय के मारे आत्महत्या कर लेता है और सियाराम घर से भाग जाता है। निर्मला एक पुत्री को जन्म देती है और अंत में उसे अपनी विधवा ननद को सौंपकर मर जाती है। निर्मला का चरित्र एक त्रासदी है। निर्मला में गुण ही गुण है लेकिन सारा जीवन वह दुख ही भोगती है। मुंशी तोताराम ऐसे चरित्र हैं जो अपने से कम उम्र की किशोरी से विवाह करके उसका जीवन तो नष्ट करते ही हैं अपना सब कुछ गँवा देते हैं। वे निर्मला के आगे जवान बनने की हास्यास्पद चेष्टा करते हैं। अपने ही पुत्र पर संदेह करके उसे खो बैठते हैं। संक्षेप में लेखक ने मुंशी तोताराम को ऐसे पुरुष वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया है जो अपनी वासना और सुख के लिए अपने परिवार को नष्ट कर देता है। इस उपन्यास का तीसरा चरित्र मंसाराम बुद्धि का सरल हृदय युवक है जो अपनी विमाता निर्मला का सम्मान करता है, पिता के संदेह से आहत होकर करुण अंत को प्राप्त होता है। जियाराम और सियाराम का भी पिता की उपेक्षा के कारण ही दुखद अंत होता है। इस उपन्यास में तीन चरित्र और हैं जिनमें बड़ी गतिशीलता है। पहला चरित्र है निर्मला की सखी सुधा का जो डॉ. भुवनमोहन सिन्हा की पत्नी है। वह साहसी, स्पष्ट बोलनेवाली और सच का पक्ष लेने वाली स्त्री है। वह निर्मला का दुख दूर करने की कोशिश करती है लेकिन स्वयं भाग्यचक्र में फँस जाती है। उसका बच्चा मरजाता है। पति निर्मला के प्रति आकर्षित होता है और फिर ग्लानि में आत्महत्या कर लेता है। दूसरा ऐसा चरित्र है निर्मला की विधवा ननद रुक्मिणी का जो पहले तो निर्मला से ईर्ष्या करती है और बच्चों को उसके खिलाफ उकसाती है लेकिन बाद में निर्मला की सच्चरित्रता और कष्टों से पिघल जाती है और उससे सहानुभूति रखती है। तीसरा चरित्र है डॉ. भुवनमोहन सिन्हा का जो लालची और दुर्बल हृदय है। वह निर्मला से विवाह अस्वीकार कर देता है। बाद मे पछताता है और प्रायश्चित में अपने भाई का विवाह निर्मला की बहन कृष्ण से कर देता है। लेकिन वही निर्मला को एकांत में देखकर अपने आप को सम्हाल नहीं पाता उससे प्रेम प्रकट करता है और फिर पत्नी के फटकारने पर ग्लानि से आत्महत्या कर लेता है। इस उपन्यास के और चरित्रों में निर्मला के माता पिता, डॉ. भुवनमोहन सिन्हा के मातापिता, निर्मला की बहन कृष्णा आदि है। मुंशी

तोताराम के घर की नौकरानी मुंगी का चरित्र रोचक है और सबसे रोचक और विनोदपूर्ण चरित्र है पंडित मोटेराम शास्त्री का जो विवाह संबंध तय करते हैं। इस प्रकार इस उपन्यास में जीवन के अच्छे-बुरे, करुण-विनोदपूर्ण पक्षों को प्रस्तुत करने वाले चरित्र हैं।

18.5 समीक्षा

'निर्मला' प्रेमचन्द का चर्चित और लोकप्रिय उपन्यास है। अपने समय की प्रमुख पत्रिका 'चाँद' में यह धारावाहिक रूप में प्रकाशित हआ था और उसी समय इसे नारी जीवन की त्रासदी (ट्रेजैडी) को व्यक्त करने वाला मार्मिक उपन्यास माना गया था। यह उपन्यास प्रेमचन्द जी के अन्य उपन्यासों की तुलना में छोटा है लेकिन जीवन का व्यापक और गहरा चित्रण प्रस्तुत करता है। इसमें प्रेमचन्द जी ने भारतीय नारी के जीवन की त्रासदी को सहज और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। यह एक उद्देश्यपूर्ण उपन्यास है। इसमें प्रेमचन्द जी का यथार्थवादी दृष्टिकोण है लेकिन चरित्रों में आदर्श की झलक भी है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से यह उपन्यास प्रेमचन्द की उपन्यास-कला का शश्क्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। 'निर्मला' के चरित्र मानव-जीवन के श्वेत-श्याम पक्षों को सहज-स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। इस उपन्यास में गतिशील और स्थितिशील दोनों प्रकार के चरित्र हैं। जैसे मुंशी तोताराम डॉ. भुवनमोहन सिन्हा, निर्मला, रुक्मिणी आदि के चरित्रों का विकास होता है, उनमें परिवर्तन होता है, लेकिन सुधा का चरित्र आदि से अंत तक एक आदर्शवादी है, भालचन्द्र सिन्हा स्वार्थी और लालची हैं।

18.6 शब्दार्थ

यथार्थवादी	–	जीवन की वास्तविकता को महत्व देने वाला
उद्दण्ड	–	जिद्दी
स्वांग	–	अभिनय, नकल
सपत्नी	–	सौत
व्यंग्यबाण	–	मैला, पापपूर्ण
हृदयग्राही	–	हृदय को प्रभावित करने वाला
विधुर	–	जिसकी पत्नी मर चुकी हो ऐसा पुरुष
भर्त्सना	–	प्रताडना, फटकार, भलाबुरा कहना
दयार्द्र	–	दया से विगलित, दया से पिघलना
उद्यत	–	तैयार
उदभ्रांत	–	उन्मादी, भ्रमित, जिसे कुछ सुझाई न दे।

18.7 अभ्यास

18.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में उत्तर)

1. निर्मला का चरित्र-विश्लेषण कीजिए।
2. मुंशी तोताराम के चरित्र की विशेषताएँ बतलाइए।
3. ''सुधा का चरित्र प्रेमचन्द के आदर्शवादी दृष्टिकोण का प्रमाण है'' - इस कथन की व्याख्या कीजिए।

BRAOU

18.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में उत्तर)

1. डॉ. भुवनमोहन सिन्हा का चरित्र-चित्रण कीजिए।
2. मंसाराम का चरित्र चित्रण कीजिए।
3. रुक्मिणी के चरित्र की विशेषताएँ बतलाइए।

18.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

18.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में उत्तर)

प्रश्न : निर्मला का चरित्र चित्रण कीजिए।

उत्तर : निर्मला उपन्यास की प्रत्येक घटना और प्रत्येक पात्र की गतिविधयों का केन्द्र निर्मला ही है। निर्मला के पिता बाबू उदयभानु उसके विवाह की धूम-धाम से तैयारी करते हैं किन्तु उनकी आकस्मिक मृत्यु ने सब कुछ बदल दिया ।दहेज देने में असमर्थ निर्मला की माँ के बारे में सोचकर दहेज के लालची भालचंद्र सिन्हा अपने बेटे डॉ. भुवनमोहन सिन्हा का भी बिना दहेज के इस घर से विवाह संबंध करना पसंद नहीं करते। निर्मला की माँ कल्याणी ऐसी अवस्था में निर्मला का विवाह तीन बच्चों के पिता अधेड़ मुंशी तोताराम से कर देती है। निर्मला के सुखद-दाम्पत्य जीवन का सपना टूट जाता है और उसे अपने पिता की आयु वाले पुरुष के साथ जीवन बिताने के लिए विवश होना पड़ता है किन्तु निर्मला बड़े आत्म संयम से हृदय की उद्दण्ड अभिलाषाओं का दमन करती है।

नवयुवती निर्मला अपने चरित्र पर आँच नहीं आने देती है। वह पत्नी के कर्तव्य का पालन बड़ी ईमानदारी से करती है। निर्मला को प्रसन्न करने के लिए उसका पति जो जवान होने का स्वांग करता है इससे उसे पति की स्थिति पर दया आती है वह उसके सुख-दुख की साथिन बनने का प्रयास करती है।

निर्मला का हृदय वात्सल्य से भरा हुआ है। वह सपत्नी-पुत्रों को अपने पुत्रों जैसा ही प्यार करती है। फिर भी उसे अपनी ननद रुक्मिणी के व्यंग्यबाणों का सामना करना पड़ता है। मुंशी तोताराम का बड़ा पुत्र मंसाराम उसकी ही आयु का है। उससे हँसने बोलने में हम उम्र से बात करने की स्वाभाविक इच्छा पूरी होती है इसलिए वह उससे अंग्रेजी सीखती है किन्तु वह कलुषित प्रेम की बात सोचती भी नहीं।

निर्मला का दुर्दैव उसका पीछा नहीं छोड़ता। उसका पति उसके और मंसाराम के सहज वात्सल्यजन्य स्नेह को कलुषित दृष्टि से देखता है। पति की यह शंका उसे भीतर ही भीतर घुलाने लगती है। इन शकों को दूर करने के लिए मंसाराम अपने प्राणों का बलिदान कर देता है। मंसाराम की मृत्यु उसके जीवन को तोड़ देती है। पति की आय में कमी होने से, मकान नीलाम हो जाने से और पुत्री के जन्म लेने से निर्मला के स्वभाव में परिवर्तन होता है वह एक-एक पैसा बचाने का प्रयास करती है। जियाराम का उसके गहनों की सन्दूकची चुरा लेना और फिर आत्महत्या कर लेना, सियाराम का नकली साधू के साथ घर से चला जाना और पिता का उसकी खोज में चल देना आदि घटना-चक्र निर्मला के जीवन को शून्य कर देते हैं।

निर्मला को एक मात्र सहारा सुधा का रह जाता है । दुर्भाग्य से सुधा का घर भी अब उसके लिए सुरक्षित नहीं रह पाता है । सुधा का पति वास्तव में वही व्यक्ति है जिसने दहेज के लालच में निर्मला से संबंध तोड़ लिया था, बाद में निर्मला के बारे में जान कर और उसकी सुन्दरता को देखकर एक दिन अकेले में वह निर्मला को छेड़ता है और सुधा अपने देवर के घर चली जाती है और निर्मला सर्वथा निराश्रित रह जाती है । वह रोग शय्या पर पड़ जाती है और अंत में उसके जीवन का दीप टिमटिमाकर बुझ जाता है । उसका पति तब घर लौटता है जब यह प्रश्न उठता है कि उसकी चिता में आग कौन लगाये ?

BRAOU

18.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में उत्तर)

प्रश्न : मंसाराम का चरित्र चित्रण कीजिए।

उत्तर : वकील मुंशी तोताराम को उनकी पहली पत्नी से मंसाराम, जियाराम और सियाराम तीन पुत्र हैं । निर्मला को विवाह कर लाने के समय मंसाराम सोलह वर्ष का किशोर है।

उपन्यास की नायिका अपने हम उम्र मंसाराम के साथ हँसती बोलती है। यह स्वाभाविक है। किन्तु मुंशी तोताराम निर्मला और मंसाराम के इस स्नेह को शंका की दृष्टि से देखते हैं । और उसे बोर्डिंग भेज देते हैं।

मंसाराम कुशाग्र बुद्धिवाला छात्र है। निर्मला का उसके प्रति सहज वात्सल्य का भाव है और मंसाराम निर्मला का माता के समान ही सम्मान करता है और निर्मला के आग्रह पर उसे अंग्रेजी भी पढ़ाता है। किन्तु जब उसे पता लगता है कि पिता ने उसके चरित्र पर संदेह किया है तो उसका हृदय भीषण अंतर्द्वन्द्व से भर जाता है और वह बीमार पड़ जाता है।

अस्पताल में निर्मला मंसाराम को बचाने के लिए अपना रक्त देने के लिए तैयारा होती है। डॉक्टर रक्त निकालने की चेष्टा कर ही रहा था कि मंसाराम अपने उज्जवल चरित्र की अंतिम झलक दिखा कर संसार से विदा हो जाता है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. निर्मला का विवाह तीन बच्चों के पिता अधेड़वय के मुंशी तोताराम के साथ होता है।
2. सुधा अपने देवर का विवाह बिना दहेज लिए निर्मला की बहन कृष्णा से कर देती है और निर्मला की माँ के नाम पाँच सौ रुपयों का मनीआर्डर भी भेज देती है।
3. मुंशी तोताराम निर्मला का दिल जीतने के लिए उसे तरह-तरह के उपहार लाकर देते हैं, उसे गृहस्वामिनी बना देते हैं।
4. निर्मला का मंसाराम को रक्त देने के लिए उद्यत होना और मंसाराम का बलिदान अंत में मुंशी जी के संदेह को दूर कर देते हैं।
5. अस्पताल में निर्मला मंसाराम को बचाने के लिए अपना रक्त देने को तैयार होती है।
6. दहेज देने में असमर्थ होने के कारण कल्याणी निर्मला का विवाह तीन बच्चों के पिता मुंशी तोताराम से कर देती है।
7. कृष्णा एक भोली बालिका और बाद में सुखद दाम्पत्य के सपने बुनती किशोरी के रूप में पाठकों के सम्मुख आती है।
8. कथानक के अंत में रुक्मिणी का हृदय परिवर्तित होता है।
9. भुंगी का तकियाकलाम है – ''झूठ क्यों बोलूँ''
10. अपनी विमाता निर्मला और सौतेली बहन को वह अपने सुख के रास्ते का कंटक समझता है।
11. मन उचट जाने पर सियाराम चोर साधुओं के साथ घर छोड़कर चला जाता है।
12. डॉ. भुवनमोहन सिन्हा प्रायश्चित करने के लिए अपने भाई का विवाह बिना दहेज लिए निर्मला की बहन कृष्णा से करवा देते हैं।

18.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

निर्मला – प्रेमचंद

BRAOU

इकाई-19 : 'निर्मला' उपन्यास का मूल्यांकन

19.1 उद्देश्य

19.2 पाठ एवं लेखक परिचय

19.3 मूल पाठ

19.4 सारांश

19.5 समीक्षा -

19.6 शब्दार्थ

19.7 अभ्यास

19.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

19.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

19.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

19.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

19.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

19.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में हिन्दी के अमर कथा-शिल्पी श्री प्रेमचन्द जी की रचना 'निर्मला' का मूल्यांकन किया गया है। इस पाठ के अध्ययन से आप-

- 'निर्मला' उपन्यास में चित्रित प्रमुख समस्याओं से परिचित हो सकेंगे।
- 'निर्मला' की रचना का उद्देश्य स्पष्ट कर सकेंगे।
- 'निर्मला' के संदेश पर विचार कर सकेंगे।
- उपन्यास के तत्वों के आधार पर 'निर्मला' का मूल्यांकन कर सकेंगे।

19.2 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

इस पाठ में 'निर्मला' उपन्यास के गुण दोषों का विवेचन किया गया है।

(आ) लेखक-परिचय (देखिए ईकाई-17.2)

19.3 मूल पाठ

'निर्मला' उपन्यास प्रेमचन्द की महत्वपूर्ण रचना है। प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यासों और कहानियों में

BRAOU

क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया । उनके उपन्यास अपने समय की समस्याओं का चित्रण करते हुए एक समाधान या आदर्श प्रस्तुत करते हैं, उनका हर उपन्यास सोद्देश्य होता है। 'निर्मला' उपन्यास में भारतीय समाज में दहेज-प्रथा का चित्रण किया गया है और बताया गया है किस प्रकार एक समूचा परिवार इसके पीछे नष्ट हो जाता है। निर्मला का चरित्र तो तिल-तिल कर मरने वाली भारतीय नारी का जीवन्त प्रमाण है। 'निर्मला' उपन्यास के मूल्यांकन में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसमें प्रेमचन्द बिल्कुल यथार्थ की ज़मीन पर खड़े हैं । वे दहेज प्रथा, उसके कारण होने वाले अनमेल विवाह, उसके कारण नष्ट होने वाले मुंशी तोताराम के परिवार और निर्मला के जीवन की त्रासदी को वास्तविक रूप में चित्रित करते हैं, किसी प्रकार के आदर्श का आवरण इस पर नहीं डालते। इसके साथ यह भी देखा जाना चाहिए कि प्रेमचन्द ने पात्रों के चरित्र चित्रण में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक पकड़ का परिचय दिया है।

उपन्यासों के तत्वों के आधार पर 'निर्मला' उपन्यास का मूल्यांकन इस प्रकार किया जा सकता है - (अ) कथानक (आ) चरित्र-चित्रण (इ) देश काल और वातावरण (ई) भाषा-शैली (उ) उद्देश्य

बोध प्रश्न : 1. उपन्यास के कितने तत्व हैं ?

.....

.....

.....

(अ) 'निर्मला' उपन्यास का कथानक

कथानक किसी भी उपन्यास की रीढ़ होता है। यह वह आधारशिला है जिस पर उपन्यास का भवन खड़ा होता है। 'निर्मला' उपन्यास के कथानक में वे सारे गुण हैं जो किसी कथानक के लिए आवश्यक बताये गए हैं। जैसे इस उपन्यास का कथानक सुगठित, गतिशील और विकासशील है। इसमें घटनाएँ एक के बाद एक इस प्रकार घटती हैं कि कथा को तेजी से आगे बढ़ाती हैं। घटनाओं का एक दूसरे से सम्बन्ध है और ये घटनाएँ कथा को आगे बढ़ाते हुए लेखक की योजना और उद्देश्य को पूरा करती हैं। 'निर्मला' उपन्यास की कथावस्तु में आदि, मध्य और अंत के भाग बँटे हुए हैं और चरम बिन्दु या चरमोत्कर्ष वाला भाग भी स्पष्ट है।

बोध प्रश्न : 2. चरमबिन्दु किसे कहते हैं ?

.....

.....

.....

'निर्मला' उपन्यास का कथानक बिखरा हुआ नहीं है, सुनियोजित है। लेखक घटनाओं और चरित्र-विश्लेषण के सहारे कहानी तेजी से आगे बढ़ाता है। इसमें मुख्य कथा निर्मला और मुंशी तोताराम की है। सहायक कथा के रूप में डॉ. भुवनमोहन सिन्हा और सुधा की कहानी चलती है। संक्षेप में इसकी कथावस्तु इस प्रकार है:-

निर्मला का विवाह उसके पिता भालचन्द्र सिन्हा के बेटे डॉ. भुवन मोहन के साथ निश्चित करते हैं लेकिन उनकी आकस्मिक मृत्यु के कारण यह विवाह-सम्बन्ध हो नहीं पाता और निर्मला का विवाह दहेज के अभाव में तीन बच्चों के पिता वकील मुंशी तोताराम से हो जाता है। अपने पिता की उम्र के पति के साथ दाम्पत्य को निर्मला भाग्य का खेल समझ कर स्वीकार कर लेती है भले ही इसमें उसे कोई सुख न मिले। लेकिन मुंशी तोताराम अपनी युवा पत्नी से हर प्रकार का सुख चाहते हैं। वे निर्मला को प्रसन्न करने के लिए उसी को रुपया-पैसा सौंपते

है, वस्त्राभूषण से और रोज नए उपहारों से उसका दिल जीतना चाहते हैं यहाँ तक कि स्वयं कम उम्र बनने और दीखने की कोशिश में हास्यास्पद चेष्टाएँ करते हैं। निर्मला को पति पर दया आने लगती है। वह बच्चों में अपना मन लगाने की कोशिश करती है। सब से बड़ा पुत्र मंसाराम कुशाग्र बुद्धि का परिश्रमी भोला बालक है। वह विमाता का आदर करता है। लेकिन मुंशी तोताराम माँ-बेटे के इस सम्बन्ध पर भी संदेह करते हैं और मंसाराम को बोर्डिंग स्कूल में भेज देते हैं। पिता के इस संदेह से मंसाराम इतना ग्लानि अनुभव करता है कि घुल घुल कर प्राण दे देता है। अंत में जब निर्मला मंसाराम की प्राणरक्षा के लिए अपना खून तक देने को तैयार हो जाती है तब तोताराम की आँखें खुलती हैं लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। मुंशी तोताराम की विधवा बहन रुक्मिणी भी उन्हीके साथ रहती है। वह पहले तो निर्मला के साथ दुर्व्यवहार करती है लेकिन बाद में निर्मला के गुणो से प्रभावित होकर वह उससे सहानुभूति करती है। मुंशी तोताराम का दूसरा पुत्र जियाराम माता-पिता से बहुत उद्दण्ड व्यवहार करने लगता है। वह निर्मला के गहने चुरा कर बेच देता है लेकिन बाद में थानेदार के पूछताछ करने के भय से आत्महत्या कर लेता है। इस बीच निर्मला के एक बेटी होती है। मुंशी जी दो-दो बेटों को खोकर पागल-से हो चुके हैं। वकालत चलती नहीं मकान भी बिकने की नौबत अजाती है। ऐसे में निर्मला अपनी बेटी के भविष्य को सोचकर आशंकित हो जाती है और एक-एक पैसे को दाँत से पकडने लगती है। सबसे छोटा पुत्र जियाराम घर की आर्थिक तंगी से परेशान हो कर एक साधु के साथ घर छोड़ कर चला जाता है। इसके साथ एक सहायक कथा चलती है सुधा और डॉ. भुवनमोहन सिन्हा की। डॉ. सिन्हा मंसाराम के इलाज के क्रम में मुंशी तोताराम से परिचित होते हैं। दोनों के घर पास होने के कारण सुधा और निर्मला में घनिष्टता हो जाती है। जब सुधा को पता चलता है कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा से ही निर्मला का विवाह निश्चित होकर भी दहेज के अभाव में टूट गया था तो वह प्रायश्चित-स्वरूप अपने पति को कहकर अपने देवर का विवाह निर्मला की बहन कृष्णा से करवाती है और निर्मला की माँ को विवाह के खर्च के लिए गुप्त रूप से पैसे भिजवाती है। सुधा बहुत संवेदनशील और साहसी महिला है लेकिन वह सुखी नहीं रह पाती। पहले उसके शिशु की मृत्यु हो जाती है, फिर उसके पति डॉ. सिन्हा निर्मला से एकांत में छेड़ छाड़ करते हैं और पत्नी के द्वारा प्रताड़ित होकर ग्लानिवश आत्महत्या कर लेते हैं। निर्मला भी अपने दुर्भाग्य से लड़ते-लड़ते अंत में मृत्यु को प्राप्त होती है लेकिन मरते-मरते अपनी बेटी को ननद के हाथों में सौंपकर कहती है कि भले ही लड़की को आजीवन क्वाँरी रह जाना पड़े मगर अपात्र के साथ उसका विवाह न करे।

बोध प्रश्न : 3. 'निर्मला' में आदर्शवाद कहाँ है ?

.....

.....

.....

'निर्मला' उपन्यास के कथानक में कई संयोग घटित होते हैं कुछ आत्महत्यायें, हत्यायें, अकाल मृत्यु के दुर्योग घटित होते हैं जिन के कारण कथा कई मोड़ लेती है। सबसे पहले तो निर्मला के पिता उदयभानु लाल की हत्या होती है। यहीं से निर्मला का दुर्भाग्य शुरू होता है। मंसाराम की अकाल मृत्यु होती है। सुधा का शिशु बीमारी में मर जाता है। जियाराम आत्महत्या कर लेता है। डॉ. भुवनमोहन सिन्हा आत्महत्या कर लेते है। इनसे पूरी कथा एक त्रासदी बनकर रह जाती है। मुंशी तोताराम भी बेटों के गम में पागल होकर सियाराम को ढूँढने जो निकलते हैं तो निर्मला की चिता जलाने के समय ही लौटते हैं। इस उपन्यास में मोटेराम शास्त्री जो विवाह संबंध तय करने का काम करते है और नौकरानी भुंगी के द्वारा हास्य और रोचकता उत्पन्न की गई है।

(आ) चरित्र-चित्रण

'निर्मला' उपन्यास में पात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं है जब कि प्रेमचन्द के और उपन्यासों में पात्रों की भरमार रहती है। इसका कारण यह है कि प्रेमचन्द जी ने इस उपन्यास में एक ही समस्या पर अपना ध्यान

केन्द्रित किया है। वह समस्या है दहेजप्रथा और उसके परिणाम स्वरूप होने वाले अनमेल विवाह की। निर्मला इसका शिकार बनती है। प्रेमचन्दजी ने इस उपन्यास में निर्मला उसके पति और बड़े पुत्र मंसाराम का चरित्र चित्रण इतनी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक पकड़ के साथ किया है कि मानव-स्वभाव के अनेक पहलू उजागर हो जाते हैं। पन्द्रह वर्ष की किशोरी निर्मला को अपने पिता की उम्र के पति के साथ सामान्य दाम्पत्य जीवन बिताने में होनेवाला संकोच। दूसरी ओर मुंशी तोताराम को सामान्य दाम्पत्य जीवन बिताने में होने वाला संकोच। दूसरी ओर मुंशी तोताराम की पत्नी को प्रसन्न करने के लिए की जानेवाली तरह-तरह की हास्यास्पद चेष्टाएँ। इसमें असफल होने पर वे निर्मला और मंसाराम के बीच के सहज संबध को संदेह की दृष्टि से देखते हैं। निर्मला इसे समझकर मंसाराम से कठोर व्यवहार करने लगती है, उसकी उपेक्षा करती है ताकि मुंशी तोताराम का संदेह दूर हो जाए। लेकिन बालक मंसाराम इसे समझ नहीं पाता। उसके हृदय को चोट लगती है लेकिन जब पिता का संदेह उसकी समझ में आता है तब वह ग्लानि से गड़ जाता है। वह अपनी माता को इस कलंक से मुक्ति देने के लिए खुद दूरी बना लेता है। इस अन्तर्द्वन्द्व में वह बीमार पड़ जाता है और मृत्यु को प्राप्त होता है। निर्मला बेटी को जन्म देकर दिन पर दिन बढ़नेवाली आर्थिक कठिनाइयों के कारण अपनी बेटी के भविष्य के प्रति आशंकित हो जाती है। वह कंजूसी करने लगती है, पैसों को लेकर नौकरानी पर संदेह करने लगती है, बालक सियाराम को बार-बार बाजार भेजती है। मरते समय भी उसे बेटी की ही चिंता है कि कहीं वह भी अनमेल विवाह की शिकार न बन जाए। इसी तरह बच्चों के मनोविज्ञान में भी प्रेमचन्द की अच्छी पकड़ है। डॉ. भुवनमोहन सिन्हा जैसे पढेलिखे व्यक्ति का दहेज-लोभी स्वभाव, निर्मला के प्रति उसके आकर्षण, ग्लानिवश आत्महत्या कर लेने जैसे निर्णय के पीछे भी मनोवैज्ञानिक कारण हैं। विधवा ननद के रूप में रुक्मिणी का चरित्र भी गतिशील है। इसमें आदर्श चरित्र है सुधा का। हास्य रस के लिए मोटेराम शास्त्री और भुंगी हैं। निर्मला की माता कल्याणी अपने बेटों के भविष्य की रक्षा के लिए बिना दानदहेज के निर्मला का व्याह तीन बच्चों के पिता अधेड़ तोतारम से करने में संकोच नहीं करती और सोचती है कि निर्मला के भाग्य में सुख भोगना लिखा है तो वही सुख मिल जाएगा। इस तरह अपनी गलती की जिम्मेदारी वह भाग्य पर डाल देती है।

(इ) देश काल और वातावरण

'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द ने अपने समय का वातावरण चित्रित किया है। यह कथा भारतवर्ष के मध्य वर्गीय समाज की कथा है विशेषकर हिंन्दू समाज का चित्रण इसमें है। इसलिए सामाजिक कुरीतियों, कुपथाओं अंध-वेश्वासों से भरे सामाजिक परिवेश का चित्रण इसमें है। हर जगह पात्र एवं प्रसंग के अनुरूप वातावरण का निर्माण किया गया है।

बोध प्रश्न : 4. देश-काल से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

(ई) भाषाशैली

'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द की भाषा-शैली का सहज-स्वाभाविक रूप आया है। भाषा-शैली के दो रूप इसमें मिलते हैं। एक जहाँ लेखक वाचंक या 'नैरेटर' के रूप में स्वयं कथा कहता है और दूसरे पात्रों के संवाद द्वारा। स्वयं कथा कहने में प्रेमचन्द की भाषा की अपनी शैली है जिसमें उर्दू शब्दों का पुट है, यह प्रवाहपूर्ण शैली है, बीच-बीच में अलंकारों का, उदाहरणों का प्रयोग है, मुहावरे और लोकोक्तियाँ हैं, जैसे-

''यों तो बाबू उदयभानुलाल के परिवार में बीसों ही प्राणी थे, कोई ममेरा भाई था, कोई फूफेरा, कोई भांजा था, कोई भतीजा, लेकिन यहाँ हमें उनसे कोई प्रयोजन नहीं। वह अच्छे वकील थे, लक्ष्मी प्रसन्न थी और कुटुम्ब

के दरिद्र प्राणियों को आश्रय देना उनका कर्त्तव्य ही था।"

ये इस उपन्यास की पांक्तियाँ हैं। इसी प्रकार पात्रों के संवादों में पात्रों की उम्र, उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति, पेशा, शिक्षा, मानसिकता आदि का ध्यान रखा गया है। जैसे सुधा और निर्मला की बात चीत में दो सखियों की हँसी-मजाक का आनन्द है तो नौकरानी भुंगी जब बात करती है तो उसका तकियाकलाम है 'झूठ क्यों बोलूँ', वह इसी का बार-बार प्रयोग करती है। मुंशी तोतारम की बहन रुक्मिणी की भाषा घरेलू महिलाओं की भाषा है जिसमें लोकोक्तियों का प्रयोग है, एक उदाहरण देखिए -

रूक्मिणी - "तो तुम्हारी यही मर्जी है कि किसी बात में न बोलूँ, यही सही। लेकिन फिर यह न कहना कि तुम तो घर में बैठी थी, क्यों नहीं सलाह दी। जब मेरी बातें जहर लगती हैं, तो मुझे क्या कुत्ते ने काटा है, जो बोलू। मसल है - 'नाटों खेती, बहुरियों घर' मैं भी देखूं बहुरिया कैसे घर चलाती है।" इसी प्रकार मुंशी तोताराम जब अपने मित्र नयनसुखराम से बात करते है तो उनकी भाषा में उर्दू का लहजा होता है, देखिए एक उदाहरण -

तोता :- अजी, यह सब कर चुका। दम्पतिशास्त्र के सारे मंत्रो का इम्तहान ले चुका सब कोरे गये हैं।

नयन :- अच्छा तो अब मेरी एक सलाह मानो। जरा अपनी सूरत बनवा लो। आजकल यहाँ एक बिजली के डॉक्टर आये हुए हैं, जो बुढापे के सारे निशान मिटा देते हैं। क्या मजाल कि चहरे पर एक झुर्री या सिर का कोई बाल पका रह जाय। न जाने ऐसा क्या जादू कर देते हैं कि आदमी का चोला ही बदल जाता है।

तोता :- फीस क्या लेतें हैं?

नयन :- फीस तो सुना; ज्यादा लेते हैं, शायद पाँच सौ रुपये।

तोता :- अजी कोई पाखण्डी होगा, बेवकूफों को लूट रहा होगा। कोई रोगन लगाकर दो-चार दिन के लिए जरा चेहरा चिकना कर देता होगा। इश्तहारी डॉक्टरों पर तो अपना विश्वास ही नहीं। दस-पाँच की बात होती, तो कहता जरा दिल्लगी ही सही 500 बड़ी रकम है।

(उ) उद्देश्य

'निर्मला' उपन्यास की रचना ही इस उद्देश्य से की गई कि समाज में व्याप्त कुरीतियों के कारण स्त्रियों की कैसी दुर्दश होती है। ऐसी ही एक कुरीति है दहेज-प्रथा। निर्मला का विवाह तीन बच्चों के पिता अधेड़ उम्र के मुंशी तोताराम से कर दिया जाता है। यह अनमेल विवाह है। इसका परिणाम दुखद होता है। इसके साथ प्रेमचन्द ने यह भी बताया है कि डॉ. भुवनमोहन सिन्हा जैसे पढेलिखे युवक भी दहेज की आशा और कामना करते हैं। इस उद्देश्य की रक्षा करते हुए भी 'निर्मला' बहुत रोचक और पठनीय बन पड़ा है।

बोध प्रश्न : 5. मुंशी तोतराम की भाषा की क्या विशेषता है?

.....

.....

.....

19.4 सारांश

'निर्मला' उपन्यास एक उद्देश्यपूर्ण उपन्यास है। यह प्रेमचन्द के यथार्थवादी दृष्टिकोण का परिचायक है। 'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द ने भारतीय समाज की कुरीति दहेज - की बुराइयों और इसके दुखद परिणामों का चित्रण किया है। 'निर्मला' उपन्यास में पात्रों के स्वभाव और उनके व्यवहार का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

(अ) कथानक

उपन्यास के तत्वों के आधार पर 'निर्मला' उपन्यास का मूल्यांकन इस प्रकार किया जा सकता है। - 'निर्मला' का कथानक सुगठित, गतिशील और विकासशील है। इसमें घटनाएँ कथा को तेजी से आगे बढ़ाती हैं। घटनाओं का समायोजन लेखक ने इस प्रकार किया है कि पात्रों का चरित्र प्रकट होता है और आदि, मध्य और चरमोत्कर्ष के बिन्दुओं से गुजरते हुए कथा लेखक के उद्देश्य को पूरी तरह से उजागर करती है। इसमें पात्रों की संख्या अधिक नहीं है, उपन्यास का अकार भी छोटा है कारण यह कि प्रेमचन्द जी ने इस उपन्यास में केवल एक समस्या और उसके दुष्परिणामों को चित्रित करने में अपना ध्यान केन्द्रित किया है। यह उपन्यास दुखांत है। निर्मला का अपने पिता की उम्र के व्यक्ति से विवाह होता है। वह इसे अपना भाग्य समझकर चुप हो जाती है लेकिन उसके पति मुंशी तोताराम अपने बड़े लड़के मंसाराम और निर्मला के स्नेह को संदेह से देखते हैं। इस दुख में मंसाराम की मृत्यु हो जाती है। उससे छोटा जियाराम आत्महत्या कर लेता है और सियाराम घर छोड़कर चला जाता है। इसके साथ डॉ. भुवनमोहन सिन्हा और सुधा की सहायक कथा भी चलती है।

(आ) चरित्र चित्रण

इस उपन्यास में चरित्र-चित्रण में सूक्ष्म दृष्टि का परिचय प्रेमचन्द ने दिया है। अपने बेटे से भी कम उम्र की लड़की से ब्याह कर फिर उस पर और अपने बेटे पर सन्देह करने वाले मुंशी तोताराम का चरित्र, इस त्रासदी की शिकार निर्मला का निष्पाप चरित्र इस उपन्यास का प्राण-तत्व है। तीसरा महत्वपूर्ण चरित्र है निर्दोष बालक मंसाराम जो अपनी विमाता को माता से भी बढ़कर सम्मान देता है और अपने ऊपर किए जा रहे संदेह की ग्लानि में घुल घुलकर मर जाता है। इसी प्रकार दहेज लोभी डॉ. भुवनमोहने सिन्हा, आदर्शवादी साहसी सुधा आदि सभी चरित्रों का चित्रण अत्यंत प्रभावशाली बन पड़ा है।

(इ) देश काल और वातावरण

प्रेमचन्द ने अपने समय का चित्रण इस उपन्यास में किया है। मध्यवर्गीय हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों और उसकी आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक स्थितियों का चित्रण करते हुए स्वतंत्रता-पूर्व भारत का वातावरण लेखक ने प्रस्तुत किया है।

(ई) भाषा-शैली

इसमें दो प्रकार की भाषा-शैली है। एक जहाँ लेखक वाचक या नैरेटर के रूप में कहानी कहता है और दूसरा पात्रों के संवाद। पहले में लेखक की भाषा प्रेमचन्द की अपनी भाषा है हिन्दी - उर्दू मिली हुई मुहावरेदार भाषा और दूसरे में पात्रों की सामाजिक स्थिति, उम्र, पेशा, शिक्षा का स्तर और स्वभाव के अनुरूप और प्रसंग का ध्यान रखते हुए भाषा का प्रयोग किया गया है।

(उ) उद्देश्य

इस उपन्यास की रचना का उद्देश्य ही है भारतीय समाज में व्याप्त दहेज-प्रथा के दुष्परिणामों का चित्रण करना और लेखक इसके निर्वहण में सफल हुआ है।

19.5 समीक्षा

'निर्मला' उपन्यास प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों की तरह सोद्देश्य उपन्यास है। इसमें यथार्थवादी दृष्टिकोण हैं। प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों की तरह विराट परिवेश में अनेक समस्याओं का चित्रण इसमें नहीं है बल्कि एक ही कुरीति पर ध्यान केन्द्रित कर उसके विभिन्न दुष्परिणामों को दिखाया गया है। इसलिए यह उपन्यास कलेवर में छोटा है। निर्मला के जीवन की त्रासदी को दिखला कर उसके माध्यम से अनेक प्रकार की सामाजिक कुरीतियों की बलि चढ़ जाने वाली भारतीय नारी मात्र की त्रासदी को इसमें चित्रित किया गया है। इस उपन्यास

BRAOU

में आदर्शवादी दृष्टिकोण केवल सुधा के चरितत्र में दिखाई देता है बाकी सारे उपन्यास में यथार्थ का ही चित्र प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास में प्रेमचन्द की लेखनी की एक और विशेषता प्रकट हुई है वह है मनोवैज्ञानिक चित्रण की। 'निर्मला' उपन्यास का शिल्प भी बहुत कसा हुआ और सुयोजित है इसलिए इस उपन्यास में सामाजिक यथार्थ का कलात्मक चित्रण हो सका है।

19.6 शब्दार्थ

क्रान्तिकारी	–	सबकुछ जड़सहित बदलनेवाला, क्रान्ति लानेवाला
सोद्देश्य	–	उद्देश्यपूर्ण, जिसमें कोई उद्देश्य हो
व्याप्त	–	फैला हुआ
तिल-तिल कर	–	धीरे-धीरे पूरी तरह से, कण-कण कर
त्रासदी	–	जिसका दुखद अंत हो
आवरण	–	पर्दा
सुयोजित, सुनियोजित	–	जिसकी योजना या रूपरेखा अच्छी तरह से बनाई गई हो
हास्यास्पद	–	मज़ाकिया, हँसी लाने वाला
आशंकित	–	बुरी कल्पनाओं या चिन्ताओं से भयभीत
प्रताड़ित होना	–	फटकार पाना
ग्लानि	–	पछतावा
उपेक्षा	–	परवाह न करना
अन्तर्द्वन्द्व	–	मन में विचारों के बीच टकराहट

19.7 अभ्यास

19.7.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में उत्तर)

(1) 'निर्मला' उपन्यास के कथानक की विशेषताएँ बतलाइए ?

(2) 'निर्मला' उपन्यास के चरित्र-चित्रण की क्या विशेषता है ?

(3) 'निर्मला' उपन्यास की भाषा-शैली-के बारे में बतलाइए ?

(4) 'निर्मला' उपन्यास प्रेमचन्द के महत्वपूर्ण उपन्यासों में से एक माना जाता है – क्यों ?

19.7.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में उत्तर)

(1) 'निर्मला' उपन्यास का मूल्यांकन कैसे किया जा सकता है ?

(2) 'निर्मला' उपन्यास के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए ?

(3) 'निर्मला' उपन्यास में कौन सा देशकाल और वातावरण प्रस्तुत किया गया है ?

(4) 'निर्मला' उपन्यास में यथार्थवादी दृष्टिकोण का परिचय कहाँ मिलता है ?

BRAOU

19.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

19.8.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'निर्मला' उपन्यास प्रेमचन्द के महत्वपूर्ण उपन्यासों में से एक माना जाता है – क्यों ?

उत्तर : 'निर्मला' उपन्यास को प्रेमचन्द के महत्वपूर्ण उपन्यासों में से एक माने जाने के कई कारण हैं। पहला कारण यह कि इसमें प्रेमचन्द के लेखकीय दृष्टिकोण और लेखन-शैली की सारी विशेषताएँ प्रकट हुई हैं जैसे प्रेमचन्द का दृष्टिकोण आदर्शोन्मुख यथार्थवादी है लेकिन 'निर्मला' में उन्होंने नारी-जीवन की त्रासदी का वास्तविक चित्रण किया है और इसका कोई आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत नहीं किया। निर्मला के विवाह का निर्णय उसकी माँ करती है लेकिन इसे भाग्य का खेल समझ कर इसका दुष्परिणाम भोगते हुए निर्मला प्राण दे देती है। यह भारतीय नारी का दुखांतपूर्ण जीवन है। दूसरा कारण यह कि इसमें कथानक छोटा और सुगठित है। घटनाएँ बड़ी तेजी से घटती है और कथा को आगे बढ़ाती है। तीसरा कारण यह कि एक ही समस्या पर ध्यान केन्द्रित किया गया है इसलिए उपन्यास के पात्रों की संख्या सीमित है और कहानी में बिखराव नहीं है। चौथा कारण यह कि प्रेमचन्दजी ने पात्रों का चित्रण बड़े मनोयोग से किया है और विशेषकर बड़ी उम्र में विवाह करने वाले मुंशी तोतारम के ईर्ष्यालु संदेही, स्वार्थी, वासनालोलुप स्वभाव का चित्रण सूक्ष्म ढंग से हुआ है। इन चरित्रों के प्रस्तुतीकरण में प्रेमचन्द ने सिद्ध कर दिया है कि मानव-मनोविज्ञान में भी उनकी गहरी पैठ है। पाँचवाँ कारण यह कि आदर्श का भी परिचय इसमें सुधा के चरित्र से मिलता है। छठा कारण यह कि एक परिवार के माध्यम से सम्पूर्ण समाज का व्यापक चित्र प्रस्तुत किया गया है जिससे प्रमाणित होता है कि प्रेमचन्द हमेशा समाज को दृष्टि में रखते हैं। सातवाँ कारण इस उपन्यास का शिल्प है जिसमें भाषा-शैली और संरचना की सारी विशेषताएँ हैं और यह सिद्ध होता है कि छोटे उपन्यासों की रचना में भी प्रेमचन्द कुशल हैं। इन्हीं कारणों से प्रेमचन्द की लेखन-यात्रा में भी 'निर्मला' उपन्यास महत्वपूर्ण पड़ाव है।

19.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (150 शब्दों में)

प्रश्न : 'निर्मला' उपन्यास में कौन सा देशकाल और वातावरण प्रस्तुत किया गया है ?

उत्तर : 'निर्मला' उपन्यास में प्रेमचन्द ने अपने समय का चित्रण किया है अर्थात् स्वतंत्रता से पूर्व भारत में मध्यवर्गीय हिन्दू परिवार की कथा इसमें दी गई है। इस उपन्यास में शिक्षित और अशिक्षित सभी प्रकार के पात्र हैं और उनकी बातचीत से उस समय का वातावरण सजीव हो जाता है। देश-काल का मतलब होता है स्थान और समय। उपन्यासकार अपनी कथा को किसी विशेष स्थान और समय के चौखटे में बाँधकर उस समय का वातावरण प्रस्तुत करता है। 'निर्मला' में भारत के मध्यवर्गीय हिन्दू समाज की कथा है। इससे मालूम होता है कि उस समय के शिक्षित लोग भी दहेज प्रथा और अनमेल विवाह जैसी बुराइयों का विरोध नहीं करते थे बल्कि उसके कारण बनते थे। समाज में भ्रष्टाचार और अंधविश्वास व्याप्त थे और शिक्षित लोग भी उसके शिकार थे। नारी की स्थिति दयनीय थी। मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं थी।

बोध प्रश्नों के उत्तर :-

1. उपन्यास के पाँच तत्व हैं – कथानक, चरित्र चित्रण, देशकाल और वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य।
2. कथा के विकास में जब ऐसा बिन्दु आ जाता है जब घटनाएँ तेजी से घटती हैं और पाठक कौतूहल से प्रतीक्षा करता है कि अब कहानी क्या मोड़ लेगी – इसे चरम बिन्दु या चरमोत्कर्ष कहते हैं।
3. 'निर्मला' में आदर्शवाद सुधा के चरित्र के माध्यम से आया है जब वह अपने देवर का विवाह निर्मला की बहन कृष्णा से करवाती है, निर्मला की माँ कल्याणी को गुप्त रूप से रुपये भिजवाती है ताकि वह विवाह में खर्च कर सके और अपने पति की दुश्चरित्रता का परिचय पाकर उसके मर जाने पर कहती है "ऐसे सौभाग्य से तो वैधव्य भला है"

BRAOU

4. देशकाल से तात्पर्य है स्थान और समय। उपन्यासकार जिस स्थान और काल की कथा कहता है उसी के अनुरूप वातावरण का चित्रण करता है।

5. मुंशी तोताराम शिक्षित हैं और पेशे से वकील हैं इसलिए उनकी भाषा में उर्दू शब्दों की भरमार है, अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

निर्मला – प्रेमचन्द

BRAOU

इकाई-21 : इलेक्शन - रामकुमार वर्मा

21.0 उद्देश्य

21.1 पाठ एवं लेखक परिचय

21.2 मूल पाठ

21.3 सारांश

21.4 समीक्षा

21.5 शब्दार्थ

21.6 अभ्यास

21.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

21.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

21.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

21.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

21.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

21.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

21.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में नाटककार डॉ. रामकुमार वर्मा की रचना 'इलेक्शन' में कॉलेज के छात्रावास के चुनाव का संदर्भ लेकर कुछ रोचक और संदेशपूर्ण स्थितियाँ उत्पन्न की गई हैं। यह एकांकी नाटक है। इसे पढ़कर आप

- 'इलेक्शन' की गतिविधियों का आनन्द ले सकेंगे।
- इस एकांकी की कथावस्तु का आनन्द ले सकेंगे।
- इस एकांकी के उद्देश्य और इससे मिलने वाले संदेश को स्पष्ट कर सकेंगे।
- इस एकांकी की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- इस एकांकी के भाषा-शिल्प और अभिनयशीलता पर विचार कर सकेंगे।

21.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

रामकुमार वर्मा ने सभी प्रकार के नाटकों, एकांकियों की रचना की जिनमें सामाजिक, पोराणिक, ऐतिहसिक हास्य-व्यंग्य आदि महत्वपूर्ण है। 'इलेक्शन' की कथावस्तु कहीं राजनीतिक है तो कहीं सामाजिक लेकिन इसमें अधिकांश स्थानों पर हास्य और व्यंग्य के पुट ने इसकी उपयोगिता और अध्ययन को बढ़ाया है। 'इलेक्शन' में हास्य-व्यंग्य की भरपूर छटा ने इस एकांकी को हास्य रस के निकट ला दिया है। अत: 'इलेक्शन' हास्य प्रधान एकांकी मानी जा सकती है।

BRAOU

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. श्याम भाभी से अण्डे का नाम लेने से इसलिए मना करता है कि उसके घर में अण्डा खाना तो दूर उसका नाम लेना भी मना है।
2. राधा भाभी छिपाकर चन्द्रकान्ता उपन्यास पढ़ती है । चन्द्रकान्ता एक रोचक उपन्यास है लेकिन घर में बहुओं के लिए ऐसे उपन्यास पढ़ना मना है।
3. गोपाल छिपाकर अण्डे खाता है और सिगरेट पीता है।
4. श्याम भी घरवालों से छिपाकर दूध के साथ कच्चा अण्डा खाता है और कभी-कभी बुखार की दवा के बहाने ब्रांडी पीता है।
5. अम्मा कमरे में बेटों से यह बताने आती है कि बारिश के कारण उनके कमरे की छत चू रही है और उसकी मरम्मत होनी है।
6. राधा कहती है कि फ्राइंग पैन में पुलटिस है जो श्याम को पैर में चोट लगने पर लगाने के लिए तैयार की गई है।
7. माधव को आता देखकर गोपाल अण्डे के छिलके छिपाने की कोशिश करता है।
8. माधव यह कहकर सबको चौंका देता है कि घर में छिपकर किये जाने वाले सारे काम जैसे अण्डों का प्रयोग, सिगरेट- शराब का प्रयोग उसे और अम्मा को मालूम हैं। इसीलिए छिपाने की जरूरत नहीं।

20.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.	अण्डे के छिलके (एकांकी संग्रह)	–	मोहन राकेश
2.	पैर तले की जमीन (संग्रह)	–	मोहन राकेश
3.	रात बीतन तक (संग्रह)	–	मोहन राकेश
4.	बीज (नाटक)	–	मोहन राकेश
5.	आषाढ़ का एक दिन (नाटक)	–	मोहन राकेश
6.	लहरों के राजहंस (नाटक)	–	मोहन राकेश
7.	आधे-अधूरे (नाटक)	–	मोहन राकेश
8.	न आने वाला कल (उपन्यास)	–	मोहन राकेश
9.	अन्धेरे बन्द कमरे (उपन्यास)	–	मोहन राकेश
10.	अन्तराल (उपन्यास)	–	मोहन राकेश
11.	क्वार्टर (कहानी संग्रह)	–	मोहन राकेश
12.	पहचान (कहानी संग्रह)	–	मोहन राकेश
13.	वारिस (कहानी संग्रह)	–	मोहन राकेश
14.	एक घटना (कहानी संग्रह)	–	मोहन राकेश

BRAOU

अम्मा का सवाल है, अम्मा इन्हें नाली में पड़े हुए भी नहीं देखेगी।''

उ) ''हमें अपनी अम्मा से भी प्यार है और अपनी खुराक से भी।''

20.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

20.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में)

प्रश्न : 'अण्डे के छिलके' में नारी-पात्रों का चरित्र-चित्रण करते हुए उनके अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : 'अण्डे के छिलके' नामक मोहन राकेश की एकांकी में तीन नारी पात्र हैं जिनमें जमुना (सास), राधा (बड़ी बहू) और वीना (मंझली बहू) हैं। ये तीनों पात्र मध्यवर्गीय परिवेश से लिये गये हैं। किन्तु इन तीनों के चरित्रों में काफ़ी अन्तर मिलता है। जमुना पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करनेवाली नारी पात्र है जो परिवार में अपने पुराने संस्कार, रूढ़िवादी रीति रिवाजों, धार्मिक आस्था और आदर्शवादी दृष्टि से अपना अधिकार बनाये रखना चाहती है। परन्तु उसकी संतानें और बहुएँ उसके प्रति प्रेम रखते हुए भी उसके संस्कारों को स्वीकार नहीं कर पाते और वे उसका मन भी दु:खी नहीं करना चाहते। इसीलिए चोरी छिपे अण्डे, शराब, सिगरेट का सेवन और जासूसी तिलस्मी उपन्यास का अध्ययन करते हैं। उसकी सबसे बड़ी बहू राधा अपनी सास से डरती है वह उपन्यास पढ़ने के अपने शौक को चोरी छिपे पूरा करती है। लेकिन उसकी चोरी उसके पति से छिपी नहीं रह पाती। वह दिखावे के लिए अपने पास गुटका रामायण रख लेती है और अपनी व्यवहार कुशलता से वह सास जमुना की दृष्टि में धर्म परायण, आदर्श बहू बनी रहने का ढोंग करती है। उसके दोहरे चरित्र को नयी पीढ़ी का उदार चरित्र कहा जा सकता है। परन्तु उसके विपरीत वीना का चरित्र खुले स्वभाव, शिक्षित, समझदार नारी का रहा है। वह झूठी परंपराओं और संस्कारों को नैतिकता के रूप में स्वीकार नहीं करती, उसके व्यक्तित्व में दोहरी नैतिकता नहीं है। वह अपनी नैतिक मान्यताओं को स्वच्छन्दता से स्वीकार करने की समर्थक चुप्पी सांध लेती है, विद्रोह नहीं करती और न ही उसे छुपाव पसन्द है। इस प्रकार इस एकांकी के तीनों पात्र अलग-अलग व्यक्तित्व, समझ, मानसिकता, स्वभाव, संस्कार रखते हैं। इनके चरित्रों से पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के मध्य नैतिक आदर्शों, परंपराओं, रीति रिवाजों और संस्कारों द्वारा निर्मित जीवन मूल्यों के संबंध में स्पष्ट विक्षमता दिखाई देती है। तीनों नारी पात्र अपने-अपने व्यक्तित्व, चरित्र और भूमिका के निर्वाह द्वारा एकांकी को सफ़ल बनाने में पूर्णत : सक्षम हैं।

20.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में)

प्रश्न : माधव के चरित्र का 'अण्डे के छिलके' एकांकी में क्या महत्व है ?

उत्तर : इस एकांकी की प्रमुख नारी जमुना का सबसे बड़ा लड़का माधव संस्कारों में अपनी माँ का मूर्त रूप है। वह अपनी माँ की तरह पुरानी पीढ़ी के सभी संस्कारों, परंपराओं, रूढ़ियों, रीति-रिवाजों, धार्मिक आस्था और आदर्शों में विश्वास रखता है। वह समझदार और व्यवहार-कुशल है । वह यह अच्छी तरह जानता है कि उसके परिवार में पुरानी पीढ़ी की अपनी माँ और नयी पीढ़ी के भाई, अपनी पत्नी और भाई की पत्नी के मध्य संस्कार, विचार, मान्यताओं और जीवन-मूल्यों को लेकर विषम स्थिति है । वह अपने भाइयों द्वारा घर पर अण्डे, शराब, सिगरेट का सेवन करने और अपनी पत्नी द्वारा तिलस्मी उपन्यास पढ़ने की प्रवृत्ति को जानकर भी चुप हो जाता है । उसकी विवशता यह है कि वह अपनी माँ के संस्कार बदल नहीं सकता और न ही अन्य सदस्यों के निषिद्ध कार्यों पर रोक लगा सकता है। इसीलिए वह उदारवादी दृष्टि अपनाकर दोनों पीढ़ियों के मध्य संतुलन बनाये रखता है। अतं में नयी पीढ़ी के सामने उसकी वास्तविकता से अवगत होने की बात बताकर उनकी दोहरी मानसिकता को उभारता है। यहाँ नई पीढ़ी द्वारा ओढ़े गये आदर्श अण्डे के छिलकों के समान हैं जिनके भीतर असलियत कुछ और है। माधव दोनों पीढ़ियों के मध्य संतुलन स्थापित कर विषम परिस्थिति को समाप्त करता है।

हलुवा	–	एक प्रकार की खीर
बरसाती	–	बारिश के समय पहनने वाला कुर्ता
हरगिज़ नहीं	–	कभी नहीं
गैलरी	–	छज्जा या झरोखा
केतली	–	चाय का बर्तन
हिलहुज्जत	–	बहस
बेकस – सा	–	बेबस, मजबूर होकर
करतूत	–	शरारत
बुखार मिक्चर	–	शराब
खामखाह	–	बेकार में, व्यर्थ में
इंतजाम	–	व्यवस्था

20.6 अभ्यास

20.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. 'अण्डे के छिलके' में कथावस्तु के विकास की स्थितियों को स्पष्ट कीजिए।
2. 'अण्डे के छिलके' के नारी–पात्रों का चरित्र–चित्रण करते हुए उनके अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
3. 'अण्डे के छिलके' किस बात का प्रतीक है और इसमें लेखक का उद्देश्य क्या है?
4. 'अण्डे के छिलके' एकांकी के पात्रों के माध्यम से दोहरी मानसिकता और दिखावटी आदर्श को दर्शाइए।

20.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

1. माधव के चरित्र का इस एकांकी में क्या महत्व है?
2. वीना का चरित्र आधुनिक शिक्षित साहसी नारी का प्रतिनिधित्व करता है। सिद्ध कीजिए।
3. गोपाल और श्याम के आदर्श और जीवन मूल्यों को दर्शाइए।
4. जमुना के चरित्र द्वारा पुरानी पीढ़ी की नैतिकता को व्यक्त कीजिए।
5. राधा का चरित्र धार्मिक परायण आदर्श बहू के रूप को किस प्रकार सार्थक बनाता है – बतलाइए।
6. सन्दर्भ सहित वख्या कीजिए।

अ) "भई तुम लोगों की यह बात मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आती, अगर खाना ही है तो इसमें छिपाने की क्या बात है?"

आ) "हाँ, हाँ, ठीक बात तो है हमी ने वीना से जोर देकर कहा था कि पुलटिस बनाकर श्याम को बाँध दो।"

इ) "यह मैला कपड़ा है और वहाँ उतनी दूर खूँटी से कूदकर मेज पर आ गया । तुम लोगों के लच्छन जरा भी मेरी समझ में नहीं आते।"

ई) "आज से छिलके नाली में डाल दिया करो इनके लिये डिब्बा रखने की जरूरत नहीं ... और जहाँ तक

BRAOU

संतुलन बनाये रखता है। किन्तु गोपाल बड़े भाई माधव से डरता है और छोटे भाई श्याम पर रौब जमाता है। उसे अपनी माँ से प्रेम है और वह उसे नाराज नहीं करना चाहता। उसका अपनी भाभी पर स्नेह वास्तव में उसके सिगरेट पीने की बात छिपाये रखने के कारण दिखाई देता है। वह डरपोक स्वभाव का व्यक्ति है जो परिवार के आदर्श की रक्षा के लिए ऊपरी आवरण को बनाये रखता है। सबसे छोटे श्याम पर सभी का स्नेह और अधिकार है। वह भी छिपकर मर्यादा को तोड़ता है। परन्तु अपने कार्यों से माँ को चोट पहुँचाना नहीं चाहता। वह खाने का शौकीन है परन्तु चतुर नहीं बल्कि उसके सीधेपन के कारण एकांकी के हास्य में वृद्धि हुई है।

इस प्रकार मोहन राकेश के इस एकांकी के सभी पात्र अण्डे के छिलकों के द्वारा परंपरा के टूटने की चिंता न कर उस पर आवरण डालते हैं। इससे एकांकी में व्यंग्य का सुन्दर समन्वय मिलता है। इससे 'अण्डे के छिलके' उन झूठी और खोखली परंपराओं का प्रतीक हैं जो भीतर से सड़-गल चुकी है। ये परंपराएँ भीतर से टूट चुकी हैं जिसका मध्यवर्गीय परिवार में कोई पालन नहीं करता। इन पुरानी परंपराओं को गोपाल, श्याम और राधा भीतर से पूरी तरह तोड़ चुके हैं किन्तु ऊपर से आवरण डाले हुए हैं। इस स्थिति को लेखक 'अण्डे के छिलके' के माध्यम से दर्शाते हैं। यह क्या सभी मध्यवर्गीय परिवारों की कथा है जिसमें पुरानी पीढ़ी छोड़ना चाहती है? परन्तु पुरानी पीढ़ी की भावनाओं को बिना चोट पहुँचाये वह अपनी इच्छा या शौक को चोरी-छिपे पूरा करती है। यहाँ लेखक का मुख्य उद्देश्य दर्शकों को सामाजिक जीवन में बदलने वाले नैतिक मूल्यों और नयी पीढ़ी की अपनी परंपरा और रीति रिवाजों के प्रति उपेक्षा से परिचित करना है क्योंकि मध्यवर्गीय लोग निषिद्ध विषयों पर आवरण डालकर इस भ्रम में पड जाते हैं कि अन्य लोग उनके कार्यों से अपरिचित हैं। इस बात को पूरी सार्थकता के साथ लेखक ने अपनी इस एकांकी में प्रस्तुत किया है।

20.5 शब्दार्थ

सामान्य	–	मामूली, साधारण
मानसिकता	–	समझ
तिलस्मी उपन्यास	–	जादुई रहस्यों से भरे उपन्यास
फ्राइंग पैन	–	तलने-भूनने का बरतन
संकोच करना	–	हिचकिचाना
पुलटिस	–	मोटा लेप जो चोट पर लगाया जाता है ।
आश्वस्त करना	–	धीरज बाँधना
निषिद्ध	–	मना की गयी
आतंक	–	भय
दुराव	–	छिपाना
गुटका रामायण	–	छोटे आकार की संक्षिप्त रामायण
आपत्ति	–	विरोध
दोहरी नैतिकता	–	कहने और करने में अंतर
आवरण	–	पर्दा
वास्तविकता	–	असलियत
इश्नान	–	स्नान, नहावन

BRAOU

'अण्डे के छिलके' एकांकी में मध्यवर्गीय परिवार की कथा है जिसमें तीन तरह के लोग हैं – पुरानी पीढ़ी की जमुना है जो अपने पुराने संस्कारों के अनुरूप अपने बेटों और बहुओं को देखना चाहती है। परन्तु उसके बेटे गोपाल, श्याम और बहू राधा उससे छिपकर अण्डे खाने, शराब और सिगरेट पीने और जासूसी-तिलस्मी उपन्यास पढ़ने जैसे परिवार में निषिद्ध कार्य करते हैं जिसके बारे में स्वयं जमुना और उसका बड़ा बेटा माधव जानते हुए भी अन्जान रह जाते हैं। क्योंकि उनके पास इसके अलावा कोई कार्य नहीं था। परन्तु जमुना की मंझली बहू अपने पति, देवर और जेठानी से अलग स्वच्छ मानसिकता की साहसी शिक्षित महिला है परन्तु वह अपना पक्ष स्वतन्त्र रूप से प्रस्तुत नहीं कर पाती है बल्कि घर के अन्य लोगों के निषिद्ध कार्यों के प्रति चुप्पी साध लेती है क्योंकि नैतिक मूल्यों के संदर्भ में उसकी मानसिकता अन्य लोगों से भिन्न है।

इस एकांकी में निषिद्ध वस्तुओं के सेवन को छिपाने के क्रम में हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न होती है जो वास्तव में समाज में प्रचलित दोहरी मानसिकता को उदघाटित करती है। इस एकांकी की कथावस्तु तीन स्थितियों आरम्भ संघर्ष और चरमसीमा में स्वाभाविक और रोचक ढंग से प्रस्तुत हुई है। कथावस्तु का आरंभ श्याम के बारिश में भीगकर आने से होता है जो माँ जमुना के आने पर तीव्र संघर्ष की स्थिति में पहुँच जाता है। और हास्य की स्थिति वास्तव में अण्डे के छिलके और हलुए को छिपाने की हड़बड़ाहट और बहाने बाजी से उत्पन्न होती है। कथा का चरम बिन्दु तब आता है जब बड़ा बेट माधव द्वारा बडे शांत-भाव और धैया द्वारा वास्तविक स्थिति वह स्वयं और माँ अवगत होने की बात कहता है। कथा का व्यंग्य स्पष्ट करता है कि परिवार के दो सदस्यों को छोड़कर बाकी सभी चोरी-छिपे अपने-अपने शौक पूरे करते हैं और ऊपरी तौर पर परिवार के आदर्श और मर्यादा का पालन करने का दिखावा करते हैं।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से इस एकांकी के छः पात्रों को पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के आधार पर दो वर्गों में बाँटा जा सकता है और साथ ही चरित्र के आधार पर तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। जमुना को छोड़कर अन्य सभी पाँचों पात्र नयी पीढ़ी के हैं किन्तु चरित्र या मानसिकता के आधार पर अम्मा और माधव एक जैसे हैं। दोनों पारिवारिक परंपराओं का पालन करते हैं और करवाना चाहते हैं। दूसरे वर्ग में गोपाल, श्याम और राधा आते हैं। यों तीनों दोहरी मानसिकता में जीने वाले पात्र हैं। यों तीनों निषिद्ध वस्तुओं का सेवन करते हैं और ऊपरी तौर पर परंपरा, आदर्श और मर्यादा के पालने का ढोंग करते हैं। तीसरे वर्ग में वीना है जो खुले स्वभाव की युवती है। उसकी दृष्टि में कोई चीज या बात निषिद्ध नहीं होती। वह मनुष्यता, नैतिकता को बाहर की चीजों में नहीं बल्कि मन के भीतर मानती है। इन्हीं पात्रों के चरित्र के आपसी टकराव से हास्य-व्यंग्य उभरता है।

इस एकांकी की प्रमुख पात्र जमुना का अपने परिवार के सभी सदस्यों पर आतंक छाया हुआ है। उसकी संतानें उससे डरती भी हैं और प्यार भी करती हैं। उसका अंकुश होते हुए भी नहीं है। इसीलिए उसकी बात सुनी-अनसुनी कर दी जाती है। उसके लड़के और बहुएँ उसके संस्कारों के विरुद्ध जाते हैं, किन्तु वे खुलकर विरोध नहीं करते और न ही वे उसके प्रति पूरी तरह ईमानदारी है। इसीलिए जमुना सबकुछ जानकर अनजान बनी रह जाती है जिससे उसकी बेबसी और खीज प्रकट होती है।

जमुना की बड़ी बहू राधा परिवार के नियमों को तोड़ने का साहस नहीं रखती। वह अपनी सास की आशा के विरुद्ध 'चन्द्रकान्ता' जैसा तिलस्मी उपन्यास पढ़ती है और दिखावे के लिए अपने कमरे में गुटका रामायण रख लेती है। राधा बहुत चालाक है। वह अपनी सास की दृष्टि में धार्मिक संस्कारी बनी रहना चाहती है साथ ही अपना शौक भी पूरा करती है । वह सास के आने पर अण्डे के हलुवे का भेद छिपाती हुई बड़ी चालाकी से पुलटिस का बहाना बना देती है। लेकिन वीना का चरित्र सास जमुना और जेठानी राधा से अलग है। वह खुले स्वभाव की शिक्षित स्त्री है जो जासूसी तिलस्मी उपन्यास पढ़ने और अण्डा खाने को बुरा नहीं मानती। बल्कि वह सब चोरी-छिपे करना पसन्द नहीं करती। परन्तु पारिवारिक वातावरण के अनुरूप वह भी अन्य सदस्यों की तरह अण्डे की और अन्य बातें छिपाने को विवश है। वह उनकी दोहरी नैतिकता के आगे चुप रह जाती है। पुरुष पात्रों में माधव गंभीर और समझदार होने पर भी वह अपनी माँ की मानसिकता और अन्य सदस्यों की आदतों के बीच

BRAOU

जमुना का तीसरा बेटा श्याम चंचल और सरल हृदय का युवक है । वह भी अपने कमरे में छिपकर दूध के साथ कच्चा अण्डा लेता है और कभी-कभी छिपकर शराब भी चख लिया करता है । एकांकी के आरंभ में श्याम बारिश में भीग कर अपने घर आने पर वीना उसके लिए चाय बनाना चाहती है । किन्तु श्याम चाय के साथ कुछ खाना चाहता है तब वीना खाने के लिए अण्डे का हलुवा बनाने के लिए श्याम से अण्डे मँगवाती है और उसके लौटने तक चाय के लिए पानी लेने राधा के कमरे का दरवाजा खटखटाती है जहाँ राधा दरवाजा बन्दकर तिलस्मी उपन्यास पढ़ रही थी । वीना उसे उपन्यास के साथ ही अपने कमरे में चाय पीने बुला लेती है । राधा और वीना के बीच तिलस्मी उपन्यास पढ़ने के संबंध में बातचीत के दौरान श्याम अण्डे लेकर आ पहुँचता है । वह राधा को देखकर संकोच करता है और राधा श्याम से अपना उपन्यास छिपाने का प्रयास करती है । तभी गोपाल आ जाता है और वीना स्टोव पर चाय चढ़ाकर अण्डे फेंटने लगती है । उसके पास ही मेज पर अण्डे के छिलके पड़े हैं । उसी समय जमुना अपने कमरे में पानी चूने की बात करने वहाँ आ पहुँचती है । उसके आने से स्थिति में बदलाव अजाता है । यहीं एकांकी का हास्य तीव्र हो जाता है ।

गोपाल मेज पर पड़े अण्डे के छिलकों को छिपाने के लिए उस पर वीना का जम्पर डाल देता है और बिजली के चूल्हे पर फ्राइंग पैन में बने अण्डे के हलुवे पर तश्तरी ढक देता है । माँ के पूछने पर बिजली के चूल्हे पर क्या बनाया जा रहा है? राधा बात बनाकर कह देती है कि श्याम के पैर में चोट लग जाने के कारण वीना पुटलिस बना रही है । यह सुनकर जमुना स्वयं श्याम की चोट पर पुटलिस बाँधने के लिए कपड़ा खोजती है । तभी उसकी नजर टेबल पर पड़े नये जम्पर पर पड़ती है जिसे देख वह क्रोधित हो जाती है तथा बहुओं की लापरवाही पर नाराज होकर जम्पर उठाने के लिए बढ़ती है । लेकिन गोपाल उसे बड़ी मुश्किल से ऐसा करने से रोक पाता है । तब जमुना अपना कमरा बारिश के पानी से भर जाने तथा छत टपकने की बात बताती है साथ ही अपने पुत्रों की उसकी मरम्मत की जाने वाली लापरवाही पर नाराज होती है । तब गोपाल उसकी शिकायत पर आश्वस्त कर कमरे तक पहुँचाने जाता है । इसी बीच भाई माधव देख लेता है । माधव के पूछने पर श्याम घबराहट में उत्तर देता है कि वह पुलटिस खा रहा है । तब माधव बड़े शांत भाव से कहता है - किसी को उससे कोई बात छिपाने की जरूरत नहीं है । वह बताता है कि वह श्याम द्वारा दूध में अण्डा लेने और गोपाल द्वारा अण्डा खाने और सिगरेट पीने के बारे में जानता है । इसके अलावा अपनी पत्नी राधा द्वारा छिपकर रात में मोमबत्ती जलाकर जासूसी उपन्यास पढ़ने के बारे में जानता है। वह गोपाल से कहता है कि उसे अण्डे के छिलके मोजे में छिपाने या छिपकर फेंकने की आवश्यकता नहीं है। वह घर की नाली में फेंक सकता है क्योंकि अम्मा उसे देखकर भी नहीं देखेंगी। वह भी उसी की तरह सब कुछ जानकर भी अनदेखा कर देती है। इसे सुन गोपाल, श्याम और राधा दंग रह जाते हैं।

BRAOU

20.4 समीक्षा

'अण्डे के छिलके' मोहन राकेश द्वारा लिखित हास्य-व्यंग्य पूर्ण एकांकी है। इसमें सामान्य जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं और बातों को प्रस्तुत किया गया। जिससे आज के मध्यवर्गीय परिवार की अलग-अलग पीढ़ियों की मानसिकता का पता चलता है। इसके अलावा समय के साथ समाज में जीवन मूल्यों के स्तर पर आने वाले बदलाव को देखा जा सकता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के मध्य सामाजिक नैतिक मूल्यों, परंपराओं, रीति-रिवाजों, जीवन मूल्यों और दृष्टिकोण के स्तर पर संघर्ष की स्थिति बन रही है। यही विषम स्थिति 'अण्डे के छिलके' एकांकी में विभिन्न पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत की गयी है । इस एकांकी में 'अण्डे के छिलके' प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत हुए हैं। वास्तव में नयी पीढ़ी द्वारा परंपराओं और जीवन मूल्यों के स्तर पर दोहरी मानसिकता अपनायी जा रही है। उसमें इन सभी के प्रति विद्रोह का भाव है। किन्तु वह अपने इस भाव को छिपाकर और अपने कार्यों पर पर्दा डालकर पुरानी पीढ़ी के सामने आदर्शवादी रूप में प्रस्तुत हो रही है। उसकी इस दोहरी प्रवृत्ति अन्दर से विद्रोह और ऊपर से उदारता को लेखक ने उजागर किया है।

माधव : तुमने जल्दी में सोचा कि इसे खा डाला जाया । (फिर हँस कर) बहुत अच्छा किया । बनी हुई चीज का कोई तो इस्तेमाल होना ही चाहिए । और तुम गोपाल, तुम ये छिलके जेब में क्यों भरते हो ? बाहर जाकर इन्हें नाली में डाल दो । आगे से डिब्बे में भरकर बाहर ले जाने की जरूरत नहीं..... ।

गोपाल : मगर, भैया.... ।

माधव : भैया सब जानते हैं, राजा । वे यह भी जानते हैं कि तुम्हारे बायें हाथ की उँगलियाँ किस तरह पीली हुई हैं । यह भी जानते हैं कि श्याम बाबू का दूध कमरे में क्यों जाता है ? और यह भी जानते हैं कि उनके सो जाने पर उनकी बीबी मोमबत्ती जलाकर कौन-सी किताब पढ़ा करती है ?

सबके मुँह से आश्चर्य से तरह-तरह के शब्द निकलते हैं । माधव हँसता रहता है ।

गोपाल : भैया, अब आपसे क्या छिपाना है ? आप तो सब कुछ जानते हैं । मगर देखिये, अम्मा से नहीं कहियेगा । अम्मा को पता चल गया तो बस किसी की खैर नहीं.... ।

माधव : अम्मा से न कहूँ । (हँसकर) तुम समझते हो कि अम्मा यह सब नहीं जानतीं ।

श्याम और गोपाल : ऐं । अम्मा भी जानती हैं ।

माधव : क्यों नहीं जानती । अम्मा तो शायद मेरी वे बातें भी जानती हैं जो मैं समझता हूँ कि वे नहीं जानतीं (हँसकर) आज से छिलके नाली में डाल दिया करो, इनके लिए डिब्बा रखने की जरूरत नहीं । और जहाँ तक अम्मा का सवाल है, अम्मा इन्हें नाली में पड़े हुए भी नहीं देखेंगी ।

हल्की-हल्की हँसी हँसता रहता है ।

बोध प्रश्न : 8. माधव क्या कहकर सबको चौंका देता है ?

.....

.....

.....

BRAOU

20.3 सारांश

'अण्डे के छिलके' एकांकी की कथा सामान्य परिवार के जीवन से ली गई है । इस मध्य-वर्गीय परिवार की पुरानी पीढ़ी में जमुना अर्थात् अम्मा है जो रूढ़ीवादी पुराने संस्कारों और विश्वासों को माननेवाली शुद्ध शाकाहारी महिला है । वह अपनी आस्थावादी दृष्टि के कारण बहुओं को भी धार्मिक स्वभाववाली देखना पसन्द करती है । अपनी धर्मपरायणता को वह अपनी बहुओं पर थोपती है । वह उन्हें धार्मिक ग्रन्थ से हटकर उपन्यास पढ़ना भी बुरा बताती है । जमुना के तीन पुत्र-अपनी माँ के संस्कारों को मानतो हैं । किन्तु व्यवहार में वह उदार है । उसकी पत्नी राधा को जासूसी और तिलस्मी उपन्यास पढ़ने का शौक है । अत: वह कमरे का दरवाजा बन्द कर 'चन्द्रकान्ता' जैसे तिलस्मी उपन्यास पढ़ा करती है । मँझले बेटे गोपाल को अण्डे बहुत पसंद हैं इसीलिए वह बिजली का स्टोव और फ्राइंग पैन (तलने और भुनने का बर्तन) लाकर अपने कमरे में पत्नी वीणा से अण्डे बनवाकर खाता है । वीना खुले स्वभाव की युवती है । वह अण्डे खाने और जासूसी उपन्यास पढ़ने में कोई बुराई नहीं मानती । किन्तु वह ये सभी छिपाकर भी करना पसन्द नहीं करती । उसका पति गोपाल अपनी माँ जमुना से बहुत डरता है ।

चम्मच भर-भरकर हलुआ मुँह में डालने लगता है।

: भाभी, सच कहता हूं कि बगैर किशमिश के भी इतना मजेदार बना है, इतना मजेदार बना है कि जितनी तारीफ़ करूँ थोड़ी है।

गोपाल घबराया-सा जल्दी-जल्दी आता है।

गोपाल : इस पुलटिस को जल्दी से इधर-उधर करो, भैया आ रहे है।

श्याम : पुलटिस की तो आप जरा चिंता न करें। इसे तो मैं अभी साफ़ किये देता हूँ आप छिलकों के इन्तजाम की सोचें।

जल्दी-जल्दी खाता है । गोपाल जम्पर उठाकर वीना को देता है।

गोपाल : इस जम्पर को उधर रखो और ये छिलके..इन्हें तुम जल्दी से मेरे किसी मोजे में डाल दो।

वीना : मगर आपके सब मोजे तो पहले ही पुराने छिलकों से भरे हुए हैं।

गोपाल छिलके मेज से उठा लेता है और उन्हें हाथों में लिये हुए असमंजस में इधर-उधर देखता है।

गोपाल : तो और किस चीज में डाल दें। मेरा टोप ही ले आओ, या जल्दी से मेरे कोट की जेब में भर दो।

सहसा माधव गैलरी से अन्दर आ जाता है।

माधव : क्यों भाई, क्या भर रहे हो कोट की जेबों में? कोई मेरे न देखने की चीज तो नहीं?

गोपाल : (हताश भाव से), आइए, आइए भैया । आ जाइए, आ जाइए । मैं यूँ ही जरा इन लोगों से मजाक कर रहा था।

माधव : मजाक कर रहे थे कि छिलके तुम्हारी जेब में छिपा दिये जायें?

हँसता हुआ स्टोव की तरफ़ जाता है।

बोध प्रश्न : 7. माधव को आता देखकर गोपाल क्या करता है?

.....

.....

.....

गोपाल : जी हाँ...जी नहीं.. मज़ाक नहीं...मेरा मतलब यह है कि....।

माधव : तुम्हारा मतलब मैं समझता हूँ। और तुम क्या खाकर मुँह पोंछ रहे हो, श्याम बाबू।

श्याम : मैं । मैं भैया.....यह मेरे लिए...मेरे लिए भाभी ने पुलटिस बनायी थी...।

माधव : पुलटिस बनायी थी। और तुम वह पुलटिस गले से नीचे उतार गये । (हँस कर) खूब। तो आजकल पुलटिस खाने के काम भी आने लगी। भला यह तो बताओ, कि जिस चीज की पुलटिस थी। जिस चीज के यह छिलके हैं, उसी की या...।

श्याम बिलकुल घबरा जाता है।

श्याम : भैया, थी तो यह पुलटिस ही, मगर जल्दी में मैंने... मेरा मतलब है कि मैंन जल्दी में...।

BRAOU

गोपाल : अम्मा, नहीं लगेंगी टिड्डियाँ। तुम तो ख़ामख़ाह चिन्ता करती करती हो। यहाँ पलँग पर बैठो और थोड़ी देर आराम करो । बैठो, बैठो..यह इस तरफ़....।

उसे दोनों कंधों से पकड़कर पलँग पर बिठा देता है।

जमुना : हाँ, हाँ, बैठकर आराम करूँ और मेरी जगह काम कोई दूसरा करेगा। घर में करने को इतने काम पड़े हैं। इसे पुलटिस बाँध दूँ तो जाऊँ। दूसरों की मुसीबत कर देता है और आप किताबें पढ़ता रहता है।...ला, मुझे दे यह किताब और यहाँ आकर लेट जा।

उठकर श्याम के हाथ से किताब ले लेती है।

: यह कौन-सी किताब है?

श्याम : यह किताब।....यह अम्मा.... यह मेरे कोर्स की... मतलब मेरे कोर्स की किताब नहीं है यह...शायद यह भाभी की किताब है...।

वीना : यह जीजी की गुटका रामायण है, माँजी। जीजी पढ़ती-पढ़ती यहां ले आयी थीं।

श्याम : हाँ, हाँ, हाँ । भाभी की गुटका रामायण ही तो है। मैं कह रहा था कि लगती तो गुटका रामायण जैसी ही है।

जमुना : मगर गुटका रामायण तो बहुत छोटी होती है। यह तो इतनी बड़ी किताब है।

श्याम : हाँ अम्मा, पहले यह छोटी थी, अब यह ...मेरा मतलब है अम्मा कि इसका पहला एडीशन छोटा था, मगर जो नया एडीशन आया है, वह पहले से बड़ा है। इनके साइज बदलते रहते हैं, यह कोई खास बात नहीं है। चलो अम्मा, तुम्हें बहुत काम है, मैं तुम्हें तुम्हारे कमरे में पहुँचा दूँ। गैलरी में अँधेरा है, कहीं पैर उलटा-सीधा पड़ गया तो और मुसीबत होगी।

चलने को तैयार हो जाता है।

जमुना : पाँव मेरा उल्टा पड़ेगा या तेरा, जिसे चोट लगी है। मैं कह रही हूँ लेट जा, और वह मुझे कमरे में छोड़ने जायेगा।

श्याम : अरे हाँ। मेरे तो पाँव में चोट लगी है। मैं वह बात भूल ही गया था। मैं भाभी से पुलटिस बंधवाता हूँ। गोपाल भैया तुम्हें छोड़ आते हैं।

गोपाल : हां, अम्मा, चलो मैं छोड़ आता हूँ।

जमुना : मगर मैं कहती थी कि मैं इसे पुलटिस बाँध देती...।

गोपाल : उसकी तुम चिन्ता न करो, अम्मा। वीना बहुत अच्छी तरह बाँध देगी। आओ, मेरा हाथ पकड़कर साथ-साथ आ जाओ। गैलरी में वाकई बहुत अँधेरा है।

बाँह पकड़कर उसे साथ ले चलता है। उसके बाहर निकलते ही श्याम प्राइंग पैन पर झपट पड़ता है।

श्याम : भाभी, मैं जरा जल्दी से यह पुलटिस निगल लूँ । अगर बड़े भैया भी आ गये तो कहीं सचमुच ही इसे टखने पर न बँधवाना पड़े।

वीना : ठहरो, जरा सब्र से काम लो, उन्हें भी आ जाने दो।

श्याम : गलत बात है।

BRAOU

क्या है ? इस वक्त भी तो कुछ बना रखा है।

गोपाल : कुछ नहीं अम्मा, इसमें कुछ खास चीज नहीं है। वह श्याम जरा कह कहा था, तो उसके लिए...।

श्याम : (सहसा चौंककर जैसे सफ़ाई देता हुआ) भैया, मैंने कहाँ कहा था ? वह तो खुद भाभी का ही खयाल था। क्यों, भाभी ?

वीना : हाँ, हाँ मैं कब कहती हूँ कि मैंने नहीं कहा था ? ठीक है, मैंने ही तुमसे कहा था.... ।

राधा सहसा उठकर पास आ जाती है ।

राधा : वीना ने भी नहीं, बल्कि हमने कहा था... ।

गोपाल : (जैसे आसमान से गिरकर) भाभी।

राधा : हाँ, हाँ, ठीक बात तो है। हमी ने वीना से जोर देकर कहा था कि पुलटिस बनाकर श्याम को बाँध दो। इसे अपने तन-बदन की होश तो रहती नहीं। क्रिकेट खेलने में कहीं टखने पर गेंद लग गयी है। दो दिन से कह रहा है कि चलने में ज़ोर पड़ता हैं। हमने कहा कि ठंड का दिन है, कहीं दर्द बढ़-बढ़ा गया तो बैठकर दो दिन हमी से मालिश करवाते रहेंगे। वीना ने पुलटिस बना दी है। अभी बाँध देंगे तो रात तक ठीक हो जायेगा।

गोपाल कृतज्ञता के भाव से राधा की तरफ़ देखता है।

बोध प्रश्न : 6. राधा अण्डे का हलुवा छिपाने के लिए क्या करती है ?

.....

.....

.....

गोपाल : यही तो मैं कह रहा था। यह लड़का अपनी सेहत का जरा खयाल नहीं रखता। बाद में जब ज्यादा बिगाड़ हो जाता है तो मुसीबत घर वालों की होती है। (श्याम को आँख से इशारा करके) अब पुलटिस बंधवाकर चुपके से लेटे रहना। समझे ?

जमुना : लाओ मैं ही पुलटिस बांध देती हूँ। कोई पुराना कपड़ा-वपड़ा हो तो दो। कहीं कोई नयी धोती न फाड़ देना ।... यह देखो, नये कपड़ों का क्या हाल कर रखा है। यह रेशमी जम्पर मेज पर क्यों डाल रखा है। यह मेज साफ करने के लिए है।

मेज से जम्पर उठाना चाहती है। मगर गोपाल फिर बीच में आकर रोक देता है।

गोपाल : रहने दो, रहने दो अम्मा, क्या गजब करती हो ? ये काम तुम्हारे करने के हैं जो तुम कर रही हो। मैला कपड़ा है, खूँटी से मेज पर गिर गया होगा। अभी वीना उठाकर रख देगी।

जमुना : यह मैला कपड़ा है। और वहाँ उतनी दूर खूँटी से कूदकर यहां मेज पर आ गया। तुम लोगों के लच्छन जरा भी मेरी समझ में नहीं आते। नया जम्पर है, अभी दो बार भी नहीं पहना होगा, और इस तरह यहां गिरा रखा है। हटो, तुम लोग घर उजाड़ने पर तुले हो, तो मुझे तो घर की चिन्ता है। इतने कपड़े इधर-उधर बिखरे पड़े हैं, इनमें टिड्डियाँ लग जायेंगी तो।

फिर जम्पर उठाने लगती है , मगर गोपाल उसे कंधे से पकड़कर पलँग की तरफ़ ले चलता है ।

BRAOU

दूँ। कभी वक्त पर पता नहीं चलता और बाद में तकलीफ़ बढ़ जाती है। कहते हैं कि प्रिवेंशन इज़ बैटर दैन क्योर, मतलब कि बाद में इलाज करने से पहले एहतियात बरतना ज्यादा अच्छा है। इसलिए मैंने सोचा कि एहतियात के तौर पर थोड़ी मरहम लगा दूँ।

जमुना : मगर इसका हाथ जला कैसे? इस वक्त यह ऐसा क्या काम कर रही थी?

गोपाल : कुछ नहीं कुछ नहीं। कर कुछ नहीं रही थी। श्याम ने कहा था जरा चाय बना दो तो उसके लिए चाय बना रही थी। यूँ चाय बनाने में हाथ जलना नहीं चाहिए, मगर बाज वक्त होता है। जलना था, सो जल गया। वैसे चिन्ता की कोई बात नहीं। मैं अभी मरहम लगा देता हूँ। और मरहम नहीं भी मिलता तो कोई बात नहीं। अपने आप ठीक हो जायेगा। बिलकुल मामूली-सा भी क्या, यही समझो कि जला ही नहीं है। अब तो महसूस भी नहीं होता होगा। क्यों, वीना?

वीना : जी हाँ, बिलकुल महसूस नहीं होता।

गोपाल : और क्या? महसूस होने की कोई बात नहीं थी। तुम नाहक फिक्र कर रही हो अम्मा, फिक्र करने की कोई बात ही नहीं है। तुम खुद देख रही हो, हाथ बिलकुल ठीक हो गया है।

जमुना : मैं पहले ही कह रही थी कि यह मरदूद बिजली का चूल्हा घर में न लाओ। मगर माँ की बात किसी के कान में जाती हो तो न। यह मरदूद हाथ नहीं जलायेगा, तो करंट मारेगा, करंट नहीं मारेगा तो हाथ जलायेगा। हमारे जमाने में किसी ने ऐसी चीजों का नाम भी नहीं सुना था...यह इसके ऊपर क्या रखा है?

गोपाल : यह स्टोव के ऊपर। यह...यह...अम्मा, फ्राइंग पैन है... फ्राइंग पैन...मतलब तलने की वह...क्या कहते हैं वह....।

जमुना : तलने की क्या? क्या बहू यहाँ अलग से तुम्हें चीज़े तल-तल कर खिलाती हैं?। लगता है, इसमें कोई चीज बनाकर रखी है। (पास जाती हुई) मैं भी तो देखू कि नई बहू क्या-क्या बनाकर खिलाती है?

फ्राइंग पैन से प्लेट उठाने लगती है। गोपाल जाकर उसे बीच में ही रोक देता है।

गोपाल : न न न न न अम्मा, इसे हाथ मत लगाना, हाथ मत लगाना। तु-तुम आप ही कह रही थी कि यह हाथ नहीं जलायेगा तो करंट मारेगा, और करंट नहीं मारेगा तो हाथ जलायेगा। ऐसी मरदूद चीज का कुछ पता थोड़े ही है, अम्मा। मैं तो पछता रहा हूँ कि क्यों इसे घर में ले आया। वह वापस ले ले तो मैं अभी जाकर इसे वापस कर दूँ। मुझ पता थोड़े ही था कि इसकी वजह से.....।

श्याम इस बीच चारपाई से चन्द्रकान्ता उठाकर उसके पन्ने पलटने लगता है। एक बार राधा की ओर देखकर वह थोड़ा खँखारता है। राधा गम्भीर मुद्रा बनाये बैठी रहती है।

जमुना : मगर यह तो बुझा हुआ है। यह बुझा हुआ भी करंट मारता है क्या?

गोपाल : हाँ अम्मा, कभी-कभी यह बुझा हुआ भी करंट मार देता है। इसका कोई भरोसा थोड़े ही है। ऐसी चीज से दूर ही रहा जाये तो अच्छा है। कहीं तुम्हारा भी हाथ जल-जला गया तो मुसीबत होगी।

जमुना : अच्छा, नहीं हाथ लगाती। मगर बता तो सही कि इस पर छोटी बहू तेरे लिए बनाती क्या-

BRAOU

दूर से जमुना देवी की आवाज सुनायी देती है।

जमुना : वीना । ओ वीना । गोपाल अभी आया है कि नहीं.... ।

गोपाल : (दबे हुए स्वरों में) श्याम । तुमसे कहा था दरवाजा बन्द कर दो और तुम.... ।

श्याम : अभी कर रहा हूँ।

जल्दी से जाकर दरवाजे के किवाड़ मिला देता है और वही खड़ा हो जाता है।

राधा : माँ जी आ रही हैं, अब जल्दी से कुछ इन्तजाम करो।

गोपाल : हाँ, हाँ, जल्दी कुछ इन्तजाम करो। यह छिलके... यह हलुआ.... ।

जल्दी से वीना का जम्पर उठाकर छिलकों पर डाल देता। और चीनी की एक प्लेट लेकर फ्राइंग पेन को उससे ढँक देता है।

जमुना : वीना।... वीना।

दरवाजे के पास आकर दरवाजे को धकेलकर खोलती है। श्याम कंधे हिला करके पास से हट जाता है।

जमुना : क्या बात है? इस तरह दरवाजा बन्द क्यों कर रखा था। श्याम तो दरवाजे के आगे ऐसे खड़ा था जैसे अन्दर किसी और को रोक रखा हो। क्या बात है, सब लोग इस तरह चुपचाप क्यों हो गये हो?

गोपाल : कु-कुछ नहीं माँ। तु-तुम अ-आओ, आओ। दरवाजा खुला ही था। श्याम तो ऐसे ही वहाँ खड़ा था। आओ बैठो।

जमुना : आज दो घंटे से मेरे कमरे की छत चू रही है। मैंने कितनी बार कहा था कि लिपाई कर दो, नहीं तो बरसात में तकलीफ होगी । मगर मेरी बात तो तुम सब लोग सुनी-अनसुनी कर देते हो। कुछ भी कहूँ, बस हाँ माँ, कल करा देंगे माँ, कहकर टाल देते हो। अब देखो चलकर कैसे हर चीज भीग रही है।.... क्या बात है, सब लोग गुमसुम क्यों हो गये हो?... वीना, तू वहाँ क्या कर रहा है कोने में?

बोध प्रश्न : 5. अम्मा कमरे में किस लिए आती हैं?

.....

.....

.....

गोपाल : कु-कुछ नहीं, माँ, यह... वह... वह वहाँ पर...क्या नाम है उसका.. वह... वह वीना का हाथ जरा जल गया था। मैं इसके लिए मरहम ढूँढ़ रहा था।

जमुना : हाथ जल गया। कैसे? मैं देखूँ तो।

पास जाकर वीना के दोनों हाथ पकड़कर देखती है।

वीना : नहीं माँजी ऐसा कुछ नहीं जला है। ये तो बस यूँ ही चिन्ता करने लगते हैं । बस जरा-सा ही था। हाथ से मल दिया, ठीक हो गया।

गोपाल : हाँ, वैसे तो बिलकुल ठीक हो गया। मगर मैंने कहा कि मरहम मिल जाये तो फिर भी लगा

BRAOU

गोपाल : (कुछ हैरान होकर) पन्द्रह रुपये वाली!

राधा : और नहीं तो क्या? पूछ लो इससे।

श्याम कानों पर हाथ रखकर सिर झुका लेता है।

बोध प्रश्न : 4. श्याम कौन-कौन से काम घर वालों से छिपाकर करता है?

.....

.....

.....

वीना : मगर जीजी, वह शीशी पन्द्रह रुपये वाली थी और चौदह रुपये वाली नहीं, इसका तुम्हें कैसे पता चला। यह भी क्या सूँघकर ही...।

राधा : खिसियानी पड़ कर) हमें सूँघने की क्या जरूरत है? हम तो ऐसी चीज के पास भी नहीं जाते। हमारे भैया को एक बार डॉक्टर ने बतायी थी, सो वे पन्द्रह रुपये में लाये थे।

गोपाल : (वीना से) क्यों तुम भाभी को खामखाह परेशान करती हो? भाभी बेचारी तो अनजाने भी हमारा हित ही करती हैं। (राधा से) देखो भाभी, अब तुम्हें सब मालूम ही है, मगर भैया को नहीं बताना। उनका स्वभाव तो तुम जानती ही हो । माफ़ कर दें तो बड़ी-बड़ी बात माफ़ कर दें। और नाराज हो जायें तो बस छोटी से छोटी बात पर.....।

राधा : वे नाराज होते हैं तो किसी बात पर ही नाराज होते हैं। मगर तुम कहते हो कि उन्हें न बताऊँ, तो मैं नहीं बताऊँगी। मगर यह बात ठीक नहीं कि सब दरवाजे खूले हैं और तुम यहां अण्डे बना रहे हो। कोई बाहर से आ गया तो हमारा कहना, न कहना सब बराबर है।

केतली में पानी खौलने लगता है। वीना अण्डे फेंटती है।

गोपाल : यह बात तुम ठीक कह रही हो, भाभी, । मैंने कितनी ही बार इससे कहा है कि कुछ बनाना ही हो तो सब दरवाजे बन्द कर लिया करो। श्याम, बाहर का दरवाजा बन्द कर दे।

वीना : श्याम, पहले जरा यह केतली स्टोव से उतारकर उधर रख दे और मुझे घी का डिब्बा पकड़ा दे। मैं झट से हलुआ पका दूँ। बनने में तो दो-एक मिनट ही लगेंगे।

श्याम उस तरफ़ चला जाता है और उसका काम करने लगता है।

: अलमारी से प्लेटें भी निकाल लो (राधा से) जीजी, थोड़ा सा हलुआ तो तुम भी लोगी न।

फ्राइंग पेन स्टोव पर रखकर उसमें घी डालती है।

राधा : (अनमने स्वर में) भैया, हमने कह दिया कि हमने न कभी खाया है और न ही कभी खा सकते हैं। पास बैठे हैं, इसलिए चाय की एक प्याली जरूर लेंगे।

वीना अण्डे का घोल चीनी मिलाकर फ्राइंग पेन में डाल देती है और जल्दी-जल्दी हिलाने लगती है । श्याम प्लेटें निकालकर लाता है।

वीना : तुमसे कहा था साथ किशमिश भी लाना, लाये हो।

श्याम : किशमिश तो भूल ही गया, भाभी। कहो तो अब जाकर...।

वीना : अब रहने दो। मुझसे यह नहीं कहना कि हलुआ अच्छा नहीं बना । बगैर किशमिश के अण्डों का हुलआ...।

BRAOU

छिपाव रखने की क्या जरूरत है? (श्याम से) लाओ श्याम, दो मुझे।

श्याम क्षण-भर की हिचकिचाहट के बाद दोनों जेबों से हाथ निकालता है। उसके एक-एक हाथ में तीन-तीन अण्डे हैं। वीना अण्डे उससे ले लेती है और वह बरसाती उतारकर गैलरी में छोड़ आता है।

गोपाल : (अव्यवस्थित-सा) देखो वीना..... मैंने तुमसे कहा था कि घर में यह चीज ठीक नहीं है। आदमी बाहर जा कर खा ले, वह और बात है मगर घर में...।

वीना : घर में घर के आदमी देख लेंगे, इतनी ही तो बात है न? तो जीजी से तो किसी बात का पर्दा है नहीं। ये आज न देखती तो किसी और दिन देख लेती। जब रोज सवेरे....।

गोपाल : अलललललल, क्या बक रही हो? कुछ होश की दवा करो...।

राधा : सच पूछो गोपाल, तो हमें इस चीज का पहले से ही पता है।

श्याम मुस्कराता है। गोपाल बेकस-सा आराम कुर्सी पर पड़ जाता है।

गोपाल : किस चीज का पता है?

राधा : इस चीज का कि रोज सवेरे चाय के साथ तुम्हारे कमरे में क्या बनता है? तलने की आवाज तो छोड़ो, तुम जानो खुशबू भी तो उधर जाती है।

गोपाल : किस चीज की खुशबू जाती है?

राधा : जो चीज बनती है, उसी की खुशबू जाती है; और किस चीज की जायेगी?

वीना : लीजिए और छिपाइए। जीजी तो खुशबू से यह भी पहचान लेती होंगी की किस दिन आमलेट बनता है और किस दिन अण्डे फ्राई होते हैं।

राधा : जरूर-जान लेते हैं। आज सवेरे तुमने आमलेट बनाये थे। बनाये थे कि नहीं?

वीना : जीजी, जब तुम खुशबू पहचानती हो, तब तो जरूर तुम भी...।

राधा : (बात काटकर) न। हम कभी नहीं खाते चाहे हमें किसी की कसम दिला लो। खुशबू तो तुम जानो हर चीज की अलग ही होती है। खाया नहीं है तो क्या...।

श्याम : सूँघा भी नहीं है बड़ी भाभी, तुम्हारी नाक बहुत तेज़ है।

वीना इस बीच अण्डे एक कप में तोड़ने लगती है और छिलके मेज पर रखती जाती है।

राधा : बड़ी भाभी की नाक ही नहीं, आँखे भी बहुत तेज हैं। तुम अपने कमरे में जो करतूत करते हो, बड़ी भाभी को उसका भी सब पता है।

श्याम : (चौंककर) हें? मेरी किस करतूत का तुम्हें पता है?

राधा : रहने दो, चुप ही रहो तो अच्छा है। मैंने माँजी से तो नहीं कहा, मगर तुम्हारा दूध वाला गिलास मैंने मेहरी से अलग रखवा रखा है और उसे अलग से मँजवाती हूँ। और सर्दियों में जो तुम दो चम्मच बुखार-मिक्स्चर बीच में मिलाया करते थे, उसका भी मुझे पता है।

वीना : बुखार-मिक्सचर! क्या सर्दियों में इसे बुखार हो गया था?

राधा : इसी से पूछो जो मिक्स्चर पिया करता था। अलमारी में किताबों के पीछे शीशी लाकर रख रखी थी, पन्द्रह रुपये वाली।

बोध प्रश्न : 3. गोपाल छिपाकर कौन-सा काम करता है ?

.....

.....

.....

वीना : हाँ, हाँ, क्यों पता चला होगा ? बीबी ने जेठजी को बताया थोड़े ही होगा ?

राधा : हमसे कोई कसम उठवा ले जो हमने बताया हो। हमारी यह आदत नहीं है कि इधर की बात उधर की बात इधर लगाते फिरें। जब एक बार हमने कह दिया कि किसी से नहीं कहेंगे, तो किसी से नहीं कहा। दिल में रखने की बात हम दिल में ही रखते हैं।

गोपाल : और क्या ? दिल में रखने की बात दिल में रखनी ही चाहिए।....पानी खौल गया कि नहीं।

वीना : बस अभी हुआ जाता है । उतनी देर में श्याम भी आ जायेगा...।

श्याम बरसाती की जेबों में हाथ डाले हुए बाहर से आता है।

श्याम : लो भाभी, ले आया । अब तुम जानो और तुम्हारा काम।

राधा को देखकर जरा असमंजस में पड़ जाता है।

: अरे, बड़ी भाभी भी यहाँ पर हैं । तब तो....।

गला साफ़ करता हुआ चुप कर जाता है।

वीना : यह अपनी बरसाती तो बाहर उतार दो । अभी तक इससे पानी टपक रहा है।

श्याम : वह बात तो ठीक है भाभी, मगर....।

वीना : मगर क्या ?

श्याम : मगर यह कि भाभी वह जो.. वह जो तुमने कहा था, वह..।

वीना : लाये नहीं ?

श्याम : ल-लाया तो जरूर हूँ, म-मगर...।

वीना : मगर जीजी से डर लगता है, यही न । डरने की कोई बात नहीं जीजी किसी से नहीं कहेंगी। लाओ निकालो।

श्याम : (जरा खँखारकर) और अगर बाद में.....।

वीना : नहीं, बाद में कुछ नहीं होता । लाओ, निकालो।

गोपाल : क्या चीज है जिसके लिए इतनी हील-हुज्जत हो रही है ?

वीना : कुछ नहीं आधा दर्जन अण्डे मँगवाये हैं। कह रहा था कि सूखी चाय नहीं पीऊँगा, तो मैंने कहा कि अण्डे का हलुआ बनाये देती हूँ।

गोपाल : अण्डे का हलुआ । यह तुम्हें क्या सूझी है। मैंने तुम्हें अच्छी तरह समझा दिया था, फिर भी तुम..।

वीना : (श्याम से) तुम क्यों काठ से वहाँ खड़े हो ? अण्डे मुझे दे दो,और बरसाती उतारकर बाहर रख दो । (गोपाल से) आपको जब दीदी से सिगरेट का छिपाव नहीं है, तो अण्डे का

BRAOU

केतली स्टोव पर रखकर स्विच ऑन कर देती है । बाहर से गोपाल आता है। वर्षा की फुहार से उसके कपड़े जरा-जरा भीग रहे हैं।

गोपाल : वाह, आज केतली पहले से ही रखी हुई है। बहुत सही अन्दाजा है वक्त का।

वीना : इस गलतफ़हमी में मत रहिए कि आपके लिए चाय का पानी रखा गया है। यह केतली श्याम के लिए रखी गयी है। आप आ गये हैं इसलिए एक प्याली आपको भी मिल जायेगी।

गोपाल : क्या बात है, आजकल श्याम पर बहुत मेहरबान हो रही हो? सुना है, देवर-भाभी का रिश्ता बहुत खतरनाक होता है।

वीना : बस सुना ही सुना है। जीजी बैठी है, ये तो मुझसे ज्यादा जानती होंगी।

गोपाल : देखो, हमारी भाभी के लिए कुछ मत कहना । हमारी भाभी देवी की प्रतिमा हैं, तुम्हारी तरह नहीं है। तुम तो दिन-भर बैठी 'सन्ज़ एण्ड लवर्ज़' पढ़ती रहती हो और भाभी पढ़ती है रामायण, महाभारत।

वीना : (शरारत के लहजे में) सच।

गोपाल : सच नहीं तो क्या? क्यों, भाभी?

राधा : (खिसियायी-सी) भई, हम नहीं कुछ भी पढ़ते । हमें दिन-भर काम से फ़ुरसत मिलती है जो पढें-पढ़ाये । कभी दस मिनट मिल गये तो चार अक्षर बाँच लिये।

गोपाल : वक्त न मिले, यह और बात है । पर पढ़ने के लिए तुमने गुटका रामायण रख तो छोड़ी है। मन में भावना होनी चाहिए।

वीना : आज जीजी की गुटका रामायण मैं इधर उठा लायी हूँ। जीजी तो लाने ही न देती थीं। अभी-अभी आपके आने से पहले मैं इनसे समुद्र-लंघन की कथा सुन रही थी।

गोपाल : यह तो बहुत ही अच्छी बात है। तुमने बी.ए. पास तो किया है, मगर जो विद्या तुम्हें भाभी से मिल सकती है, वह स्कूलों-कॉलेजों में नहीं पढ़ायी जाती । क्यों, भाभी?

राधा : भैया, हम किसी को क्या पढ़ायेंगे। हम तो आप ही अनपढ़ है । हम तो वीना के पास इसीलिए आ बैठते हैं कि दो-चार अच्छे अक्षर इससे सीख जायें।

गोपाल : तुम, और इससे सीखोगी? यह उल्टी रीत यहाँ नहीं चल सकती, भाभी? दस्तूर यही है कि बड़ा बड़े की जगह और छोटा छोटे की जगह... (जेब से सिगरेट की डिब्बी निकालता हुआ) इजाजत हो तो...आ..अ.... यह जरा..... यह एक सिगरेट सुलगा लूं। बहुत देर से नहीं पी। (सिगरेट सुलगाता हुआ) बारिश का दिन है, इसलिए तबीयत नहीं मानती।

वीना : आप तो कहते थे कि आप घर में किसी के सामने नहीं पीते।

गोपाल : बस सिर्फ भाभी के सामने पी लेता हूँ। वह भी इसलिए कि भाभी ने एक बार गैलरी में छिपाकर पीते हुए देख लिया था। जब चोरी पकड़ ही ली गयी तो हमने इकबाल कर लिया। उसके बाद से भाभी की इतनी मेहरबानी रही कि जब-जब जरूरत पड़ती थी, इनके कमरे में छिपकर पी लेते थे। आज पाँच बरस हो गये मगर मजाल है कि जो भाभी के अलावा किसी को पता तक चला हो।

BRAOU

सफल प्रयोग किया है।

20.2 मूल पाठ

(पात्र : श्याम, वीना, राधा, गोपाल, जमुना, माधव)

पर्दा उठने पर गैलरी वाला दरवाजा खुला दिखायी देता है। बायीं ओर के दरवाजे केआगे परदा लटक रहा है जिससे पता नहीं चलता कि दरवाजा खुला है या बंद। कमरे में कोई नहीं है।

श्याम सीटी बजाता गैलरी से आता है, पतलून कमीज के ऊपर बरसाती पहने। सिर भीगा है। बरसाती से पानी निचुड़ रहा है।

अंदर आकर वह इधर-उधर नजर दौड़ाता है।

श्याम : अरे कमरा खाली। न भैया न भाभी (पुकार कर) भाभी!

दूसरे कमरे से वीना की आवाज

वीना : कौन।.....शाम । क्या बात है?

श्याम : इधर आओ तो बताऊँ, क्या बात है?

(वीना उधर से आती है ।)

वीना : तुम्हें भी आकर इस तरह आवाज देने की जरूरत पड़ती है। इस तरह पुकार रहे थे जैसे किसी पराये घर में आये हो।

श्याम : पराया घर तो लगता ही है, भाभी। तुमने आते ही वह नक्शा बदला है इस कमरे का कि मेरा अन्दर पैर रखने का हौसला ही नहीं पड़ता। पहले तो इस कमरे की वही हालत रहती थी जो आजकल मेरे कमरे की है। जूते को छोड़कर हर चीज या चारपाई पर या मेज पर। अब तो मुझे इस कमरे में सिर्फ वही एक कोना गोपाल भैया का नजर आता है जहाँ पतलूनें और कोट एक-दूसरे के ऊपर टँगे हैं। बाकी कमरे की सरकार ही बदल गयी है। भैया की टेबल भी क्या याद करती होगी कि किसी का हाथ लगा है। आजकल ऐसे चमकती है जैसे नयी-नयी पालिश होकर आयी हो।

वीना : खड़े पाँव से आये हो जो खड़े-खड़े ही बात करोगे। बरसाती बाहर रख दो सारा कमरा भिगो रहे हो। फिर बैठकर आराम से बात करो। अभी तुम्हारे भैया आते हैं तो तुम्हें चाय बना देती हूँ।

श्याम : सिर्फ चाय। गलत बात। ऐसे सुहाने मौसम में सूखी चाय नहीं पी जा सकती। हरगिज नहीं।

उसके सिर पर हाथ रख कर उसका मुँह बाहर की तरफ़ कर देती है।

वीना : यह सुहाना मौसम पहले गैलरी में छोड़ आओ। सारा फ़र्श गीला कर रहे हो।

फिर पीछे से खुद ही उसकी बरसाती उतारने लगती है।

: लाओ, उतार दो बरसाती । मैं ही बाहर रख आती हूँ।

श्याम, उतारते-उतारते जैसे कुछ ध्यान आ जाने से फिर बरसाती पहन लेता है।

BPAOU

मानसिक टकराहट को प्रस्तुत किया गया है। साथ ही पीढ़ी के मध्य आनेवाले मानसिक बदलाव, जीवन मूल्यों और नैतिकता के परिवर्तित रूप को देखा जा सकता है। इस एकांकी के हास्य में व्यंग्य का तीखा असर मिलता है जो आज की सामाजिक व्यवस्था के खोखलेपन को दर्शाती है।

(आ) लेखक - परिचय

मोहन राकेश का जन्म सन् 1925 ई. को पंजाब के अमृतसर जिले में हुआ। उनका बाल्यकाल बहुत लाड़-प्यार में गुजरा। लेकिन 16 वर्ष की आयु में पिता की मृत्यु के कारण परिवार का भार उठाना पड़ा। उनका जीवन बहुत ही संघर्षमय रहा। उन्होंने लाहौर से हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. किया। देश विभाजन के बाद लंबे समय तक उन्हें बेकारी की समस्या का सामना करना पड़ा। उनका वैवाहिक जीवन भी सुखमय नहीं रहा । आरंभ में उन्होंने मुँबई और जालन्धर के कालेजों में अध्यापन कार्य किया। उसके बाद डी.ए.वी. कालेज जालन्धर में हिन्दी विभागाध्यक्ष के रूप में कार्यरत रहे। इसके अलावा आप बिराप कॉटन स्कूल, शिमला में भी अध्यापक रहे। लेकिन अंत में दिल्ली में आकर निवास करने लगे। वहीं उन्होंने कालेज में नौकरी कर ली और बाद में वहाँ से त्याग पत्र दे दिया। फिर 'सारिका' कहानी की मासिक पत्रिका के संपादक बन गए और साथ ही स्वतंत्र लेखन कार्य आरंभ किया । उनका लिखा 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक प्रदर्शन से उनकी बहुत आलोचना हुई किंतु उसी नाटक पर उन्हें ललितकला अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अलावा सन् 1971 में उन्हें 'नहरू फेलोशिप' भी मिली और वे फिल्म वित्त निगम के सदस्य भी रहे। उनकी मृत्यु सन् 1972 ई. में हुई।

मोहन राकेश ने कहानी, उपन्यास, नाटक एवं एकांकी जैसी साहित्यिक विधाओं में अपनी प्रतिभा को प्रदर्शित किया है। उनकी प्रमुख रचनाओं में चार कहानी संग्रह 'क्वार्टर' 'पहचान,' 'वारिस' 'एक घटना' नामक संग्रह रहे और उपन्यासो में 'न आने वाला कल,' 'अन्धेरे बन्द कमरे,' 'अन्तराल' तथा नाटकों में 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों' के राजहंस', 'आधे-अधूरे,' एकांकी-संग्रह में 'पैरों तले की जमीन,' 'रात बीतने तक' 'अण्डे के छिलके,' और 'बीज' नाटक उल्लेखनीय हैं।

मोहन राकेश सजग सामाजिक चेतना से संपन्न साहित्यकार रहे। उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषताओं में गहरी अर्थवत्ता, नए यथार्थ के सूक्ष्म तत्वों की पहचान मिलती है। उन्होंने अपनी रचनाओं में मानव के तनावपूर्ण जीवन का चित्रण किया है। साथ ही मनोविज्ञान का कलापूर्ण वर्णन भी किया है। समकालीन हिन्दी साहित्य में राकेश जी का स्थान महत्वपूर्ण है। उनकी हिन्दी की नयी कहानी के निर्माण और विकास में प्रमुख भूमिका रही। उन्होंने नयी कहानी को आन्दोलन रूप प्रदान किया है। इसके अलावा उन्होंने हिन्दी नाटक विधा को नयी समृद्धि और विकास का नया आधार प्रदान किया है। हिन्दी रंगमंच में भी उन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुई है। उनकी रचनाओं का मूलाधार मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों और विडंबनाओं को उभारना और उनके मध्य से व्यापक मानवीय मूल्यों की तलाश करना रहा हैं।

नई कहानी के प्रवर्तक लेखकों में मोहन राकेश जी का स्थान महत्वपूर्ण है। उनकी रचनाओं का मुख्य लक्ष्य जीवन की त्रासद स्थितियों में व्याप्त अन्तर्विरोध को दर्शाना रहा है और उन अन्तर्विरोधी परिस्थितियों में जीने वाले मानव की संवेदनाओं का ईमानदारी के साथ चित्रण करना भी रहा है। उन्होंने कल्पना के द्वारा प्रस्तुत यथार्थ के स्थान पर स्वानुभूति यथार्थ को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। इसी कारण उनकी रचनओं में मानव की अतृप्ति, विवशता, घुटन, हीन भावना, अकेलेपन और बेचारगी की अभिव्यक्ति मिलती है। उन्होंने अपनी रचनाओं में भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता की प्रतिष्ठा की है । विशेषकर उनकी कहानियों में भारत विभाजन की पीड़ा की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति मिलती है। उन्होंने अपनी रचनाओं में सांप्रदायिक असहिष्णुता के शिकार परिवारों की पीड़ा और उजड़ी हुई जिन्दगी के अभाव को मूर्तरूप दिया है। राकेश जी की रचनाओं में संबंधों का विघटन, टूटते सामाजिक पारिवारिक मूल्य और मानव अस्तित्व के लिए संघर्ष आदि देखे जा सकते हैं जिसके लिए कलात्मक स्तर पर उन्होंने पूर्णतः सजग शैली, सूक्ष्मता और सांकेतिकता, प्रतीक और बिम्बों का

इकाई-20 : अण्डे के छिलके - मोहन राकेश

20.0 उद्देश्य

20.1 पाठ एवं लेखक परिचय

20.2 मूल पाठ

20.3 सारांश

20.4 समीक्षा

20.5 शब्दार्थ

20.6 अभ्यास

20.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

20.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

20.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

20.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

20.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

20.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

20.0 उद्देश्य

इस पाठ में मोहन राकेश की एकांकी 'अण्डे के छिलके' पर प्रकाश डाला गया है । इसके अध्यायन से आप

- एकांकी की रचना-प्रक्रिया पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- कथावस्तु के विकास को स्पष्ट कर सकेंगे।
- पात्रों के चरित्र को समझ सकेंगे।
- एकांकी की प्रमुख समस्या को जान सकेंगे।
- एकांकी में व्यक्त उद्देश्य को स्पष्ट कर सकेंगे।
- एकांकी में प्रस्तुत बदलते नैतिक जीवन मूल्यों को जान सकेंगे।

BRAOU

20.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

'अण्डे के छिलके' मोहन राकेश के एकांकी संग्रह की पहली एकांकी है। इसी एकांकी के नाम पर संग्रह का नाम भी 'अण्डे के छिलके' रखा गया है। यह एकांकी लेखन की दृष्टि और कला का सुन्दर उदाहरण है। इस एकांकी में हास्य के द्वारा बदलते जीवन मूल्यों को प्रस्तुत किया गया है जिसके लिए कथावस्तु के रूप में एक सामान्य और हल्की-फुल्की सी घटना ली है । इसमें मध्यवर्गीय परिवार की अलग-अलग पीढ़ी की

BRAOU

किया और मुक्तता तथा चाटुकारिता को उजागर किया है। आधुनिक काल में डा. लक्ष्मी नारायण लाल, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, राजेन्द्र कुमार शर्मा, सफदर हाशमी आदि का नाम, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक एकांकी लेखन में अक्षुण्ण रहेगा। एकांकी और नाटक पर विचार करते समय साधारणतया हम पाते हैं कि कुछ बुनियादी तत्वों को छोड़कर, नाटक और एकांकी के प्रमुख (सात) तत्व एक ही हैं।

नाटक की परिभाषा

'नाटक' को संस्कृत में 'नाट्य' और रूपक कहा गया है। नाटक को 'रूपक' इसलिए कहा गया है कि इसमें अभिनेता किसी चरित्र (जैसे राम या दुष्यंत) का रूप धारण करता है। अंग्रेजी में नाटक को 'ड्रामा' कहा जाता है। ड्रामा का अर्थ है – सक्रियता। अर्थात् नाटक में पात्रों के अभिनय के द्वारा क्रियाशीलता उत्पन्न की जाती है।

'नाट्क' के बारे में कहा गया है – ''कायेषु नाटक रम्यम्'' अर्थात काव्य में नाटक सबसे रमणीय है। काव्य दो प्रकार के माने जाते हैं – श्रव्य और दृश्य। श्रव्य काव्य में शब्दों के द्वारा घटनाओं और वस्तुओं को हमारी आंखों के आगे इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जैसे हम सचमुच उन्हें देख रहे हों। नाटक दृश्यकाव्य है। इसमें श्रव्य के भी गुण रहते हैं। श्री गुलाब राय के अनुसार दृश्य काव्य में केवल श्रवण–पथ से जाने वाले शब्दों द्वारा ही नहीं, वरन नेत्र–पथ से मन तक पहुंचने वाले दृश्यों द्वारा भी दर्शकों के हृदयों में रस का संचार किया जाता है। इस प्रकार नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है – ''नाटक साहित्य का वह रूप है जिसमें पात्रों की शारीरिक चेष्टाओं, भावों, शब्दों और वेशभूषा के द्वारा अभिनय किया जाता है और घटनाओं को इस प्रकार हमारे सामने प्रस्तुत किया जाता है जैसे वे अभी घटित हो रही हों।''

नाटक में किसी भूमिका का निर्वाह करने वाले को 'नट' कहते हैं। नाटक के प्रमुख उद्देश्यों में, मनुष्य इतिहास, समाज, की समस्याओं को उजागर करना और उनसे संघर्षों की प्रेरणा देना होता है। श्री श्याम सुन्दर दास के विचार में, ''नाटकों का सबसे बड़ा उपयोग नैतिक उन्नति और सामाजिक कल्याण में होता है। नाटक में भाषा, पात्रों, भावों और प्रसंगों के अनुरूप होनी चाहिए।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद के काल में हिन्दी नाटकों में अभूतपूर्व विकास हुआ। जयशंकर प्रसाद का नाम, हिन्दी नाटकों के विकास में युगान्तरकारी पुरुष के रूप में लिया जाता है। 'विशाखा,' 'अजातशत्रु', 'जनमेजय का नाग यज्ञ', 'स्कन्दगुप्त,' 'राजश्री,' 'चन्द्रगुप्त,' 'ध्रुव स्वामिनी' आदि ऐतिहासिक नाटकों के द्वारा देश के प्राचीन, सांस्कृतिक गौरव का गान किया है । जयशंकर प्रसाद के बाद जी.पी. श्रीवास्तव, पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, सेठ गोविन्द दास, उदय शंकर भट्ट, उपेन्द्र नाथ अश्क, सुरेन्द्र वर्मा आदि ने नाटक विधा को और अधिक समृद्ध किया।

'नाटक' एक ऐसी विधा है जो एक साथ हास्य और श्रव्य–काव्य, दोनों गुणों से परिपूर्ण है। चाक्षुष विधा और प्रभावोत्पादक प्रस्तुतीकरण से इसका प्रभाव दर्शकों पर अमिट छाप छोड़ता है।

BRAOU

विषय प्रवेश

एकांकी की परिभाषा

एकांकी का अर्थ है एक अंक वाला नाटक। अंग्रेजी में इसका पर्याय होता है - 'वन एक्ट प्ले।' लेकिन इस सरल शब्दार्थ से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि 'एकांकी', अंग्रेजी की देन है या किसी बड़े नाटक का एक अंक 'एकांकी' कहलाता है। अर्थात साहित्य में 'एकांकी' में कुछ ऐसे स्वतंत्र गुण होते हैं जो उसे नाटक से अलग, एक स्वतंत्र विधा के रूप में परिभाषित करते हैं। वस्तुत: 'एकांकी' जीवन, समाज, इतिहास, घटना, किसी एक परिस्थिति या एक समस्या को पूरे प्रभाव के साथ रंगमंच पर उभारता है। मोटे तौर पर यूं समझ जा सकता है कि जो अन्तर उपन्यास और कहानी में होता है वही अन्तर 'एकांकी' और 'नाटक' में होता है।

एकांकी की कई परिभाषायें विद्वानों ने दी हैं लेकिन सभी परिभाषायें लगभग समान महत्व और तत्वों को रेखांकित करती हैं। 'एकांकी' के बारे में पंडित सदगुरुशरण अवस्थी लिखते हैं - 'एकांकी' - नाटक का सुनिश्चित, सुकल्पित लक्ष्य होता है। उसमें केवल एक ही घटना, परिस्थिति या समस्या का समावेश होता है। डा. नगेन्द्र के अनुसार, 'एकांकी में हमें जीवन का एक क्रमबद्ध विवेचन न मिलकर उसके एक महलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति का चित्र मिलता है।' उपेन्द्र नाथ अश्क मानते हैं कि,'एकांकी जीवन की एक झांकी मात्र है। एकांकी के प्रमुख सात तत्व वही हैं जो नाटक विधा के होते हैं। 1. कथावस्तु 2. चरित्र-चित्रण, 3. कथोप कथन 4. देशकाल और वातावरण 5. उद्देश्य 6. भाषा-शैली तथा 7. अभिनय और रंगमंच निर्देश

कथावस्तु के आधार पर एकांकी और नाटक में एक बुनियादी फर्क है। एकांकी जहां संक्षिप्त, कौतूहलपूर्ण तेज गति से घटनाओं को घटित करने वाली विधा होती है, 'नाटक' वही, विस्तार, बोझिलता और मंद गति से समापन की ओर बढ़ता है। एकांकी की समय सीमा निर्धारित होती है लेकिन नाटक में इसका विस्तार होता है।

'एकांकी' में पात्रों और चरित्रों की सीमा निर्धारित होती है। कथानक और समय की सीमा बंधी-कसी होती है। एकांकी में पात्रों, घटनाओं में सक्रियता या गति, नाटक की अपेक्षा अधिक होता है। एकांकी का मुख्य उद्देश्य केवल दर्शकों का मनोरंजन करना नहीं होता वरन, जीवन, समाज, देश की समस्याओं को उपस्थित कर उनसे संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। ये समस्यायें आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक, किसी भी प्रकार की हो सकती हैं। उदाहरण के लिए जगदीश चन्द्र माथुर की एकांकी 'रीढ़ की हड्डी' मध्यवर्गीय समाज के खोखले मूल्यों, आदर्शों और अर्थहीन हो रहे रीति-रिवाजों के खिलाफ एक व्यंग्य है। एकांकी, एकबारगी इन विडम्बनाओं को त्यागने का संदेश देती है।

एकांकी की भाषा-शैली भी उसकी सफ़लता-असफलता निर्धारित करती है। पात्रों के अनुरूप भाषा का प्रयोग और भाषा का प्रयोग करने वालों पात्रों के चयन पर भी एकांकी की सफलता निर्भर करती है। पांच सितारा संस्कृति में पलने-बढ़ने वाला पात्र, गरीबी रेखा से नीचे गुजर-बसर करने वाले पात्र की भूमिका और उसके कथोपकथन की भंगिमा को मुकम्मल तौर पर उतारने में अक्सर विफल होता है। कथोपकथन 'एकांकी' का एक महत्वपूर्ण तत्व होता है। भाषा चुटीली, प्रवाहमय और सरस होनी चाहिए। एकांकी मे हास्य-व्यंग्य का विशेष ध्यान रखा जाता है। ऐतिहासिक एकांकी की भाषा अलग होगी और सामाजिक एकांकी की भाषा अलग।

जयशंकर प्रसाद, डॉ. रामकुमार वर्मा, उपेन्द्र नाथ अश्क, जगदीश चन्द्र माथुर, गोविन्द वल्लभ पंत, सेठ गोविन्द दास आदि के नाम आधुनिक साहित्य के संधि स्थल तक के 'एकांकी' के विकास में प्रमुख नाम हैं। इन साहित्यकारों ने अपनी एकांकियों के माध्यम, देश की राजनीतिक चेतनाओं को झकझोर, स्थितियों पर व्यंग्य

BRAOU

खण्ड-5 : हिन्दी एकांकी और नाटक

BRAOU

हास्य-रस के सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि हास्य-रस क्या है। साहित्य में मनुष्य के हृदय में रस की भावना और संचार का बड़ा महत्व है। मानव हृदय में नौ प्रकार के भावों का संचार होता है। इनके नाम हैं - रति, हास, शोक, भय, जुगुप्सा, क्रोध, उत्साह, आश्चर्य और निर्वेदइन नवों भावों की उत्तेजना अथवा सम्मिश्रण से श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुद और शांत की उत्पत्ति होती है। चित्त में हास मनोभाव की उत्पत्ति से हास्य-रस का संचार होता है।

संस्कृत नाट्य शास्त्र में नवों रसों की उपस्थिति वाली रचना को श्रेष्ठ माना गया है ऐसे में इन में से कोई एक रस प्रधान हो सकता है। संस्कृत के नाटकों में विदूषक का होना एक अनिवार्य शर्त माना गया है। और यही विदूषक हास्य-रस के वातावरण का सृजन करने में मुख्य भूमिका निभाता है। विदूषक प्राय: नाटक के मुख्य पात्र अर्थात नायक का मित्र हुआ करता है। इसके अतिरिक्त नाटक में ऐसी स्थितियां पैदा की जाती हैं जो स्वयमेव हास्य वातावरण का निर्माण करती है। इस प्रकार दो प्रकार से हास्य रस की अभिव्यक्ति होती है (1) विदूषक द्वारा (2) परिस्थितियों द्वारा।

'इलेक्शन' हास्य-व्यंग्य की इसी कोटि की एक श्रेष्ठ रचना है इसमें परिस्थितियों द्वारा हास्य पैदा किया गया है। इस एकांकी में छात्र जीवन की एक सामान्य घटना को लेकर हास्य और व्यंग्य दोनों का सृजन किया गया है। विद्यार्थियों की प्रवृत्ति पर व्यंग्य 'इलेक्शन' नामक एकांकी का मूल उद्देश्य है। डा. राम कुमार वर्मा के अनुसार ''हास्य का बीज पत्थर पर भी अंकुरित किया जा सकता है।'' अत: प्रत्येक रस में हास्य का परिस्थिति पैदा की जा सकती है। इस दृष्टि से 'इलेक्शन' एक उत्कृष्ट एकांकी है।

(आ) परिचय

डॉ. रामकुमार वर्मा हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक, नाटककार कवि हैं। उनका जन्म सन् 1905 में मध्य प्रदेश के सागर नामक स्थान में हुआ। उनकी आरंभिक शिक्षा मराठी में हुई। प्रयाग विश्वविधालय से हिन्दी साहित्य में एम.ए की उपाधि प्राप्त कर वे उसी विश्वद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक बन गए। उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से पी.एच.डी की। डॉ. रामकुमार वर्मा ने न केवल सौ के लगभग एकांकी लिखे बल्कि अभिनेता और निर्देशक के रूप में उनमें से कइयों को रंगमंच पर प्रस्तुत भी किया। हिन्दी नाटकों को डॉ. रामकुमार वर्मा की देन उल्लेखनीय है।

21.2 मूल पाठ

पात्र-परिचय

1.	कैलास	-	होस्टल का एक विद्यार्थी
2.	नरेन्द्र	-	कैलास का मित्र
3.	सत्यवीर	-	प्रेम प्रकाश का समर्थक
4.	प्रेम प्रकाश	-	सभापति पद के उम्मीदवार
5.	मुहम्मद मुनीर	-	सभापति पद के उम्मीदवार
6.	हरे कृष्ण	-	सभापति पद के उम्मीदवार
7.	मलकानी	-	सभापति पद के उम्मीदवार
8.	अनादि बैनर्जी	-	मलकानी का समर्थक तथा होस्टल के कुछ अन्य विद्यार्थी

BRAOU

इलेक्शन

(इलेक्शन के दिन हैं। होस्टल का एक कमरा। कैलास पड़े हुआ सिनेमा का एक गीत गुनगुना रहा है।)

कैलास : ओ, बचपन के दिन भुला न देना। आज हँसे कल रूला न देना..... रुला न देन॥ बचपन के दिन.... अरे नरेन्द्र। तैयार हो गए। (कुछ उत्तर न पाकर फिर गुनगुनाता हुआ) आज हँसे कल रूला न देना रूला न .... अमा यार। जब तुमसे चलने को कहो तो बस अपने कमरे में ऐसे डूब जाते हो गोया कमरा न हुआ, किसी का दिल हुआ।

नरेन्द्र : (दूसरे कमरे से) अरे, भाई। कमरे की तरह बड़ा किसी का दिल भी तो हो। तिल बराबार दिल तो कहीं देखने को मिलता नहीं, इन्हें कमरे जैसा दिल रास्ते पर पड़ा मिल जाता है?

कैलास : देखने वाला चाहिये, दोस्त ... (ठंडी सांस लेकर) ह ह ह ह । खैर जाने दो, तो अभी तैयार नहीं हुए।

नरेन्द्र : तुम्हारा गाना तो खत्म हो ले।

कैलास : सो तो कभी खत्म होगा नहीं। बचपन के दिन कभी भूले जा सकते हैं? (ठंडी सांस लेकर) बचपन के दिन भुला न देना।

नरेन्द्र : बहुत ठंडी सांस न लो, कैलास। कोई देखेगा कि तुम्हारा क्या रेफ्रिरीजिरेटर है, जिसमें से हर एक चीज़ ठंडी निकलती है। पास पड़ा हुआ कहीं दिल भी ठंडा न हो जाय?

कैलास : इस इलेक्शन के मारे लोग उसे ठंडा न होने देंगे। दोस्त। रात-दिन इलेक्शन की दौड़-धूप। तभी तो कह रहा हूं कि भाग चलो, नहीं तो ऐसी बुरी तरह पकड़े जाओगे कि तीन घंटे में कोई इन्टरवल भी नहीं मिलेगा।

नरेन्द्र : तो इलेक्शन की दौड़-धूप न रही, कोई पिक्चर हुआ जिसमें आप इन्टरवल चाहते हैं। अरे यार ..... अरे, मेरा रूमाल किधर गया .....

कैलास : रुमाल .... रुमाल की क्या हस्ती है। हमेशा दिल के पास पाकेट में किसी दास्तान की तरह छिपा रहता है और दिल की धड़कनें गिना करता है।

नरेन्द्र : आज तो बड़े मूड में हो। (बाहर निकल कर) अच्छा, तो ये ठाठ हैं तुम्हारे कैलास। यह सिल्क का सूट और उससे मैच करती हुई यह रेशमी टाई।

कैलास : रेशमी टाई तो रामकुमार वर्मा की है।

नरेन्द्र : बहुत कुछ। आज उस पार्टी में तुम्हीं रहोगे हीरो।

कैलास : अच्छा?

नरेन्द्र : और क्या। वे बेवकूफ़ है जो कहते हैं कि क्लास में तुम्हें जीरो मिलता है। यहां तो जीरो के चाचा हो तुम .... हीरो।

कैलास : और तुम हीरो बनकर गीत गाना जब मेरी हसरतो का रोम जेल।

नरेन्द्र : गाना तो गा रहे हो तुम। लेकिन हां, यह हसरतों की बात कैसी।

कैलास : देर लगाते जाओगे तुम मेरी हसरतों की बात पूछोगे।

नरेन्द्र : क्यों न पूछूँ। आखिर तुम्हारा दोस्त हूं। तुम्हारे ही कहने से तुम्हारे साथ पार्टी में जा रहा हूँ।

कैलास : वैसे तुम जानते ही नहीं।

BRAOU

नरेन्द्र : सचमुच मै नही जानता, डियर।

कैलास : बात यह है कि आज सचमुच ही मेरा इलेक्शन होने जा रहा है।

नरेन्द्र : इलेक्शन। वाह दोस्त। लेकिन तुम्हारा नोमिनेशन तो होस्टल के नोटिस बोर्ड पर था नहीं?

कैलास : तुम भी रावण के ग्यारहवे सिर हो। यार। होस्टल का इलेक्शन नहीं।

नरेन्द्र : अच्छा। तो किस जगह का? किस बात का?

कैलास : अक्ल क्या तुमने अपनी रूमाल की तरह खो दी है, तुम क्या समझो। तुम केशरीनारायण को जानते हो?

नरेन्द्र : हां, हां, अपने शहर के वकील।

कैलास : तो उन्होंने मुझे आज मिलने के लिए चाय पर बुलाया है।

नरेन्द्र : अच्छा। किस लिए?

कैलास : यह उनकी लड़की सरोजनी।...

नरेन्द्र : (हंसते हुए) अच्छा यह बात है। तो इस जगह तुम्हारा इलेक्शन रहा। किस-किस के वोट पड़ेंगे?

कैलास : घर भर के और अपनी तारीफ करने के लिए मे तुम्हे ले चल रहा हूँ।

बोध प्रश्न : 1. कैलास नरेन्द्र को कहाँ और क्यों अपने साथ ले जाना चाहता था?

.....

.....

.....

नरेन्द्र : अच्छा। तभी यह झूम-झूम कर गाना गा रहे थे "आज हंसे कल रूला न देना"। कोई क्यों रूलाएगा दोस्त। जब यह रेशमी सूट .... यह रेशमी टाई ... गले में लगा रक्खी है। अब समझ में आया कि यह मामूली इलेक्शन नहीं है। तभी तो मैं कहूं कि होस्टल का इलेक्शन छोड़ के ये जा कहां रहे हैं। अच्छा तो जनाब। अपनी तारीफ कराने की मेरी फीस आप क्या देंगे?

कैलास : मौका मिलने पर तुम्हारा भी इलेक्शन करा देंगे?

नरेन्द्र : मेरे इलेक्शन की जरूरत नही है। आप ही अपना इलेक्शन कराएं।

(नेपथ्य से शोर होता है)

एक स्वर : प्रेम प्रकाश को .....

दूसरा स्वर : वोट दो। (यह दो-तीन बार दुहराया जाता है।)

कैलास : यार। जल्दी चौलो, नहीं तो पकड़े जाओगे। सारा इलेक्शन घर रह जाएगा।

नरेन्द्र : बहुत अच्छा। जरा रूमाल तो ले लूं। ऐसी जगह चलना है जहां रुमाल निकाल कर बार-बार मुंह पोंछना जरूरी है। जी, तुम देखना रुमाल में कितना बढ़िया सेन्ट लगाता हूं।

कैलास : यहां एक-एक मिनट भारी हो रहा है और उसे रुमाल की पड़ी है।

(सत्यवीर का प्रवेश)

BRAOU

दानिशमन्द दोस्त	–	बुद्धिमान मित्र
इसरार	–	बाध्य, विवश
लाचार	–	निस्सहाय
फ़रिश्ता	–	देवदूत
अकबाल बुलन्द रखना	–	अपने विचारों पर अटल रहना

21.6 अभ्यास

परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (250 शब्दों में)

1. 'इलेक्शन' एकांकी में आज के चुनावों में होनेवाली गतिविधियों पर व्यंग्य किया गया है। सोदाहरण समझाइए।
2. 'इलेक्शन' एकांकी की कथावस्तु बतलाइए।
3. 'इलेक्शन' एकांकी में कैलाश के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
4. हास्य एकांकी किसे कहते हैं? 'इलेक्शन' को हास्य एकांकी किस आधार पर कहा जा सकता है?

21.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न (125 शब्दों में)

निम्नलिखित कथनों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

(अ) ठीक है। जबतक पुरूष को क्रोध नहीं आता तब तक वह जीवन की विपत्तियों को पराजित ही नहीं कर सकता। अन्याय को रोकने के लिए क्रोध अत्यंत आवश्यक है।''

(अ) ''तुम जले पर नमक छिड़क रहे हो। एक तो इन कम्बखतों ने बोर किया, अब तुम बोर कर रहे हो।''

2. 'इलेक्शन' एकांकी के शीर्षक की सार्थकता पर विचार कीजिए।
3. 'इलेक्शन' एकांकी में लेखक क्या संदेश देना चाहता है?

21.8 नमूने के प्रश्नोत्तर

21.8.1 दीर्घ क्षेणी के प्रश्नोत्तर

प्रश्न :- हास्य-एकांकी किसे कहते हैं? 'इलेक्शन' को हास्य-एकांकी किस आधार पर कहा जा सकता है?

उत्तर :- जिस एकांकी में हास्य और व्यंग्य की प्रमुखता हो-उसे हास्य एकांकी कहते हैं। हास्य मनुष्य के नौ स्थाई भावों में से एक है। इन स्थाई भावों के आधार पर संस्कत काव्यशास्त्र में नौ रस से युक्त रचना को श्रेष्ठ माना गया है। लेकिन इनमें से कोई एक रस ही प्रमुख होगा, अन्य रस उसके साथ रहेंगे। इस दृष्टि से इलेक्शन में हास्य प्रमुख रस है।

प्राचीन और आधुनिक हास्य नाटकों में बड़ा अन्तर है। प्राचीन नाटकों में हास्य-प्रधान नाटकों को प्रहसन कहा जाता था। इनमें हास्य या तो विदूष के द्वारा या परिस्थितियों के द्वारा उत्पन्न किया जाता था। आधुनिक नाटककार हास्य को अलग से नहीं बल्कि नाटक की कथावस्तु का एक अंग बनाकर स्वाभाविक ढंग से व्यक्त करना पसंद करते हैं। 'इलेक्शन' में नाटककार ने परिस्थितियों के द्वारा हास्य पैदा किया है। इसमें अलग से कोई विदूषक नहीं है। सभी पात्र अपने संवादों और अभिनन्य से हास्य की सृष्टि करते हैं। 'इलेक्शन' में हास्य के साथ व्यंग्य भी है। हास्य जहाँ केवल विनोद तक सीमित रहता है वहा व्यंग्य समाज की गलताऔरं अनुचित बातों का

BRAOU

परदाफाश करता है। हास्य जहाँ मन को बहलाता है वहाँ व्यंग्य हमें तिलमिलाने और सोचने पर मजबूर करता है। इस दृष्टि से इलेक्शन में हास्य के साथ व्यंग्य भी है। इसमें विद्यार्थी जीवन में 'इलेक्शन' को लेकर होने वाली भागदौड़ उठा पटक और किसी भी प्रकार से लक्ष्य प्राप्त करने की मनोवृत्ति पर व्यंग्य है। इस बहाने देश की राजनीतिक स्थिति और चुनावों पर भी व्यंग्य किया गया है।

21.8.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर: (125 शब्दों में)

प्रश्न :- संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए

''ठीक है। जब तक पुरुष को क्रोध नहीं आता तब तक वह जीवन की विपत्तियों को पराजित नहीं कर सकता। अन्य को रोकने के लिए क्रोध अत्यंत आवश्यक है''।

उत्तर :- ये पंक्तियाँ डॉ. रामकुमार वर्मा द्वारा लिखित एकांकी 'इलेक्शन' से ली गई हैं। इसका प्रसंग और संदर्भ यह है कि कैलाश कालेज-हॉस्टल में रहने वाला छात्र है। वह वकील केशरीनारायण के घर चाय पर आमंत्रित है जहाँ वकील साहब की बेटी से उसके विवाह की बात चलने वाली है। कैलाश अपने मित्र नरेन्द्र को भी साथ चलने के लिए तैयार करता है। इसी बीच होस्टल के इलेक्शन के उम्मीदवार एक के बाद एक आते रहते हैं और वोट माँगते हैं। उनके बीच फँसकर कैलाश को बहुत देर हो जाती है। वह पीछा छुड़ा कर भागना चाहता है. यह संवाद हरे कृष्णा नामक उम्मीदवार द्वारा बोला गया है। कैलाश के क्रोध करने पर भाषण देते हुए हरे कृष्ण कहता है कि क्रोध ही पुरुष को साहस देता है और विजय प्राप्त करने के लिए क्रोध आवश्यक है। इन पंक्तियों में बताया गया है इलेक्शन में खड़े उम्मीदवार कितने चतुर होते हैं और वे हर बात का उपयोग अपने लिए वोट माँगने के लिए करते हैं।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कैलास नरेन्द्र को शहर के वकील केशरीनरायण के यहाँ चाय पार्टी में ले जाना चाहता था क्योंकि कैलास उनकी लड़की सरोजिनी से विवाह करना चाहता था।
2. होस्टल के इलेक्शन होने वाले थे। प्रेम प्रकाश सभापति के पद के लिए चुनाव लड़ रहा था।
3. मुहम्मद मुनीर चुनाव प्रचार के दौरान प्रेसिडेंट पद के लिए कैलास का वोट माँगने के लिए उसके कमरे में आया था।
4. नेरन्द्र अपने रूमाल में सेंट लगाना चाहता था। सेंट खरीदने दुकान गया। इसलिए उसे देर हो गई।
5. 'इलेक्शन' का दो संदर्भों में लेखक ने प्रयोग किया है। एक, कालेज-होस्टल-समिति के सदस्यों का और दूसरा कैलाश का वकील केशरीनारायण की बेटी से विवाह के लिए। कैलाश के लिए इलेक्शन का यही अर्थ है और यही उपयोगिता है। लेकिन होस्टल-इलेक्शन के उम्मीदवार अपने लिए वोट माँगने के उत्साह में कैलाश को देर करवा देते हैं और वह अपना इलेक्शन बिना लड़े ही हार जाता है।

21.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

हीरे के झुमके – डॉ. रामकुमार वर्मा

रेशमी टाई – डॉ. रामकुमार वर्मा

BRAOU

इकाई-22 : 'अजातशत्रु' की कथावस्तु

22.0 उद्देश्य

22.1 पाठ एवं लेखक परिचय

22.2 मूल पाठ

22.3 सारांश

22.4 समीक्षा

22.5 शब्दार्थ

22.6 अभ्यास

22.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

22.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

22.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

22.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

22.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

22.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

22.0 उद्देश्य

देश, काल, परिस्थिति और सामाजिक सन्दर्भों को ध्यान में रखकर लिखा गया नाटक 'अजातशत्रु' एक उपयोगी रचना है। जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'अजातशत्रु' के पठन-पाठन से हम,

- 'अजातशत्रु' नाटक की कथावस्तु पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- देश की बौद्धकालीन परिस्थितियों की सामाजिक और धार्मिक स्थितियों की मीमांसा कर सकेंगे।
- 'अजातशत्रु' नाटक से हम देश के इतिहास से परिचित होकर इतिहास और कल्पना के मित्र का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- 'अजातशत्रु' नाटक की रचना के पीछे नाटककार के उद्देश्य पर प्रकाश डाल सकेंगे।

22.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

जयशंकर प्रसाद का हिन्दी नाट्य कला को महत्वपूर्ण देन है और 'अजातशत्रु' का नाट्य-साहित्य में अप्रतिम स्थान है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में जयशंकर प्रसाद का नाम कवि एंव नाटककारों की अग्रिम पंक्ति से लिया जाता है। प्रसाद के नाटकों का मूल उद्देश्य भारतीय इतिहास की व्याख्या तथा उसके द्वारा समाज की विषमताओं

BRAOU

और विसंगतियों का हल ढूंढ़ना भी है। 'अजातशत्रु' में देश के तीन राज्यों के मध्य युद्ध और तत्कालीन समाज के मानसिक संघर्ष का वर्णन है। अजातशत्रु के प्राय: सभी प्रमुख पात्र वीर और पराक्रमी हैं। घटना-प्रधान इस नाटक में पात्रों के अंतर्द्वन्द्व के माध्यम से जयशंकर प्रसाद ने देश, काल और राजनीतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला है।

(आ) लेखक-परिचय

श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रसिद्ध परिवार में सन् 1889 ई. में हुआ था। इनका बचपन बड़े लाड़-प्यार और वैभव में बीता। किन्तु बारह वर्ष की आयु तक पहुँचते ही इनके पिता की मृत्यु हो गई। घर में सम्पत्ति को लेकर झगड़े शुरू हो गये। दो-तीन वर्ष के भीतर ही जयशंकर प्रसाद जी की माताजी और बड़े भाई का भी देहान्त हो गया। केवल सत्रह वर्ष की आयु में प्रसाद जी को सारे परिवार का भार उठाना पड़ा। उनका परिवार पहले बहुत धनी और प्रतिष्ठित था, लेकिन अब कर्ज के बोझ से दब चुका था। जीवन भर प्रसाद जी का यही लक्ष्य रहा कि वे अपने परिवार को कर्ज से मुक्त करें और उसकी खोयी हुई प्रतिष्ठा को फिर से प्राप्त करें। जीवन भर वे इसके लिए कठोर परिश्रम करते रहे और अपने उद्देश्य में सफल हुए। यही नहीं, प्रसाद जी के लिखे सहित्य तो उनका नाम युगों-युगों के लिए अमर कर दिया। प्रसाद जी की शिक्षा घर पर ही हुई। वे संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और फारसी भाषाओं पर समान अधिकार रखते थे। वेद और उपनिषद-साहित्य के वे पण्डित थे। केवल नौ वर्ष की आयु में "अमर कोश" और "लघु सिद्धान्त कौमुदी" उन्होंने कण्ठस्थ कर ली थी। भारतीय संस्कृति और इतिहास में उन्हें गहरी रुचि थी। इसी कारण उनके लगभग सभी नाटक भारतीय इतिहास के उन युगों पर आधारित हैं, जिनकी सामग्री इतिहास में उपलब्ध नहीं थी, और उनमें भारत की गौरवपूर्ण संस्कृति का गुणगान किया गया है। प्रसाद जी ने अपनी आरंभ की रचनाएं ब्रजभाषा में लिखी लेकिन सन् 1910 ई. से उन्होंने हिन्दी में रचना आरंभ कर दी। हिन्दी साहित्य के कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और निबंध आदि सभी क्षेत्रों में जयशंकर प्रसाद की देन अविस्मरणीय है। प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 ई. में हुई।

22.3 मूल पाठ

अजातशत्रु नाटक को तीन अंको में विभंजित किया गया है। प्रथम अंक में दृश्यों का समावेश किया गया है। दूसरे अंक में दृश्यों की संख्या 10 हैं तथा तीसरे अंक में 9 दृश्य हैं।

आजातशत्रु मगध के सम्राट बिंबसार का पुत्र था। बिंबसार की वासवी और छलना नामक दो रानियां थीं। बड़ी रानी कोशल के राज प्रसेननजित की बहन थी और बिंबसार की दूसरी पत्नी छलना थी। वासवी की पुत्री पद्मावती थी जिसका विवाह कोशम्बी के राजा उदयन से हुआ था। दूसरी पत्नी छलना का पुत्र अजातशत्रु था जो बाद में चलकर मगध का उत्तराधिकारी बना। प्रसेनाजित का पुत्र था विरुध्दक। वासवी की पुत्री, पद्मावती का विवाह कोशम्बी के राजा उदयन से तो हुआ लेकिन उदयन की दो अन्य रानियां भी थीं, माधवी और वासवदत्ता। अर्थात राजा उदयन की तीन रानिया थीं, पद्मावती, माधवी एवं वासवदत्ता। इस प्रकार यह कहानी तीन राज्यों के बीच चलती हैं। ये तीन राज्य हैं मगध, कोशल और कोशाम्बी। इस नाटक में दो पात्र और है गौतम बुद्ध और देवदत्त। अजातशत्रु की माता छलना बहुत ही अहंकारिणी और सत्ता की भूखी स्त्री थी। उसे अपने राजमाता होने का गर्व था, और उसने अजातशत्रु को एक क्रूर और निरंकुश राजा बनाना चाहा। अजातशत्रु और उसकी माता छलना पर गौतम बुद्ध के प्रतिद्वन्दी भिक्षु देवदत्त का बहुत प्रभाव था। इस सबसे दुखी होकर बिम्बसार ने अपने जीवनकाल में ही अजातशत्रु को राज्य सौंप दिया और स्वंय बड़ी रानी के साथ वानप्रस्थ आश्रम ले लिया। लेकिन वहाँ भी वे दोनों चैन से नहीं रह पाते थे। अजातशत्रु का दुर्व्यवहार इसका कारण था। बिम्बसार और वासवी अपने द्वार पर आने वाले याचकों को दान भी नहीं दे पाते थे। इस कारण वासवी ने निश्चय किया कि वे काशी राज्य के कर से अपनी आवश्यकता पूरी करेंगे। यह राज्य उसके पिता ने उसे दिया था। वासवी ने अपने भाई प्रसेनजित को पत्र लिखा। प्रसेनजित ने पत्र लिख कर काशी राज्य की प्रजा को आदेश दिया कि अब से वह अपना कर

BRAOU

(टैक्स) अजातशत्रु को न देकर सीधे रानी वासवी को दिया करे। इस बात पर अजातशत्रु बहुत बिगड़ गया और उसने प्रसेनजित के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया।

बोध प्रश्न : 1. बिम्बसार ने वानप्रस्थ आश्रम क्यों लिया?

.....

.....

.....

कोशल के राजा प्रसेनजित का पुत्र था विरुद्धक। वह निडर और उग्र स्वभाव का था। जब प्रसेनजित को सूचना मिली कि अजातशत्रु को उसके पिता बिम्बसार ने राज्याधिकार दे दिया है तब विरुद्धक ने कहा कि अब बूढ़े पिताओं को राज्यधिकार अपने युवा पुत्रों को सौंप देना चाहिए। विरुद्धक का संकेत अपनी ओर समझकर प्रसेनजित बहुत कृद्ध हुआ और उसने विरुद्धक को युवराज पद से हटा दिया। प्रसनजित की पत्नी और विरुद्धक की माता शक्तिमती भी छलना के ही समान अहंकारी और सत्ता लोलुप थीं। वह विरुद्धक को जल्द से जल्द राजा के रूप में देखना चाहती थी। उसने विरुद्धक को उकसाया कि उसे अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह करना चाहिए। विरुद्धक ने शैलिन्द्र डाकू के रूप मे जगह-जगह मारकाट और अशान्ति मचाना शुरू कर दिया। कोशल राज्य का वीर और स्वमिभक्त सेनापति था-बन्धुल। उसकी पत्नी थी मल्लिका, जिससे विरुद्धक मन ही मन प्रेम करता था किन्तु उसे पाने में असफल रहा था। मल्लिका सती नारी थी और अपने पति को कर्तव्य के मार्ग पर रहने की प्रेरणा देती थी। विरुद्धक ने बंधुल को राजद्रोह करने के लिए उकसाया लेकिन बंधुल ने ऐसा करने से इन्कर कर दिया। प्रसेनजित स्वयं अपने इस पराक्रमी सेनापति के यश के कारण मन ही मन ईर्ष्या करता था। उसने एक षड्यंत्र रचा जिसमें विरुद्धक (शैलेन्द्र डाकू के रूप में) और बन्धुल के बीच युद्ध करवाया। इस युद्ध में बन्धुल मारा गया। मल्लिका को इस षड्यंत्र की सूचना रानी शक्तिमती ने पहले ही दी थी जिससे वह बन्धुल को समझा-बुझाकर विरुद्धक की ओर कर सके। किन्तु मल्लिका अपने को कर्तव्य के मार्ग से हटाने के लिए तैयार नहीं होती। मल्लिका विधवा हो गई लेकिन उसने अपने पति के हत्यारों को क्षमा कर दिया क्योंकि वह गौतमबुद्ध के उपदेश से प्रेरित थी और अहिंसा और करुणा का साकार रूप थी।

बोध प्रश्न : 2. प्रसेनजित अपने पुत्र से क्यों नाराज हुआ?

.....

.....

.....

इसी के साथ कोशाम्बी की कथा भी चलती है। कोशाम्बी का राजा उदयन अपनी तीसरी रानी के प्रभाव में आकर अपनी दूसरी रानी पद्मावती की उपेक्षा करने लगा था। उदयन की तीसरी रानी मागन्धी घमण्डी और अधिकार-लोलुप थी। उसने षड्यंत्र कर उदयन की वीणा में एक विषैला सर्प रखवाया और उदयन को बताया कि यह काम पद्मावती ने उदयन को मारने के लिए करवाया है। पद्मावती सुशील और पतिव्रता स्त्री थी। वह गौतम के उपदेशों से प्रभावित थी। मागन्धी उससे ईर्ष्या करती थी और गौतम से भी बदला लेना चाहती थी क्यों कि उसके विवाह की बात पहले गौतम से ही हुई थी और उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया था। मागन्धी ने उदयन से पद्मावती की शिकायत करते हुए यह भी बताया कि वह गौतम के प्रति भक्ति ही नहीं बल्कि प्रेम-भाव रखती है। यह सब जानकर उदयन उत्तेजित हो उठा और पद्मावती का वध करने के लिए तैयार हो गया। लेकिन इस बीच बड़ी रानी वासवदत्त को सारे षड्यंत्र का पता लग गया और ठीक समय पर आकर उसने पद्मावती को बचा लिया। वासवदत्ता ने उदयन को बताया कि यह सारा षड्यंत्र मागन्धी का था और वह महल में आग लगाकर भाग गई है। सारी बात जानकर उदयन बहुत लज्जित हुआ और उसने पद्मावती से क्षमा माँगी।

बोध प्रश्न : 3. मागंधी का षड्यंत्र क्या था?

.....

.....

.....

मागंधी ने अब श्यामा वेश्या का रूप धारण किया और वह शैलेन्द्र डाकू यानी विरुद्धक से प्रेम करने लगी। जब शैलेन्द्र बन्धुल की हत्या के आरोप में बन्दी हुआ और उसे प्राणदण्ड सुना दिया गया तब उसे बचाने के लिए श्यामा ने एक उपाय सोचा। उसने देवदत्त के शिष्य समुद्रदत्त को अपनी बातों के जाल में फँसा कर शैलेन्द्र की जगह फाँसी दिलवा दी। लेकिन शैलेन्द्र ने श्यामा से प्रेम का नाटक किया, प्रेम नहीं, और एक दिन उपवन में घूमते समय उसका गला घोंटकर उसके आभूषण लेकर भाग गया। श्यामा मरी नहीं थी, सिर्फ बेहोश हो गई थी। गौतम बुद्ध और उनके शिष्य जब उस मार्ग से गुजरे तो उसे उठाकर पास ही स्थित बौद्ध विहार में लेगए और उसका उपचार किया। श्यामा ठीक हो गई। इस घटना से गौतम बुद्ध को बहुत यश मिला। श्यामा को भी अपने किये पर किये पर बहुत पश्चात्ताप हुआ और उसने आम्रपाली के रूप में अपने आप को बौद्ध धर्म की सेवा के लिए अर्पित कर दिया।

कोशल और मगध के बीच युद्ध हुआ जिसमें प्रसेनजित घायल होकर भाग निकले। अजातशत्रु ने उनका पीछा किया। प्रसेनजित घायल अवस्था में मल्लिका की कुटिया में पहुँचे। मल्लिका ने उन्हें आश्रय दिया और उनकी सेवा-सुश्रुषा की। अजातशत्रु प्रसेनजित का पीछा करते हुए मल्लिका की कुटिया में पहुँचा लेकिन वह मल्लिका के शान्त और त्यागपूर्ण आचरण से इतना प्रभावित हुआ कि बदला लेने का विचार उसने छोड़ दिया। किन्तु युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ था। अब कोशल और कोशाम्बी की सेनाओं ने मिलकर मगध पर आक्रमण कर दिया। विरुद्धक और अजातशत्रु ने मिलकर सामना किया किन्तु वे परास्त हुए। अजातशत्रु को प्रसेनजित ने बन्दी बना लिया। प्रसेनजित की पुत्री थी वाजिरा । वह कारागार में बन्द अजातशत्रु की ओर अकर्षित हुई और दोनों में प्रेम हो गया। वासवी अपने भाई प्रसेनजित से मिली और उसने अजातशत्रु को मुक्त करवा दिया। अजातशत्रु ने वासवी और प्रसेनजित से अपने दुर्व्यवहार के लिए क्षमा माँगी। प्रसेनजित ने अजातशत्रु और वाजिरा का विवाह करना भी स्वीकार कर लिया। विरुद्धक ने भी अपने पिता से क्षमा माँगी और उसे युवराज-पद वापस मिल गया। अन्त में सब मिलकर बिम्बसार की कुटिया में गए। वहाँ छलना ने वासवी और बिम्बसार से क्षमा माँगी। अजातशत्रु को पुत्र उत्पन्न हुआ और स्वयं पिता बनने के बाद पिता के स्नेह का महत्व उसकी समझ में आचुका था। उसने भी अपने पिता बिम्बसार से क्षमा-याचना की। यह सब देखकर बिम्बसार को इतनी प्रसन्नता हुई कि वे मूर्छित होकर गिर पड़े। इस प्रकार इस नाटक का अन्त सुख-दुख की मिली-जुली अनुभूति के साथ होता है। प्रसाद के नाटकों की इस विशेषता के कारण इसे प्रसादान्त कहा जाता है।

बोध प्रश्न : 4. प्रसादान्त किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

इस प्रकार अजातशत्रु की कथा का विकास तीन स्थितियों में होता है – आरम्भ, संघर्ष और चरमोत्कर्ष या अन्त। आरम्भ में कथा का बीजारोपण पहले ही दृश्य से होता है जिसमें एक छोटी-सी घटना मृगशावक को पकड़ कर लाने पर अजातशत्रु का सेवक पर क्रोधित होना - से अजातशत्रु पद्मावती, छलना और वासवी के चरित्रों का संकेत किया गया है। अजातशत्रु पद्मावती, धलना और वासवी के चरित्रों का संकेत किया गया है। 'अजातशत्रु' नाटक के मध्य भाग में घटनाएँ बड़ी तेज़ी से घटती हैं। इन घटनाओं के द्वारा कोशल, मगध और

इकाई-24 : अजातशत्रु : मूल्यांकन

24.0 उद्देश्य

24.1 पाठ एवं लेखक परिचय

24.2 मूल पाठ

24.3 सारांश

24.4 समीक्षा

24.5 शब्दार्थ

24.6 अभ्यास

24.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

24.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

24.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

24.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

24.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

24.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

BRAOU

24.0 उद्देश्य

हिन्दी नाटक-साहित्य में 'अजातशत्रु' का विशेष स्थान है। यह स्थान 'अजातशत्रु' की कथावस्तु और उद्देश्य नाटक के तत्वों के आधार पर उसकी कलात्मकता और प्रभाव तथा अपने युग में और आज के युग में 'अजातशत्रु' की प्रासंगिकता के कारण हैं। अत: इस पाठ में आप जान सकेंगे कि

- 'अजातशत्रु' की कथावस्तु और उद्देश्य हैं-भारत के गौरवशाली अतीत को दुबारा जीवित करना।
- नाटक के तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' एक सफल रचना है।
- 'अजातशत्रु' का संदेश आज भी हमारे लिए प्रासंगिक है।
- 'अजातशत्रु' के कारण लेखक जयशंकर प्रसाद एक सफ़ल और महत्वपूर्ण नाटककार सिद्ध होते हैं।

24.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

जयशंकर प्रसाद ने अपने ऐतिहसिक नाटकों से हिन्दी नाटक-सहित्य को गति और उद्देश्य दिया। इन नाटकों में राष्ट्रीय गौरव, देश प्रेम, मानवतावाद और विश्वशान्ति जैसे मूल्य उद्घाटित किए गए हैं। प्रसाद के नाटकों में एक ओर संस्कृत नाटकों की श्रेष्ठ परम्परा को आगे बढ़ाया गया है तो दूसरी ओर आधुनिक युग के अनुसार कई प्रयोग भी मिलते हैं। इस दृष्टि से 'अजातशत्रु' प्रसाद जी का सफल और प्रतिनिधि नाटक कहा जा

और विसंगतियों का हल ढूंढ़ना भी है। 'अजातशत्रु' में देश के तीन राज्यों के मध्य युद्ध और तत्कालीन समाज के मानसिक संघर्ष का वर्णन है। अजातशत्रु के प्रायः सभी प्रमुख पात्र वीर और पराक्रमी हैं। घटना-प्रधान इस नाटक में पात्रों के अंतर्द्वन्द्व के माध्यम से जयशंकर प्रसाद ने देश, काल और राजनीतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला है।

(आ) लेखक-परिचय

श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रसिद्ध परिवार में सन् 1889 ई. में हुआ था। इनका बचपन बड़े लाड़-प्यार और वैभव में बीता। किन्तु बारह वर्ष की आयु तक पहुँचते ही इनके पिता की मृत्यु हो गई। घर में सम्पत्ति को लेकर झगड़े शुरू हो गये। दो-तीन वर्ष के भीतर ही जयशंकर प्रसाद जी की माताजी और बड़े भाई का भी देहान्त हो गया। केवल सत्रह वर्ष की आयु में प्रसाद जी को सारे परिवार का भार उठाना पड़ा। उनका परिवार पहले बहुत धनी और प्रतिष्ठित था, लेकिन अब कर्ज के बोझ से दब चुका था। जीवन भर प्रसाद जी का यही लक्ष्य रहा कि वे अपने परिवार को कर्ज़ से मुक्त करें और उसकी खोयी हुई प्रतिष्ठा को फिर से प्राप्त करें। जीवन भर वे इसके लिए कठोर परिश्रम करते रहे और अपने उद्देश्य में सफल हुए। यही नहीं, प्रसाद जी के लिखे सहित्य तो उनका नाम युगों-युगों के लिए अमर कर दिया। प्रसाद जी की शिक्षा घर पर ही हुई। वे संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और फारसी भाषाओं पर समान अधिकार रखते थे। वेद और उपनिषद-साहित्य के वे पण्डित थे। केवल नौ वर्ष की आयु में "अमर कोश" और "लघु सिद्धान्त कौमुदी" उन्होंने कण्ठस्थ कर ली थी। भारतीय संस्कृति और इतिहास में उन्हें गहरी रुचि थी। इसी कारण उनके लगभग सभी नाटक भारतीय इतिहास के उन युगों पर आधारित हैं, जिनकी सामग्री इतिहास में उपलब्ध नहीं थी; और उनमें भारत की गौरवपूर्ण संस्कृति का गुणगान किया गया है। प्रसाद जी ने अपनी आरंभ की रचनाएं ब्रजभाषा में लिखी लेकिन सन् 1910 ई. से उन्होंने हिन्दी में रचना आरंभ कर दी। हिन्दी साहित्य के कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और निबंध आदि सभी क्षेत्रों में जयशंकर प्रसाद की देन अविस्मरणीय है। प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 ई. में हुई।

22.3 मूल पाठ

अजातशत्रु नाटक को तीन अंको में विभंजित किया गया है। प्रथम अंक में दृश्यों का समावेश किया गया है। दूसरे अंक में दृश्यों की संख्या 10 हैं तथा तीसरे अंक में 9 दृश्य हैं।

आजातशत्रु मगध के सम्राट बिंबसार का पुत्र था। बिंबसार की वासवी और छलना नामक दो रानियां थीं। बड़ी रानी कोशल के राज प्रसेननजित की बहन थी और बिंबसार की दूसरी पत्नी छलना थी। वासवी की पुत्री पद्मावती थी जिसका विवाह कोशम्बी के राजा उदयन से हुआ था। दूसरी पत्नी छलना का पुत्र अजातशत्रु था जो बाद में चलकर मगध का उत्तराधिकारी बना। प्रसेनाजित का पुत्र था विरुध्दक। वासवी की पुत्री, पद्मावती का विवाह कोशम्बी के राजा उदयन से तो हुआ लेकिन उदयन की दो अन्य रानियां भी थीं, माधवी और वासवदत्ता। अर्थात राजा उदयन की तीन रानिया थीं, पद्मावती, माधवी एवं वासवदत्ता। इस प्रकार यह कहानी तीन राज्यों के बीच चलती हैं। ये तीन राज्य हैं मगध, कोशल और कोशाम्बी। इस नाटक में दो पात्र और है गौतम बुद्ध और देवदत्त। अजातशत्रु की माता छलना बहुत ही अहंकारिणी और सत्ता की भूखी स्त्री थी। उसे अपने राजमाता होने का गर्व था, और उसने अजातशत्रु को एक क्रूर और निरंकुश राजा बनाना चाहा। अजातशत्रु और उसकी माता छलना पर गौतम बुद्ध के प्रतिद्वन्दी भिक्षु देवदत्त का बहुत प्रभाव था। इस सबसे दुखी होकर बिम्बसार ने अपने जीवनकाल में ही अजातशत्रु को राज्य सौंप दिया और स्वंय बड़ी रानी के साथ वानप्रस्थ आश्रम ले लिया। लेकिन वहाँ भी वे दोनों चैन से नहीं रह पाते थे। अजातशत्रु का दुर्व्यवहार इसका कारण था। बिम्बसार और वासवी अपने द्वार पर आने वाले याचकों को दान भी नहीं दे पाते थे। इस कारण वासवी ने निश्चय किया कि वे काशी राज्य के कर से अपनी आवश्यकता पूरी करेंगे। यह राज्य उसके पिता ने उसे दिया था। वासवी ने अपने भाई प्रसेनजित को पत्र लिखा। प्रसेनजित ने पत्र लिख कर काशी राज्य की प्रजा को आदेश दिया कि अब से वह अपना कर

BRAOU

(टैक्स) अजातशत्रु को न देकर सीधे रानी वासवी को दिया करे। इस बात पर आजातशत्रु बहुत बिगड़ गया और उसने प्रसेनजित के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया।

बोध प्रश्न : 1. बिम्बसार ने वानप्रस्थ आश्रम क्यों लिया?

.....

.....

.....

कोशल के राजा प्रसेनजित का पुत्र था विरुद्धक। वह निडर और उग्र स्वभाव का था। जब प्रसेनजित को सूचना मिली कि अजातशत्रु को उसके पिता बिम्बसार ने राज्याधिकार दे दिया है तब विरुद्धक ने कहा कि अब बूढ़े पिताओं को राज्यधिकार अपने युवा पुत्रों को सौंप देना चाहिए। विरुद्धक का संकेत अपनी ओर समझकर प्रसेनजित बहुत कृद्ध हुआ और उसने विरुद्धक को युवराज पद से हटा दिया। प्रसनजित की पत्नी और विरुद्धक की माता शक्तिमती भी छलना के ही समान अहंकारी और सत्ता लोलुप थीं। वह विरुद्धक को जल्द से जल्द राजा के रूप में देखना चाहती थी। उसने विरुद्धक को उकसाया कि उसे अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह करना चाहिए। विरुद्धक ने शैलिन्द्र डाकू के रूप मे जगह-जगह मारकाट और अशान्ति मचाना शुरू कर दिया। कोशल राज्य का वीर और स्वमिभक्त सेनापति था-बन्धुल। उसकी पत्नी थी मल्लिका, जिससे विरुद्धक मन ही मन प्रेम करता था किन्तु उसे पाने में असफल रहा था। मल्लिका सती नारी थी और अपने पति को कर्तव्य के मार्ग पर रहने की प्रेरणा देती थी। विरुद्धक ने बंधुल को राजद्रोह करने के लिए उकसाया लेकिन बंधुल ने ऐसा करने से इन्कर कर दिया। प्रसेनजित स्वयं अपने इस पराक्रमी सेनापति के यश के कारण मन ही मन ईर्ष्या करता था। उसने एक षड्यंत्र रचा जिसमें विरुद्धक (शैलेन्द्र डाकू के रूप में) और बन्धुल के बीच युद्ध करवाया। इस युद्ध में बन्धुल मारा गया। मल्लिका को इस षड्यंत्र की सूचना रानी शक्तिमती ने पहले ही दी थी जिससे वह बन्धुल को समझा-बुझाकर विरुद्धक की ओर कर सके। किन्तु मल्लिका अपने को कर्तव्य के मार्ग से हटाने के लिए तैयार नहीं होती। मल्लिका विधवा हो गई लेकिन उसने अपने पति के हत्यारों को क्षमा कर दिया क्योंकि वह गौतमबुद्ध के उपदेश से प्रेरित थी और अहिंसा और करुणा का साकार रूप थी।

बोध प्रश्न : 2. प्रसेनजित अपने पुत्र से क्यों नाराज हुआ?

.....

.....

.....

इसी के साथ कोशाम्बी की कथा भी चलती है। कोशाम्बी का राजा उदयन अपनी तीसरी रानी के प्रभाव में आकर अपनी दूसरी रानी पद्मावती की उपेक्षा करने लगा था। उदयन की तीसरी रानी मागन्धी घमण्डी और अधिकार-लोलुप थी। उसने षड्यंत्र कर उदयन की वीणा में एक विषैला सर्प रखवाया और उदयन को बताया कि यह काम पद्मावती ने उदयन को मारने के लिए करवाया है। पद्मावती सुशील और पतिव्रता स्त्री थी। वह गौतम के उपदेशों से प्रभावित थी। मागन्धी उससे ईर्ष्या करती थी और गौतम से भी बदला लेना चाहती थी क्यों कि उसके विवाह की बात पहले गौतम से ही हुई थी और उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया था। मागन्धी ने उदयन से पद्मावती की शिकायत करते हुए यह भी बताया कि वह गौतम के प्रति भक्ति ही नहीं बल्कि प्रेम-भाव रखती है। यह सब जानकर उदयन उत्तेजित हो उठा और पद्मावती का वध करने के लिए तैयार हो गया। लेकिन इस बीच बड़ी रानी वासवदत्त को सारे षड्यंत्र का पता लग गया और ठीक समय पर आकर उसने पद्मावती को बचा लिया। वासवदत्ता ने उदयन को बताया कि यह सारा षड्यंत्र मागन्धी का था और वह महल में आग लगाकर भाग गई है। सारी बात जानकर उदयन बहुत लज्जित हुआ और उसने पद्मावती से क्षमा माँगी।

BRAOU

बोध प्रश्न : 3. मागंधी का षड्यंत्र क्या था?

.....

.....

.....

मागंधी ने अब श्यामा वेश्या का रूप धारण किया और वह शैलेन्द्र डाकू यानी विरुद्धक से प्रेम करने लगी। जब शैलेन्द्र बन्धुल की हत्या के आरोप में बन्दी हुआ और उसे प्राणदण्ड सुना दिया गया तब उसे बचाने के लिए श्यामा ने एक उपाय सोचा। उसने देवदत्त के शिष्य समुद्रदत्त को अपनी बातों के जाल में फँसा कर शैलेन्द्र की जगह फाँसी दिलवा दी। लेकिन शैलेन्द्र ने श्यामा से प्रेम का नाटक किया, प्रेम नहीं, और एक दिन उपवन में घूमते समय उसका गला घोंटकर उसके आभूषण लेकर भाग गया। श्यामा मरी नहीं थी, सिर्फ बेहोश हो गई थी। गौतम बुद्ध और उनके शिष्य जब उस मार्ग से गुजरे तो उसे उठाकर पास ही स्थित बौद्ध विहार में लेगए और उसका उपचार किया। श्यामा ठीक हो गई। इस घटना से गौतम बुद्ध को बहुत यश मिला। श्यामा को भी अपने किये पर किये पर बहुत पश्चात्ताप हुआ और उसने आम्रपाली के रूप में अपने आप को बौद्ध धर्म की सेवा के लिए अर्पित कर दिया।

कोशल और मगध के बीच युद्ध हुआ जिसमें प्रसेनजित घायल होकर भाग निकले। अजातशत्रु ने उनका पीछा किया। प्रसेनजित घायल अवस्था में मल्लिका की कुटिया में पहुँचे। मल्लिका ने उन्हें आश्रय दिया और उनकी सेवा-सुश्रुषा की। अजातशत्रु प्रसेनजित का पीछा करते हुए मल्लिका की कुटिया में पहुँचा लेकिन वह मल्लिका के शान्त और त्यागपूर्ण आचरण से इतना प्रभावित हुआ कि बदला लेने का विचार उसने छोड़ दिया। किन्तु युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ था। अब कोशल और कोशाम्बी की सेनाओं ने मिलकर मगध पर आक्रमण कर दिया। विरुद्धक और अजातशत्रु ने मिलकर सामना किया किन्तु वे परास्त हुए। अजातशत्रु को प्रसेनजित ने बन्दी बना लिया। प्रसेनजित की पुत्री थी वाजिरा । वह कारागार में बन्द अजातशत्रु की ओर अकर्षित हुई और दोनों में प्रेम हो गया। वासवी अपने भाई प्रसेनजित से मिली और उसने अजातशत्रु को मुक्त करवा दिया। अजातशत्रु ने वासवी और प्रसेनजित से अपने दुर्व्यवहार के लिए क्षमा माँगी। प्रसेनजित ने अजातशत्रु और वाजिरा का विवाह करना भी स्वीकार कर लिया। विरुद्धक ने भी अपने पिता से क्षमा माँगी और उसे युवराज-पद वापस मिल गया। अन्त में सब मिलकर बिम्बसार की कुटिया में गए। वहाँ छलना ने वासवी और बिम्बसार से क्षमा माँगी। अजातशत्रु को पुत्र उत्पन्न हुआ और स्वयं पिता बनने के बाद पिता के स्नेह का महत्व उसकी समझ में आचुका था। उसने भी अपने पिता बिम्बसार से क्षमा-याचना की। यह सब देखकर बिम्बसार को इतनी प्रसन्नता हुई कि वे मूर्छित होकर गिर पड़े। इस प्रकार इस नाटक का अन्त सुख-दुख की मिली-जुली अनुभूति के साथ होता है। प्रसाद के नाटकों की इस विशेषता के कारण इसे प्रसादान्त कहा जाता है।

बोध प्रश्न : 4. प्रसादान्त किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

इस प्रकार अजातशत्रु की कथा का विकास तीन स्थितियों में होता है -- आरम्भ, संघर्ष और चरमोत्कर्ष या अन्त। आरम्भ में कथा का बीजारोपण पहले ही दृश्य से होता है जिसमें एक छोटी-सी घटना मृगशावक को पकड़ कर लाने पर अजातशत्रु का सेवक पर क्रोधित होना - से अजातशत्रु पद्मावती, छलना और वासवी के चरित्रों का संकेत किया गया है। अजातशत्रु पद्मावती, धलना और वासवी के चरित्रों का संकेत किया गया है। 'अजातशत्रु' नाटक के मध्य भाग में घटनाएँ बड़ी तेज़ी से घटती हैं। इन घटनाओं के द्वारा कोशल, मगध और

कोशाम्बी राज्यों के बीच सम्बन्धों का विकास, उनका आपस में संघर्ष और बाद में करुणा व शान्ति के उपदेश के साथ सामंजस्य बताया गया है। अन्त में असत्य पर सत्य की विजय और अहिंसा व करुणा के मूल्यों की प्रतिष्ठा के साथ नाटक समाप्त होता है।

नाट्यशास्त्र के नियमों के अनुसार नाटक की कथावस्तु के विकास के पाँच चरण होते हैं – आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्ताशा, नियताप्ति और फलागम। ये पाँचों चरण 'अजातशत्रु' के तीन अंको में समेटे गए हैं। देश, काल और कार्य इन तीनों के संकलन के साथ संकलन-त्रय के नियम का भी निर्वाह किया गया है। इस नाटक में प्रमुख या आधिकारिक कथा अजातशत्रु की है। प्रासंगिक कथाओं के रूप में उदयन और उनकी तीन राणियों की कथा, शैलेन्द्र और श्यामा, प्रसेनजित और विरुद्धक, मल्लिका और बन्धुल, गौतमबुद्ध और देवदत्त आदि की कथाएँ चलती हैं। प्रसाद जी ने बड़ी कुशलता से तीन राज्यों के बीच चलनेवाली इस विस्तृत कथा को मार्मिक, प्रभावशाली और सारगर्भित बनाया है।

बोध प्रश्न : 5. 'अजातशत्रु' में नाट्यशास्त्र के किन प्रमुख नियमों का निर्वाह हुआ है?

.....

.....

.....

22.3 सारांश

'अजातशत्रु' की कथावस्तु का सारांश इस प्रकार है – अजात शत्रु मगध के सम्राट बिम्बसार का पुत्र था। बिम्बसार की दो रानियाँ थीं – वासवी और छलना। वासवी कोशल के राजा प्रसेनजित की बहन थी और छलना लिच्छवि वंश की राजकुमारी थी। बिम्बसार और वासवी की पुत्री थी पद्मावती जो कोशाम्बी के राजा उदयन से ब्याही गई थी। बिम्बसार और छलना का पुत्र था अजातशत्रु जो मगध का युवराज था। इस प्रकार 'अजातशत्रु' की कथा तीन राज्यों – मगध, कोशल और कोशाम्बी के बीच संघर्ष की कथा है।

अजातशत्रु की माँ बहुत अहंकारिणी थी। वह अपने पुत्र को निरंकुश राजा के रूप में देखना चाहती थी। किन्तु बिम्बसार और वासवी महात्मा बुद्ध के करुणा और अहिंसा के संदेश से प्रभावित थे और वे अजातशत्रु को भी उन्हीं आदर्शों पर चलाना चाहते थे। छलना के व्यवहार से दु:खी होकर और महात्मा बुद्ध की प्रेरणा से बिम्बसार ने अजातशत्रु को राज्य सौंप दिया और स्वयं वासवी के साथ वानप्रस्थ आश्रम को चले गए। किन्तु वहाँ भी उन्हें अर्थिक कठिनाई थी जिसको दूर करने के लिए वासवी ने अपने भाई कोशल के राजा प्रसेनजित को पत्र लिखा कि वह काशी राज्य का कर उसे दिलवाए क्योंकि यह राज्य उसे दहेज में मिला था। इस बात से अजातशत्रु क्रोधित हो गया और उसने कोशल पर आक्रमण कर दिया। इसी बीच प्रसेनजित अपने युवाराज विरुद्धक से नाराज हो गया क्योंकि वह अजातशत्रु का समर्थन कर रहा था। उसने विरुद्धक को युवराज-पद से हटा दिया। विरुद्धक ने अपनी माता शक्तिमती के साथ मिलकर इस अपमान का बदला लेने के लिए राजद्रोह कर दिया। उसने शैलेन्द्र डाकू बनकर प्रसेनजित के स्वामी भक्त सेनापति बन्धुल को अपनी ओर मिलने की कोशिश की। लेकिन बन्धुल नहीं माना। प्रसेनजित स्वयं अपने सेनापति के पराक्रम और यश से ईर्ष्या करता था। उसने एक षडयंत्र कर शैलेन्द्र डाकू और बन्धुल के बीच द्वन्द्व युद्ध करवाया, जिसमें धोखे से बन्धुल मारा गया। शैलेन्द्र डाकू (बन्धुल) को कैद कर उसे प्राणदण्ड सुना दिया गया। इसी बीच कोशाम्बी के राजा उदयन की तीन रानियों में से एक मागन्धी ने पहले तो अपनी सपत्नी रानी पद्मावती के विरुद्ध षड्यंत्र कर उदयन को उससे विमुख करना चाहा और इसमें विफल होने पर भेद खुल जाने के डर से महल में आग लगा कर भाग गई और श्यामा वेश्या के रूप में शैलेन्द्र से प्रेम करने लगी। उसने शैलेन्द्र को प्राणदण्ड से बचाने के लिए देवदत्त के शिष्य समुद्रदत्त को उसकी जगह प्रणदण्ड दिलवा दिया। लेकिन शैलेन्द्र उससे प्रेम का नाटक करता था वह उसका

गला घोंटकर उसके आभूषण लेकर भाग गया। श्यामा मरी नहीं, सिर्फ़ मूर्च्छित हो गई थी। उसे गौतमबुद्ध और उनके शिष्यों ने बचा लिया। श्यामा ने आम्रपाली के रूप में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। कोशल और मगध के बीच युद्ध में प्रसेनजित ने घायल होकर बन्धुल की विधवा मल्लिका की कुटिया में आश्रय लिया और मल्लिका के सेवा-भाव से प्रभावित होकर उससे अपने अपराध के लिए क्षमा माँगी। अजातशत्रु भी इसी संघर्ष में प्रसेनजित द्वारा बन्दी बनाकर जेल में डाल दिया गया। वहाँ प्रसेनजित की पुत्री वाजिरा इससे प्रेम करने लगी। नाटक के अन्त में प्रसेनजित ने अजातशत्रु को क्षमा कर अपनी पुत्री से उसका विवाह कर दिया। उसने अपने पुत्र विरुद्धक को भी क्षमा कर युवराज बनादिया। छलना ने भी बिम्बसार और वासवी से क्षमा-याचना की। अजातशत्रु को पुत्र उत्पन्न हुआ तो उसे पिता के स्नेह का महत्व समझ में आया और अपने पिता बिम्बसार व माता वासवी से अपनी दुर्व्यवहार के लिए क्षमा माँगी। इस सब से बिम्बसार इतने प्रसन्न हुए कि मूर्च्छित होगए। सुख और दुख के मिले-जुले भावों के साथ कथा का अंत हुआ।

22.4 समीक्षा

'अजातशत्रु' की कथावस्तु सुगठित है। इसमें नाट्यशास्त्र के नियमों का पालन किया गया है। इस नाटक में तीन अंक हैं और इसमें नाटककार ने कथावस्तु की पाँच अवस्थाओं आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्ताशा, नियताप्ति और फलागम को समेटने का प्रयत्न किया है इसीलिए ये अवस्थाएँ बहुत स्पष्ट नहीं हैं। नाटककार ने तीन राज्यों की कथा ली है और देश, काल और कार्य का संकलन करते हुए 'संकलनत्रय' का निर्वाह किया है। 'अजातशत्रु' नाटक की कथावस्तु ऐतिहासिक है। लेकिन नाटककार ने कल्पना का उपयोग करते हुए इसे एक सुन्दर साहित्य रचना का रूप दिया है। इसमें उस युग की सामाजिक, राजनैतिक, अर्थिक और धार्मिक परिस्थितियों का चित्रण है।

अजातशत्रु की कथावस्तु का प्रमुख आधार है चरित्रों का चित्रण और घटनाओं का संयोजन। इसमें चरित्रों का विकास तर्कपूर्ण ढंग से किया गया है और घटनाएँ कथा के विकास को गति देती है। कथावस्तु और चरित्र के अनुरूप ही संवाद लिखे गए हैं। संवादों की भाषा उस समय के अनुरूप संस्कृतनिष्ठ हैं। नाटककार ने गीतों का भी उपयोग इस नाटक में किया है।

'अजातशत्रु' नाटक का प्रमुख उद्देश्य भारत के इतिहास की व्याख्या करना है। इस नाटक में सूक्तियों और विचारात्मक सूत्रों के द्वारा नाटककार ने कई गम्भीर तथ्य रखे हैं जो आज भी प्रासंगिक हैं। रस की दृष्टि से इस नाटक में वीर और श्रृंगार रस का समुचित प्रयोग करते हुए उसकी परिणति शांत रस में ही की गई है।

'अजातशत्रु' का नायक अजातशत्रु है और उसी के आधार पर इस नाटक का नामकरण किया गया है। लेकिन 'अजातशत्रु' नामकरण के पीछे एक और रहस्य दिखाई देता है। अजातशत्रु का मतलब होता है जिसका कोई शत्रु न हो। इस दृष्टि से इस नाटक में गौतम बुद्ध ऐसे पात्र दिखाई देते हैं जिनका कोई शत्रु नहीं है और उनके जो विरोधी और शत्रु हैं वे भी नाटक के अंत तक आते-आते अपने अपराध का प्रायश्चित करके गौतमबुद्ध की शरण में आ जाते हैं। इस प्रकार 'अजातशत्रु' नाम से प्रसाद जी यह भी बतलाना चाहते हैं कि प्रेम और करुणा से ही मनुष्य अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकता है और संसार में ऐसा वातवरण बना सकता है जिसमें कोई किसी का शत्रु न हो। इस नाटक के प्रमुख रस को देखते हुए यह नाम उपयुक्त लगता है।

22.5 शब्दार्थ

अप्रतिम	–	अद्वितीय, जिसके समान दूसरा न हो
विसंगति	–	विडम्बना, संगत न होना
समावेश	–	मिलाना, समाविष्ट करना

BRAOU

कर	–	टैक्स
लोलुप	–	लालची
बीजारोपण	–	आरंभ करना
संकलन-त्रय	–	स्थान, समय और कार्य की एकता
मूर्च्छित	–	बेहोश

22.6 अभ्यास

22.6.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (लगभग 250 शब्दों में उत्तर दीजिए)

(अ) 'अजातशत्रु' की कथा किन तीन राज्यों के बीच चलती है और उनका आपस में क्या सम्बन्ध है?

(आ) 'अजातशत्रु' की कथावस्तु में गौतमबुद्ध की क्या भूमिका है?

(इ) नाट्यशास्त्र के नियमों के अनुसार 'अजातशत्रु' की कथा की क्या विशेषताएँ हैं?

(ई) 'अजातशत्रु' की कथा का अन्त कैसे होता है – संक्षेप में बतलाइए।

(उ) 'अजातशत्रु' नाटक की कथवस्तु की समीक्षा कीजिए?

22.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (लगभग 125 शब्दों में उत्तर दीजिए)

(अ) 'अजातशत्रु' के लेखक का परिचय दीजिए।

(आ) मल्लिका ने अपने पति के हत्यारों को क्यों क्षमा कर दिया?

(इ) प्रसेनजित का अपने पुत्र से कैसा सम्बन्ध था?

(ई) छलना और शक्तिमती के चरित्रों में क्या समानता है?

(उ) 'अजातशत्रु' का अन्त प्रसादान्त क्यों कहा जाता है?

(ऊ) 'अजातशत्रु' की कथावस्तु का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

22.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

22.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (लगभग 250 शब्दों में उत्तर दीजिए।)

प्रश्न : 'अजातशत्रु' नाटक की कथावस्तु की समीक्षा कीजिए।

उत्तर: 'अजातशत्रु' नाटक की समीक्षा नाट्यशास्त्र के परंमरागत नियमों के अनुसार और आधुनिक आलोचना के अनुसार की जा सकती है। दोनों ही दृष्टियों से इसकी कथावस्तु सुगठित, सोद्देश्य और प्रवाहपूर्ण है। इस नाटक में तीन अंक हैं और इसकी कथावस्तु में नाट्यशास्त्र के नियमों के अनुसार पाँच अवस्थाएँ आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्तशा, नियताप्ति और फलागम बताई गई हैं। इसमें देश, काल और कार्य का संकलन–त्रय है। इसकी कथावस्तु ऐतिहसिक है पर कल्पना का भी समुचित प्रयोग है। इस नाटक में उस युग की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण है। इस नाटक का प्रमुख आधार है सशक्त और प्रभावशाली चरित्रों की प्रस्तुति । इन चरित्रों और घटनाओं का संयोजन नाटककार ने इस कुशलता से किया है कि तीन राज्यों के बीच चलनेवाली यह कथा कहीं भी अपना प्रवाह और दिलचस्प नहीं खोती । कथावस्तु को गति देने के लिए संवाद और गीत हैं। इस नाटक की कथावस्तु का प्रमुख उद्देश्य भारत के इतिहास की फिर से

BRAOU

व्याख्या करना है। नाटककार गौतमबुद्ध के अहिंसा और करुणा के उपदेशों के द्वारा 'अजातशत्रु' बनने का रहस्य बतलाते हैं अर्थात करुणा और अहिंसा का आदर्श अपनाने से शत्रुता का भाव ही समाप्त हो जाता है। इस नाटक में विभिन्न रसों का प्रयोग हुआ है जिनमें मुख्य हैं वीर और श्रृंगार रस। इस नाटक की परिणति शांत भाव में की गई है। 'अजातशत्रु' की कथावस्तु में हास्य रस का भी प्रसंगानुसार उपयोग किया गया है। यह नाटक मूलत: एक गम्भीर विषय को लेकर चलता है। इसमें जगह-जगह सूक्तियाँ और गहन भाव हैं जिनसे लेखक की दार्शनिक विचारधारा स्पष्ट होती है।

22.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (लग भग 125 शब्दों में उत्तर दीजिए)

प्रश्न : 'अजातशत्रु' की कथावस्तु का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर : 'अजातशत्रु' नाटक की कथावस्तु का उद्देश्य है भारत के इतिहास, पुनर्व्याख्या और उसके द्वारा आज की समस्याओं का हल ढूँढना। इस नाटक में प्रसादजी ने बौद्ध काल की परिस्थितियों का चित्रण किया है। उस काल के भारत के विभिन्न राज्यों में आपसी कलह, ईर्ष्या और संघर्ष का मुख्य कारण था व्यक्तियों का अहंकार, स्वार्थ और सत्तालोलुपता। ऐसे वातावरण में गौतमबुद्ध जैसे आदर्श चरित्र मनुष्य मात्र में प्रेम, करुणा और अहिंसा के भाव जगते हैं और विश्वशान्ति का संदेश देते हैं। रस की दृष्टि से 'अजातशत्रु' का उद्देश्य शांत रस की प्रस्तुति है। प्रसाद जी के विचार से "जीवन की सारी क्रियाओं का अंत अनंत विश्राम में है।" इसीलिए 'अजातशत्रु' में चलने वाले युद्ध और सक्रियता का अंत शान्ति, क्षमा और अहिंसा में होता है। इसीको 'समरसता' का संदेश कहा गया है अर्थात् सुख-दुख से गुज़र कर चिर शान्ति प्राप्त करना ही मानव जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1 बिम्बसार ने अपनी पत्नी छलना के अहंकारी और स्वार्थी स्वभाव से दुखी होकर वानप्रस्थ आश्रम ले लिया।

उत्तर 2 प्रसेनजित के पुत्र विरुद्धक ने इस बात का समर्थन किया कि बूढे पिताओं को अपने युवा पुत्रों को राज्यधिकार दे देना चाहिए यह संकेत अपनी ओर समझकर प्रसेनजित कृद्ध हुआ।

उत्तर 3 मागंधी का षड्यंत्र था उदयन को अपनी पत्नी पद्मावती से विमुख करना, इसकेलिए उसने उदयन की वीणा में विषैल सर्प छिपा दिया और पद्मावती पर दोष लगाया।

उत्तर 4 प्रसाद जी ने अपने कई नाटकों का अंत ऐसे किया कि न तो यह सुखांत कहा जा सके न दुखांत । मिले जुले भावों वाले इस अंत को प्रसादजी के नाम पर प्रसादांत कहा जाता है।

उत्तर 5 'अजातशत्रु' की कथावस्तु में विकास के पाँच चरणों आरंभ, प्रयत्न, प्राप्ताशा, नियताप्ति और फलागम का निर्वाह हुआ है और 'संकलन त्रय' का उपयोग हुआ है। इसमें आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं का उपयोग हुआ है।

22.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अजातशत्रु : जयशंकर प्रसाद

BRAOU

इकाई-23 : 'अजातशत्रु' में चरित्र-चित्रण

23.0 उद्देश्य

23.1 पाठ एवं लेखक परिचय

23.2 मूल पाठ

23.3 सारांश

23.4 समीक्षा

23.5 शब्दार्थ

23.6 अभ्यास

23.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

23.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

23.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

23.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

23.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

23.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

23.0 उद्देश्य

इस पाठ में जयशंकर प्रसाद के इस ऐतिहासिक नाटक 'अजातशत्रु' के प्रमुख पात्रों के विविध चरित्रों की मीमांसा की गई है। इस पाठ के अध्ययन से हमें :

- नाटक के प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को समझने में मदद मिलेगी।
- पात्रों के चरित्र के विकास और उनमें निहित द्वन्द्व को समझने और परखने की सुविधा होगी।
- स्त्री और पुरुष पात्रों में सम्बन्ध और उन सम्बन्धो में अन्तर्निहित द्वन्द्व को समझने में मदद मिलेगी।
- नाटक में प्रयुक्त सभी पात्रों की भूमिका का औचित्य समझ सकेंगे।

BRAOU

23.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

अजातशत्रु एक ऐतिहासिक नाटक है। नाटककार जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों में चरित्र और उन चरित्रों में उभरे द्वन्द्व को समझने में 'अजातशत्रु' का स्थान रेखांकन के योग्य है। इस नाटक में मुख्यत: पच्चीस पात्र हैं। जिनमें पुरुष पात्रों की संख्या 16 और स्त्री पात्रों की संख्या 9 हैं। पुरुष पात्रों में बिम्बसार, अजातशत्रु, गौतमबुद्ध, विरुद्धक, देवदत्त, और प्रसेनजित प्रमुख हैं तो स्त्री पात्रों में वासवी, छलना, मल्लिका, मागंधी, शक्तिमती और पद्मावती को रेखांकित किया जा सकता है। शेष पात्र नाटक की कथावस्तु को आगे बढ़ाने या रोचक बनाने में सहायक पात्रों के रूप में प्रयुक्त किये गये हैं। इस पाठ में आगे चलकर 'अजातशत्रु' में आये

प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

(आ) लेखक-परिचय

श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रसिद्ध परिवार में सन् 1889 ई. में हुआ था। इनका बचपन बड़े लाड़-प्यार और वैभव में बीता किन्तु बारह वर्ष की आयु तक पहुँचते ही इनके पिता की मृत्यु हो गई। घर में सम्पत्ति को लेकर झगड़े शुरू हो गये। दो-तीन वर्ष के भीतर ही जयशंकर प्रसाद जी की माताजी और बड़े भाई का भी देहान्त हो गया। केवल सत्रह वर्ष की आयु में प्रसादजी को सारे परिवार का भार उठाना पड़ा। उनका परिवार पहले बहुत धनी और प्रतिष्ठित था, लेकिन अब कर्ज के बोझ से दब चुका था। जीवन भर प्रसाद जी का यही लक्ष्य रहा कि वे अपने परिवार को कर्ज़ से मुक्त करें और उसकी खोयी हुई प्रतिष्ठा को फिर से प्राप्त करें। जीवन भर वे इसके लिए कठोर परिश्रम करते रहे और अपने उद्देश्य मे सफ़ल हुए। यही नहीं, प्रसाद जी के लिखे सहित्य तो उनका नाम युगों-युगों के लिए अमर कर दिया। प्रसाद जी की शिक्षा घर पर ही हुई। वे संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और फारसी भाषाओं पर समान अधिकार रखते थे। वेद और उपनिषद-साहित्य के वे पण्डित थे। केवल नौ वर्ष की आयु में ''अमर कोश'' और ''लघु सिद्धान्त कौमुदी'' उन्होंने कण्ठस्थ कर ली थी। भारतीय संस्कृति और इतिहास में उन्हें गहरी रुचि थी। इसी कारण उनके लगभग सभी नाटक भारतीय इतिहास के उन युगो पर आधारित है, जिनकी सामग्री इतिहास में उपलब्ध नहीं थी, और उनमें भारत की गौरवपूर्ण संस्कृति का गुणगान किया गया है। प्रसादजी ने अपनी आरंभ की रचनाएं ब्रजभाषा में लिखी लेकिन सन् 1910 ई. से उन्होंने हिन्दी में रचना आरंभ कर दी। हिन्दी साहित्य के कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और निबंध आदि सभी क्षेत्रों में जयशंकर प्रसाद की देन अविस्मरणीय है। प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 ई. में हुई।

23.2 मूल पाठ

अजातशत्रु के प्रमुख चरित्रों और पात्रों को प्रमुख रूप से निम्नांकित वर्गों में बांटा जा सकता है

(क) सद्वृत्ति प्रधान पात्र

(ख) असद्वृत्ति प्रधान पात्र

(ग) मिश्रित प्रवृत्ति प्रधानता वाले पात्र

प्रथम वर्ग में यानी 'सद्वृत्ति प्रधान' वाले पात्रों में बिम्बासर गौतम, वासवी, पद्मावती और मल्लिका प्रमुख रूप से आते हैं। 'अजातशत्रु' में देवदत्त, समुद्रदत्त जैसे पात्रों में असद्वृति की प्रधानता है। शेष अधिकतर पात्रों को मिश्रित प्रवृत्ति वाले चरित्रों की श्रेणी में रखा जा सकता है। अर्थात् 'अजातशत्रु' में आए अधिकांश पात्रों में असद्वृत्ति की प्रधानत तो है लेकिन कहीं-कहीं थोड़ी सी असद्वृत्ति भी लक्षित होती है। लेकिन ऐसे पात्रों के चरित्र में असद्वृति की ही प्रधानता के कारण उनकी सद्वृत्ति उभरती नहीं है और उभरती भी है तो नाटक के अंत में। 'अजातशत्रु' का अंत सद्वृत्ति में होता है। पर सद्वृत्ति की विजय होती है।

नाटक में इन तीन वर्गों की मानवीय वृत्ति को उभारने में जयशंकार प्रसाद को अधिक सफलता मिली है। मिश्रित प्रवृत्ति वाले पात्रों के चरित्र का अन्त और अन्ततः उनमें सद्वृत्ति को पनपाना, जयशंकर प्रसाद की विशेषता रही है। पात्रों का अन्तर्द्वन्द्व नाटक की प्रमुख विशेषता है।

अब हम कुछ प्रमुख पात्रों के चरित्र का विवेचन करेंगे :

(i) प्रमुख पुरुष पात्रों का चरित्र-चित्रण

'अजातशत्रु' में यूं तो 16 पुरुष पात्र हैं इनमें प्रमुख पात्रों का चरित्र निम्नांकित प्रकार से नाटक में उभर कर सामने आता है।

BRAOU

(क) बिम्बसार

इस ऐतिहासिक नाटक में बिम्बसार एक ऐतिहासिक और प्रसिद्ध पात्र है। बिम्बसार मगध का सम्राट है। 'बिम्बसार' वृद्धावस्था की ओर बढ़ता हुआ है लेकिन अपने राज के लम्बे समय में उसने कई राजनीतिक षड्यंत्रों का दमन किया है। कई विद्रोहों को कुचला है। अत: अनुभवी है। राज-काज के क्षेत्र में सफल बिम्बसार घरेलू मोर्चों पर विफल है। उसकी दो रानियां हैं छलना और वासवी। वासवी में सेवा भावना है और बिम्बसार वासवी की सेवा, दया और पातिव्रत्य धर्म से संतुष्ट हैं लेकिन दूसरी रानी छलना अहंकारी, सत्ता के प्रति आसक्त या सत्तालोलुप स्वभाव की है। इससे बिम्बसार काफी दु:खी रहते हैं। छलना अपने पुत्र अजातशत्रु को मगध के सम्राट के रूप में जल्द से जल्द देखना चाहती है। छलना अपनी चारित्रिक विशेषताएं भरकर अजातशत्रु को निरंकुश और सत्ता के प्रति मोह रखने वाला बनाना चाहती है।

दूसरी ओर बिम्बसार जीवन के उत्तरार्ध से गुजरते हुए एक दार्शनिक प्रवृत्ति वाला राजा था। उसमें वैराग्य की भावना घर करती जा रही थी लेकिन बीच-बीच में वह सांसारिक सुखों की ओर भी प्रवृत्त होता था सांसारिक सुख और वैराग्य की भावना के बीच का अन्तर्द्वन्द्व बिम्बसार के चरित्र में हमेशा बना रहता है। 'अजातशत्रु' का प्रारम्भ ही बिम्बसार के इस चरित्र के साथ होता है कि वह अकेले बैठा जीवन की नश्वरता के बारे में सोच रहा है। प्रारम्भ में ही अजातशत्रु का स्वगत कथन ही वैराग्य-भावना को स्पष्ट करती है। इसी स्थान पर जब बिम्बसार से राजपाठ अजातशत्रु को सौंप देने की बात आती है तो वह हिचकिचाता है और अजातशत्रु को अयोग्य बताता है। गौतम बुद्ध इस द्वन्द्व को समझते हैं और बिंबसार को इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि वह अजातशत्रु को राजपाठ सौंप कर वानप्रस्थ जीवन की ओर अग्रसर हो। इस दृश्य में बिम्बसार के द्वन्द्व का जयशंकर प्रसाद ने बड़ी गहराई से उकेरा (उतारा) है। बिम्बसार के चरित्र में अन्तद्वन्द्व की तीव्रता 'अजातशत्रु' के दूसरे अंक के छठे दृश्य ने भी उभारा है। जब छलना बिम्बसार को कोशल और मगध के बीच चल रहे युद्ध की सूचना देती है बिम्बसार पूछता है कि 'युद्ध में क्या हुआ?' लेकिन छलना से सूचना पाकर वह वैराग्य भाव में डूब जाता है। दीर्घ नि:स्वांस भर कर उसका यह कहना कि मुझे इससे क्या? नाटककार ने यहां बिम्बसार के चरित्र में संसार के प्रति दार्शनिक चिन्तन का पुट भरा है।

बिम्बसार अपने परिवार और पुत्र के प्रति बड़ा आकर्षण रखता था। अपने पुत्र अजातशत्रु द्वारा जब बंदी बना लिया जाता है तो बिबंसार को कई यातना के क्षणों से गुजरना पड़ता है, लेकिन बिबंसार अजातशत्रु के प्रति कोई प्रतिशोधात्मक विचार नहीं रखता। यही कारण है कि अजातशत्रु जब बिम्बसार से अपने कृत्य पर क्षमा मांगता है तो एक पितृ हृदय वाला बिम्बसार अपने पुत्र को क्षमा कर देता है और स्नेह से परिपूर्ण बिम्बसार अजातशत्रु और छलना के हृदय परिवर्तन को देखकर इतना भाव विह्वल हो जाता है कि उसके प्राण-पखेरु उड़ जाते हैं। यहाँ बिम्बसार की मृत्यु भी सुखद, कारुणिक और शांत प्रभाव छोड़ जाती है।

यहां बिम्बसार की मृत्यु एक दार्शनिक प्रभाव भी छोड़ती है जो नाटककार के दर्शन से प्रभावित है। मूल ऐतिहासिक कथा में बिम्बसार का चरित्र तो है, लेकिन इतिहास में बिम्बसार को बंदी बनाकर उसकी हत्या किये जाने की बात का वर्णन है लेकिन 'अजातशत्रु' में जयशंकर प्रसाद ने बिम्बसार का चरित्र एक द्रष्टा के रूप में चित्रित किया है।

बोध प्रश्न : 1. बिम्बसार एक पिता के रूप में कैसा चरित्र है?

.....

.....

.....

BRAOU

(ख) गौतमबुद्ध

'अजातशत्रु' का यह पात्र एक प्रकाश-स्तंभ की तरह है। नाटक का आदर्श और करुणा से ओत प्रोत एकमात्र पात्र गौतमबुद्ध ही हैं जिनके इर्द-गिर्द त्याग, करुणा, दया, अहिंसा, पवित्रता जैसी सद्वृत्रियां एकसाथ विद्यमान हैं। गौतम बुद्ध जैसे ऐतिहासिक और धार्मिक चरित्र की पूरी-पूरी रक्षा और गरिमा का प्रतिपादन जयशंकर प्रसाद ने किया है।

नाटक का एक प्रमुख पात्र देवदत्त, गौतम का घोर विरोधी है। उसने गौतम की हत्या करने का षड्यंत्र किया, उसे कलंकित करने के उपाय किये लेकिन वह सफल नहीं हुआ। उनकी मधुरवाणी और व्यवहार से कोशल, मगध और कोशांबी से अच्छे और सम्मानजनक सम्बन्ध थे।

गौतम बुद्ध छलना के कुटिल व्यवहार को समझकर भी बिम्बसार को छलना से स्नेहपूर्ण व्यवहार करने का परामर्श दिया करते थे। गौतम बुद्ध अपने विरोधियों से कोई द्वेष नहीं रखते। वे मागंधी को भी क्षमा कर उसे अपने धर्म की शरण में लेते हैं। क्षमा की प्रतिमूर्ति के रूप में उभरे गौतम बुद्ध मल्लिका को भी यह प्रेरणा देते हैं कि वह अपने पति के हत्यारे विरुद्धक और प्रसेनजित को क्षमा कर दे। 'अजातशत्रु' नाटक में गौतमबुद्ध का चरित्र एक पुरुष के रूप में उभरा है। गौतमबुद्ध का चरित्र अजातशत्रु की धुरी ही नहीं केन्द्रीय पात्र भी है। 'अजातशत्रु' का अर्थ होता है जिसका कोई शत्रु न हो। इस अर्थ में भी गौतम बुद्ध ही 'अजातशत्रु' के केन्द्रीय चरित्र बनकर उभरते हैं।

(ग) अजातशत्रु

'अजातशत्रु' नाटक के एक मुख्य चरित्र का नाम अजातशत्रु है और प्रथम दृष्टि में यह पात्र नाटक का नायक लगता है। लेकिन नाट्य शास्त्र के अनुसार अजात शत्रु नामक पात्र में नाटककार ने नायकत्व के सारे लक्षणों का समावेश नहीं किया है। साहसी तो है लेकिन उसका चित्त बड़ा अस्थिर दिखाया गया है। अजातशत्रु पराक्रमी है लेकिन स्वयं निर्णय लेने में असमर्थ है। अजातशत्रु अक्सर दूसरों के कहने पर चलने वाला लगता है।

नाटक के मध्य तक पहुंचते-पहुंचते अजातशत्रु के व्यक्तित्व में परिवर्तन होता है। मल्लिका के करुणामय स्वरूप के समक्ष वह अपने क्रोध को भूल जाता है। वासवी की ममता अजातशत्रु के अन्दर का शत्रुभाव मिटा देती है और अन्तत : अजातशत्रु जब वजीरा के प्रेम में पड़ता है तो एक नये मनुष्य के रूप में सामने आता है। वाजीरा को वह कहता है, ''तुम्हारे उदार प्रेम ने मेरे विद्रोही हृदय को विजित कर लिया।'' अजातशत्रु का 'विद्रोहीपन' और ''जंगलीपन'' तब समाप्त हो जाता है जब वह एक पुत्र का पिता बनता है। एक पिता के रूप में अजातशत्रु को यह 'ज्ञान' होता है कि उसने अपने पिता के साथ कैसा व्यवहार किया था? इस स्वगत कथन में अजातशत्रु की पीड़ा स्पष्ट झलकती है ''मुझे अच्छी शिक्षा नहीं मिली थी। मिला था केवल जंगलीपन की स्वतंत्रता का अभिमान। अपने को विश्वभर में स्वतंत्र जीव समझने का झूठा आत्मसम्मान।'' अजातशत्रु का चरित्र अत्यधिक गतिशील और क्रियाशील है।

नाटक में अजातशत्रु का चरित्र असद् से सद् प्रकृति की ओर बढ़ता है। लेकिन इस चरित्र में कई प्रकार की कमजोरियाँ बतलाई गई हैं फिर भी यह चरित्र प्रमुख और नाटक का केन्द्रीय चरित्र इसलिए है कि सारी घटनाएँ इसी के इर्द-गिर्द घूमती हैं और अंत में पश्चात्ताप के द्वारा यह अपने पिता से क्षमा और पाठकों व दर्शकों से सहानुभूति प्राप्त कर लेता है।

बोध प्रश्न : 2. अजातशत्रु नाटक का नायक क्यों है ?

.....

.....

.....

BRAOU

(घ) विरुद्धक

विरुद्धक का चरित्र साहस, पराक्रम और आकर्षण में अजातशत्रु के चरित्र से मेल खाता है लेकिन विरुद्धक के चरित्र में उतार-चढ़ाव अजातशत्रु की अपेक्षा बहुत अधिक है। विरुद्धक कोशल-नरेश प्रसेनजित का पुत्र और कोशल का युवराज है। वह जल्द ही उत्तेजित हो उठने वाला विवेकहीन युवक है। जब कोशल की राज्य-सभा में अजातशत्रु के राजा बनाए जाने के समाचार पहुंचता हो तो वह अजातशत्रु का पक्ष लेता है और कहता है - ''युवराज को राज्य-संचालन की शिक्षा देना महाराज का ही कर्तव्य है।'' प्रसेनजित इस पर क्रुद्ध होकर उसे युवराज-पद से वंचित कर देता है। विरुद्धक विद्रोही बन जाता है। उसकी माता शक्तिमती उसे पिता से प्रतिशोध लेने के लिए उकसाती है। विरुद्धक शैलेन्द्र डाकू के नाम से लूटपाट और हत्याए करने लगता है। अब उसके व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष सामने आता है। वह मल्लिका से प्रेम करता था। उसके पति का वह छल से वध कर देता है। युद्ध में घायल हो जाने पर सब-कुछ जानते हुए भी मल्लिका उसकी सेवा-शुश्रुषा करती है, किन्तु विरुद्धक इसे मल्लिका का अपने प्रति प्रेम समझता है। मल्लिका उसे इस गलत भाव के लिए फटकारती है। शैलेन्द्र डाकू के रूप में वह अपनी प्रेमिका श्यामा की हत्या का प्रयत्न कर चुका है। किन्तु मल्लिका उसके सारे अपराध क्षमा कर उसे करुणा और शाति का संदेश देती है। मल्लिका के प्रभाव से विरुद्धक का हृदय परिवर्तन होता है। इस प्रकार विरुद्धक के चरित्र के द्वारा प्रसाद ने यह बतलाना चाहा कि एक साहसी और प्रतिभाशाली पात्र यदि अच्छी शिक्षा और स्नेह के अभाव में पथ से भटक जाए तो हिंसक और घातक बन जाता है, किन्तु प्रेम से उसी को पुन: सत्पथ पर लाया जा सकता है।

(ड.) प्रसेनजित

कोशल का राजा प्रसेनजित वीर तो है, किन्तु जल्द ही उत्तेजित होने वाला उग्र स्वभाव का शासक हैं। अपने पुत्र का अपमान कर वह उसे अपना विरोधी बना लेता है। उसके मन में ईर्ष्या का भाव भी प्रबल है। अपने ही स्वामिभक्त सेनापति बंधुल की प्रसिद्धि से वह ईर्ष्या करने लगता है और षड्यंत्र से उसे मरवा देता है। किन्तु मल्लिका के दिव्य चरित्र के आगे वह पश्चात्ताप करता है। वह अपनी पत्नी शक्तिमती और पुत्र विरुद्धक को क्षमा कर उन्हे स्वीकार कर लेता है। प्रसेनजित को अपने वंश का बहुत अभिमान है। वह शक्तिमती को दासीपुत्री कहकर उसका यह झूठा अभिमान तोड़ देते हैं और सभी मनुष्यों को समान समझने का उपदेश देते हैं। प्रसेनजित के चरित्र में भी सद् से असद् की ओर विकास है।

(च) उदयन

कोशाम्बी का राजा उदयन अपनी तीसरी रानी मागंधी के प्रेम मे बड़ी दो रानियों की उपेक्षा करने लगता है। वह रसिक और विलासी है। उसका स्वभाव अस्थिर है। वह दूसरों के कहने पर तुरंत विश्वास कर लेता है। ''अजातशत्रु'' नाटक के दो दृश्यों मे उदयन के चरित्र की सारी विशेषताएँ सामने आ जाती हैं। मागंधी के महल में वह मदिरापान करता है। मागंधी के रूप और शराब के नशे में वह गौतम बुद्ध के सारे उपदेश भूल जाता है। वीणा में साप देखकर मागंधी के कहने से शीघ्र ही वह विश्वास कर लेता है कि यह पद्मावती का षड्यंत्र है। वह पद्मावती की हत्या करने जाता है किन्तु उसके सतीत्व के तेज के आगे उसका हाथ नहीं उठता। अंत में वासवदत्ता के कहने से उसे अपनी भूल का ध्यान होता है। उदयन इतना शंकालु पुरुष है कि गौतम जेसे पवित्र व्यक्ति के प्रति पद्मावती की श्रद्धा को भी संदेह की दृष्टि से देखने लगता है। इस प्रकार एक रसिक, विलासी और सामान्य दुर्बलताओं से युक्त व्यक्ति के रूप मे उदयन का चित्रण किया गया है।

(छ) जीवन

जीवन का परिचय मगध के राजवैद्य के रूप में दिया गया है किन्तु वह संदेशवाहक का कार्य ही अधिक करता दिखाई देता है। यह इसलिए कि वह मगध का स्वामिभक्त और कर्तव्यनिष्ठ सेवक है। जीवन का चरित्र

BRAOU

तेजपूर्ण और सद्वृत्ति प्रधान है। वह निडर है। देवदत्त के प्रतापपूर्ण व्यवहार का खुला विरोध वह करता है। वह नियतिवादी है इसीलिए कर्म में उसका विश्वास है। अर्थात् उसका नियतिवाद भाग्य के भरोसे हाथ पर हाथ रखकर बैठना नहीं, बल्कि कर्म करना है। वह कहता है ''नियति की डोरी पकड़ कर मैं निर्भय कर्म-कूप में कूद सकता हूँ, क्योंकि मुझे विश्वास है कि जो होना है वह तो होगा ही, फिर कायर क्यों बनूँ कर्म से क्यों विरक्त रहूँ'' वह अजातशत्रु के दुर्व्यवहार का विरोध करता है और बिम्बसार का पक्ष लेता है।

(ज) वसंतक

''अजातशत्रु'' का विदूषक है – वसंतक। भारतीय नाट्यशास्त्र में विदूषक के लक्षणों में यह बतलाया गया है कि यह नायक का मित्र, सलाहकार, संदेशवाहक होता है, यह हास्यप्रिय, विनोदी और भोजनप्रिय होता है। इस नाटक के विदूषक वसंतक में ये सारे लक्षण मिलते हैं। वह कोशांबी के राज-महल का विदूषक है, राजा उदयन की सभा में उनका मनोरंजन करता है किन्तु जब उदयन वासवदत्ता और पद्मावती की उपेक्षा करने लगते हैं तो उसकी सहानुभूति इन दो रानियों से होती है। वह मगध के दूत और राजवैद्य जीवक को पद्मावती का कुशल समाचार देता है। वह भोजनप्रिय है और उसे लड्डू बहुत पसंद है। विदूषक वसंतक केवल हंसोड़ ही नहीं है, उसे जीवन के अच्छे-बुरे पक्ष का पूरा ज्ञान है। उदयन के मागंधी से ब्याह कर लेने पर वह जीवक से उसकी आलोचना करता है और कहता है कि ''उन्हें बुद्धि का अजीर्ण हो गया है।'' किन्तु वसंतक व्यवहार-कुशल भी है। वह राजा की हर नीति का समर्थन करने में ही अपनी सुरक्षा मानता है। इस चरित्र द्वारा ''अजातशत्रु'' नाटक में हास्य-व्यंग्य और यथार्थवाद का मिश्रण किया गया है।

(झ) बंधुल

कोशल राज्य का वीर और पराक्रमी सेनापति है बंधुल। ''अजातशत्रु'' के दो दृश्यों से बंधुल के पराक्रम का परिचय मिलता है। एक दृश्य में वह हिमालय की सीमाओं पर लिच्छवियों पर विजय प्राप्त करके आया है। प्रसेनज़ित उसकी विजय से प्रसन्न होकर उसे हार पहनाते हैं। किन्तु बंधुल के बढ़ते हुए पराक्रम और यश को देखकर उन्हें आशंका होने लगती है। दूसरे दृश्य में बंधुल की पत्नी मल्लिका महामाया से अपने पति की वीरता की प्रशंसा करते हुए एक घटना सुनाती है जिसमें उसके पति ने पाँच सौ मल्ल योद्धाओं से अकेले युद्ध करके उसे पावा नामक सरोवर का जल पिलाया था। तीसरे दृश्य में बंधुल विरुद्धक के कहने पर राजद्रोह करने से इन्कार कर देता है और उसे बंदी बनाने का प्रयत्न करता है। इससे उसकी स्वमिभक्ति और कर्तव्यनिष्ठा का पता चलता है, किन्तु यह वीर पुरुष अंत में छल से मारा जाता है।

(ञ.) देवदत्त

इस नाटक मे असद्वृत्ति का पात्र है देवदत्त। यह गौतम का प्रतिद्वन्द्वी है जिसने संघ भेद किया है, अर्थात् गौतम बुद्ध के विरोध में कुछ भिक्षुओं को अपने साथ लेकर अपना अलग संघ बना लिया है। गतम को वह ''कपटी मुनि और ढकोसले वाला ढोंगी'' कहता है। गौतम बुद्ध के बढ़ते प्रभाव को कम करने के लिए वह छलना और अजातशत्रु को अपने इशारों पर नचाने लगता है। वह कूटनीति और छलकपट में निपुण है। इसी के द्वारा बिम्बसार को बंदी बनाने का निर्णय वह मगध की राजसभा के द्वारा करवा लेता है। देवदत्त ही के कारण कोशल और मगध में दूसरा युद्ध होता है, जिसमें अजातशत्रु बंदी बना लिया जाता है। तब छलना को देवदत्त की कुटिल बुद्धि का पता चलता है और वह उसे कैद करवा देती है। किन्तु वासवी के कहने से उसे छोड़ दिया जाता है। देवदत्त गौतम बुद्ध पर झूठा कलंक लगाने की भी चेष्टा करता है, वह उनकी हत्या का भी षड्यंत्र करता है। किन्तु दोनों ही जगह वह असफल होता है। देवदत्त का अंत सरोवर में डूबने से हो जाता है। इस प्रकार देवदत्त इस नाटक का सबसे कुटिल, षड्यंत्री और अविवेकी पात्र है। इसके द्वारा प्रसाद जी ने यह बतलाना चाहा कि उस समय के बौद्ध भिक्षुओं में ऐसे भी लोग मौजूद थे जो धर्म के नाम पर षड्यंत्र करते घूमते थे, किन्तु ऐसे लोगों का अंत दुःखद ही होता है।

BRAOU

(ट) दीर्घकारायण

सेनापति बंधुल का भांजा और उपसेनापति है – दीर्घकारायण। यह भी अपने मामा के समान वीर स्वामि भक्त है, किन्तु प्रसेनजित के षड्यंत्र के कारण वीर बंधुल की हत्या कर दिए जाने से वह बहुत क्रोधित और दु:खी हो जाता है। मल्लिका उसे समझा-बुझा कर शांत करती है। दीर्घकारायण को शक्तिमती और विरुद्धक अपनी ओर मिलाने का पूरा प्रयत्न करते हैं और वह कुछ देर के लिए मान भी जाता है, किन्तु उसका विवेक इसके लिए नहीं मानता और कोशल और मगध के युद्ध में वह कोशल का ही विरुद्धक की माता शक्तिमती को समझता है कि वह अपने किये अपराध को समझे और विरुद्धक को गलत राह पर न ले जाए। दीर्घ कारायण वजीरा से प्रेम करता है लेकिन जब वजीरा अजातशत्रु को अपना पति मान लेती है तो वह उसके रास्ते से हट जाता है। इस प्रकार दीर्घकारायण का चरित्र एक वीर, विवेकवान और कोमल हृदय प्रेमी व्यक्ति रूप मे उभारा गया है।

(ठ) अन्य चरित्र

इनके अतिरिक्त सुदत्त और समुद्रदत्त के चरित्र इस नाटक में आए हैं। सुदत्त कोशल का कोषाध्यक्ष है। समुद्रदत्त देवदत्त का शिष्य है और उसके कार्यों में उसका साथ देता है, किन्तु मागंधी समुद्रदत्त को शैलेन्द्र डाकू की जगह फासी दिलवा देती है। इस तरह इसका बुरा अंत होता है।

बोध प्रश्न 3 देवदत्त कौन है ?

.....

.....

.....

(ii) प्रमुख स्त्री पात्रों का चरित्र-चित्रण

''अजातशत्रु'' मे लगभग 9 स्त्री पात्र है जिनका चरित्र-चित्रण इस प्रकार है :-

(अ) वासवी

बिम्बसार की बड़ी रानी वासवी का चित्रण एक आदर्श भारतीय पत्नी के रूप मे किया गया है जो पति सेवा ही सब कुछ समझती है। बिम्बसार के साथ वह भी राजमहल छोडकर कुटिया मे रहने लगती है। प्रेम, त्याग, सहनशीलता और करुणा की वह साकार मूर्ति है। वह अपने पति के हर निर्णय का आदर करती है किन्तु जब धन न होने के कारण बिम्बसार भिक्षुओं को कुछ नहीं दे पाते तब वह दु:खी होती है और अपने भाई प्रसेनजित से कहकर काशी का कर स्वयं लेने का निश्चय करती है। वासवी के हृदय मे सपत्नी-पुत्र अजातशत्रु के लिए असीम वात्सल्य है। वह अजातशत्रु को अच्छे राजा के रूप में देखता चाहती है। निंरकुश राजा के रूप में नहीं। नाटक के पहले ही दृश्य में वह एक गीत द्वारा छलना को समझाती दिखाई गई है कि परिवार में सुख और शाति के लिए सब को किस तरह का व्यवहार करना चाहिए। छोटों से स्नेह और बडों के प्रति सम्मान से परिवार सुखी हो सकता है। वासवी बिम्बसार के दार्शनिक विचारों में भी बराबर उसका साथ देती है। बिम्बसार की मानसिक शांति बनाए रखने में उसका बहुत बड़ा योगदान है। छलना के व्यंग्य औक क्रोध भरी बातों का वह शाति और स्नेह से उत्तर देती है। अंत मे छलना को वही क्षमा करती है और अजातशत्रु को कैद से छुडाती है।

(आ) मल्लिका

मल्लिका के चरित्र की रचना प्रसाद जी ने देवत्व के सारे की लक्षणों का लेकर की है। मल्लिका का चरित्र अपनी चरम ऊँचाई को प्राप्तकर लेता है जब वह अपने पति की हत्या के लिए जिम्मेदार प्रसेनजित और विरुद्धक

BRAOU

की सेवा-सुश्रुण करती है और उसकी प्राण रक्षा करती है। वह विरुद्धक को उसके पिता से क्षमा दिलवा कर फिर से युवराज बनवा देती है। मल्लिका से सहनशीलता, धीरज, त्याग और करुणा का परम रूप प्रसादजी ने बताया है। वह कर्तव्यनिष्ट और स्वामिभक्त है। जब महामाया उसके पति की हत्या का षडंयत्र उसे पहले ही बता देती है तब भी वह अपने पति को अपना कर्तव्य-पालन करने से मना नहीं करना चाहती। वह कहती है सेनापति का राजभक्त कुटुम्ब कभी विद्रोही नहीं होगा और राजा की आज्ञा से वह प्राण दे देना अपना धर्म समझता। पति की मृत्यु का समाचार सुनकर घोर दु:ख की दशा मे भी वह सारिपुत्र और अनद का सत्कार करती है। जब विरुद्धक उसके प्रति अपना प्रेम प्रकट करता है तो वह उसे फटकार देती है लेकिन उसे फिर से युवराज बनाने और एक अच्छा मनुष्य बनाने का पूरा प्रयत्न करती है। मल्लिका का चरित्र इस बात का प्रमाण है कि देवत्व अगर कही है तो वह मनुष्यता का ही चरम विकास है। वह कहती भी है उपकार, करुणा, संवेदना और पवित्रतत्रमानव-हृदय के लिए ही बने हैं। उसके आगे शक्तिमती अजातशत्रु विरुद्धक और प्रसेनजित जैसे सारे लोग सिर झुका देते हैं और अपनी असद्वृत्ति को छोड देते हैं। भारतीय नारी के जिस आदर्श रूप की कल्पना प्रसाद जी कर रहे थे उसी को उन्होंने मल्लिक के चरित्र में प्रस्तुत किया है।

(इ) पद्मावती

वासवी की पुत्री पद्मावती अपनी माता के ही आदर्शों का पालन करती है। करुणा और प्रेम उसके स्वभाव की विशेषता है और उसका विचार है कि ''मानव सृष्टि करुणा के लिए है।'' नाटक के पहले ही दृश्य में वह अजातशत्रु को क्रूरता और हिंसा के कार्य से रोकती नजर अती है। झाड़ी लगा दो, चाहे फूलों के पौधे।'' आत्माभिमान पद्मावती के स्वभाव की दूसरी विशेषता है। छलना द्वारा अपमानित किए जाने पर वह उसी दिन अपनी ससुराल कोशाम्बी चली जाती है, किन्तु अपने पति उदयन के आगे पद्मावती का यह अभिमान भी प्रकट नहीं होता। उदयन मागंधी के मोह में फंसकर उसकी उपेक्षा करते हैं, उस पर षडंयतत्र करने का आरोप लगा कर उसका वध करना चाहते हैं, पर पद्मावती पूरे धैर्य और विनय के साथ यह सब सहन करती है। उसके इस महान चरित्र के आगे उदयन की तलवार भी झुक जाती है। उसे अपनी गलती पर पश्चात्ताप होता है। पद्मावती अपनी विमाता छलना से भी कोई द्वेष नहीं रखती। छलना को वह वासवी और बिम्बसार से क्षमा दिलाती है। इस तरह पद्मावती एक सरल और उदार स्वभाव की नारी है जिसे गौतम बुद्ध के उपदेशों में विश्वास है और वह उनका पालन करती है।

(ई) छलना

प्रसाद के नारी चरित्र अपनी महानता के लिए प्रसिद्ध है, किन्तु प्रसाद ने असद्वृत्ति-प्रधान नारी चरित्रों को भी प्रस्तुत किया है। छलना ऐसी ही नारी है। राजमाता बनने का अहंकार छलना के स्वभाव की पहली विशेषता है। वह सत्ता और पद की लोभी है। वह अजातशत्रु को निरंकुश बनाना चाहती है। छलना लिच्छवि वंश की राजकुमारी है। देवदत्त के प्रभाव में आकर वह बिम्बसार के विरुद्ध हो जाती है। उसके अनुसार ''अहिंसा भिक्षुओं की भद्दी सीख है।'' नाटक के पहले ही दृश्य में वह बिम्बसार से हठ करके अजातशतृ को राजा बनवा देती है। छलना व्यवहार इतना प्रतिशोधपूर्ण है कि बिम्बसार जैसा शांत व्यक्ति भी उसके इस व्यवहार पर कुद्ध हो उठता है। किन्तु जब अजातशत्रु बंदी हो जाता है तो पुत्र के प्रति प्रेम से छलना का हृदय बदल जाता है। देवदत्त की कुटिलता को समझते ही वह उसे बंदी बना लेती है। जब वासवी का सही रूप वह समझती है तो उसे पश्चात्ताप होता है। इस तरह छलना का चरित्र असद् से सद् की ओर बढ़ता दिखाया गया है। उसके द्वारा प्रसाद ने यह बतलाना चाहा कि नारी का सही स्वरूप क्रूरता और सत्ता-लोलुपता में नहीं, बल्कि कोमलता और उदारता में छिपा है।

(उ) शक्तिमती

छलना के समान ही प्रतिशोध और सत्त-मोह का दूसरा उदाहरण के शक्तिमती या महामाया का चरित्र।

BRAOU

शक्तिमती प्रसेनजित की पत्नी है और राजमाता है। उसके बारे में कहा गया है कि वह दासी-पुत्री थी और इस बात के लिये वह अपने पति से बार-बार अपमानित होती है। इससे इसकी प्रतिहिंसा और भड़कती है। शक्तिमती भाग्य के भरोसे बैठे रहने में नहीं बल्कि कर्म में विश्वास मरती है। विरुद्धक के युवराज-पद से हटा दिए जाने पर वही उसमें कर्म करने और इस अपमान का बदला लेने की भावना जगाती है। शक्तिमती और दीर्घ-कारायण के बीच हुई एक बातचीत मे प्रसाद जी ने नारी-जीवन की कई समस्याओं को उठाया है। प्रसाद जी के अपने समय में नारी सामाजिक बंधनों से मुक्ति पाने के लिए बेचैन थी। वह स्वतंत्र होना चाह रही थी। उस समय कई लोग ऐसे भी थे जो नारी स्वतंत्रता का गलत अर्थ लगा रहे थे। इस दृश्य में शक्तिमती द्वारा प्रसाद जी ने ऐसे सवाल उठाए हैं कि "क्या स्त्रियाँ अपना कुछ अस्तित्व नहीं रखतीं? क्या उनका जन्मसिद्ध कोई अधिकार नहीं है ?" और दीर्घकारायण इसका जो उत्तर देता है उसमें प्रसाद ने बताया है कि स्त्री का सही अधिकार और चरित्र क्या होना चाहिए? उनके अनुसार "कठोरता का उदाहरण है पुरुष, और कोमलता का विश्लेषण है स्त्री जाति"। शक्तिमती भी अंत में सद्वृत्ति की ओर बढ़ती है और मल्लिका से स्नेह और करुणा का संदेश पाती है।

बोध प्रश्न 4. शक्तिमती और छलना में क्या समानता है ?

.....

.....

.....

(ऊ) मागंधी

"अजातशत्रु" का सबसे अधिक परिवर्तनशील स्त्री-चरित्र है मागंधी का। इसके तीन रूप बताए गए हैं मागंधी, श्यामा वेश्या तथा आम्रपाली। इतिहास के अनुसार मागंधी और आम्रपाली अलग-अलग चरित्र हैं किन्तु प्रसाद ने अपने इस नाटक में दोनों को एक कर दिया है और बीच में श्यामा-वैश्या रूप की कल्पना कर ली है। इससे यह चरित्र बहुत रोचक और सक्रिय बन गया है। मागंधी एक ब्राह्मण कन्या है जिसका विवाह उसके पिता गौतम बुद्ध से करना चाहते थे किन्तु गौतम ने उसे अस्वीकार कर दिया था। मागंधी इसे अपना अपमान समझती है और गौतम से बदला लेना चाहती है। वह उदयन की रानी बनती है और षड्यंत्र करके पद्मावती की हत्या उदयन से करवाना चाहती है। इससे वह सफल नही होती, तब अपने महल मे आग लगा कर वह भाग निकलती है। इसके बाद वह श्यामा वेश्या बनती है और शैलेन्द्र डाकू से प्रेम करने लगती है। वह इतनी कूटनीतिज्ञ है कि समुद्रदत्त को शेलेन्द्र की जगह फाँसी पर चढ़वा देती है। किन्तु शैलेन्द्र को समझने में वह स्वयं धोखा खा जती हैं। शैलेन्द्र उस पर हत्या का प्रयत्न करता है किन्तु वह बच जाती है। अंत में मल्लिका के प्रभाव से उसका मन बदलता है। वह आम्रपाली के रूप मे गौतम बुद्ध का उपदेश ग्रहण करती है धर्म की सेवा के लिए अपने आप को सौंप देती है। इस प्रकार प्रसाद ने इस चरित्र द्वारा यह बताया है कि स्त्री प्रतिहिंसा के लिए कितने रूप धारण कर सकती है किन्तु उसकी अंतिम शरण-स्थली करुणा और त्याग में ही है। इसी में उसका सच्चा चरित्र छिपा है।

बोध प्रश्न 5 : मागंधी के चरित्र की क्या विशेषता है ?

.....

.....

.....

23.3 सारांश

'अजातशत्रु' नाटक की मुख्य विशेषता है उसके पात्रों के चरित्र की प्रस्तुति। इस नाटक मे लगभग 25 पात्र हैं

BRAOU

जिनमें 16 पुरुष पात्र हैं और 9 स्त्री पात्र। ये पात्र तीन प्रकार की प्रवृत्तियों को दर्शाते हैं - सद्वृत्ति, असद्वृत्ति, मिश्रित वृत्ति। मल्लिका, गौतम बुद्ध, बन्धुल जैसे पात्र पूरी तरह से आदर्श हैं। छलना, शक्तिमती, अजातशत्रु, जैसे पात्र असद के मार्ग से बाद में सत्मार्ग पर आजाते हैं। मिश्रित वृत्तियों वाले पात्रों में बिम्बसार, प्रसेनजित जैसे हैं जिनमें ईर्ष्या, स्वार्थ, अंहकार है तो क्षमाशीलता, त्याग और करुण के भाव भी हैं। इस नाटक का नायक अजातशत्रु हैं क्योंकि नाटक की कथा उसी के आस-पास घूमती है लेकिन उसके चरित्र में अनेक कमजोरियाँ हैं। वह अपनी माँ के हाथों में कठपुतली है। लेकिन बाद में वह अपनी भूल को समझता है। स्वयं पिता बनकर वह पिता के स्नेह को समझता है और पिता से क्षमा माँगता है। गौतम बुद्ध वास्तव में इस नाटक के केन्द्रीय चरित्र हैं क्योंकि वे ही प्रतिहिंसा, द्वेष जैसे भावों को मिटाकर प्रेम, क्षमा और करुणा के मूल्यों का प्रसार करते हैं। बिम्बसार और प्रसेनजित स्नेही, क्षमाशील पिता हैं तो क्रोधी, अभिमानी राजा भी है। शक्तिमती और छलना सत्ता की लोभी है और अपने-अपने पुत्रों को राजा देखने के लिए षड्यंत्र करती हैं। वासवी, पद्मावती, वासवदत्ता पतिपरायणा स्त्रियाँ हैं। श्यामा या मागंधी प्रेम और प्रतिहिंसा के मिले-जुले भावों से परिचालित हैं। वाजिरा भोली-भाली युवती है जो अपने पिता के बन्दी युवक अजातशत्रु से प्रेम करने लगती है। मल्लिका सबसे अधिक आदर्श चरित्र है जो अपने पति के हत्यारों को भी क्षमा कर देती है।

23.4 समीक्षा

'अजातशत्रु' के चरित्र-चत्रिण की दो मुख्य विशेषताएँ हैं - अर्न्तद्वन्द्व और मनोवैज्ञानिक चित्रण। इन पात्रों में अच्छे-बुरे, पाप-पुण्य के बीच अन्तर बतलाकर प्रसाद जी ने नया प्रयोग किया है। सभी पात्रों का चरित्र सहज और स्वाभविक बन पड़ा है जिससे पता चलता है कि प्रसाद जी को मनुष्य के मनोविज्ञान की गहरी समझ थी। इन पात्रों में गतिशीलता है। ये पात्र नाटककार के हाथों में कठपुतली नहीं बनते बल्कि उनका अपना सहज विकास होता है। इस नाटक के चरित्रों को प्रसाद जी ने भारतीय और पाश्चात्य शैलियों को मिला-जुला कर चित्रित किया है। इन चरित्रों में ऐतिहासिकता और कल्पना का भी मिश्रण है।

23.5 शब्दार्थ

सद्वृत्ति	-	अच्छाई
सत्तालोलुप	-	सत्ता या शक्ति का जिसे लोभ हो
अस्थिर	-	चंचल
साहसी	-	हिम्मती

23.6 अभ्यास

23.6.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न (लगभग 250 शब्दो में उत्तर दीजिए)

(1) 'अजातशत्रु' का नायक आप किसे मानते हैं - तर्क सहित उत्तर दीजिए।

(2) बिम्बसार का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(3) अजातशत्रु और विरुद्धक के चरित्रों की तुलना कीजिए।

(4) वासवी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(5) छलना और शक्तिमती के चरित्रों की समानताएं बतलाइए।

(6) मल्लिका के चरित्र की विशेषताएं बतलाते हुए शक्तिमती के चरित्र से उसकी तुलना कीजिए।

BRAOU

23.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (लगभग 125 शब्दों में उत्तर दीजिए)

(1) प्रसेनजित और बिम्बसार के चरित्रों की समानताएँ बतलाइए।

(2) मागंधी के चरित्र को प्रसादजी ने किस तरह बढ़ाया है?

(3) सेनापति बंधुल के चरित्र की विशेषता बतलाइए।

(4) जीवक कौन है, इस नाटक में उसकी क्या भूमिका है?

(5) 'अजातशत्रु' में हास्यरस का संचार किस के द्वारा और कैसे होता है?

(6) देवदत्त के चरित्र के बारे में लिखिए।

23.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

23.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर (250 शब्दों में उत्तर)

प्रश्न : 'अजातशत्रु' का नायक आप किसे मानते हैं-तर्कसहित उत्तर दीजिए।

उत्तर : 'अजातशत्रु' नाटक में चार प्रमुख पुरुष पात्र हैं जो नाटक के नायक कहे जा सकते हैं। पहला है बिम्बसार जो आरंभ से अंत तक महत्वपूर्ण है। नाटक के पहले भाग में वह अपने पुत्र अजातशत्रु को राज्य सौंप देता है और वहीं से कहानी में गति आ जाती है। उसकी मृत्यु के साथ नाटक समाप्त होता है। फिर भी बिम्बसार को नाटक का नायक नहीं कहा जा सकता क्यों कि वह तटस्थ भाव से सारा कार्य व्यापार देखता है। इसमें सचमुच सक्रिय पात्र है अजातशत्रु वही आरंभ से अंत तक मुख्य कार्य करता है और उसे फलप्राप्ति भी होती है। लेकिन उसमें कई कमजोरियाँ हैं। नायक जैसा धीरोदात्त चरित्र उसका नहीं है। ऐसा धीरशांत और महान चरित्र है गौतम बुद्ध का जो वास्तव में शत्रुओं का हृदय जीतकर शत्रुता का भाव ही समाप्त कर देते हैं। लेकिन गैतम बुद्ध नाटक के मुख्य कार्यव्यापार में भाग नहीं लेते, संघर्ष नहीं करते। संघर्ष करने वाला एक और पात्र है विरुद्धक वह भी अपने पिता के द्वारा अपमानित होता है, उसकी माता उससे राज्य पाने के लिए षड्यंत्र करवाती है। बाद में शैलेन्द्र डाकू के रूप में उसके चरित्र का पतन बताया गया है। विरुद्धक पराक्रमी है लेकिन धोखे से बन्धुल की हत्या करता है। इस तरह इस नाटक को भारतीय नाट्यशास्त्र के नियमों से देखा जाए तो अजातशत्रु ही इसका नायक है क्योंकि वह मुख्य कार्याव्यापार में भाग लेता है, संघर्ष करता है और फल प्राप्त करता है। यथार्थवादी दृष्टि से भी उसके चरित्र में मानवीय दुर्बलताएँ हैं जिन पर वह अंत में विजय प्राप्त करता है।

23.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (125 शब्दों में उत्तर)

प्रश्न : 'अजातशत्रु' में हास्य रस का संचार किसके द्वारा और कैसे होता है?

उत्तर : 'अजातशत्रु' में हास्य रस का संचार विदूषक वसंतक के द्वारा होता है। प्राचीन संस्कृत नाटकों में विदूषक का पात्र आवश्यक समझा जाता था जो हास्य उत्पन्न कर सके। 'अजातशत्रु' में यह काम वसंतक करता है जो तीन अंकों के इस नाटक में हर अंक के एक-एक दृश्य में आता है और अपनी बातों व चेष्टाओं से दर्शकों को हँसाता है। वसतंक कोशाम्बी की कथा को बढाने में सहायक है। 'अजातशत्रु' एक गम्भीर नाटक है और विदूषक वसन्तक ही इस गंभीरता को तोड़ कर मनोरंजक बातें करता है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. बिम्बसार अपने पुत्र को बहुत प्यार करता है। उसमें सत्ता के लिए मोह है मगर गैतमबुद्ध के समझाने पर वह पुत्र के लिए राज्य छोड़ देता है। पुत्र के दुर्व्यवहार के बावजूद अंत में उसे क्षमा कर देता है।

BRAOU

2. अजातशत्रु नाटक का नायक अजातशत्रु इसलिए है कि वह आरंभ से अंत तक नाटक के कार्यव्यापार का केन्द्र है और उसी को फल प्राप्ति होती है।

3. देवदत्त गौतमबुद्ध का विरोधी है। वह उनसे ईर्ष्या करता है और राजपरिवारों पर अपना प्रभाव जमाना चाहता है।

4. शक्तिमती और छलना दोनों सत्ता-लोलुप हैं और अपने पुत्रों को राजा बनाने के लिए षड्यंत्र करती हैं।

5. मागंधी तीन स्त्री-चरित्रों का समन्वय है। वह पहले उदयन की तीसरी रानी मागंधी है फिर श्यामा वेश्या बनती है फिर आम्रपाली के रूप में गौतम बुद्ध की शरण लेती है।

23.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अजातशत्रु : जयशंकर प्रसाद

BRAOU

इकाई-24 : अजातशत्रु : मूल्यांकन

24.0 उद्देश्य

24.1 पाठ एवं लेखक परिचय

24.2 मूल पाठ

24.3 सारांश

24.4 समीक्षा

24.5 शब्दार्थ

24.6 अभ्यास

24.6.1 परीक्षा के लिए संभावित दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

24.6.2 परीक्षा के लिए संभावित मध्यम श्रेणी के प्रश्न

24.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

24.7.1 दीर्घ श्रेणी के प्रश्नोत्तर

24.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर

24.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

24.0 उद्देश्य

हिन्दी नाटक-साहित्य में 'अजातशत्रु' का विशेष स्थान है। यह स्थान 'अजातशत्रु' की कथावस्तु और उद्देश्य नाटक के तत्वों के आधार पर उसकी कलात्मकता और प्रभाव तथा अपने युग में और आज के युग में 'अजातशत्रु' की प्रासंगिकता के कारण है। अतः इस पाठ में आप जान सकेंगे कि

- 'अजातशत्रु' की कथावस्तु और उद्देश्य हैं-भारत के गौरवशाली अतीत को दुबारा जीवित करना।
- नाटक के तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' एक सफल रचना है।
- 'अजातशत्रु' का संदेश आज भी हमारे लिए प्रासंगिक है।
- 'अजातशत्रु' के कारण लेखक जयशंकर प्रसाद एक सफल और महत्वपूर्ण नाटककार सिद्ध होते हैं।

24.1 पाठ एवं लेखक परिचय

(अ) पाठ-परिचय

जयशंकर प्रसाद ने अपने ऐतिहसिक नाटकों से हिन्दी नाटक-सहित्य को गति और उद्देश्य दिया। इन नाटकों में राष्ट्रीय गौरव, देश प्रेम, मानवतावाद और विश्वशान्ति जैसे मूल्य उद्घाटित किए गए हैं। प्रसाद के नाटकों में एक ओर संस्कृत नाटकों की श्रेष्ठ परम्परा को आगे बढ़ाया गया है तो दूसरी ओर आधुनिक युग के अनुसार कई प्रयोग भी मिलते हैं। इस दृष्टि से 'अजातशत्रु' प्रसाद जी का सफल और प्रतिनिधि नाटक कहा जा

BRAOU

सकता है। इस पाठ में कई दृष्टियों से 'अजातशत्रु' का मूल्यांकन किया गया है। इस पाठ में 'अजातशत्रु' का मूल्यांकन निम्नलिखित दृष्टियों से निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया गया है।

(अ) 'अजातशत्रु' का युगीन संदर्भ

(आ) 'अजातशत्रु' का सन्देश

(इ) नाटक के तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' की समीक्षा

(ई) 'अजातशत्रु' की प्रासंगिकता

(उ) 'अजातशत्रु' के माध्यम से जयशंकर प्रसाद की देन

(आ) लेखक परिचय (देखिए इकाई 22.1)

24.2 मूल पाठ

'अजातशत्रु' नाटक का मूल्यांकन करने के लिए सबसे पहले उस युग की परिस्थितियाँ देखनी होंगी जिनमें 'अजातशत्रु' की रचना हुई और जिनका प्रभाव 'अजातशत्रु' पर पड़ा है। कोई भी बड़ी रचना अपने युग की परिस्थितियों के प्रभाव से अछूती नहीं रह सकती और हर महान रचना में अपने युग के लिए और आगे की पीढ़ियों के लिए भी सन्देश अवश्य रहता है। इस दृष्टि से 'अजातशत्रु' नाटक का मूल्यांकन उसके युगीन संदर्भ, सन्देश, नाटक के तत्वों की कसौटी पर उसकी परीक्षा, प्रासंगिकता और प्रसादजी की सफल रचना के रूप में किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से 'अजातशत्रु' के मूल्यांकन के निम्नलिखित आधार होंगे :-

(अ) 'अजातशत्रु' का युगीन सन्दर्भ

(आ) 'अजातशत्रु' का सन्देश

(इ) नाटक के तत्वों के आधारपर 'अजातशत्रु' की समीक्षा

(ई) 'अजातशत्रु' की प्रासंगिकता

(उ) 'अजातशत्रु' के माध्यम से जयशंकर प्रसाद की देन

BRAOU

बोध प्रश्न : 1. 'अजातशत्रु' का मूल्यांकन कैसे किया जाना चाहिए?

.....

.....

.....

(अ) 'अजातशत्रु' का युगीन सन्दर्भ -

इस दृष्टि से देखा जाए तो जयशंकर प्रसाद ने 'अजातशत्रु' में बौद्धकालीन भारत को लिया है। इस समय की सामाजिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का सशक्त चित्रण इस नाटक में हुआ है। उस समय भारत में कई छोटे-छोटे राज्य थे जिनमें आपस में संघर्ष होता रहता था। राजपरिवारों और सामंतों व सत्ता के लोभी व्यक्तियों का स्वार्थ, अहंकार और ईर्ष्या भी इन संघर्षों को पैदा करने वाले भाव थे। उस युग में भी पुरानी और नई पीढी में संघर्ष होता रहता था। नई पीढ़ी महत्वाकांक्षी थी। अजातशत्रु और विरुद्धक इस नाटक में नई पीढ़ी के प्रतिनिधि चरित्र हैं जो अपने बूढे पिताओं को हटाकर राज्य प्राप्त करना चाहते हैं। उस जमाने में राजा अपनी राज्य परिषद् की सलाह से ही महत्वपूर्ण निर्णय लिया करते थे। धार्मिक दृष्टि से वैदिक धर्म के विरुद्ध बौद्ध और जैन धर्मों का खूब प्रचार हो रहा था। बौद्ध धर्म में भी आपसी प्रतिद्वन्द्विता आगई थी। इस नाटक में प्रमुख पात्र गौतमबुद्ध करुणा और अहिंसा का प्रचार करते हैं किन्तु देवदत्त उनसे ईर्ष्या करता है और

कई तरह के षड्यंत्र करके राजपरिवारों और जनता पर उनका प्रभाव कम करना चाहता है। जयशंकर प्रसाद के अपने युवक का प्रभाव भी इस नाटक में दिखाई देता है। प्रसादजी का समय भारतीय नवजागरण के चरम आदर्शों का समय था। स्त्री-स्वतंत्रता को लेकर चलने वाले सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलनों के फलस्वरूप स्त्री के प्रति विशेष सम्मान की भावना इस युग में थी। 'अजातशत्रु' की रचना प्रथम विश्वमहायुद्ध के कुछ ही समय बाद हुई इसलिए इसमें युद्ध का दुष्प्रभाव बताते हुए विश्वबंधुत्व और मानवतावाद का संदेश दिया गया है।

बोध प्रश्न : 2. 'अजातशत्रु' में युद्ध के बारे में क्या विचार प्रकट किया गया है ?

.....

.....

.....

(आ) 'अजातशत्रु' का सन्देश - 'अजातशत्रु' नाटक से यह सन्देश मिलता है कि मनुष्य का जीवन केवल अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए नहीं है। परमार्थ, परोपकार और मनुष्यमात्र का कल्याण ही ऐसे आदर्श हैं जिन पर चलकर मनुष्य अपने जीवन को सफल बना सकता है। आत्म-परिष्कार से जगत का उद्धार संभव है। मनुष्य पहले अपने आप को शुद्ध और पवित्र बनाए तभी संसार शुद्ध और पवित्र बनाया जा सकता है। इस नाटक से यहभी संदेश मिलता है कि द्वेष और धृष्ठ का बदला प्रेम और क्षमा से दिया जाना चाहिए। विश्वबंधुत्व और मानव कल्याण का आदर्श अहिंसा और करुणा का पालन करके ही साकार किया जा सकता है।

(इ) नाटक के तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' की समीक्षा

भारतीय नाट्यशास्त्र एवं आलोचना में नाटक के जो तत्व बताए गए हैं उनके आधारपर 'अजातशत्रु' का विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है इस प्रकार हैं-

(i) कथावस्तु और उद्देश्य

(ii) चरित्र चित्रण

(iii) कथोपकथन और भाषा-शैली

(iv) देश-काल और वातावरण

(v) अभिनय और रंगमंच-निर्देश

अब हम इन तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' नाटक का विवेचन करेंगे-

(i) कथावस्तु और उद्देश्य

जयशंकर प्रसाद के नाटकों में तत्कालीन युग और समाज के जागरण और नारी के संघर्षों की झलक स्पष्ट मिलती है। तत्कालीन समय में देश का चप्पा-चप्पा अपने खाये हुए गौरवशाली इतिहास को प्राप्त करने की भावना से ओत-प्रोत था और यही भावना प्रसाद के नाटकों का मूल आलम्बन है।

प्रसाद के सभी नाटक (दो को छोड़कर) ऐतिहासिक और पौराणिक विषयों को लेकर लिखे गये हैं। एकांकी 'दो घूंट' एक काल्पनिक कथानक पर अधारित है। 'कामना' भी काल्पनिक है।

अजातशत्रु का कथानक ऐतिहासिक है। इसमें बौद्ध काल को लिया गया है। कोशल, मगध और कोशाम्बी, इन तीन स्थानों पर चलने वाली राजनीतिक घटनाएं 'अजातशत्रु' के मूल में हैं। ऐतिहासिक प्रसंगों और पात्रों द्वारा, प्रसाद ने अपने समय की समस्याओं को प्रकट किया है। राष्ट्रीय भावना और देशप्रेम का संदेश दिया। अजातशत्रु प्रसाद के ऐतिहासिक ज्ञान और कल्पना का अनोखा सम्मिश्रण है। मगध पर बिम्बसार का शासन, कोशल और कोशाम्बी से उनका विवाह सम्बन्ध, उनके पुत्र अजातशत्रु का विद्रोह और अन्त में उसका

BRAOU

हृदय परिवर्तन, सभी घटनाएं ऐतिहासिक हैं। केवल मागंधी और शैलेन्द्र नामक पात्र का निर्माण काल्पनिक है।

बोध प्रश्न : 3. 'अजातशत्रु' के मुख्य ऐतिहासिक और काल्पनिक पात्रों का विवरण दीजिए।

.....

.....

.....

नाटकों के सन्दर्भ में जयशंकर प्रसाद के नाटकों की कथावस्तु का विकास तीन स्थितियों में होता चलता है। प्रारम्भिक अंकों में वे नाटक का सूत्रपात करते हैं। मंध्य में घटनाओं के घटित होने में असाधारण रूप से तीव्रता आती है और पात्रों के कार्यव्यापार बड़ी तेजी से चरमविन्दु की ओर बढ़ते हैं और अन्त में संघर्ष शांत होता है।

प्रसाद के नाटकों के दो ही मूल उद्देश्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आते हैं। पहला तो यह कि हिन्दी के नाटकों में एक स्वस्थ और सुदृढ़ परम्परा का विकास करना तथा सर्वोपरि देश में राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय स्वाभिमान का उकेरना।

(ii) चरित्र - चित्रण

भारतीय नाट्य शास्त्र में चार प्रकार के नायकों को नायकत्व का अनिवार्य तत्व बताया गया है। धीरोदात्त, धीरललित, धीर प्रशान्त और धीरोद्धत। इन चारों ही प्रकार के नायकों का चितत्रण प्रसाद के नाटकों में हुआ है। नायकों के चरित्र-चितत्रण में जयशंकर प्रसाद ने प्राचीन और आधुनिक दोनों दृष्टियों से काम लिया है। एक ओर तो भारतीय नाट्यशास्त्र में नायकों के लिए निर्धारित किये गये तत्व उनके नायकों में मिलते हैं तो दूसरी ओर उनके चरित्रों में आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार अन्तर्द्वन्द्व भी स्पष्ट परिलक्षित (दिखाई) होता है।

अन्तर्द्वन्द्व मानव-मन की स्वाभविक स्थिति का परिचायक है। जब हम विषम स्थिति में पड़ जाते हैं, तब स्वभावत : हमारे मस्तिष्क में अनेक प्रकार के विचार उठने लगते हैं और हम आसन्न विषमता को सुलझाने के लिए विभिन्न रूपों में सोचते हैं। नाटक में जब विशिष्ट पात्रों में अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि की जाती है तब वे अपनी स्वाभाविक स्थिति में दिखाई पड़ते हैं और उनका प्रभाव दर्शकों के हृदय पर विशेष रूप से पड़ता है। अन्तर्द्वन्द्व की योजना से नाटक अविश्वसनीय तथा अतिमानवीय नहीं होने पाता। नाटक की प्रभावोत्पादकता एवं यथार्थता के लिए पात्रों में स्वाभाविक अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि नितान्त आवश्यक है। 'अजातशत्रु' नाटक में अनेक स्थलों पर उत्कृष्ट मानवीय अन्तर्द्वन्द्व को उकेरा गया है।

मागन्धी (श्यामा) महाराज उदयन के मन में पद्मावती के प्रति संदेश पैदा कर देती है - वीणा में सर्प का बच्चा रखकर मागन्धी यह सिद्ध कर देती है कि पद्मावती महाराज की हत्या करना चाहती है। उदयन पद्मावती के महल में जाना छोड़ देते हैं, यहां तक कि दासी द्वारा बुलवाने पर भी वे नहीं जाते। उदयन के इस परिवर्तन पर पद्मावती सोचती है- "महाश्रमण की अमोघ सांत्वना मुझे धैर्य देती है किन्तु मैं यह क्या सुन रही हूँ। स्वामी मुझसे असंतुष्ट हैं। भला यह वेदना मुझसे कैसे सही जायेगी। कई बार दासी गई लेकिन वहाँ तो तेवर ही ऐसे हैं कि किसी को अनुनय-विनय करने का साहस ही नहीं होता। फिर भी कोई चिन्ता नहीं राजभक्त प्रजा को विद्रोही होने का भय ही क्यों हो?" इससे स्पष्ट है कि पद्मावती उदयन के वह महाराज से अनुनय-विनय करने का साहस भी नहीं जुटा पाती पर उसे अपने सच्चे प्रेम पर विश्वास है। यहाँ पद्मावती एक पति-परायणा नारी के रूप में है। संदेह की स्थितियां प्राय: दाम्पत्य जीवन में आ जाती हैं। यह मन: स्थिति नारी-हृदय की परिचायक है।

श्यामा गौतम बुद्ध से प्रतिशोध लेना चाहती है, क्योंकि गौतम बुद्ध ने उसे स्वीकार नहीं किया। श्यामा अपने रूप का अपमान नहीं सह सकती। इसीलिए वह गौतम बुद्ध को चरित्रहीन सिद्ध करने का षड्यंत्र करती है। जब षड्यंत्र सफल नहीं हो पाता, तो वह महल में आग लगाकर, अपने जल जाने का झूंठा प्रचार कर, महल

से भाग जाती है और शैलेन्द्र की शरण में आती है। अब वह उदयन की रानी मागन्धी नहीं रही, अब वह श्यामा वेश्या बन गई है। श्यामा रूप में उसके विचारों का द्वन्द्व द्रष्टव्य है-

''संसार किसी भयानक समस्या से निमग्न प्रतीत होता है। किन्तु मैं शैलेन्द्र से मिलने आई हूँ - वह डाकू है तो क्या, मेरी भी अतृप्त वासना है। मागन्धी चुप, वह नाम क्यों लेती है? मागन्धी कौशाम्बी के महल में आग लगाकर जल मरी अब तो मैं श्यामा, काशी की प्रसिद्धवार-विलासिनी हूँ। बड़े-बड़े राजपुरुष और श्रेष्ठी इसीके चरण को छूकर अपने को धन्य समझते हैं। धन की कमी नहीं मान का कुछ ठिकाना नहीं, राजरानी होकर और क्या मिलना था, केवल सपत्न्य ज्वाला की पीड़ा।''

यहां प्रतिशोध की भावना ने श्यामा को अत्यधिक नीचे गिरा दिया है। उसके हृदय में अपने मागन्धी-रूप और श्यामा-रूप को लेकर अन्तर्द्वन्द्व चलता है।

प्रसाद के नाटकों में निहित अन्तर्द्वन्द्व पात्र को मानवीय भूमिका प्रदान करते हैं। अन्तर्द्वन्द्व में उलझा हुआ पात्र दर्शकों के बीच का सदस्य प्रतीत होता है। सुख-दु:ख का प्रभाव जिस प्रकार सामान्य व्यक्ति पर पड़ता है उसी प्रकार नाटक के पात्र पर पड़ता हुआ देखकर, दर्शक उससे सहज ही अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है और उसकी भावना पात्र के साथ जुड़ जाती है। प्रसाद द्वारा नियोजित सभी अन्तर्द्वन्द्व पूर्ण मनोवैज्ञानिक होने के कारण दर्शकों पर अपना गहरा प्रभाव तो डालते ही हैं साथ ही उनके हृदय में आगामी दृश्य के प्रति कौतूहल की सृष्टि भी करते हैं। प्रसाद के नाटकों में स्त्री-चरित्रों में जहां ईर्ष्या और प्रतिशोध की ज्वाला धधकती है, वहां उनमें करुणा का शीलतल बयार भी है। परन्तु पुरुष का प्रतिशोध अत्यधिक भयंकर, कठोर और भीषण होता है। उनमें स्वभावत: एक दृढ़ता होती है। प्रतिशोध पुरुष के लाल रक्त का श्रृंगार है। उसकी अहं भावना और भी अधिक भयंकर हो उठती है। अजातशत्रु में विरुद्धक नामक पात्र इसका अन्यतम उदाहरण है।

अजातशत्रु का समर्थन करने पर प्रसेनजित अप्रसन्न होकर भरी राजसभा में उसे नीच-रक्त का मिश्रण कह कर, उसको युवराज पद से हटा देता है। विरुद्धक अपमान की इस मर्मान्तक पीड़ा से भयंकर प्रतिहिंसक हो उठता है। वह नीच रक्त का सम्मिश्रण है इस मानसिक ग्रन्थि से छुटकारा पाने के लिए वह प्रतिशोध लेने का निश्चय करता है।

''माँ। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि तेरे अपमान के कारण इन वाक्यों का एक बार अवश्य संहार करूंगा और उनके रक्त में नहाकर, इस कौशल के सिंहासन पर बैठकर तेरी वन्दना करूंगा।'' (पृष्ठ-56)

विरुद्धक राजकुमार से शैलेन्द्र डाकू बन जाता है। साहसिक कार्य के साथ ही साथ वह राजनीति का चक्र भी चलाता है। बन्धुल को प्रसेनजित की मन की बात बताकर, भड़का कर अपनी ओर मिलाना चाहता है। जब उस पर जादू नहीं चलता तो छल से उसको मार डालता है। श्यामा उसे किसी प्रकार फांसी पर चढ़ने से बचा लेती हैं, वह उससे प्रेम करती है। परन्तु प्रतिशोधाग्नि में धधकता हुआ शैलेन्द्र, उसकी अपनी महत्वाकांक्षाओं के मध्य व्यवधान समझता है - ''यह नागिन है, पलटते देर नहीं। मुझे अभी प्रतिशोध लेना है - दावग्नि को बढ़कर फैलाना है, उसमें चाहे सुकुमार तृण कुसुम हो या विशाल शालवृक्ष।'' (पृष्ठ 98) और उसका गला घोंट कर अजात से मिलता है। कोशल और कोशाम्बी के विरुद्ध वह मगध का साथ देता है। दीर्घकारायण को भी मिलाने का प्रयास करता है। परन्तु इस युद्ध की हार से उसकी काया पलट जाती है।

प्रसाद के नाटकों में पारम्परिक और पारस्परिक ईर्ष्या के भाव भी कूट-कूट कर भरे होते हैं। कोई भी युवती अपने पति या प्रेमी की कोई अन्य प्रेमिका नहीं देखना चाहती, परन्तु फिर भी उसमें ऐसी किसी भी वास्तविकता को सहन करने की शक्ति होती है, परन्तु पुरुष में वह शक्ति बिल्कुल नहीं होती। वह अपनी प्रेमिका का दूसरा प्रेमी नहीं देख सकता। वह द्वेष से जल ही नहीं उठता वरन् अपने पुरुषार्थ से अपने प्रतिद्वन्द्वी का अपने मार्ग के बीच से उठाकर फेंकना चाहता है। अजात शत्रु में इसी प्रकार के युग्म चरित्र हैं-

BRAOU

मागंधी जब उदयन के कान में गौतम और पद्मावती के अनुचित सम्बन्ध का विष डालती है तो उदयन एकदम विचलित हो उठता है - ''पुरुष हृदय बड़ा सशंक होता है...मदिरा से पहिले, हलाहल तुमने मेरे हृदय में उड़ेल दिया।'' (पृष्ठ-44) वह किसी प्रकार रात काटकर प्रात: पद्मावती के पास जाकर, उसकी हत्या करने को उद्धत हो जाता है, ''पापीयसी! देख ले, यह तेरे हृदय का विष-तेरी वासना का निष्कर्ष जा रहा है। इसीलिए न, यह नया जरोखा बनावाया था।'' (पृष्ठ 59) परन्तु सती के तेज से उसका हाथ ही नहीं उठता। वासवदत्ता बीच में पड़ती है और अन्त में मागन्धी के भंडाफोड़ से इस कथा का अन्त होता है।

विरुद्धक मल्लिका से विवाह करना चाहता है, परन्तु पिता से आज्ञा न मिलने पर वह पिता के विरुद्ध तो हो ही जाता है, परन्तु, बन्धुल, जिसके साथ मल्लिका का विवाह होता है, उसके लिए विद्वेष का आलम्बन बन जाता है और वह उसे धोखे से मार डालता है।

शैलेन्द्र के हाथों नाटककर बन्धुल का वध दिखाकर राजनीतिक मूल्य के साथ-साथ, शैलेन्द्र के इस भाव की पुष्टि भी कराता है। वाजिरा को लेकर अजातशत्रु और दीर्घकारायण में एक हल्की-सी ईर्ष्या की रेखा दिखाई पड़ती है। जब वह वजीरा और अजात दोनों को कारावास में देखता है और वजीरा अजात का पक्ष लेती है तो वह कहता है ''फिर ? आह! मेरी समस्त आशाओं पर तुमने पानी फेर दिया। भयानक प्रतिहिंसा मेरे हृदय में जल रही है। उस युद्ध में मैंने तुम्हारे लिए ही.....'' यह सुनते ही अजातशत्रु उसे द्वन्द्व-युद्ध का आह्वान करता है-'' यदि तुमको अपने बाहुबल पर भरोसा हो तो मैं तुमको द्वन्द्व-युद्ध के लिए आह्वान करता हूँ।'' दीर्घकारायण यह आह्वान स्वीकार करता है। परन्तु राजनीतिक घटनाओं के घटाटोप में इस घटना का विकास अधिक नहीं हुआ है। अन्त में वाजिरा का विवाह अजात के साथ हो जाता है।

बोध प्रश्न : 4. 'अजातशत्रु' के पात्रों में चित्रित प्रमुख भावों का परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

BRAOU

(iii) कथोपकथन और भाषा शैली

किसी भी नाटक के कथानक में विकास, पात्रों के चरित्र का उभरना और नाटककार के उद्देश्य की पूर्ति के लिए 'कथोपकथन' उसका मुख्य आधार होता है। जयशंकर प्रसाद ने कथोपकथन का प्रयोग पात्रों के व्यक्तित्व के उद्घाटन और उद्घाटित चरित्र के अनुरूप ही किया है।

नाटक में कथोपकथन तीन प्रकार के माने गये हैं। सर्वश्राव्य यानी वह कथन जिसे सारे श्रोता और दर्शक सुगमतापूर्वक सुन सकें। नियतश्राव्य अर्थात् वह कथन जिनसे कहा जा रहा है केवल वही सुन सकें जिनसे कहा जा रहा हो और स्वगत यानी जिस कथन को पात्र अकेले में अपने-आप से बोलता है। प्रसादजी ने तीनों प्रकार के कथोपकथनों का प्रयोग किया है। 'अजातशत्रु' में मागंधी या श्यामा द्वारा कहा जाने वाला स्वगत कथन उसके अहंकारी और विलासी स्वभाव को प्रकट करता है। उसी तरह अजातशत्रु के संवाद उसके चरित्र को प्रकट करते हैं। अलग-अलग भावों के अनुसार शब्दों का प्रयोग करते हुए प्रसादजी ने इस नाटक को प्रभावशाली बतलाया है। प्रसाद जी के इस नाटक में मुख्यत: अलंकार प्रधान संस्कृतनिष्ठ काव्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है।

(iv) देशकाल और वातावरण

नाटक में देश और काल के अनुरूप वातावरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए। नाटक में जिस समय और जिस स्थान की कथा है उस समाज की वेशभूषा, रीतिरिवाज, आचार-विचार को उसी तरह प्रस्तुत करना

वातावरण बनाने के लिए जरूरी है। 'अजातशत्रु' में बौद्धकालीन भारत की कथा है इसलिए उसी समय का वातावरण प्रस्तुत किया गया है । इस नाटक में प्रसादजी ने संकलन त्रय का कुशलता से प्रयोग किया है। संकलनत्रय का अर्थ है नाटक में तीन प्रकार का संयोजन या संकलन होना चाहिए। यह है – वस्तु संकलन, काल-संकलन और देश-संकलन। यह सिद्धांत यूनानी नाटकों से लिया गया जिसके अनुसार नाटक में कथा का एक साथ, एक समय और एक स्थान पर घटित होना आवश्यक होता था। इसका आशय है कि किसी नाटक में कथा का देश-काल और घटनाओं की दृष्टि से बिखराव नहीं होना चाहिए 'अजातशत्रु' में बौद्धकालीन भारत की कथा है, इसमें अनेक चरित्र हैं, इसमें घटनाएँ अधिक और कई प्रकार की हैं, राज-दरबार, युद्ध, राजमहल की वाटिका, जंगल आदि स्थानों पर ये घटनाएँ घटित होती हैं, फिर भी प्रसाद जी ने इनका संयोजन इतनी कुशलता से किया है इनमें किसी प्रकार का बिखराव नहीं आया है।

बोध प्रश्न : 5. 'अजातशत्रु' में किस युग का वातावरण लिया गया है ?

.....

.....

.....

(v) अभिनय और रंगमंच-निर्देश

यूँ तो नाटक शब्द का ही अर्थ होता है अभिनय, लेकिन सभी नाटकों में पूरी तरह से अभिनय किए जाने की क्षमता नहीं होती। दूसरे, नाटककार को भी अनेक प्रकार के निर्देश देने पड़ते हैं जैसे रंगमंच पर किस तरह की साज-सजावट हो, द्वार किस तरह खुलते हों, पात्र मंच पर कैसे प्रवेश करें, उनकी वेशभूषा कैसी हो, उनके संवाद बोलने का ढंग और भाव कैसा हो आदि। 'नाट्यशास्त्र' में आचार्य भरतमुनि ने अभिनय के चार प्रकार बतलाए हैं आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक। आंगिक अभिनय का अर्थ है – अंगों के संचालन द्वारा अभिनय, वाचिक अर्थात् संवाद बोलते समय स्वर के उतार-चढ़ाव से अलग-अलग भाव बताना। आहार्य अर्थात् वस्त्र, आभूषण, चरित्र के अनुसार प्रसाधन करना जैसे मूँछे, दाढी, बालों की सजावट आदि और अभिनय का अर्थ है – आँसू, पसीना, कँपकँपी आदि के द्वारा भावों की अभिव्यक्ति। इस दृष्टि से प्रसाद के नाटकों में अभिनयशीलता का गुण कम है। 'अजातशत्रु' में यद्यपि प्रसादजी ने रंगमंच और अभिनय के निर्देश दिए हैं फिर भी रंगमंच पर इसको प्रस्तुत करना कठिन माना है। इसकेलिए निम्न लिखित कारण हैं-

(1) 'अजातशतत्रु' नाटक में युद्ध, सेना, राज्यसभा आदि के दृश्य प्रस्तुत करना व्यावहारिक दृष्टि से कठिन है। (2) इसमें पात्रों की संख्या बहुत हैं। (3) दृश्य-प्रस्तुति में व्यवाहरिक कठिनाई है जैसे एक दृश्य राज्य सभा का है तो उससे अगला दृश्य तपोवन का होगा, उससे अगला राजमहल का। रंगमंच पर दृश्यों को इतनी जल्दी बदलना संभव नहीं (4) इसमें कथोपकथन बहुत लम्बे, जटिल और दार्शनिक भावों से भरे हैं। स्वगत कथन भी बहुत लम्बे हैं जो अस्वाभाविक लगते हैं। बीच-बीच में चलने वाले गीत भी स्वाभाविक नहीं लगते। जैसे 'अजातशत्रु' में विरुद्धक और श्यामा के बीच वार्तालाप होता है और फिर श्यामा विरुद्धक का हाथ पकड़कर एक लंबा गीत गती हैं।

(ई) 'अजातशत्रु' की प्रासंगिकता :

जयशंकर प्रसाद का 'अजातशत्रु' नाटक अनेक दृष्टियों से आज भी प्रासंगिक है। यद्यपि इस नाटक में बौद्धकालीन भारत का चित्रण हुआ है फिर भी इसकी कई बातें आज भी अर्थ रखती हैं। इस नाटक में नई-पुरानी पीढ़ियों के बीच संघर्ष बताया गया है और यह भी बताया गया है कि नई पीढ़ी को विनम्र होना चाहिए तो पुरानी पीढ़ी को भी क्षमाशील और उदार होना चाहिए। यह भी इसमें बताया गया है कि किसी भी धर्म का मूल संदेश करुणा और सहिष्णुता होना चहिए। बौद्ध धर्म के विश्वव्यापी संदेशों की भी सार्थकता इस नाटक में बताई गई है।

अजातशत्रु का शाब्दिक अर्थ होता है जिसका कोई शत्रु न हो। इस दृष्टि से गौतम-बुद्ध का चरित्र इसमें एक आदर्श चरित्र हैं।

बोध प्रश्न : 6. 'अजातशत्रु' कैसे हमारे लिए प्रासंगिक है ?

.....

.....

.....

(उ) 'अजातशत्रु' के माध्यम से जयशंकर प्रसाद की देन

जयशंकर प्रसाद ने अजातशत्रु के माध्यम से हिन्दी नाटकों को एक सशक्त मोड़ दिया। प्रसादजी के समय हिन्दी नाटक आरंभिक अवस्था में था। नाटकों के क्षेत्र पारसी रंगमंच के सस्ते बाजार नाटकों का चलन था। इसके विपरीत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके सहयोगी लेखक साहित्यिक हिन्दी नाटक लिख रहे थे। लेकिन ये लेखक प्राचीन संस्कृत के नाटकों से ज्यादा प्रभावित थे। प्रसाद जी ने पश्चिमी और भारतीय नाट्य-शैलियों को मिलाकर साहित्य उच्च स्तरीय नाटक की रचना की थी। प्रसाद जी ने हिन्दी नाटकों में यथार्थ का चित्रण किया और पात्रों के मनोविज्ञान पर ध्यान केन्द्रित किया। अजातशत्रु जैसे अनेक ऐतिहासिक नाटकों में प्रसाद जी ने कथानक तो प्राचीन भारतीय इतिहास से लिया लेकिन समस्यायें आधुनिक युग से लीं। इसलिए उनके नाटकों में जैसे अजात शत्रु में प्रस्तुत समस्यायें, विचार, आदर्श और मूल्य आज के लिए भी प्रासंगिक हैं। प्रसाद जी ने 'अजातशत्रु' जैसे नाटक के द्वारा भारत के गौरवपूर्ण इतिहास की पुनर्व्याख्या की। 'अजातशत्रु' में प्रस्तुत पात्र इतिहास और कल्पना का मिश्रण है। इन पात्रों मानवीय दुर्बलताएँ हैं तो देवत्व के गुण भी हैं। ये पात्र नाटककार के हाथों की कठपुतली नहीं बने हैं बल्कि इनके व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास हुआ है। 'अजातशत्रु' और अपने दूसरे नाटकों के द्वारा प्रसाद जी ने पात्रों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ प्रस्तुत की और इनमें सब से मुख्य है - अन्तर्द्वन्द्व। पात्रों के मन में अच्छे बुरे, उचित अनुचित के बीच चलने वाले द्वन्द्व को दिखाकर अंत में बुरे पर अच्छे की विजय दिखाई गई प्रसादजी के नाटकों के नारी पात्र विशेष रूप से जाने जाते हैं। प्रसाद जी ने स्वतंत्र, संघर्षशील, आदर्श नारी का चरित्र प्रस्तुत किया जैसे 'अजातशत्रु' में वासवी, पद्मावती मल्लिका जैसी नारियाँ। छलना जैसे नारी चरित्र भी बुराई से अच्छाई के मार्ग पर आजाते हैं। प्रसाद जी ने अपने नाटकों के द्वारा आदर्शवाद और मानववाद का प्रसार किया। 'अजातशत्रु' के द्वारा हिन्दी नाटकों को एक नए प्रकार का अंत दिया। यह नाटक न तो सुखांत है न दुखांत, इसलिए इसें प्रसादान्त कहा गया है। प्रसाद जी के अनुसार जीवन न तो पूर्णतया सुखमय है और न दुखमय, यह सुख-दुख का मिश्रण है। नाटक को भी जीवन की सच्चाई बतलानी चाहिए। शिल्प की दृष्टि से भी प्रसाद ने हिन्दी नाटकों को महत्वपूर्ण देन दी।

बोध प्रश्न : 7. प्रसाद के नारी पात्रों की क्या विशेषता है ?

.....

.....

.....

24.3 सारांश

अजातशत्रु का महत्व हिन्दी नाटकों में उल्लेखनीय है। इसमें राष्ट्रीय गौरव, देश-प्रेम, मानवतावाद जैसे आदर्श भावनाओं को पुष्ट किया गया है। इस नाटक में कथ्य और शिल्प के नए प्रयोग हैं। इस नाटक का समुचित मूल्यांकन पाँच आधारों पर किया जा सकता है - युगीन संदर्भ, सन्देश, नाटक के तत्व, प्रासंगिकता और लेखक

की देन। युगीन संदर्भ की दृष्टि से 'अजातशत्रु' में बौद्धकालीन भारत का वातवरण चित्रित है लेकिन इसमें उठाई गई समस्याएँ आज भी हमारे समाज में हैं। 'अजातशत्रु' का संदेश इसीलिए हमारे लिए महत्वपूर्ण है कि यह क्षमा, दया, करुणा, अहिंसा जैसे मानवीय मूल्यों में हमारा विश्वास दृढ़ करता है। नाटक के तत्वों के आधार पर अजातशत्रु का अध्ययन किया जाए तो यह सफल नाटक सिद्ध होता है। पहला तत्व है : कथावस्तु और उद्देश्य। 'अजातशत्रु' की कथावस्तु सुसंगठित और सुनियोजित है और इसके द्वारा लेखक अपना संदेश पाठकों तक पहुँचाने में सफल होता है। दूसरा तत्व है - चरित्र-चित्रण। 'अजातशत्रु' में कई पात्र हैं और हर पात्र का चरित्र अपने आप में विशिष्ट हैं। 'अजातशत्रु' नाम भी अपने आप में विशेष अर्थ लिए हुए है। वैसे तो इस नाटक का नायक सम्राट बिम्बसार का पुत्र अजातशत्रु है लेकिन अर्थ की दृष्टि से देखा जाए तो गौतमबुद्ध अजातशत्रु नज़र आते हैं क्योंकि वे अपने अहिंसा व करुणा के संदेश से सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हैं। इसमें नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के चरित्रों के बीच संघर्ष बताया गया है। जैसे बिम्बसार और प्रसेनजित पुरानी पीढ़ी के हैं। और विरुद्धक नई पीढ़ी के हैं। इस नाटक के नारी पात्रों में भी अच्छे बुरे दो प्रकार के चरित्र बताए गए हैं। कथोयकथन और भाषाशैली-तीसरा तत्व है जिसके आधारपर भी 'अजातशत्रु' सफ़ल नाटक है। देशकाल और वातावरण नाटक का चौथा तत्व है। 'अजातशत्रु' में बौद्धकालीन भारत के वातावरण को सफलता से प्रस्तुत किया गया है। नाटक के पाँचवे तत्त्व-अभिनय और रंगमंच-निर्देश की दृष्टि से भी यह नाटक सुन्दर है लेकिन इसकी रंगमंच पर प्रस्तुति में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। 'अजातशत्रु' के मूल्यांकन का चौथा आधार हैं - प्रासंगिकता। प्रसंगिकता का मतलब है आज के संदर्भों में भी जो रचना हमें संदेश दे सके, हमारी आज की समस्याओं के लिए भी जो रचना हमें दिशादे सके। इस दृष्टि से 'अजातशत्रु' में चित्रित समस्याएँ, आदर्श और मानवीय मूल्य हमारे लिए आज भी प्रासंगिक हैं। अन्तिम आधार - जयशंकर प्रसाद की देन - के बारे में बिना सन्देह के कहा जा सकता है कि 'अजातशत्रु' के माध्यम से प्रसाद जी ने हिन्दी नाटकों को एक नई दिशा दी।

24.4. समीक्षा

'अजातशत्रु' नाटक जयशंकर प्रसाद के नाटकों में ही नहीं बल्कि हिन्दी नाटकों में भी महत्वपूर्ण माना जाता है। इसके कई कारण हैं। इस नाटक के द्वारा प्रसादजी ने हिन्दी नाटकों में कथावस्तु और शिल्प की दृष्टि से नया आदर्श प्रस्तुत किया। अपने वस्तुविधान और सन्देश के कारण, यह नाटक हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों में श्रेष्ठ नाटक है। रंगमंच की दृष्टि से इस नाटक के खेले जाने में कुछ कठिनाइयाँ हैं लेकिन आज रंगमंचों पर प्रकाश व्यवस्था, दृश्य-परिवर्तन और तकनीकी विकास के ऐसे नए प्रयोग हो रहें और सुविधाएँ इतनी बढ़ गई हैं कि इसे रंगमंच पर आसानी से खेला जा चुका है।

24.5 शब्दार्थ

मूल्यांकन	= आलोचना या गुण-दोष का विवेचन कर उसके महत्व का निर्णय करना
प्रासंगिकता	= सार्थकता
अंतर्द्वन्द्व	= मन में अच्छे-बुरे के बीच द्वन्द्व
सम्मिश्रण	= मिश्रण
उकेरना	= चित्रित करना, चित्र बनाना
निर्धारित	= निश्चित
प्रसाधन	= वेशभूषा, साज सजावट (व्यक्ति के संदर्भ में)

BRAOU

24.6 अभ्यास

24.6.1 दीर्घश्रेणी के प्रश्न (लगभग 250 शब्दों में उत्तर दीजिए)

(1) 'अजातशत्रु' का युगीन-संदर्भ बतलाइए।

(2) 'अजातशत्रु' के नारी पात्रों की विशेषताएँ बतलाइए।

(3) 'अजातशत्रु' नाटक की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

(4) 'अजातशत्रु' का उद्देश्य और प्रासंगिकता स्पष्ट कीजिए।

(5) 'अजातशत्रु' के माध्यम से प्रसादजी ने हिन्दी नाटकों को क्या योगदान दिया?

24.6.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्न (लगभग 125 शब्दों में उत्तर दीजिए)

(1) 'अजातशत्रु' नाटक के नामकरण पर विचार कीजिए।

(2) 'अजातशत्रु' रंगमंच की दृष्टि से कैसा नाटक है?

(3) 'अजातशत्रु' के संवादों की क्या विशेषता है?

(4) 'अजातशत्रु' की रचना में प्रसाद जी का क्या उद्देश्य था?

(5) 'अजातशत्रु' की भाषा-शैली की विशेषता बतलाइए।

24.7 नमूने के प्रश्नोत्तर

24.7.1 दीर्घश्रेणी के प्रश्नोत्तर (लगभग 250 शब्दों में उत्तर दीजिए)

प्रश्न1 'अजातशत्रु' के नारी पात्रों की विशेषताएँ बतलाइए।

उत्तर : 'अजातशत्रु' नाटक के नारी पात्र जयशंकर प्रसाद की नारी-दृष्टि का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जयशंकर प्रसाद ने नारी को मानवीय गुणों और मूल्यों का आदर्श उदाहरण माना। लेकिन नारी में भी अच्छे-बुरे दोनों प्रकार के चरित्र होते हैं। 'अजातशत्रु' नाटक में 9 स्त्री पात्र हैं। ये हैं - वासवी, छलना, पद्मावती, शक्तिमती, मागंधी, मल्लिका, वजिरा, वासवदत्ता, श्यामा। इन पात्रों में वासवी, पद्मावती, मल्लिका आदि सद्वृत्ति वाले पात्र हैं। शक्तिमती और छलना सद् और असद वृत्ति वाले पात्र हैं अर्थात् इनमें मिश्रित गुण हैं। मागंधी या श्याम पूरी तरह से असद्गुणों से युक्त हैं लेकिन बाद में आम्रपाली के रूप में वह महात्मा बुद्ध की शरण ले लेती है। प्रसाद जी ने मल्लिका जैसे चरित्र को अत्यंत आदर्श बताया है। वह अपने पति के हत्यारे प्रसेनजित और विरुद्धक को क्षमा कर देती है। वह गौतम बुद्ध के संदेशों का साकार रूप है। वासवी और उसकी बेटी पद्मावती भी गौतम बुद्ध के उपदेशों से प्रभावित हैं। छलना और शक्तिमती लगभग एक-जैसे चरित्र हैं। दोनों में सत्ता और अधिकार पाने की भूख है। दोनों अपने पुत्रों को जल्द से जल्द राजा-देखना चाहती हैं। दोनों षड्यंत्र करती हैं, अपने पुत्रों को प्रेरित करती हैं कि वे छलकपट से सिंहासन प्राप्त करें। लेकिन अंत में दोनों में परिवर्तन होता है और बुराई के मार्ग से वे हट जाती हैं। सबसे गतिशील और परिवर्तनशील चरित्र है मागंधी उर्फ श्यामा उर्फ आम्रपाली का प्रसादजी ने इस चरित्र में तीन स्त्री चरित्रों को मिलाया है और एक ही पात्र व तीन रूप धरते बताया है। लेकिन यह चरित्र भी बुरे से अच्छा बन जाता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रसाद जी ने अपने स्त्री चरित्रों में आदर्श और यथार्थ का मिश्रण किया है।

24.7.2 मध्यम श्रेणी के प्रश्नोत्तर (लगभग 125 शब्दों में उत्तर दीजिए)

प्रश्न : 'अजातशत्रु' नाटक के नामकरण पर विचार कीजिए।

BRAOU

उत्तर : 'अजातशत्रु' शब्द का अर्थ होता है जिसका कोई शत्रु पैदा ही न हुआ हो। इस दृष्टि से बिम्बसार के पुत्र अजातशत्रु का चरित्र इस नाम को सार्थक नहीं करता क्योंकि वह तो सबसे शत्रुता करता चलता है। यद्यपि वह इस नाटक का नाम है और उसी के नाम पर नाटक का नाम होना चाहिए, मगर इस प्रश्न को दूसरे ढंग से भी देखा जा सकता है। इस नाटक में गौतमबुद्ध ऐसे आदर्श चरित्र हैं। वे अपने शत्रुओं को प्रेम और करुणा से जीत लेते हैं। वे अहिंसा, मानववाद जैसे आदर्शों का प्रसार करते हैं। इस प्रकार 'अजातशत्रु' नाम से प्रसाद जी शायद यह बतलाना चाहते हैं कि प्रेम और करुणा से ही मनुष्य संसार में ऐसा वातावरण बना सकता है जिसमें कोई किसी का शत्रु न हो।

बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1: 'अजातशत्रु' का मूल्यांकन इसके युगीन संदर्भ, संदेश और प्रासंगिकता के आधार पर किया जाना चाहिए इसके साथ नाटक के तत्वों के आधार पर 'अजातशत्रु' का विश्लेषण करते हुए हिन्दी नाटकों में इसका स्थान निश्चित करने से 'अजातशत्रु' का पूर्ण मूल्यांकन हो सकता है।

उत्तर 2 : 'अजातशत्रु' प्रथम महायुद्ध के बाद लिखा गया था और इसमें प्रसादजी ने युद्ध का विरोध करते हुए शान्ति का संदेश दिया है।

उत्तर3 : 'अजातशत्रु' में - बिम्बसार, अजातशत्रु, मल्लिका, प्रसेनजित, उदयन, गौतमबुद्ध, देवदत्त आदि ऐतिहासिक पात्र हैं और श्यामा या मागंधी, विरुद्धक और शैलेन्द्र डाकू को एक ही पात्र बताना काल्पनिक है।

उत्तर 4 : 'अजातशत्रु' में प्रेम, ईर्श्या, द्वेष, प्रतिशोध, करुणा, दया, क्षमाशीलता, वीरता जैसे भावों का चित्रण किया गया है।

उत्तर 5 : 'अजातशत्रु' में बौद्ध कालीन भारत के वातावरण का चित्रण किया गया है।

उत्तर 6 : 'अजातशत्रु' में युद्ध से होने वाली हिंसा का विरोध कर शान्ति का संदेश दिया गया है। विश्वबंधुत्व और मानववाद का समर्थन किया गया है। स्वार्थ की जगह परमार्थ, लोभ की जगह त्याग और प्रतिशोध के बदले क्षमा का उपदेश दिया गया है। ये बातें आज के वातावरण में भी प्रासंगिक हैं।

उत्तर 7 : प्रसाद के नारी पात्र उनके नारी संबंधी दृष्टिकोण को बतलाते हैं। उनकी दृष्टि में नारी क्षमा, त्याग और सहनशीलता की प्रतिमूर्ति है। जो नारी असद मार्ग पर हो वह भी अपने को सुधार कर सन्मार्ग पर आ जाती है।

DRAOU

24.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अजातशत्रु : जयशंकर प्रसाद

डॉ.बी.आर. अम्बेड़कर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, आन्ध्र प्रदेश

हिन्दी विभाग, कला संकाय

स्नातक (द्वितीय वर्ष) हिन्दी गद्य

गृहकार्य – 1

आवश्यक सूचना :

1) प्रश्नोत्तर लिखने में किसी भी पुस्तक से प्रत्यक्ष नकल न करें।

2) प्रश्नों के उत्तर अपने शब्दों में लिखें।

3) किसी स्त्रोत से उदाहरण लेना आवश्यक हो तो उसके सही संदर्भ का उल्लेख अवश्य करें।

4) गृहकार्य संपादन करने के लिए व्यक्तिगत 'फुलस्केप' पृष्ठों का उपयोग करें।

5) परीक्षक की टिप्पणी के लिए पृष्ठ पर यथोचित स्थान छोड़ दें।

6) गृहकार्य पूरा करने के लिए सामान्यत: एक घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए।

7) सभी प्रश्नों के उत्तर लिखना अनिवार्य है।

अ) निम्नलिखित प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में लिखिए।

प्रश्न-1 ठेस कहानी के आधार पर सिरचंन को केन्द्र में रखकर ग्रामीण परिवेश में कलाकार की स्थिति पर विचार कीजिए।

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 125 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न-1 चीफ के चरित्र से क्या शिक्षा मिलती है?

प्रश्न-2 सप्रसंग व्याख्या कीजिए-

"आप साधु है, आपको दुनियादारी समझ में नहीं आती। दरखास्तें पेपरवेट से नहीं दबतीं।"

BRAOU

डॉ.बी.आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, आन्ध्र प्रदेश

हिन्दी विभाग, कला संकाय

स्नातक (द्वितीय वर्ष) हिन्दी गद्य

गृहकार्य - 2

आवश्यक सूचना :

1) प्रश्नोत्तर लिखने में किसी भी पुस्तक से प्रत्यक्ष नकल न करें।

2) प्रश्नों के उत्तर अपने शब्दों में लिखे।

3) किसी स्त्रोत से उदाहरण लेना आवश्यक हो तो उसके सही संदर्भ का उल्लेख अवश्य करें।

4) गृहकार्य संपादन करने के लिए व्यक्तिगत 'फुलस्केप' पृष्ठों का उपयोग करें।

5) परीक्षक की टिप्पणी के लिए पृष्ठ पर यथोचित स्थान छोड़ दें।

6) गृहकार्य पूरा करने के लिए सामान्यतः एक घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए।

7) सभी प्रश्नों के उत्तर लिखना अनिवार्य है।

अ) निम्नलिखित प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में लिखिए।

प्रश्न-1 'चीफ की दावत' कहानी में जीवन मूल्यों के बदलाव और उनमें आई गिरावट को किस प्रकार बतलाया गया है?

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 125 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न-1 'ठेस' कहानी के आधार पर कलाकार की समस्या को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न-2 मागंधी के चरित्र को प्रसाद जी ने किस तरह बढ़ाया है?

BRAOU

डॉ.बी.आर. अम्बेड़कर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, आन्ध्र प्रदेश

हिन्दी विभाग, कला संकाय

स्नातक (द्वितीय वर्ष) हिन्दी गद्य वार्षिक परीक्षा

नमूना प्रश्न पत्र

समय – 3 घंटे पूर्णांक – 100

खण्ड - अ (अंक 4 x 15 = 60)

ध्यान दें: 1) इस खण्ड के केवल चार प्रश्नों के उत्तर लिखें।

2) प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 250 शब्दों में दें।

3) सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।

1) पं. बालकृष्णा भट्ट जी के अनुसार बात-चीत मनुष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है-इसको उदाहरण देकर समझाइए।

2) अध्यापक पूर्णसिंह जी की दृष्टि में आज हम जातीय दरिद्रता से क्यों पीडित हैं?

3) महात्मा गाँधी का जीवन 'सत्य के प्रयोग हैं' - इस कथन पर प्रकाश डालिए।

4) राहुल सांस्कृत्यायन ने अपने शांतिनिकेतन में बिताए दिनों को रिपोर्ताज शैली में अंकित किया है – इसे स्पष्ट कीजिए।

5) 'भोलाराम' का जीवन कहानी का व्यंत्य स्पष्ट कीजिए।

6) 'वापसी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर विचार प्रस्तुत कीजिए।

7) 'पूस की रात' कहानी की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

8) रेणु ने 'ठेस' कहानी के माध्यम से कलाकार के किस रूप को स्पष्ट किया?

BRAOU

खण्ड - ब (अंक 5 x 8 = 40)

ध्यान दें: 1) इस खण्ड के किन्हीं 5 प्रश्नों के उत्तर लिखें।

2) सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।

3) प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 125 शब्दों से कम न हो।

9) उत्साह के कितने भेद हैं?

10) पशु-पक्षियों के प्रति रवीन्द्रनाथ टैगोर की दृष्टि अनुरागमयी थी - उदाहरण द्वारा समझाइए।

11) ''घीसा यथार्थवादी रुझान वाली रचना है'' - प्रमाणित कीजिए।

12) ''शरणदाता कहानी का मूल स्वर सांप्रदायिकता - विरोधी है'' - विवेचन कीजिए।

13) निर्मला का चरित्र - विश्लेषण कीजिए ।

14) निर्मला उपन्यास का विश्लेषण कैसे किया जा सकता है?

15) 'अण्डे के छिलके' एकांकी के कथावस्तु का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

16) 'अजात शत्रु' में हास्य रस का संचार किसके द्वारा और कैसे होता है?

17) संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :

उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी।

18) संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :

खाने-पीने में चिकनाई की कमी हुई कि काम की सारी चिकनाई खत्म।

BRAOU

डॉ.बी.आर. अम्बेड़कर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग, हैदराबाद (आं.प्र)

पाठ्यक्रम विवरण

स्नातक परीक्षा – द्वितीय वर्ष – पाठ्यक्रम

ऐच्छिक विषय – हिन्दी साहित्य

कोर्स – II : हिन्दी गद्य

खण्ड - I : निबन्ध

इकाई – 1 : बातचीत – पं. बालकृष्ण भट्ट
इकाई – 2 : उत्साह – आ. रामचन्द्र शुक्ल
इकाई – 3 : मजदूरी और प्रेम – अध्यापक पूर्णसिंह
इकाई – 4 : एक कुत्ता और एक मैना –आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी
इकाई – 5 : नेता नहीं नागरिक चाहिए – रामधारी सिंह दिनकर
इकाई – 6 : भारतीय साहित्य में एकता – आ. नंददुलारे वाजपेयी

खण्ड - II : जीवनी–आत्मकथा–संस्मरण–रिपोर्ताज

इकाई – 7 : देशरत्न डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद – पुरुषोत्तम दास टंडन
इकाई – 8 : तीन पौण्ड का कर – महात्मा गान्धी
इकाई – 9 : घीसा – महादेवी वर्मा
इकाई – 10 : शांतिनिकेतन में – राहुल सांस्कृत्यायन

खण्ड - III : कहानी

इकाई – 11 : पूस की रात – प्रेमचन्द
इकाई – 12 : शरण दाता – अज्ञेय
इकाई – 13 : ठेस – फणीश्वरनाथ रेणु
इकाई – 14 : भोलाराम का जीव – हरिशंकर परिसाई
इकाई – 15 : चीफ की दावत – भीष्म साहनी
इकाई – 16 : वापसी – उषा प्रियंवदा

खण्ड - IV : उपन्यास

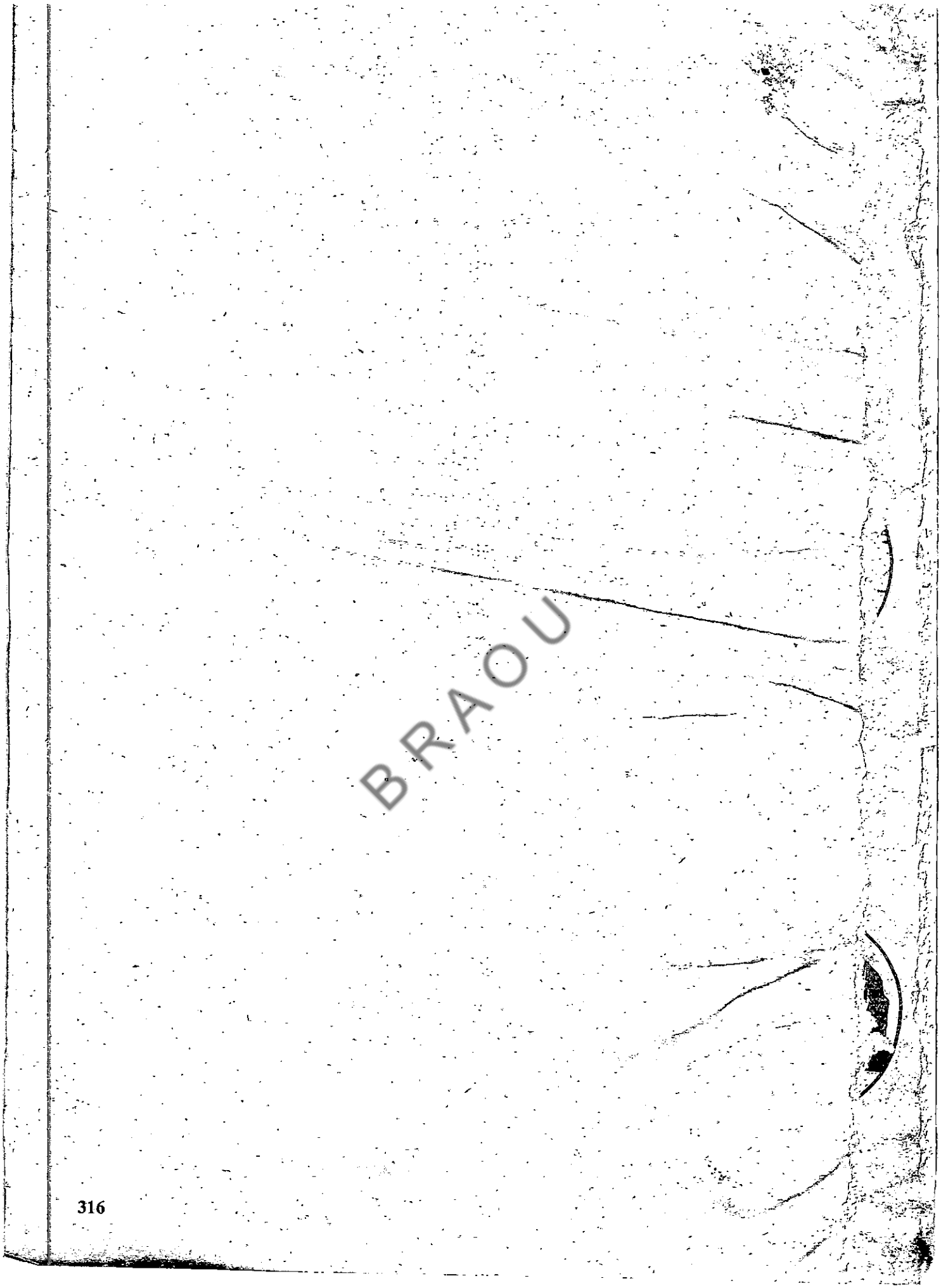
इकाई – 17 : निर्मला की कथावस्तु
इकाई – 18 : निर्मला में चरित्र चित्रण
इकाई – 19 : निर्मला का मूल्यांकन

खण्ड - V : एकांकी और नाटक

इकाई – 20 : अण्डे के छिलके – मोहन राकेश
इकाई – 21 : इलेक्शन – रामकुमार वर्मा
इकाई – 22 : अजातशत्रु की कथावस्तु
इकाई – 23 : अजातशत्रु में चरित्र चित्रण
इकाई – 24 : अजातशत्रु का मूल्यांकन

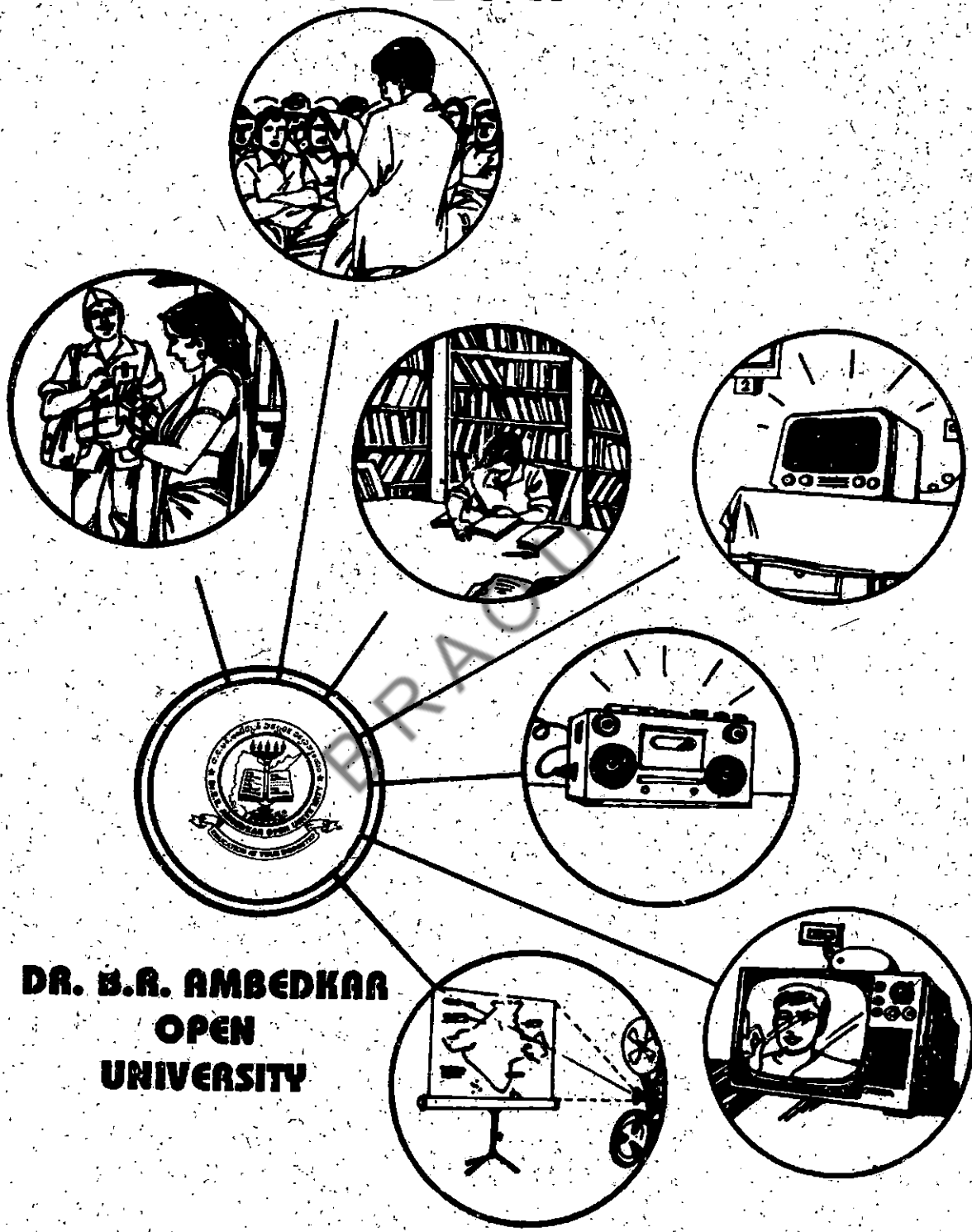
कुल खण्ड : 5 कुल इकाइयाँ : 24

BRAOU



BRAOU

UNIVERSITY AT YOUR DOOR STEP



DR. B.R. AMBEDKAR OPEN UNIVERSITY

Road No. 46, Jubilee Hills,
Hyderabad - 500 033.

BRAOU